अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Ethnotaxonomical Importance Of The Plants Near Tapti River At Historical Shahi Qila Fort In District Burhanpur, Madhya Pradesh, India (Prof. Iftekhar A.Siddiqui) 12

06. Analysis Of Cyanophycean Biodiversity In Motia Tank, Bhopal (Bharti Khare) 27

07. Antidiabetic, Hypocholesterolemic And Lipid Profile Activities Of *Allium sativum* Bulb Extract In Streptozotocin Induced Diabetic Rats (V.K. Shakya) 30

08. Impact Of Waste Water On Fish Culture In An Abandoned Stone Quarry Of Rewa Town, Dist. Rewa, (M .P.) India (Suman Singh) 35

09. Impulsive Excitation Of Mechanoluminescence In Γ - Irradiated $Sr(Vo_3)_2$: Tb Phosphors (Vikas Gulhare, Dr. Preeti Soni, R. S. Kher, S. J. Dhoble) 39

10. Many Wonderful Health Benefits From Medicinal Plants (Dr. Basanti Jain) 43

(Home Science / गृह विज्ञान)

11. Effects Of Coarse Grains On Glucose Level Of Type II Diabetic Patients Of Urban Area Of Bhopal (M.P) (Neetu Pal, Dr. Meenal Phadnis) 45

12. A Study on Effect of Mother's Educational Background on the Developmental Abilities of Pre - school Children (Prof. Usha Kothari, Rashmi Kandare) 52

13. सुल्तानपुर जिले में स्वयं सहायता समूह की गतिविधियों का मूल्यांकन (स्वर्णिमा सिंह, कंचन दुबे, डॉ. मंजू दुबे) 54

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

14. A Review of Investors' Perception of the Indian Capital Market in the Post-Reform Era (Anindita Banerjee) 57

15. Participation of Women for Social and Economic Empowerment in Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) - A Study with Special Reference to Shajapur District (Dr. Rajendra Kumar Jain, Dr. Sunil Advani) 61

16. Cash Management System (Dr. Praveen Ojha) 64

17. Factors affecting Consumer Buying Decisions : Special reference to Social Marketing (Rupesh Pallav) 69

18. **Marketing Strategies of Dabur & Himalaya** 73
(Dr. Vishwas Sharma, Dr. Pradeep Kumar Sharma)

19. **Education in India - An effort of Government (Roshni Siddiqui)** 76

20. भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड की शोधन क्षमता का विश्लेषण (डॉ. एस. के. खटीक, शहाना सईद) 78

21. ग्वालियर व्यापार मेला के आर्थिक प्रभाव का विश्लेषण (डॉ. दर्शना राठौर) 86

22. लघु एवं मध्यम प्रकार के व्यापार में वित्तीय प्रबंधन (डॉ. देवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय, आशीष सिंह) 90

(Economics / अर्थशास्त्र)

23. जनजातीय विकास में कृषि यंत्रीकरण के प्रति कृषकों की रुचि (पश्चिमी निमाड़ जिलों के विशेष संदर्भ में) 64
(रंजना चौहान, डॉ. विनोद गुप्ता)

24. रेल्वे में कार्यरत कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन (रतलाम रेलवे मण्डल के विशेष सन्दर्भ में) 97
(ममता कुशगोतिया)

25. संपूर्ण ग्रामीण एवं भूमिहीन ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का अध्ययन (उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में) 99
(डॉ. रूपा मिश्रा)

26. खरगोन जिले के ग्रामीण क्षेत्रो में खरीफ एवं रबी फसल बीमा – एक अध्ययन (डॉ. रश्मि चौहान) 101

27. महिलाओं के विकास में स्वरोजगार का महत्व (कमलराज सिंह उइके) 103

28. सर्वहारा वर्ग का विकास – शिक्षा द्वारा जनचेतना से संभव (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 105

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

29. **Minorities Women's Political Participation In Indian Democracy Problems And Suggestions (Dr. Abha Saini)** 107

30. दलितों के राजनीतिक विकास में डॉ. भीमराव अम्बेडकर की भूमिका (डॉ. आनंद कुमार भारतीय) 109

31. नये संदर्भ में भारत–आसियान संबंध (डॉ. संजय कुमार यादव) 111

32. लालबत्ती के प्रयोग पर रोक – लोकतंत्र, समानता एवं संविधान के अनुरूप (विनोद कुमार साहू) 113

33. भारत–जापान संबंध (डॉ. संजय कुमार यादव) 115

(History / इतिहास)

34. बौद्ध युगीन भारत के प्रमुख नगर (डॉ. शुक्ला ओझा) 117

35. तात्या टोपे की निमाड़ यात्रा (डॉ. प्रवीण मालवीया) 119

36. वैदिक साहित्य में गणपति (डॉ. मनीषा पाण्डेय) 121

37. न्यायिक एवं कार्यकारिणी सेवाओं का पृथक्करण (ब्रिटिश कालीन न्याय व्यवस्था के सन्दर्भ में) 123
(डॉ. पदमा सक्सेना)

(Sociology / समाजशास्त्र)

38. Women And Law (Dr. Jyoti Saxena) 124
39. The Development Of Indian Society (Dr. Jyoti Saxena) 126
40. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर–मजदूरों के व्यवसाय एवं निर्माण कार्य होने की जानकारी(रामावतार साकेत) ... 128
41. शासकीय योजनाओं का अनुसूचित जाति, जनजाति की महिलाओं के सशक्तिकरण में योगदान (डॉ. निधि माहेश्वरी) 131
42. जनजाति बाहुल्य क्षेत्रों के विकास में सहकारी आंदोलन की भूमिका (डॉ. सुरेखा तेलकर) 134
43. ग्राम सभा सशक्तिकरण के लिए अध्ययन – छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में (वीरेन्द्र सिंह ठाकुर) 137
44. नवाजतन योजना एवं सामाजिक चेतना से कुपोषण मुक्ति का एक अध्ययन (सुशील कुमार पाठक) 140
45. पारिवारिक विघटन बाल विकास में बाधक – एक सामाजिक विश्लेषण (डॉ. उमा लवानिया) 142

(Geography / भूगोल)

46. Spatial Pattern Of Irrigation In Bilaspur District (Dr. Kajal Moitra, Chayan Kr. Mandal, Sanjit Kisku) 144
47. मानव पोषण स्तर समस्या एवं समाधान: ग्राम–पिपरिया जिला–जबलपुर का कालिक अध्ययन (डॉ. अजय तिवारी) .. 147
48. रायगढ़ जिले में स्त्री–पुरूष साक्षरता का स्थानिक प्रतिरूप (डॉ. काजल मोइत्रा, स्मिता पण्डा) 153

(Psychology / मनोविज्ञान)

49. A Comparative Study Of Adjustment Among Early And Later Adolescents (Male And Female) (Dr. A. R. Lohia, Jyotsana Meghwal) 156

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

50. Indian English Women Short Story Writers : An Overview (Prof. Peter Dodiyar) 159
51. Cultural Aspect in the Plays of Girish Karnad (Twishampati De) 162
52. Nicholas Spark's 'A Walk To Remember' And 'The Notebook' - An Analytical Study Of The Treatment Of Love (Dr. Digvijay Pandya, Apurva Upadhyay) 164
53. First Person Autobiographical Narrator In The Short Stories Of R K Narayan With Reference To 'A Breathe Of Lucifer' (Dr. Manisha Verma) 166
54. Metaphor (Dr. Rashmi Nagwanshi) 168

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

55. तुलसी का वर्तमान संदर्भ (डॉ. रश्मि जैन) 170

56. समकालीन हिंदी कहानी– नारी पात्रों के दोहरे दायित्व का संघर्ष(डॉ. रागनी चौहान) 173

57. गजानन माधव 'मुक्तिबोध' के काव्य में 'फैंटेसी' कलारूप (सोनिया राठी) 176

58. समय और समाज के परिप्रेक्ष्य में साहित्य (डॉ. अमित शुक्ला) 178

59. हिन्दी कथा साहित्य में दलित चेतना और प्रेमचन्द की जीवंत दृष्टि (डॉ. छविनम श्रीवास्तव) 180

60. कबीर पर आधारित जीवनीपरक उपन्यास 'लोई का ताना' – एक अनुशीलन (डॉ. माधुरी उपाध्याय) 182

(Sanskrit / संस्कृत)

61. वैष्णव पुराणों में नीतिपरक वचन (डॉ. संगीता मेहता, मुकेश बर्मन) 184

(Music / संगीत)

62. संगीत की उत्पत्ति – दृष्टिकोण (प्रो. विन्ध्या मरावी) 187

(Drawing & Design / चित्रकला)

63. The Decorative Patterns in Indian Art and Architecture 189
(Kingshuk Mukherjee, Prof. Himadri Ghosh)

64. Paradigm Of Indian Ornamentation With Reference To Ajanta Murals (Dushyant Dave) 195

65. Video Art A New Medium; Special Reference To Indian Artist 202
(Ritesh Kumar, Prof. Himadri Ghosh)

66. Gladstone Solomon Pioneer of Indian Revival art in Bombay School (Douglas M. John) 205

67. चित्रकार कन्हाई के–कृष्ण रूप (मोहम्मद वसीम) 208

(Law/ विधि)

68. Environment And Human Rights - In Indian Context (Hemant Kumar) 210

69. Trafficking Of Women And Children - A Curse To Human Society And It's 213
Sociological And Legal Aspect (Dr. Jainendra Kumar, Patel Sudeep Agrawal)

70. Surrogacy Law In Indian Perspective - An Overview (Dr. Neelesh Sharma) 216

71. Socio-Legal Dimention Of Acid Attack In India - An Overview (Dr. Neelesh Sharma) 228

72. Judicial Contribution To Sustainable Development In India- A Study (Lok Narayan Mishra) 221

73. Juvenile Justice System In India (Aprajita Bhargava) 224

74. कृषकों के मानवाधिकार संरक्षण में विधियों की उपादेयता (डॉ. जे. के. पटेल, विजय यादव) 227

75. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं को प्राप्त अधिकार – एक अध्ययन 229
(अरविंद कुमार मित्तल, आर. पी. चौधरी, डॉ. जे. के. पटेल)

(Education / शिक्षा)

76. वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति विद्यार्थियो के दृष्टिकोण का अध्ययन .. 231
(प्रांजल शेखर, डॉ. अंजली कुमार मिश्र)

77. एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों की पालन–पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ने वाले 234
प्रभाव का अध्ययन (डॉ. रिटा बिश्ट)

78. वनशाला शिविर कार्यक्रम का बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों पर होने वाले 237
प्रभाव का अध्ययन (मन्दसौर जिले के संदर्भ में) (मनीष राठौर)

79. शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में प्रभावी संप्रेषण कौशल विकसित करने हेतु प्रशिक्षण सामग्री तकनीक के उपयोग से पड़ने 239
वाले प्रभाव संबंधी अध्ययन (डॉ. अनिता भदौरिया)

(Others / अन्य)

80. Nano Particles: An Overview (Ashok Kumar Verma) 241

81. Performance Management System: A Tool for Human Resource Management 245
(Dr. Monika Jain, Juned Nagori)

82. पातालकोट के विशेष संदर्भ में भारिया जनजाति का अध्ययन (अनुराग सोनी) 252

83. Job Satisfaction Among Teachers (Dr. Syed Saleem Aquil, Sabiha Aquil) 255

84. Social Transformation Through Media: A Sociological Study & Interpretation 258
(Dr. Rishi Kumar Sharma)

85. Tribal Communities in India (Dr. Anjali Jaipal) 262

86. विमुद्रीकरण : कारण, आवश्यकता और प्रभाव (डॉ. उर्मिला चौकसे) 266

87. बालकों के मनोविकास में संज्ञानात्मक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व (डॉ. आराधना सक्सेना) 269

88. जैव विविधता – आधुनिक समाज की आवश्यकता (डॉ. लक्ष्मी गुप्ता) 272

89. Postmodern Perspective in the Novels of Amitav Ghosh (Dr. Sitaram) 275

90. A Critical Study Of Sylvia Plath's 'The Bell Jar' (Dr. Tripti Singh) 278

91. बिलासपुर जिले में राष्ट्रीय चेतना का विकास राजनीतिक कारण (डॉ. रीता बाजपेयी) 282

92. अकबरयुगीन ललित कलाओं में सांस्कृतिक समन्वय (प्रताप कुमार पाण्डेय) 284

93. An Ecofriendly Approach to Biopesticides (Dr. Kiran Yadav) 286

94. आचार्य चाणक्य की राजधर्म संबंधी नीतियां (डॉ. विद्या आचार्य) 288

95. नई भूमिकाओं में महिलाएँ एवं उभरती हुई चुनौतियाँ (डॉ. रेखा पंचोली) 290

96. शारीरिक शिक्षा के स्तर के प्रति शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की अभिवृति (थान सिंह चौधरी) 293

97. गांधीवादी विचारधारा और 'रंगभूमि' की मूल संवेदना अंतर्संबंध, अंतर्विरोध और रचनात्मक स्वायत्तता 297
(डॉ. मुकेश कुमार)

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू ..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ..... प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ..... प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा ..... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ..... एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. नट्वरलाल गुप्ता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो.डॉ. तपन चौरे..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल, अर्थशास्त्र, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

✲✲✲ विज्ञान संकाय ✲✲✲

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. नीरज दुबे, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह,** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:– ..... **(1) अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

✲✲✲ वाणिज्य संकाय ✲✲✲

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

✲✲✲ प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ✲✲✲

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी** , अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी** , पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

✲✲✲ विधि संकाय ✲✲✲

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✲✲✲ कला संकाय ✲✲✲

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. काजल मोइत्रा , डॉ. सी वी रामन् विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. जोगिंदर सिंह,** पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ..... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ..... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ..... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा–बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव ..... अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Ethnotaxonomical Importance Of The Plants Near Tapti River At Historical Shahi Qila Fort In District Burhanpur, Madhya Pradesh, India

Prof. Iftekhar A.Siddiqui *

Abstract - The Tapti River flows in central India from East to West, between the Godavari and Narmada Rivers. The River is supposedly named after the goddess Tapti, the daughter of Surya Deva, the Sun God, who according to legend founded the kuru Dynasty when she married king samvarna. It inters East Nimar at a distance of 12mile (193Km). from the its sources (Multai near Betul). A total of 94 species belonging to 90 genera and 41 families have been reported from near Tapti River at historical Shahi Qila fort in District Burhanpur, Madhya Pradesh, India. Ethnotaxonomically most important families are Monocots-2(Liliaceae- 3 species and poaceae- 3 species) and dicots families – 37 (Apocynaceae- 4 species, Asclepidaceae – 2 species, Annonaceae – 1 species, Amaryllidaceae – 1 species, Asteraceae – 2 species, Arecaceae – 1 species, Amarnthaceae – 1 species, Acanthaceae – 1 species, Anacardaceae – 1 species, Caesalpinoideae – 5 species, Casurinaceae – 1 species, Cactaceae – 1species, Convolvulaceae -2 species, Combretaceae – 1species, Cruciferae- 1 species, Caricaceae -1 species, Cupressaceae -1 species, Cannaceae-1 species, Euphorbiaceae-8 species, Labiatae-2 species, lamiaceae-1 species, Lythraceae-1 species, Leguminosae-1 species, Mimosodeae-3 species, Myrtaceae-3 species, Malvaceae-2 species, Nymphiceae-2species, Orchidaceae-1 species, Moraceae-2 species, papilionaceae-2 species, Moringaceae-1 species, Rhanaceae-1 species, Solanaceae-5 species, Umbelliferae-1 species, Verbenaceae-2 species, Malphigaceae-2 species, Magnoliaceae-1 species, Zygophyllaceae-1 species,Piperaceae-1species etc.) (see images of Ethnotaxanomic flora 1-9 4 , Table no. 1-2 & Graph no.1) Tapti River is under increasing pressure due to drought, erosion and over exploitation, pollution, enchroachment by human activity. The above factors have causes reduction in number of Ethnotaxanomical species as well as wetland area. So these area need conservation of aquatic and wetland species , because wetland is the are which supports aquatic , amphibians and terrestrial life forms. Present study signifies Ethnotaxanomical importance of the plants species occur near Tapti River at historical Shahi Qila fort in district Burhanpur, Madhya Pradesh, India.

Keywords - Ethnotaxonomy, Historical Shahi Qila fort Flora , Tapti River , Burhanpur, Madhya Pradesh, India.

Introduction - A number of terms are used in varied areas of Ethnobotanical research, such as Ethnotaxanomy, deals with the naming and classification of plants and their cultivators by human societies in their language. The Ethnobotany was first coined by Harsh berger in 1895. The abstract relationship of man with plants includes faith in the good or bad powers of plants, taboos, avoidances, sacred plants, workship and folklore. The Shahi Qila was a majestic palace in Burhanpur, located to the east of the Tapti River. Little except ruins remain of the palace. However, the parts that still stand display amazing works of sculpture and exquisite carvings. History of the Shahi Qila states that it was originally built by the Farooqui rulers and resided by Shah Jahan, at a time when he was the governor of Burhanpur. Shah Jahan became so fond of the fort that it was here, in Shahi Qila that he establishes his court for the first three years of his ascending the throne.Shah Jahan spent a considerable time in this city, and helped add to the Shahi Qila. Diwan-i-Aam and Diwan-i-Khas were built on the terrace of the Qila. (images 1-6).

Images 1-6:Burhanpur the cultural heritage city, study area & location near Tapti River at Historical Shahi Qila in District Burhanpur, M.P., India.



* **H.O.D. (Botany) S.G.J.Quaderia College, Burhanpur (M.P.) INDIA**











The Surya Putri Kuwari Holy Tpti River flows to the west from Historical Burhnapur. Burhanpur is glorified by nature having various holy ponds (Triveni sangam of Tapti , Utawali and Mona River) and elevated satpura hills. The entire forest area , exquisite water falls (Mahal Gurara, Jammupani) and rich biodiversity make this place a great destination for both religious place a great destination for both religious minded people and the researchers. Little attention has been paid to the systemic study of aquatic and wetland plants of india. An account of Hydrophytic plants of India was published by Biswas and Calder (1936) and Subramanyam (1962). Recently Cooke (1966) published a volume on aquatic and wetland plants of India. In Madhya Pradesh Maheswari (1960), Tiwari (1960), Choudhary and Upadhyay (2009) and Annand et al,(2012) undertook the taxanomic study of aquatic angiosperms.

Materials And Methods - In The present study monthly field observations were undertaken in near Tapti River at Historical Shahi Qila fort in Disrict Burhanpur, Madhya Pradesh, India from 2015-16. Plain are is also studied here. Qualitative and quantitative analysis of ethinotaxanomical important plants was done by following the methodology of Mishra (1974). The collected specimens were identified with the aid of floras (Cook ,1966), Khanna (1993-2001)and other sources. The collected specimens were pressed and herbarium was prepared followed (Jain and Rao ,1977). All specimens were deposited in the department of Botany , S.G.J.Quaderia College, Burhanpur, (M.P), india. (see images of ethnotaxonomic flora 1-94, table no.1-2 & Graph no.01)

Result And Discussion - A total of 94 species belonging to 90 genera and 41 families have been reported from near Tapti River at historical Shahi Qila fort in District Burhanpur, Madhya Pradesh, India. Ethnotaxonomically most important families are Monocots-2(Liliaceae- 3 species and poaceae-3 species) and dicots families – 37 (Apocynaceae- 4 species, Asclepidaceae – 2 species, Annonaceae – 1 species, Amaryllidaceae – 1 species, Asteraceae – 2 species, Arecaceae – 1 species, Amarnthaceae – 1 species, Acanthaceae – 1 species, Anacardaceae – 1 species, Caesalpinoideae – 5 species, Casurinaceae – 1 species, Cactaceae – 1species, Convolvulaceae -2 species, Combretaceae – 1species, Cruciferae- 1 species, Caricaceae -1 species, Cupressaceae -1 species, Cannaceae-1 species, Euphorbiaceae-8 species, Labiatae-2 species, lamiaceae-1 species, Lythraceae-1 species, Leguminosae-1 species, Mimosodeae-3 species, Myrtaceae-3 species, Malvaceae-2 species, Nymphiceae-2species, Orchidaceae-1 species, Moraceae-2 species, papilionaceae-2 species, Moringaceae-1 species, Rhanaceae-1 species, Solanaceae-5 species, Umbelliferae-1 species, Verbenaceae-2 species, Malphigaceae-2 species, Magnoliaceae-1 species, Zygophyllaceae-1 species, piperaceae 1 species etc.) (see images of Ethnotaxanomic flora 1-9 4 , Table no. 1-2 & Graph no.1).

Conclusion - Ethnotaxonomical flora near Tapti River at Historical Shahi Qila fort exhibited a heterogenous assemblage of 94 species belonging to 90 genera and 41 families from the area , out of them Euphorbiaceae turned out as dominant family having 08-species followed by Solanaceae with 05-species and Apocynaceae with 04-species (see graph no.01) Tapti River is under increasing pressure due to drought , erosion and over exploitation, pollution , enchroachment by human activity. The above factors have causes reduction in the number of flora as well as wetland area. These area need conservation of aquatic and wetland flora .

The present study provides information in ethnotaxonomical importance of the plant species in burhanpur region. It is clear from the investigation date local people have great expertise with the plants of there own environment. The occurrence of a number of economically important species has enhanced the conservation as well as socio economic values of the area particularly in view of religious aspect of the area. Further more , the over exploitation of species for fuel , medicine , wild edibles and house building may lead to decline of these species from the area. So conservation and cultivation of these plants species with help to maintain the ecological balance , traditional knowledge as well as livelihood security of local inhabitants.

Table No.01 (see in last page)

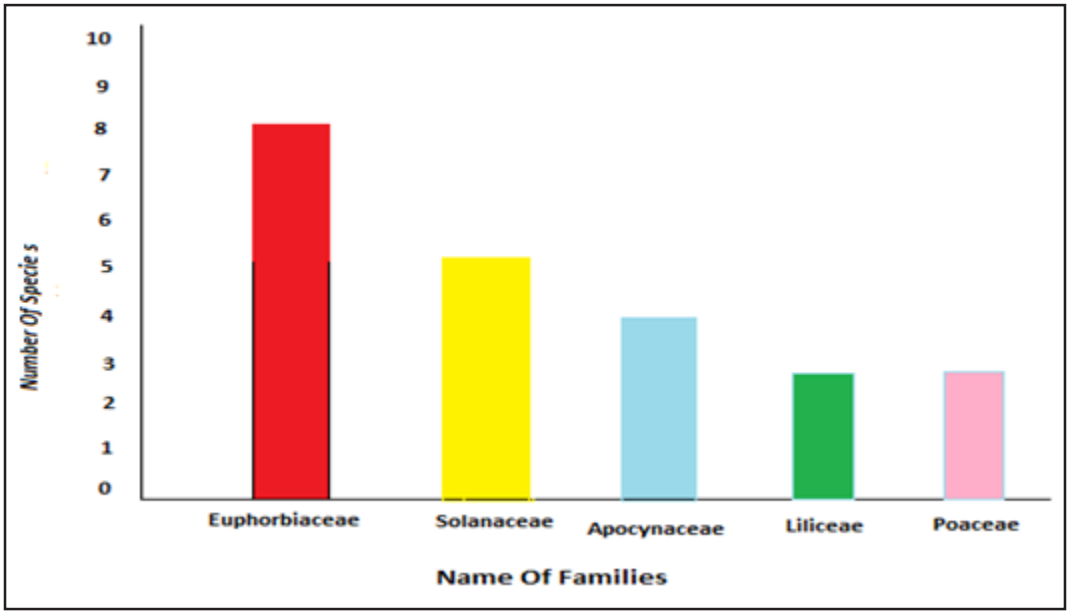
Table No.2 – Statistical analysis of Flora near Tapti River at Historical Shahi Qila fort Burhanpur, M.P., India.

S.	Group	Families	Genera	Species
1	Dicots	39	84	88
2	Monocots	02	06	06
G.t.		41	90	94

Acknowledgement - I am grateful to the worthy members of the S.G.J.Quaderia college, Burhanpur, M.P.(Quaderia Edictional and cultural society Burhanpur, M.P., India.) for permitting me to carry out this study.I am also thankful to respected director Prof.M.H. Salim, Principal Prof.Dr.M.I.R.Khan, Prof. Shaikh Mohammed, Prof.Dr.Shakeel, Prof.R.K.George and staff members of Botany Deptt. For encouraging and support during this task.

References :-

1. Anand , K., Arjun, P. and Achuta, N.S.2012. Aquatic macrophytes of Betul district (M.P.) Journal of Non-Timber Forest ,prod,vol.19(2):pp13-137
2. Biswas , K & calder, c.c.1936.Handbook of common water and Marsh plants of India and Burma Rep.1984.Bishen singh Mahendra pal singh.Dehradun.
3. Choudhary . M. & upadhyay,R.2009. A contribution to aquatic angiosperms flora of hosangabad j.eco.tax.33(1):pp155-161
4. Cook,C.D.K.1996. Aquatic and wetland plants of india.oxford university press London.
5. Hooker J.D.Flora of British India.BSI publication, Calcutta. India.vol.1-7(1892-1897.)
6. Maheswari,J.K.1960 .The vegetation of Marshes Swamps and rivers sites in khandwa district (M.P) j.Bombay nat.Hist.Soc.57:pp371-387
7. Mishra,r.(1968).Ecology workbook . New Delhi
8. Subramanyam,K.1962.Aquatic Angeosperms CSIR,New Delhi, india.
9. Mudgal,V.K.K.Khanna & Hazari p.k.1993.Flora of M.P. part-I,BSI publication Calcutta ,India.
10. Mudgal,V.K.K.Khanna & Hazari p.k.1993.Flora of M.P. part-II,BSI publication Calcutta ,India.
11. Mudgal,V.K.K.Khanna & Hazari p.k.1993.Flora of M.P. part-III,BSI publication Calcutta ,India.



Graph No.1 – Dominant families of the sampling sites



Image no.1 – Amaltas (Cassia fistula)



Image no.2 – Arandi (Ricinus communis)



Image no.3 – Babool (Acacia arobica)



Image no.4 – Imli (Tamarindus Indica)



Image no.5 – Casurina (Casurina-equisitifolia)



Image no. 6 – Jamun (Syzygium cuminii)



Image no.7 Aak (Calotropis procera)



Image no.8 Karonda (Carissa spinarum)



Image no.9 – Ashwgand (Withania somnifera)



Image no.10 – Lazwanti (Minosa pudica)



Image no.11 – Satawar (Asparagus recemosus)



Image no.12 – Gudhal (Hibiscus rosa synansis)



Image no.13 – Kala datura
(Stramonium alba)



Image no.14 – Amarbel
(Cuscuta reflexa)



Image no.15 – Gokru
(Tribulus terresteris)



Image no.16 – Tulsi
(Ocimum sanctum



Image no.17 – Bhata
(Solanum melongena)



Image no.18 – Safed Musli
(Chlorophytum tuberosum)



Image no.19 – Kankarwa
(Clitoria turnata)



Image no.20 – Baas
(Dendrocalamus strictus



Image no.21 – Doob ghass
Cynadon dactylon



Image no.22 – Ghass
(Pennicum Indiccum)



Image no.23 – Gulmohar
(Delonix regia)



Image no.24 – Neebu
(Citrus lemonia)



Image no.25 – Nagfani
(Opuntia dillenii)



Image no.26 – Ber
(Zizyphus moureitiana)



Image no.27 – Mithi Neem
(Murraya koenigii)



Image no.28 – Willayati Babool
(Parkinsonia aculeota)



Image no.29 – Willayati Imli
(Pithecolobium dulce)



Image no.30 – Shehtoot
(Morus alba)



Image no.31 – Munga
(Moringa elleffera)



Image no.32 – Sitafal
(Annona squamosa)



Image no.33 – Selfund
(Euphorbia nivulia)



Image no.34 – Sheeshum
(Dalbergia latifolia)



Image no.35 – Deshi Badam
(Terminalia catappa)



Image no.36 – Neem
(Azadirachta Indica)



Image no.37 – Neelgiri
(Eucalyptus teretecornis)



Image no.38 – Peepal
(Ficus religiosa)



Image no.39 – Badh
(Ficus bengalensis)



Image no.40 – Sagoon
(Tectona grandis)



Image no.41 – Jangli Tulsi
(Ocimum basilicum)



Image no.42 – Bhatkattiya
(Solanum zanthocarpum)



Image no. 43 – Bhindi
(Abelmoscus esculentus)



Image no. 44 – Pudina
(Mentha species)



Image no.45 – Gulab
(Rosa damascene)



Image no.46 – Pyaz
(Allium sepa)



Image no.47 – Pili Sarsoo
(Brassica campestris)



Image no.48 – Bottle brush
(Callistemon species)



Image no.49 – Firebus
(Hamelia patiens)



Image no.50 – Sadabahar
(Vinka rosea)



Image no.51 – Euphorbia
(Euphorbia pulchrryma)



Image no.52 – Kaner
(Thevelia peruviana)



Image no.53 – Kamal
(Nymphia species)



Image no. 54 – Genda
(Tagetes erecta)



Image no.55 – Petunia
(Petunia species)



Image no.56 – Kagaz ke phool
(Polygonum species)



Image no.57 – Mehndi



Image no.58 – Satyanashi
(Argimone mexikiana



Image no.59 – Makoi
(Solanum nigram)



Image no. 60 – Dhaniya
(Coriandrum sativum)



Image no.61 – Peeli kaner
(Casebella thevetia)



Image no.62 – Palm
(Chanaeroos humilis)



Image no.63 – Eupohorbia
(Euphorbia hirta)



Image no.64 – Papita
(Carica papaya)



Image no.65 – Khatti buti
(Oxalis cormiculata)



Image no.66 – Chaulai
(Amaranthus spinosus)



Image no.67 – Sitab
(Ruta graviens)



Image no.68 – Aadusa
(Adhatoda vasica)



Image no.69 – Champa
(Michelia Champaeca)



Image no.70 – Aam
(Mangifera Indica)



Image no.71 – Jaam
(Psidium gujava)



Image no.72 – Aaula
(Phyllanthus fraternas)



Image no. 73 – Beel
(Aegle marmelos)



Image no.74 – Gwarpatha (Aloe vera)



Image no.75 – Nirgundi
(Vitex migundol)



Image no.76 – Croton
(Codicum varigatum)



Image no.77 – Vidhya
(Platyeladus orienpalis)



Image no.78 – Desi Gulab
(Rosa Indica)



Image no.79 – Gulab
(Rosa domoscena)



Image no.80 – Gulab
(Rosa multiflora)



Image no.81 – Lilly
(Zephyranthes citring)



Image no.82 – Madhumati
(Gelphimia gracilis)



Image no.83 – Falseagave
(Furcraea gracilis)



Image no.84 – Kelly
(Canna Indica)



Image no.85 – Sultan
(Acalypha hispida)



Image no.86 – Kamal
(Nymphaea nouchali)



Image no.87 – Hydrilla
(Hydrilla verticillata)



Image no.88 Dawal
(Pephrosia purpurea)



Image no.89 – Paan
(Piper bettle)



Image no.90 – White Dathura
(Dathura alwa)



Image no.91 – Ageratum (Ageratum colyzoides)



Image no.92 – Ashoka
(Saraca Indica)



Image no.93 –
(Phuli (Tridex procumbens)



Image no.94 Suryamukhi
(Helianthus annus)

S.No	Flora Local Name	Total No of Plants	Popular Name Famous Name	Botanical Name	Family
Small Size Trees					
1	Amaltas	02	Amaltas	Cassia fistula	Caesalpinoideae
2	Arandi	01	Arandi	Ricinus communis	Euphorbiaceae
Medium Size Tress					
3	Babool	02	Babool	Acacia arobica	Mimosoideae
Large Size Tress					
4	Imli	01	Imli	Tamarindus Indica	Caesalpinoideae
5	Casurina	20	Casurina	Casurina equisitifolia	Casurinaceae
6	Jamun	01	Jamun	Syzygium Cuminii	Myrtaceae
Bushes					
7	Aak	02	Aak	Calotropis Procera	Aselepiadaceae
8	Karonda(Kakronda)	01	Karonda	Carissa Spinarum	Apocynaeeae
Undergrowth					
9	Ashwgandha	05	Ashwgandha	Withania Somnifera	Solanaeae
10	Lazni	10	Lazwanti	Mimosa Pudica	Mimosoidae
11	satawari	01	Satawar	Asparagus recemosus	Liliaceae
12	Gudhal	01	Gudhal	Hibiscus rosa, Synansis L.sp.pl.	Malvaceae
Small Bushes					
13	Kala Datura	04	Datura	Motel	Solanaceae
14	Amarbel Herbs	01	Amarbel	Cuscuta reflexa	Convolvulaceae
15	Gokru	10	Gokru	Tribulus terresteris terresteris	Zygophyllaceae
16	Tulsi	10	Tulsi	Ocimum Sanctum	Labiatae
17	Bhata (Brinjal)	05	Began	Solanum Melongena	Solanaceae
18	Safed Musli	05	Safed Musli	Chlorophytum tuberosum	Orchidaceae
Climbers					
19	Kankarwa	04	Kankarwa	Clitoria turnata	Papilionaeeae
Bamboo					
20	Bamboo	01	Bamboo	Dendrocalamus strictus	Poaceae
Grass					
21	Duba	-	Doob	Cynadon dactylon	Graminae(poaceae)
22	Common Ghass	-	Ghass	Pennicum Indicum	Poaceae
Small Size Tress					
23	Gul Mohar	07	Gul Mohar	Delonix regia	Caesalpinoideae
24	Nimbu (citrno)	03	Neebu	Citrus Lemonia	Rutaceae

25	Nagfani	04	Nagfani	Opuntia Dillenii	Cactaceae
26	Baer (Zizipus)	01	Ber	Zizyphus moureitiana	Rhanaceae
27	Mithi Neem	05	Mithi neem	Murraya Koenigii	Miliaceae
28	Willayati Babool	01	Willayati Babool	Parkinsonia Aculeota	Caesalpinoideae
29	Willayati Imli	01	Willayati Imli	Pithecolobium dulce	Papilionaceae
30	Shehtoot	01	Shehtoot	Morus alba	Moraceae
31	Sejha	01	Munga	Moringa elleffera	Moringaceae
32	Sitafal	10	Sitafal	Annona squamosa	Annonaceae
33	Selfund	01	Nivarang	Euphorbia nivulia	Euphorbiaeeae
Medium Size Trees					
34	Sheeshum	08	Sheeshum	Dalberia Latifolia	Papilionateae
35	Deshi Badam	06	Deshi Badam	Terminala catappa	Combretaceae
36	Neem	20	Neem	Azadirachta indica	Meliaeeae
37	Neelgiri	01	Neelgiri	Eucalyptus teretecornis	Myrtaeeae
38	Peepal	20	Peepal	Ficus religiosa	Moraceae
39	Badh	01	Bargad	Ficus bengalensis	Moraceae
40	Saggon	01	Sagoon	Teetona Grandis	Verbenaceae
Medicinal Plants					
41	Jangli Tulsi	10	Jangli Tulsi	Ocimum basilicum	Labiateae
42	Bhat Kattiya	04	Bhat Kattiya	Solanum zanthoearpum	Solanaeeae
43	Bhindi	10	Okra	Abelmosecus eseulentus	Malvaceae
44	Pudina	10	Mentha	Mentha sp.	Lamiaceae
45	Rose	05	Gulab	Rosa damascena	Rosaceae
46	Pyaz	10	Onion	Allium Sepa	Liliaeeae
47	Pili Sarsoo	05	Yellow mustard	Brassica campestris	Cruciferae
Ornamental Plants					
48	Bottle Brush	01	Bottle brush	Callistemon sp.	Myrtaeeae
49	Firebush	03	Firebush	Hamelia patiens	Rubiaceae
50	Sadabahar	10	Sadasuhagan	Vinka rosea	Apoeynaeeae

51	Euphorbia	04	Euphorbia	Euphorbia pulchrryma	Euphorbiaeeae
52	Kaner	13	Kaner	Thevelia peruviana(pers)schum	Apocynaeeae
53	Kamal	04	Lotus	Nymphia sp.	Nymphiceae
54	Genda	10	Genda	Tagetes erecta	Asteraceae
55	Petunia	10	Petunia	Petunia sp.	Solanaeeae
56	Kagaz ke phool	10	Kagaz ke phool	Polygonum sp.	Polygoniaceae
57	Mehndi	04	Mehndi Heena	Lewsonia inermus(L.)	Lythraceae
			Family		
58	Satyanashi	10	Pilicatai	Arqimone mexsikiana	Papaveraceae
59	Makoli	10	Makoli	Solanum nigram	Solanaceae
60	Dhaniya	02	Dhaniya	Coriandrum sativum	Umbelliferae
61	Peeli Kaner	13	Peeli Kaner	Casebella thevetia (L.)	Apocynaeeae
62	Palm	03	Palm	Chamaerops humilis L.	Arecaceae
63	Euphorbia	04	Euphorbia	Euphorbia hirta	Euphorbiaceae
64	Papita	06	Papaya	Carica Papaya	Caricaceae
65	Khatti Buttti	05	Khatti Butti	Oxalis cormiculata	Euphorbiaceae
66	Chaullai	10	Chaulai	Amaranthus spinosus	Amaranthaeeae
67	Sitab	04	Sitab	Ruta graviens	Rutaeeae
68	Andosa	05	Aadusa	Adhatoda vasica	Aconthaeeae
69	Champa	01	Champa	Michelia champaea Linn	Magnoliaceae
70	Mango	01	Aam	Mangifera indica L.	Myrtaeeae
71	Amrood	02	Jaam	Psidium gujava L.	Anacardiaceae
72	Aaula	02	Aaula	Phyllanthus fraternas	Enphorbiaeeae
73	Beel	01	Beel	Aegle marmelos (L.)	Rutaeeae
74	Gwarpatha	10	Gwarpatha	Aloe vera L. Burm L.	Liliaceae
75	Nirgundi	01	Nirgundi	Vitex- migundol	Verbenaeeae
76	Croton	03	Croton	Codicum Varigatum(L.)BLBijp.	Euphorbiaeeae

77	Vidhya	20	Thuja(Morpankh)	Platy eladus orientalis(L.)	Cupressaceae
78	Gulab	2	Gulab	Rosa indica L.sp.	Rosaceaae
79	Gulab	1	Gulab	Rosa domoscena Mill.	Rosaceae
80	Gulab	1	Gulab	Rosa multiflora thunb.	Rosaceae
81	Yellow rain lily	20	Yellow rain lily	Zephyranthes citring baker.bot.	Amaryllidaceae
82	Madhumati	04	Madhumati	Gelphimia Gracilis (Bart c)	Malphigaceae
83	Giant	02	False agave	Furcraea gracilis(Barti)	Malphigaceae
84	Kelly	02	Kardal	Canna indica L.sp.pl.	Cannaceae
85	Sultan	05	Sultan	Aealypha hispida Jpg.	Euphorbiaceae
86	Kamal	04	Kamal ka phool	Nymphaea nouchali burm	Nympheae
87	Hydrilla	10	Hydrilla	Hydrilla Verticillata(L.f.)Royle	Hydrocharitaceae
88	Dawal	02	Anjan Lokariya	Tephrosia purpurea(L.) Pres.	Liguminosae
89	Paan	10	Paan	Piper bettle	Piperaceae
90	White Dathura	05	White Dathura	Dathura alba	Solanaceae
91	Ageratum	10	Ageratum	Ageratum colyzoides	Asteraceae
92	Ashoka	05	Ashoka	Saraca Indica	Leguminosae
93	Phuli	20	Phuli	Tridex procumbens	Asteraceae
94	Suryamukhi	01	Suryamukhi	Helianthus annus	Asteraceae

****

Analysis Of Cyanophycean Biodiversity In Motia Tank, Bhopal

Bharti Khare *

Abstract - The present study focused on cyanophitic diversity of Motia Tank. In this study an attempt has been made to identify the taxa of Cyanophyta in premonsoon, monsoon, summer and post monsoon seasons i.e. from June 2013 to July 2015. A total of 21 Genera and 54 species of cyanophyta were observed during the course of study. Oscillatora, Microcystis and Chlorococcus were found as dominant genera.
Key words - Cyanophyta, Bhopal, Motia Tank, diversity.

Introduction - Plankton is primary producers responsible for a large part of the earth's global primary photosynthetic production. The success of these photosynthetic organisms lies in their ability to use solar energy and nutrients and to cope with a fluctuating environment. Thus, light, nutrients, and water mixing plays a key role in the evolution of their life history traits, their physiology and ecology.

Cyanophyta is a very old group of organisms and represent relics of the oldest photoautotrophic vegetation in the world that occur in freshwater, marine and terrestrial habitats. Cyanophyta have been identified as one of the most promising group of prokaryotes from which various biologically active natural products were isolated. Cyanophyta from local habitats seem to be a source of potential new active substances that could contribute to reduction of the number of bacteria, fungi, viruses and other microorganisms.

Motia Tank, a perennial water body is located adjacent to the Taj-ul-Masjid on the northwest of the Bhopal City. It is a man-made Lake, constructed in the late 19th Century A.D. It was initially meant to provide pre-prayer ablution facility to the Muslim devotees visiting the monumental Taj-ul-Masjid. The water body has important aesthetic value and is situated in the densely populated area of the old city of the Bhopal.**(Map see in the last page)**

Materials and methods - Fortnightly collection of water sample was done from all the stations of Motia Tank. Physicochemical parameters were analyzed using standard methods of APHA (1998) and Khanna and Bhutiani(2008). The algal sample collection carried out with the help of truncated cone shape plankton net. The plankton net is made of bolting silk No.25 standard grade. This has an aperture size of 0.064mm. The sample was concentrated by sedimentation method, removing this supernatant by decanting and the desired final volume was obtained. For counting, 1ml of concentrated sample was taken and placed Sedgwick Rafter Counting Cell following the standard methods of APHA (1998), Trivedi and Goel (1986), Hutchinson (1967) and Khanna and Bhutiani (2008). The concentrated was preserved in 4% Formalin for study (Welch, 1952).

Given formula is used to calculate percentage -

$$Percent = \frac{No.\ of\ Taxa}{Total\ No.\ of\ Taxa} x100$$

Results and discussion - The results of percent composition of various genera of cyanophyta in Motia Tank are given in Table-1 and Fig.1. During course of study a total of 54 species of Cyanophyta were found i.e.*Microcystis aeruginosa,M.elongate,M.flosaquae,M. pseudofilamentosa, Chlrococcus limneticus, C.micrococcus, C. minor,, C. turgidus, Gloeothece rupestris, G.samoensis, Aphanocapsa koordersi, A. biformis, A. pulchra, Aphanothece nidulans, A. pallida, Dactylococcopsis fascicularis, ,Gomposphaeria aponica, G. lacustris, Merismopedia elegans, M. punctate, M. tenuissima, Oscillatoria acuta, O. amphibian, O. amphigranulata, O. chalybea, O. jasorevensis, O. laete-virens, O. princeps, O. salina, O. sancta, O. subbrevis, Phormidium calcicola, Lyngbya magnifica, L. majuscule, L. spirulinoides, Anabaenopsis arnoldii, Cylindrospermum indicum, C. sphaerica, Nostoc commune, N. sphericum, Anabaena ambigua, A. aphanizominoides, A. flos-auae, Raphidiopsis indica, R. mediterranea, Aulosira fritschii, Scytonema coactile, S. pascheri, Calothrix castellii, Rivularia aquatic, R. bacearianа, R. dura, Gloeotrichia kurziana and G. raciborskii.*

Table-1 - Percentage composition of various genera of Cyanophyta in Motia Tank

No.	Genera	No. of taxa	Percentage
1	Microcystis	4	7.40
2	Chlorococcus	4	7.40
3	Gloeothece	2	3.70

* (Botany) M.L.B. Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

4	Aphanocapsa	3	5.55
5	Aphanothece	2	3.70
6	Dactylococcopsis	1	1.85
7	Gomphosphaeria	2	3.70
8	Merismopedia	3	5.55
9	Oscillatoria	10	18.15
10	Phormidium	1	1.85
11	Lyngbya	3	5.55
12	Anabaenopsis	1	1.85
13	Cylindrospermum	2	3.70
14	Nostoc	2	3.70
15	Anabaena	3	5.55
16	Raphidiopsis	2	3.70
17	Aulosira	1	1.85
18	Scytonema	2	3.70
19	Calothrix	1	1.85
20	Rivularia	3	5.55
21	Gloeotrichia	2	3.70
	Total	**54**	

In the Motia Tank different Genera in order of frequency of occurrence well Oscillatoria, Microcystis and Chlorococcus. These were dominant out of total 54 Genera and by predominance species of Aphanocapsa, Lyngbya and Merismopedia. Several workers such as Agarkar (1975),Anand (1988), hammer (1964), Narayan (2006), Oommachan (1981) found similar frequency of algae during their study. **(Graph See in the next page)**

References :-

1. Agarkar, M. S. (1975). Ecology of Algae of Bhopal. Ph.D. Thesis of A.P.S. University, Rewa, India.
2. A.P.H.A.(1998).Standard method for the examination of water and wastewater,20th Edition, American Public Health Association Washington D C.
3. Anand, V. K. (1988). Limnology of fresh water algae of the Gadigarh Stream. Jammu. J. Curr. Bio. Sci. 5(1): 11-16
4. Biswas, S. (1972). Hydrobiologia, 39: 377-388.
5. Desikachary, T. V. (1959). Cyanophyta, I.C.A.R., New Delhi
6. Hammer, U. T. (1964). The Succession of Bloom Species of Blue-Green Algae and Some Casual Factors. Verh. Int. VereinLimnol., 15: 829-836.
7. Hutchinson, G. E. (1967). A treatise on Limnology Vol. II. Introduction to lake biology and limnoplankon, New York. John Wiley and Sons, pp. 1115.
8. Khare, B. (2010). Ecology of Certain Small Water Bodies of Bhopal with Special Reference to Cyanophyta; Ph.D. Thesis of Burkatullah University Bhopal, India.
9. Khare, B. and P. Patil (2011) Indian Hydrobiology Journal Chennai 14 (1): 8- 21.
10. Narayan, K. P., Shalini Tiwari, Saurabh. Pabbi, Sunil. Dhar, Dolly Wattal., (2006). Biodiversity Analysis of Selected Cyanobacteria. Current Sci. 91(7): 10.
11. Oommachan, L. (1981). Ecological studies on lower lake of Bhopal (M.P.) with special reference to benthic fauna. Ph.D. Thesis, Bhopal University, Bhopal, India.
12. Patil, P. (1982). An ecological study of the algal flora of lakes of Bhopal Ph.D. Thesis, Bhopal University, Bhopal, India.
13. Trivedi, R.K. and P.K. Goyal (1986). Chemical and biological methods for Water Pollution Studies. Environmental publications, Karad, India. P. 215
14. Valecha, V. (1985). Ecology of Phytoplankton in Lower Lake of Bhopal, Ph.D. Thesis. Bhopal University, Bhopal.
15. Welch, P. S. (1952). Limnology. 2nd Ed. Mc Gram Hill Book Co., Inc., 1 – 538.



Motia Tank Sampling Stations

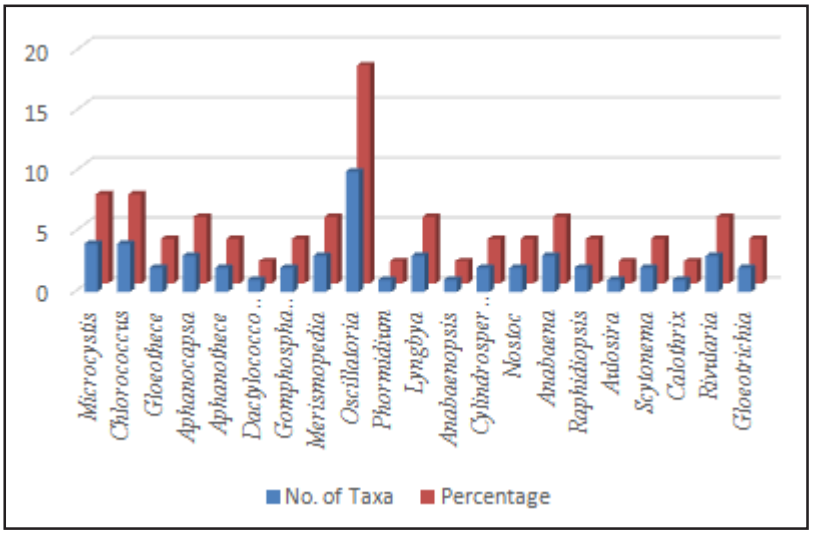


Fig.1- Percent composition of various Genera

****

Antidiabetic, Hypocholesterolemic And Lipid Profile Activities Of *Allium sativum* Bulb Extract In Streptozotocin Induced Diabetic Rats

V.K. Shakya *

Abstract - *Allium sativum,* family Liliaceae is one of the most commonly used plants in the management of free radicals related diseases. The concerned study reveals the experimental investigation on blood glucose and serum lipid profile measured to effect of *A. sativum* in both normal and streptozotocin induced diabetic rats. There was significant reduction not only blood glucose, total cholesterol but also lipid profile like low density, high density lipoprotein and triglycerides in diabetic rats. All animals were randomly divided into seven groups with six animals in each. Group I (normal control), group - II (diabetic untreated), group - III/IV/V was given 100, 250 and 500 mg/kg bw respectively alcoholic extract of *A. sativum* daily for 4 weeks. Group VI was given 500 mg/kg bw of herbal drug and group VII was given 500 µg/kg bw of standard drug. The alcoholic bulb extract doses were administered orally once a day. In the present study *A. sativum* showed significant reduced blood glucose level from 288.24 ± 7.48 to 115.09 ± 12.02, total cholesterol level from 310.15 ± 8.29 to 107.19 ± 7.60 ($P<0.05$), protein lipid profile LDL 164.3 ± 14.8 to 97.3 ± 18.9 and HDL 35.7 ± 9.9 to 52.1 ± 8.6* was observed 28 days period in diabetic treated group at the doses of 500 mg/kg body weight. Thus, the findings suggest that alcoholic extract of *A. sativum* posses hypocholesterolemic and lipid profile activity to warrant further detail study to elucidate its therapeutic and phytochemical properties.
Keywords: *Allium sativum*, antidiabetic, hypocholesterolemic, lipid profile, streptozotocin, phytochemical.

Introduction - India is a country with a vast reserve of natural resources and rich legacy of traditional medicine. In the indigenous system of medicine (Ayurveda) it was mentioned that there are large number of plants for the cure of diabetes or 'Madhumeha' and some of them have been experimentally evaluated and the active principles were isolated. However, search for novel antidiabetic drugs still continues. By reviewing the entire literature, it seems that diabetes is growing very rapidly in Indian population. This is because of change in life style and the fast food getting popular day by day. Therefore, it was thought important to investigate some medicinal plants, which are quite abundant and can be easily stored under laboratory condition without much deterioration in their contents and quality. Some of them have been experimentally evaluated and active principles have been isolated by some prominent workers. **[1, 2]** The herbal medicines are apparently effective and produce less frequent side effects and are relatively inexpensive as compared to oral synthetic hypoglycemic agents. In accordance to the recommendation by the WHO expert committee on diabetes mellitus, investigations on hypoglycemic agents from medicinal plants have become more important. Medicinal plants and their bioactive constituents are used for the treatment of diabetes mellitus throughout the world, especially in countries where access to the conventional treatment of diabetes mellitus is inadequate. They have reported *Pongamia pinnata* commonly known as 'Karanja' for lowering blood glucose level. **[3]** *Terminalia arjuna* bark extract is very popular as cardiovascular disease showed effect on the lipid profiles by prevention medicine. The use of this plant in diabetic related cardiac failure is quite interesting. **[4]** The effect of *Adhatoda vasica* leaf extract noticed on lipid peroxidation and xenobiotic metabolism **[5]** and onion and garlic sulfoxide amino acids reduce blood sugar in rats. **[6]** *A. sativum* role of diet Nutrients, Spices, Natural Products in Diabetes Mellitus **[7]**, hypoglycemic activity **[8]**, a list of several hundred species, which had antidiabetic properties. **[9, 10, 11]**

Most of the medicinal plants are scientifically validated for their therapeutic efficacy and safety. There are several species of medicinal plants popularly used in the treatment of diabetes mellitus. Still there is a need to search more effective drugs with fewer side effects for the treatment of diabetes. Oxidative stress has been shown to play role in the elevation of diabetes and related problem. In diabetes, protein glycation and glucose auto-oxidation may generate free radicals, which in turn catalyze lipid peroxidation. Alloxan produces oxygen free radical in the body, which cause pancreatic injury and could be responsible for increased blood glucose level.

Diabetes mellitus is now recognized as serious global health problem. There is world wide epidemic of diabetes. Besides this, the emergence of the concept of insulin

* **Assistant Professor (Zoology) Govt. Sanjay Gandhi Smarti P.G. College, Ganj Basoda, Vidisha (M.P.) INDIA**

resistance and description of diabetes as the metabolic, dyslipidemic, cardiovascular syndrome has warranted a need for the development to different strategies in the investigation of newer antidiabetic drugs. Diabetes mellitus means the hyperglycemia due to lack of insulin this also take place due to the over production of other hormones of the anterior pituitary, adrenal and thyroid gland which are antagonistic to insulin. The management of diabetes mellitus is considered a global problems and successful treatment is yet to be discovered. The modern drugs, including insulin and oral hypoglycemic agents, control the blood sugar level as long as they are regularly administered.

The plants were used as medicine in India, China, Egypt and Greece long before the beginning of the Christians era. Therefore, the science of medicine in those days developed only around plants having the last several centuries has given us a store of innumerable plants, which are of great use in the treatment of diseases and as sources of food. The present paper reports the antidiabetic activity of flavonoid glycoside isolated from *Allium sativum* in experimental rats.

Experimental:

Plant Material - *Allium sativum (Linn.)* commonly known as garlic, softneck, hardneck, rocambole garlic belonging to the family Liliaceae - Alliaceae (Lily Family). After proper identification in the botany department,S.L.L. Jain college, Vidisha a voucher specimen of the plant was procured in herbarium record at S. No. 23. in Pest Control and Ayurvedic Drug Research Laboratory in the Department of Zoology, S.S.L. Jain Collage Vidisha (M.P.) India. Garlic is a annual perennial herb, cultivated in most parts of the India. It is a hardy bulbous perennial widely cultivated crop, one of the oldest vegetable crop. It is found in the garden and field throughout the country. Garlic is an upright plant that grows upto about 60 cm tall, the long sword-shaped leaves grow from the bulb and bulb remains beneath the surface of the soil. Garlic has been used throughout recorded history for both culinary and medicinal purposes. It is used to treat all manner of illnesses including fevers, diabetes, rheumatism, intestinal worms, colic, flatulence, dysentery, liver disorders, tuberculosis, facial paralysis, high blood pressure and bronchitis.

Preparation of extract - The air-dried cloves were grinded to powder about 40-60 mesh size. A known amount of powdered material 750 gm was used for extracted successively with solvent ethanol in a Soxhlet apparatus until exhaustion. The extraction was done for 48 hours duration and up to 8 cycles of extraction of the solvent. The crude extracts thus obtained were filtered using Watmen filter paper No. 1 and the solvents were evaporated to dryness under reduced pressure in a 'Vacuum Evaporator' (RE-100) at 40°C. This extract is concentrated on a vacuum evaporator and it was found to deposit for chromatographic separation and bioassay. The concentrate crude drug gave 10.55 % yield with reference to EtOH. The crude was successively extracted with Benzene, chloroform, ethyl acetate and ethanol. The extracts were used for the present study as shown in Table-(1).

Chemical analysis of crude drug - The biologically active compound was separated from the crude extract by column chromatography. It was following by TLC and column chromatography using Ethyl Acetate : Methanol : water (13 : 16 :10) solvent system. This gave four fractions. Each fraction was further chromatographed till a single spot was obtained as shown in Table-(2).

Acid hydrolysis of purified fraction - The compound was hydrolyzed with 10% H_2SO_4 in MeOH: H_2O (1 : 1) at 80^0C for 4 hours. The reaction mixture was neutralized with $BaCO_3$ and filtered. The filtrate was evaporated to dryness in vacuum to give a residue in which glucose was identified.

Methylation - The acid hydrolyzed fractions were methylated after the removal of methanol; the solution was extracted with ethyl acetate three times. The extract was crystallized with MeOH repeatedly.

Phytochemical Screening for Anthraquinone Glycosides :

Modified Borntrager's Test - 2 ml of the test sample was shaken with 4 ml of hexane. The upper lipophilic layer was separated and treated with 4 ml of dilute ammonia. The lower layer changed from violet to pink, it indicated the presence of anthraquinone. (Brindha et al., 1982; Harborne, 1998). **[12,13, 14]**

Test for Hydroxy-anthraquinones - When sample was treated with potassium hydroxide solution red colour was produced.

Animal materials - Healthy adult mail albino rats *Rattus norvegicus* of wistar stain weighing between 250-300 gm were obtained from Bharat Animal House Jahagirabad, Bhopal (M.P.) India. Animals were maintained to standard laboratory condition, allowed to get acclimatized to a standard pellet diet, Golden feed Pvt. Ltd., New Delhi and water ad libitum. Room temperature maintained at 25 ± 5°C with 12 hour light and dark cycle. All animal experiments were conducted according to the ethical approved by Ministry of Environment & Forestry, Committee for the Purpose of Control and Supervision of Experiments on Animals and Institutional Animal Ethics Committee guidelines. (Approval No. 804/03/CA/CPCSEA)

Induced of Diabetes - The animals were starved overnight then diabetes was induced by a single intraperitoneal injection of a freshly prepared STZ solution (50mg/kg body weight). Streptozotocin was dissolved in 0.1 M freshly prepared citrate buffer solution (pH 4.5). The animals were allowed to drink 5 % glucose solution overnight to overcome. After 5 days Streptozotocin administration, rats showing diabetes. Animal having blood sugar concentration between 250-350 mg were used for the experimental bioassay. The alcoholic extract of the *A. sativum* bulbs was administered orally at a concentration of 100, 250 & 500 mg/kg bw/ rat/ day for 28 days.

Experimental Design - The animals were divided into seven groups for the analysis of biochemical parameters. Each group has six animals.

Group(s)	Effective Doses (mg/kg bw)
Group I	Normal control rats.
Group II	Diabetic control rats.
Group III	Diabetic rats treated with *A. sativum* extract 100mg/kg bw orally.
Group IV	Diabetic rats treated with *A. sativum* extract 250mg/kg bw orally.
Group V	Diabetic rats treated with *A. sativum* extract 500mg/kg bw orally.
Group VI	Diabetic rats treated with *herbal drug* 500mg/kg bw orally.
Group VII	Diabetic rats treated with Standard Drug 500 ìg /kg bw orally.

Results And Discussion - Effect of three different doses of alcoholic extract of *A.sativum* were studied viz. 100mg, 250 and 500. The results were compared with two standard drugs one Ayurvedic 'Diabecon' and other allopathic Glibenclamide. The effect of different doses of *A. sativum* on the blood glucose levels were assessed in 7 days intervals till 28 days period. As shown in **Table (3)**, 500mg dose when given to the diabetic rats, it gave values from 288.24 ± 7.48 to 115.09 ± 12.02** in 28 days respectively. The results indicate a dose effective response of *A.sativum* bulb extract, where maximum concentration (500mg) causes 115.09 ± 12.02 percent reduction in the blood glucose level in a streptozotocin induced diabetic rats. The values were found to be quite significant at 5% level (P<0.05) as compared to the normal control and the values observed in the ayurvedic drug Diabecon and synthetic drug Glibenclamide treated rats. The value at higher doses is almost equal to the diabecon, which bring about 125.89 ± 7.29 percent reduction in the blood glucose level.

Beside the blood glucose level, total blood cholesterol level was observed in the present study and the results obtained after the treatment of *A.sativum* bulbs extract have been mentioned in **Table (4)**. As indicated in the table before treatment the total cholesterol was much higher in diabetic rats than in the normal control. After 4 weeks, the values were much higher in the diabetes untreated animals than control. There was a significant reduction in the blood cholesterol level, when 500mg dose of alcoholic extract of *Allium sativum* was given to the diabetic rats, the total cholesterol values as observed after 4 weeks period came to be 107.19 ± 7.60, which was near to the normal values. The treated diabetic animals showed almost like a normal rat's appearance. The overall behavior of the rats was normal after the plant extracts treatment. The values were however, found to be significant at 0.1% level using Dunnets Student t-test.

Protein lipid profile level was observed in the study and the results obtained after the treatment of *A. sativum* bulbs extract have been mentioned in **Table (5)**. The diabetic rat when treated with *Allium sativum* alcoholic extract at three different doses was found to be significant to reduce the LDL which was seen maximum 97.3 ± 18.9 after 28 days treatment at 500mg dose of the plant extract. The value was found to be quite significant at 5% level. (P<0.05) Similarly, HDL which was 35.7 ± 9.9 before treatment initial and 52.1 ± 8.6* in diabetic treatment at 500mg dose, where the HDL was a lightly higher in *A. sativum* extract treatment than the diabetic untreated animals (37.8 ± 15.2). The data presented in table 3,4 and 5 showed mean ± SEM. The biochemical parameters were analysed statically using ANOVA test. The result when compared with student t-test give the level of significance at P<0.05. The result of present study indicates that the ethanolic friction was found to be quite active, decreasing the blood glucose level, blood glucose and lipid profile also.

The effective reduction of LDL cholesterol by indigenous plant products. In the present study also reduction in LDL after treatment with *Coccinia indica* fruits extract was found to be 81.7 ± 12.6 almost equable to the normal control after treatment. Therefore, it is quite justified that garlic, which is a common spice used in Indian Kitchen have the antidiabetic and anti-lipidamic activities. Here it co-insides the finding of **Bhardwaj** *et.al.* (1994) **[15]** who have reported that a herbal powder of methi (*Trigonella foenumgraaccum*), Thmbdika (*Cephalandra indica*), Meshasringi (*Gymnema sylueskre*) was administered for a month period deduced LDL quite significantly. Effect of various extract of *Allium sativum* bulb and *Coccinia indica* fruits (200mg/kg orally) has been shown to reduced blood glucose level 27.2 % STZ-diabetic rats by flavonoid constituents. **[16, 17, 18, 19]**

Acknowledgement - I am thankful to Dr. R. C. Saxena for the guidance, CPCSEA for permission to work on albino rats and to SAIF, CDRI Lucknow for their help in spectral analysis of the plant extract.

References :-

1. **Smith**, S.A. and **Pogson**, C.I. (1981) The methabolism of L-tryptophan by liver cells prepared from adrenalectomized and streptozotocin diabetic rats. *Biochem. J.* ; **200**: 605-609.
2. **Kapur**, A., Shishoo, S., Ahuja, MMS, Sen, V. Mankame, K. (1998) Diabetes care in India - Physicians perceptions, attitudes and practices. *Int. J. Diab. Dev. Countries*; **18**: 124-130.
3. **Punitha**, R., Vasudevan, K. and Manoharan, S. (2006) Effect of *Pingamia pinnata* flowers on blood glucose and oxidative stress in alloxan induced diabetic rats. *Indian J. Pharmacol*.; **38(1)**: 62-63.
4. **Tiwari**, A.K., Gode, J.D. and Dubey, G.P. (1990) effect of *T. arjuna* on lipid profiles of rabbits fed hypercholesterolemic diet. *Int. J. Crude Drug Res.*; **28**:43-47.
5. **Singh**, R.P., Padmavathi, B. and Rao, A.R. (2000) Modulatory influence of *Adhatoda veisca* (Justica adhatoda) leaf extract on the enzyme of xenobiotic etabolism, antioxidant status and lipid peroxidation in mice. *Mol. Cell. Biochem.*; **213**:99-109.
6. **Sheela**, C.G., Kumud, K. and Augusti K.T. (1995) Antidiabetic effect of onion and garlic sulfoxide amino

acids in rats. *Planta Med*; **61**:356-357.

7. **Khan**, A. and **Safdar**, M. (2003) Role of diet Nutrients, Spices and Natural Products in Diabetes Mellitus. *Pakistan J. of Nutrient*; **2(1)** : 1-12.
8. **Bever**, O.B. and **Zahnd**, G.R. (1979) Plants with oral hypoglycemic action. Quart. *J. Crude Drug Res.*; **17**: 139-196.
9. **Rehman**, A.U. and K. **Zaman** (1989) Medicinal plants with hypoglycemic activity. *J. Ethnopharmacol*; **26**: 1-55.
10. **Khana**, P. (1985) Insulin from bitter gourd - herbal drug. *Eastern Pharmacist*. pp: 101-103.
11. **Satyavati**, G.V., Gupta, A.K. and Tandan, N. (1987) Medicinal plants of India. *Indian Council of Med. Res. New Delhi*; **2**: 161.
12. **Brindha** P., Sasikala B., Purushothaman K.K. (1982) Bull Medico. *Ethnobotanical Res;* **3**: 84-96.
13. **Harborne** J.B., (1998) Phytochemical methods: A Guide to modern techniques of plant analysis. *Chapman and Hall Co., New York*: pp-302.
14. **G.E. Treas** and W.C. Evans. *Pharmacognosy 13th Edn., Bailliere Tindall*; **386**:167-197 (1994).
15. **Bhardwaj**, P.K., Dasgupta, D.J., Prashar, B.S. and Kaushal, S.S. (1994) Effective reduction of LDL cholesterol by indigenous plant product. *J. Ind. Med. Assoc.*; **92**: 80-81.
16. **Shakya** V.K. (2008) Antidiabetic activity of *Coccinia indica* in streptozotocin induced diabetic rats. *Asian J. of Chemistry;* **20(8)**: 6479-6482.
17. **Shakya** V.K., Saxena R.C. and Shakya Anita (2012) Effect of ethanolic extract of *Allium sativum* bulbs on streptozotocin induced diabetic rats. *Journal of Chemical and Pharmaceutical Research;* **2(6)**: 171-175.
18. **S. Venkateswaran** and L. Pari. Effect of *Coccinia indica* on blood glucose insulin and hepatic key enzymes in experimental diabetes. *Pharmacol. Biol*; **40**: 165-170 (2002).
19. **E. A. Nikkhila** and M. Kekki. Plasma triglyceride transport kinetics in diabetes mellitus. *Metabolism*; **22**: 1-22 (1973).

Table (1) : Percentage Yield of Crude Extract for *Allium sativum* Bulbs by Soxhletion

S.	Solvent Used in Soxhletion Method	Volume of Solvent	Weight of Powdered Materials	Weight of Extract	Percentage Yield
1.	Benzene	600 ml	750 gm	36.68 gm	4.89 %
3.	Chloroform	600 ml	750 gm	46.08 gm	6.14 %
4.	Ethyl acetate	600 ml	750 gm	32.94 gm	4.39 %
5.	Ethanol (EtOH) 70 %	600 ml	750 gm	79.18 gm	10.55 %

Table (2) : Thin Layer Chromatography of *Allium sativum* Crude Extract

Plant Extracts in Solvent	Solvent System Used in TLC	Appear Spot(s)	Colour Characterization in			Shape of Spot(s)	Compound / Solvent	R^f Value
			Visual Light	Iodine Chamber	U.V. Light			
Alcoholic Extract	EtOAc : MeOH : H_2O(13 : 16 : 10)	MS_1	Brown	Dark Brown	Light Orange	Circle	2.30. / 13.4	0.17
		MS_2	Dark Red	Plum	Brown	Oval	4.10 / 13.4	0.30
		MS_3	Tan	Dark Golden	Gold + Tan	Lanceolate	7.80 / 13.4	0.58
		MS_4	Light Brown	Brown	Yellow	Diamond	8.6 / 13.4	0.64

Table (3) : Effect of *Allium sativum* bulbs alcoholic extract, on Blood Glucose Levels in STZ induced diabetic rats.

Group(s)	Treatment / Effective Doses (mg/kg b. w.)	Before Treatment	After Treatment (28 days)
I	Normal Control (Normal Saline)	92.84 ± 4.14	97.34 ± 12.65
II	Diabetic Untreated (Normal Saline) 2	88.46 ± 8.71	330.08 ± 10.91**
III	Diabetic + *A. sativum* (100 mg)	289.02 ± 6.67	143.98 ± 14.52***
VI	Diabetic + *A. sativum* (250 mg)	290.88 ± 5.12	229.86 ± 9.47*
V	Diabetic + *A. sativum* (500 mg)	288.24 ± 7.48	115.09 ± 12.02**
VI	Diabetic + Reference Drug, Diabecon (500 mg)	286.31 ± 4.75	125.89 ± 7.29*
VII	Diabetic + Reference Drug Glibenclamide (500 ìg)	291.73 ± 8.43	129.04 ± 8.91*

Values expressed as means ± SD for 7 groups, 6 rats in each group. Group II is compared to group I. Group III, IV, V, VI & VII are compared to group II. The significance level was calculated using student't'-test. P-values *(P<0.10) **(P<0.05), ***(P<0.02), ****(P<0.01).

Table (4) : Effect of *Allium sativum* bulbs alcoholic extract, on Blood Cholesterol Levels in streptozotocin induced diabetic rats.

Group(s)	Treatment / Effective Doses (mg/kg b. w.)	Before Treatment	After Treatment (28 days)
I	Normal Control (Normal Saline)	105.49 ± 5.69	105.86 ± 9.56
II	Diabetic Untreated (Normal Saline)	258.23 ± 8.22	346.20 ± 11.47**
III	Diabetic + *A. sativum* (100 mg)	312.40 ± 14.95	193.23 ± 7.52*
IV	Diabetic + *A. sativum* (250 mg)	307.02 ± 9.77	125.40 ± 5.88*
V	Diabetic + *A. sativum* (500 mg)	310.15 ± 8.29	107.19 ± 7.60*
VI	Diabetic + Reference Drug, Diabecon (500 g)	302.88 ± 13.69	118.22 ± 10.89**
VII	Diabetic + Reference Drug Glibenclamide (500ìg)	308.91 ± 13.77	116.98 ± 8.47*

Values expressed as means ± SD for 7 groups, 6 rats in each group. Group II is compared to group I. Group III, IV, V, VI & VII are compared to group II. The significance level was calculated using student't'-test. P-values *(P<0.10) **(P<0.05), ***(P<0.02), ****(P<0.01), *****(P<0.001).

Table (5) : Effect of *Allium sativum* bulbs ethanol extract on Protein Lipid Profile (LDL & HDL) Levels in streptozotocin induced diabetic rats.

Group(s)	Treatment / Effective Doses (mg/kg b. w.)	Before Treatment		After Treatment (28 days)	
		LDL	HDL	LDL	HDL
I	Normal Control (Normal Saline)	85.2 ± 5.7	48.6 ± 7.8	81.9 ± 10.2	46.3 ± 13.7
II	Diabetic Untreated (Normal Saline)	162.4 ± 18.7	38.2 ± 10.6	172.6 ± 11.2**	37.8 ± 15.2
III	Diabetic + *A. sativum* (100 mg)	161.6 ± 13.2	38.7 ± 4.2	98.2 ± 11.6**	39.2 ± 15.7
VI	Diabetic + *A. sativum* (250 mg)	165.9 ± 2.7	36.5 ± 7.1	94.9 ± 15.6	43.6 ± 12.2**
V	Diabetic + *A. sativum* (500 mg)	164.3 ± 14.8	35.7 ± 9.9	97.3 ± 18.9	52.1 ± 8.6*
VI	Diabetic + Reference Drug, Diabecon (500 mg)	170.0 ± 6.7	36.1 ± 9.0	101.6 ± 6.9	45.2 ± 10.4
VII	Diabetic + Reference Drug Glibenclamide (500 ìg)	168.5 ± 16.3	37.2 ± 6.9	85.1 ± 11.8**	41.9 ± 8.2

Values expressed as means ± SD for 7 groups, 6 rats in each group. Group II is compared to group I. Group III, IV, V, VI & VII are compared to group II. *(P<0.10) **(P<0.05), ***(P<0.02).

****

Impact Of Waste Water On Fish Culture In An Abandoned Stone Quarry Of Rewa Town, Dist. Rewa, (M .P.) India

Suman Singh *

Abstract - The abandoned quarries in which water accumulates during rains can be used for aquaculture through proper management. So this study was for duration of 2014-2016 to find out water resource management of an abandoned stone quarry, which was used for composite fish culture with relay fish cultivation technique to get average biomass of harvested fish of 3786-9879.87 kg/ha/yr till 2013. Hydro biological parameters were recorded. It was a waste water resource which is utilised for fish culture adopting semi intensive, intensive and integrated techniques by fish farmer. Significant findings were that the total loss of aquatic fish biomass with enormous growth of *macrophytes* in the pond has recorded in 2014-15.

Key Words - Abandoned Stone Quarry, Municipal Waste Water, Hydro biological parameters, Fish culture Techniques, Chemical Pollutants, Macrophytes.

Introduction - Polyculture of Indian major carps with Chinese carps has already made a great leap forward with improvements in culture techniques and scientific management approaches. Although much work / review have been carried out in several aspects of poly-/ composite culture of Indian major carps (Jhingran, 1991), fish culture with recycling of municipal waste water with changing pattern of technique in the abandoned stone quarry was not studied in Vindhya region. Bansagar colony pond (24°32' N 81°18' E / 24.53°N 81.3°E) is an abandoned stone quarry having 1.5 ha water spread area within municipal limits of Rewa town being used for composite fish culture since 1975 by utilizing rain water from catchment area of nearby agricultural fields and drainage discharge from Bansagar colony through marginal littoral vegetation which acts as a natural bioremediation . Here fish seeds of indigenous major carps (*Catla catla, Labeo rohita, Cirrhina mrigala*) and exotic carps (*Cyprinus carpio and Hypopthalmichthys molitrix Ctenopharyngodon idella*) were used . Relay culture has proven beneficial till 2014. Municipal drainage water entering into the pond was made to pass through grassland pool and surrounding macrophytes (Fig1d) as a process of bio-regulatory filtration of water for fishes.

.**Objective -** Study was performed to find the causes of total loss of cultureable fishes in the pond through finding the quality of water, abundance of macrophytes and fisheries of the pond.

Material and Method - Study was performed for impact of municipal waste water on fish culture for 2014-2016. Methodology was adopted according to APHA (2005),Trivedi and Goel (1985)and Bhatnagar(1984) for Physico-chemical parameters of water and fish productivity according to Alikunhi (1972), Jhingran (1985)

Description of study area - The pond is located within municipal limits of Rewa city (24°32' N and 18°15' E) and is a manmade pond which was earlier a stone quarry. The pond is a perennial rain-fed with utilization of municipal waste water over marginal vegetation using natural bioremediation(Table-1). The pond (1.5 hectare) was being used for fish culture since 1975, 3-4 feet depth is available for fish culture (Fig, 1a-1f)

Result and Discussion - Physico- Chemical status of water has shown suitable range of water quality for fish culture till 2014 (Fig.1) Singh (2015). Higher value of Nitrate, Phosphate, Chloride and Alkalinity was probably due to fertilizer used in agricultural fields nearby and entry of water from Bansagar Colony in to pond. Drastic change in value of Dissolved Oxygen (DO), Total Solids Total Alkalinity Nitrate, Phosphate, Chloride was observed for 2014 but no significant variation in p^H and Dissolved Oxygen. It was probably due to usage of lime.

Biological Status of Water: Biological Status of Water - No rooted or submerged vegetation has been observed except Azolla and Ipomea in the pond till 2013 (Singh 1998 and 2014). A thick mat of water lettuce was observed in 2014 which covered the water body completely in a relatively short period. This causes problems, such as loss of habitat, a decrease of oxygen levels in the water and loss of fisheries with navigation problems for boats.

Fish Culture - The pond is stocked with species of Indian major carps (Catla, Rohu, Mrigal) and exotic major carps (Silver carp, Common carp, Grass carp). In this pond, variation in technique of fish culture was adopted in relation to selection of fish species, stocking density and fish yield.

* **Professor (Zoology) Govt. Science College, Rewa (M.P.) INDIA**

Variation in stocking density of fish seed was observed (15000- 25000 fingerlings/ 1.5 ha (with 8000- 10000 young fishes). The findings get support by work of Alikunhi et al. (1971), Jhingran, (1985). Here fish yield was 1324 kg/1.5 ha/ year in 2000 to 3647 kg/ ha/ 14 months till 2013 (Table-3) by adopting relay culture technique and harvesting techniques for major carps and relay harvesting technique for Tilapia, murrels and catfishes which entered in the pond from connectivity of river.Thus managerial techniques of fish species of indigenous major carps (Catla, Rohu, Mrigala) and exotic carps (Silver carp, Common carp, Grass carp) along with local fish species in a waste water body has proved beneficial for fish farmer till 2013 but total abolishment of fish species in the pond was recorded (Table-3)

Study indicates heavy metal toxicity, Ammonia and presence of Greese and oil (Table- 2) in the water of the pond may be the cause of mortality of fishes (Table-Fig.8). Sudden appearance and heavy manifestation of *Pistia stratiotes* in the pond was due to chemical pollutants and total loss of fisheries (Table-3,) has been observed due to toxicity and and change in BOD and CODconcentration(Table-2). Study get support by findings of Pathak H, Pathak D (2012) for eutrophication in the lake.

Heavy water lettuce infestations reduce the penetration of sunlight necessary for native plant growth in water bodies preventing aquatic photosynthesis and thereby reduce the availability of oxygen to other organisms. As the plant dies and decomposes, oxygen is removed from the water causing water pollution and stagnation. Probably heavy manifestation of aquatic weeds in the pond is the basic cause of decline in the harvest of fishes as it causes disturbances in use of crafts and gears, conceals the fish species and also for mass mortality. Heavy weed cover also prevents the exchange of air, which normally occurs on an open water surface, further reducing oxygenation of the water.

A large infestation of water lettuce is a physical barrier for aquatic and semi-aquatic animals, restricting their territorial movements and breeding activities. Large infestations of water lettuce stop the passage of boats by clogging. The mats of weed also interfere with swimming and make fishing impossible. The natural beauty of an open water body can be spoilt and further degraded as native aquatic plants, birds and animals are displaced.

Aquatic plants have particularly attractive characteristics for use in phyto remediation and bio indication programmes (Favas et al., 2012, 2014). *Pistia stratiotes* L (Araceae) is a free-floating aquatic plant, able to rapidly colonise fertile waters with temperatures of ~20 C for a significant part of the year (Gusman, *et al*. 2013) though it is capable of removing several heavy metals (Mishra and Tripathi, 2008). In 2014 the macrophytes covered the water body completely in a relatively short period. Chlorosis and necrosis were observed in the leaves of Pistia. In the root system, there was a loss and darkening of roots.

Chlorosis symptoms would be the result of an Arsenic-induced nutrient deficiency, especially involving iron (Shaibur et al., 2009). Phyto remediation has been proposed for the remediation of As-contaminated areas. These results indicate that water lettuce shows potential for bio indication and phyto remediation of As-contaminated aquatic environments (Favas et al, 2012). Study indicates heavy metal toxicity in the water of the pond and may be cause of mortality of fishes (Table-Fig.8) Sudden appearance and heavy manifestation of *Pistia stratiotes* with other macrophytes in the pond has caused total loss of fisheries(Table-3)

Eutrophication is frequently a result of nutrient pollution due to municipal effluent into water affecting concentration of dissolved oxygen

1. The small, natural and constructed wetland can be utilized as alternative technology to sewage treatment systems.
2. Municipal effluents into water affect concentration of BOD and COD
3. Higher concentration of oil and Greese was present in the water
4. Pistia, though good for bioremediation, is very harmful for fisheries. This has caused loss of habitat, decrease of oxygen levels in the water and loss of fisheries with navigation problems for boats. The water bodies meant for fish culture should immediately get rid of municipal discharge and Pistia and kept free of it.
5. Government of M.P. could evolve a policy to develop water bodies to store rainwater with regulatory measures, not just rainwater pools created in abandoned quarries and mines or in seasonal ponds but also extensive waterlogged areas which remain unused or underused could be used for fish farming,

References :-

1. Adoni, A.D. (**1985**) Work book on Limnology. Indian Mab Committee, Department of Environment, Govt. of India, 216.
2. Alikunhi, K.H.; Sukumarn, K.K. and Parameswaran, S.(**1971**). Studies on composite fish culture production by completive combination of Indian and Chinese carp. *J. Indian. Fish. Assoc*. **1(1)**: 26-57.666p.
3.. APHA, (2005). Standard methods for examination of water and waste water. 21st Edn., American Public Health Association Inc., New York
4. Bhatnagar, G.P. .*(***1984**) Limnology of lower lake of Bhopal with special reference to sewage pollution and eutrophication. *Technical report May 1979-April 1982. MAB Programme*, *Dept. of Environ. Govt. of India. New Delhi*
5. Favas, P.J. Pratas, J. and Prasad, MNV. (2012). Accumulation of arsenic by aquatic plants in large-scale field conditions: opportunities for phytoremediation and bioindication. The Science of the Total Environment, vol. 433, p. 390-397. http://dx.doi. org/10.1016/

j.scitotenv.2012.06.091. PMid:22820614

6. Gusman, GS., OIIVEIRA, JA., Farnese, FS. and Cambraia, J., (2013). Arsenate and arsenite: the toxic effects on photosynthesis and growth of lettuce plants. Acta Physiologiae Plantarum, vol. 35, no**. 4,** p. 1201-1209.
7. J. hingran, V.G. 1985. Fish and fisheries of India, Hindustan Pub. corp. (India) Delhi. 89.
8. Mishra, VK. and Tripathi, BD., (2008.)Concurrent removal and accumulation of heavy metals by the three aquatic macrophytes. Bioresource Technology, vol. 99, no. **15**, p. 7091-7097. http:// dx.doi.org/10.1016/ j.biortech.2008.01.002. PMid:18296043 3.Adoni, A.D. 1985. Work book on Limnology. Indian Mab Committee, Department of Environment, Govt. of India, 216.
9 Pathak H, Pathak D (2012) Eutrophication: Impact of Excess Nutrient Status in Lake Water Ecosystem. J. Environ Anal Toxicol **2**:148;1314. 15.
10. Shaibur, MR., Kitajima, N., huq, SMI. and Kawai, S., (2009). Arsenic–iron interaction: Effect of additional iron on arsenic-induced chlorosis in barley grown in water culture. Soil Science and Plant Nutrition, vol. 55, no. **6**, p. 739-746. http:// dx.doi.org/10.1111/j.1747
11. Singh ,S.2015 Study On Invasion of *Pistia stratiotes* In An Abandoned Stone Quarry- Used For Fish Culture In Distt Rewa(M.P.) J.NSS March 2016, Vol. IIpp15-19
11. Trivedi, R.K. and P.K. Goel. (1986) Chemical and biological methods for water pollution studies, *Environmental Publications, Karad, India*, 250p.

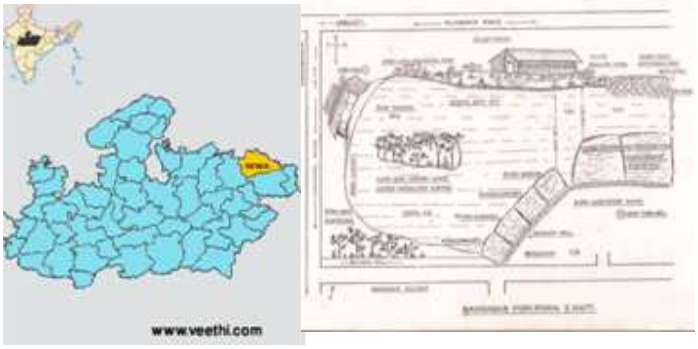




Fig- 1 (a) Map Study Site Fig 1(b) Bansagar Colony Pond Fig. 1(c) Fish Culture till2014

Table-1Certain Characteristics of renovated municipal wastewater after application to land covered with grass entered in Bansagar pond

Constituents	Value	% Removal
Residue Suspended solids	612mg/l	75
Dissolved Solids	988 mg/l	10.2
Total Solids	1600 mg/l	
p^H	7	
Dissolved Oxygen	0	0
Biochemical Oxygen Demand	438 mg/l	23
Chemical Oxygen Demand	267 mg/l	75
Nitrogen		
Ammonia- N	27.1 mg/l	55
Nitrate- N	0.59 mg/l	33
Organic- N	2.10 mg/l	40
Total Kjeldahl- N	29.2 mg/l	50

Table : 3 Stocking And Fish landings Bansagar Pond(1997-2014)

Year	Total catch (kg)	Stocking of fin-gerlings(No./ha)
1997-98	**3015**	**25000**
1998-99	**4117**	**25000**
1999-2000	**5643**	**30000**
2000-2001	**9655**	**35000**
2001-2002	**11765**	**40000**
2002-2003	**991.5**	**40000**
2003-2004	**9401**	**40000**
2004-2005	**10027**	**40000**
2005-2006	**11021**	**40000**
2006-2007	**10648**	**40000**
2007-2008	**9974**	**40000**
2008-2009	**11003**	**40000**
2009-2010	**10064**	**40000**
2010-2011	**11023**	**40000**
2011-2012	**9846**	**35000**
2012-2013	**5463**	**35000**
2013-2014	**Nil**	**35000**
2014-15	**Nil**	**Nil**
2015-16	**Nil**	**Nil**

Resource-Data from Fish farmer and Site Survey

Table-2 Water Quality Characteristic of Pond Surface Water Analysis

Sr.	Parameter	Unit	IS 10500 : 2012Acceptable (Permissible)Limit	Ban Sagar Colony Pond atRewa (M.P.)
1	P^H value	-	6.5-8.5	7.20
2	Colour	Hazen units	15	17.5
3	Conductivity	ìs/cm	$	368
4	Total Suspended Solid	Mg/l	$	32
5	Total dissolved solids	Mg/l	500 (2000)	560
6	BOD	Mg/l	$	9.3
7	COD	Mg/l	$	44.9
8	Total hardness (as CaCO3)	Mg/l	200(600)	182
9	Total alkalinity as (CaCO3)	Mg/l	200(600)	144
10	Calcium (as Ca)	Mg/l	75(200)	46.2
11	Magnesium (as Mg)	Mg/l	30(100)	16.2
12	Chloride (as Cl)	Mg/l	250 (1000)	46.3
13	Sulphate(as SO4)	Mg/l	200(400)	28.2
14	Nitrate (as NO3)	Mg/l	45	26.8
15	Phosphates (as PO4)	Mg/l	0	2.26
16	Oil & Grease	Mg/l	<0.01	<4
17	Sulphide as S	Mg/l	0.05	0.03
18	Ammonia as NH3	Mg/l	0.5	0.7
19	Fluoride (as F)	Mg/l	1.5	0.75
20	Mercury as (Hg)	Mg/l	0.001	Â0.0005
21	Cadmium as (Cd)	Mg/l	0.003	Â0.001
22	Lead as (Pb)	Mg/l	0.01	Â0.001
23	Arsenic as (As)	Mg/l	0.05	< 0.01
24	Total Chromium as (Cr)	Mg/l	0.05	0.035

Resource -Water analysis was done by **Enviro Analysts & Engineers Pvt. Ltd., Nagpur.**



Fig.(d) Pond till 2013 Fig.(e) Abundance of macrophytes (2015) Fig. (f) Fish Farmer (*Pistia stratiotes* 2016)

****

Impulsive Excitation Of Mechanoluminescence In - Irradiated $Sr(Vo_3)_2$: Tb Phosphors

Vikas Gulhare * Dr. Preeti Soni ** R. S. Kher * S. J. Dhoble ******

Abstract - Present paper reports the mechanoluminescence and photoluminescence of Tb doped $Sr(VO_3)_2$ samples. $Sr(VO_3)_2$ samples having different concentration of Tb were prepared by solid state diffusion method and ML was excited impulsively by dropping a load on to the sample. ML intensity increases with increasing concentration of dopant, irradiation dose and mass of the load. The ML intensity increases with increasing concentration of dopant and it is found optimum for the sample having 0.05mol% concentration of Tb. A single peak is observed in ML intensity versus time curve. ML emission spectra contain a sharp peak around 482nm. Photoluminescence study on the sample has shown the incorporation of Tb in host matrix. PL emission curves exhibit two bands around 473nm and 563nm, which is attributed to characteristic emission of Tb^{3+} ions.

Keywords - Mechanoluminescence (ML), Photoluminescence(PL), Solid state reaction

Introduction - Mechanoluminescence (ML) is an interesting luminescence phenomenon, which is caused by mechanical stimuli such as grinding, cutting, collision, striking and friction [1]. It can convert mechanical energy into visible light efficiently. The ML sensor to detect environmental stress by emitting light is expected to be used widely in various applications such as the forecasting of an earthquake, the damage detection of an air plane or car [2, 3]. In particular, the ML sensors have been found that they can be used as self-powered luminescence sensors [4]. The phenomenon of ML links the mechanical, electrical, spectroscopic and structural properties of solids. This technique offers a number of interesting possibilities such as detection of cracks in solids and for mechanical activation of various traps present in the solid.

To date most of the ML workers are actively engaged in search of intense luminescent materials. Just this fact promoted our interest to investigate the ML properties of rare earth activated divalent metal metavanadate. The rare earth doped vanadate compounds such as YVO_4, $LaVO_4$, $GdVO_4$, $Mg_3(VO_4)_2$, LiV_2O_5, $NaVO_3$, $NaVO_4$, $Na_2V_2O_5$, ScVO4, $CrVO_4$, $Sr_3(VO_4)_2$ and $Ba_3(VO_3)_2$ etc. have been attracting much attention in the recent years due to their possible role as excellent dosimetric materials and also for their laser/optical properties. The introduction of rare earths has resulted in a drastic improvement of the performance of luminescent devices based on these phosphors. Many efficient lasers are developed in vanadates host crystals in recent years [5-9]. Terasaki et al [10] have prepared a ML driven photocell consisting of mechanoluminescent material, $SrAl_2O_4$:Eu and a photocell. Recently, rare earth doped vanadates have been identified as a potential successor [11]. Rao et al reported ML of $(ZnS)_{1-x}(MnTe)_x$ (x = 0.02 to 0.25) phosphors. They found intense red emission due to presence of Te along with Mn in Zns. They concluded that ML is attributed to the release of holes due to stress on the phosphors which then recombine with metastable Mn^{2+}. They found that ML intensity strongly depends on both the impact pressure and composition [12]. Ji Sik kim et al reported mechanoluminescence (ML) of $SrAl_2O_4:Eu^{2+}$, Dy^{3+} (SAO) phosphors monitored as a function of its instantaneous loading rate, on which it was found to be strongly dependent [13]. The systematic study on ML and PL properties of strontium metavanadate has not been investigated so far. In present investigation an attempt has been made to understand the mechanism of ML in this system.

Materials And Method - Pure and Tb doped $Sr(VO_3)_2$ phosphors of different impurity concentrations were prepared by solid state diffusion method. Analar grade(99.9% pure) powder used as starting material. Requisite amount of host compound like $Sr(NO_3)_2$ and NH_4VO_3 were mixed thoroughly in 1:2 mole proportion for different samples. In case of doped samples known amount of impurity Tb_4O_7 (from 0.05 to 0.5 mole%) were added to above mixture and then transferred to J-mark porcelain crucibles. These powders were annealed in a high temperature muffle furnace by slowly raising the temperature to about 400^0C for 4 hours in air and heated at 650^0C for 12 hours then cooled to room temperature. The

* Department of Physics & Chemistry, Govt. G.N.A. P.G. College, Bhatapara (C.G.) INDIA
** Department of Physics & Chemistry, Govt. G.N.A. P.G. College, Bhatapara (C.G.) INDIA
*** Department of Physics, Govt. E. R. R. P. G. Science College, Bilaspur (C.G.) INDIA
**** Department of Physics, R. T. M. Nagpur University, Nagpur (Maharashtra) INDIA

resulting compounds were crushed again and heated up to 1 hour at 650^{0}C, then quenched to room temperature.

Samples were exposed to gamma rays using ^{60}Co source having the exposure rate 0.93kGy/h. The ML glow curves were recorded by the routine ML unit. Two milligrams of sample was used every time for recording the glow curves. The ML was excited impulsively by dropping a fixed mass load on to the sample. The luminescence was monitored by a RCA-931 photomultiplier tube positioned below the transparent Lucite plate and connected to storage oscilloscope (SCIENTIFIC SM-340). The ML spectra were recorded using a series of optical band pass filter. Seven different filters were used and all the filters have bandwidth in the range 20 to 40nm and with transmission 30 to 70%. Similarly, PL spectra of samples were recorded by using fluorescence spectrometer (SHIMADZU RF-1305 PC). Emission was recorded using a spectral slit width of 1.5nm.

Results - Figure 1 shows the time dependence of ML intensity of ã-irradiated $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05mol%) phosphors for different mass of piston(0.1 kg to 0.4 kg) dropped on to the sample. It is observed that ML intensity increases with increasing mass of the piston dropped on to the sample without any considerable change in time corresponding to ML peaks.

Figure 2 shows the time dependence of ML intensity of ã-irradiated $Sr(VO_3)_2$ phosphors for different concentration of Tb ions. It is observed that undoped $Sr(VO_3)_2$ shows very weak ML emission. ML intensity increases with increasing dopant concentration, attains maximum value for 0.05mol% concentration and then decreases with further increase in concentration of dopant.

Figure 3 shows the time dependence of ML intensity of ã-irradiated $Sr(VO_3)_2$:Tb phosphors for different impact velocities from 0.4 ms^{-1} to 1 ms^{-1}. It is observed that ML intensity increases with increasing impact velocity and the time corresponding to ML peak shifts towards shorter time values with increasing impact velocity.

Figure 4 shows ML emission spectra of Tb doped ã-irradiated $Sr(VO_3)_2$ phosphors. Single peak is observed at 482nm, which show the characteristic emission of Tb^{3+} ions.

Figure 5 shows the total ML intensity of $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05mol%) phosphors for different ã-doses given to the samples, in the dose range of 0.4 to 2.0 kGy. Total ML intensity of these phosphors increases with increasing ã-dose and seems to saturate for higher ã-doses.

Figure 6 shows emission spectra of $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05mol%) phosphors. Two bands around 473 nm and 563 nm are observed when phosphors are excited by 385 nm.

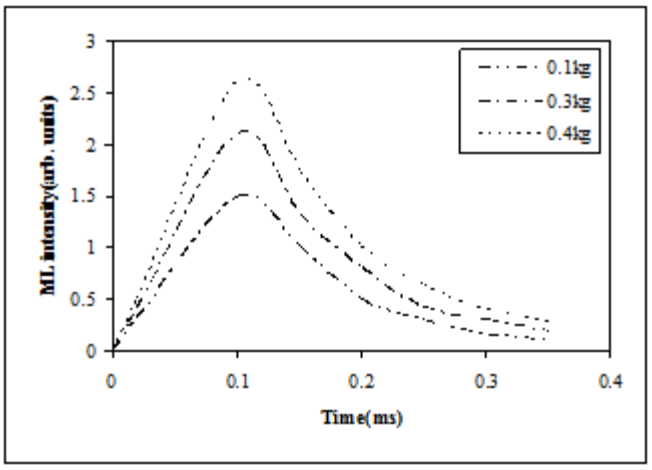


Fig.1 Time dependence of ML intensity of $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05 mol%) phosphors for different mass of piston
(γ-dose 1.395 kGy, impact velocity 0.98ms^{-1})

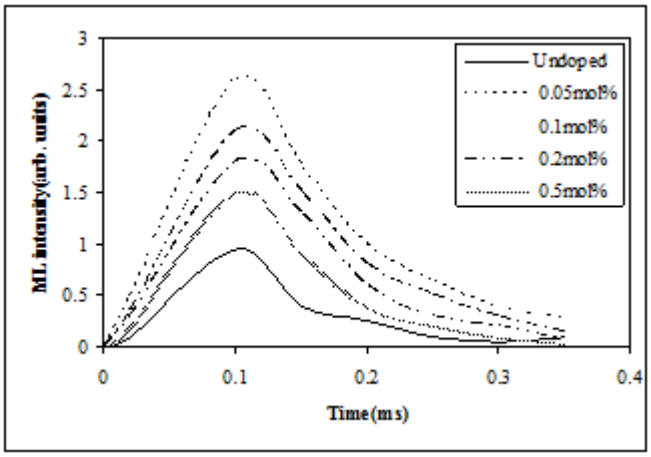


Fig.2 Time dependence of ML intensity of $Sr(VO_3)_2$:Tb phosphors for different concentration of dopant
(γ-dose 1.395 kGy, impact velocity 0.98ms^{-1}, mass of piston 0.4 kg)

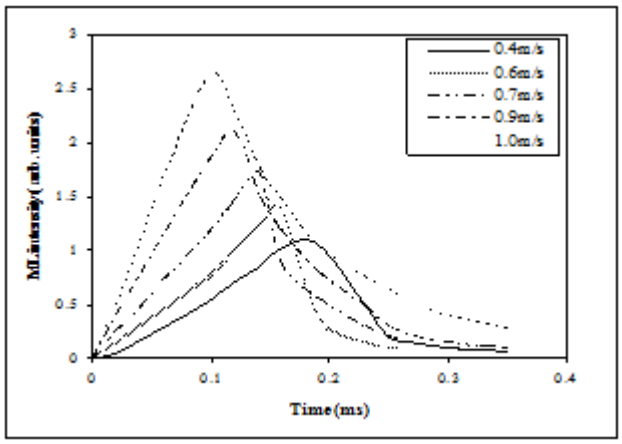


Fig.3 Time dependence of ML intensity of $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05 mol%) phosphors for different impact velocities (ã-dose 1.395 kGy, mass of piston 0.4 kg)

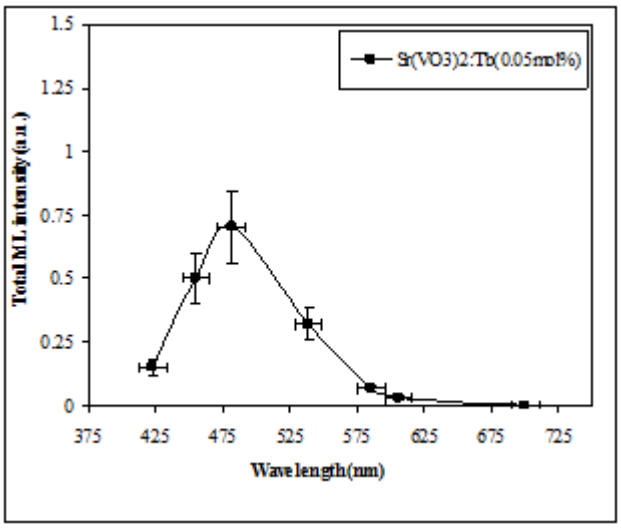


Fig.4 ML emission spectra of ã-irradiated $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05 mol%) phosphors

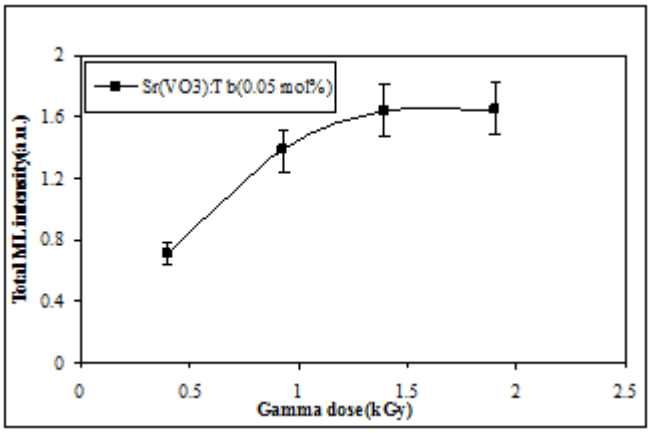


Fig.5 Dependence of total ML intensity of $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05 mol%) on ã-doses

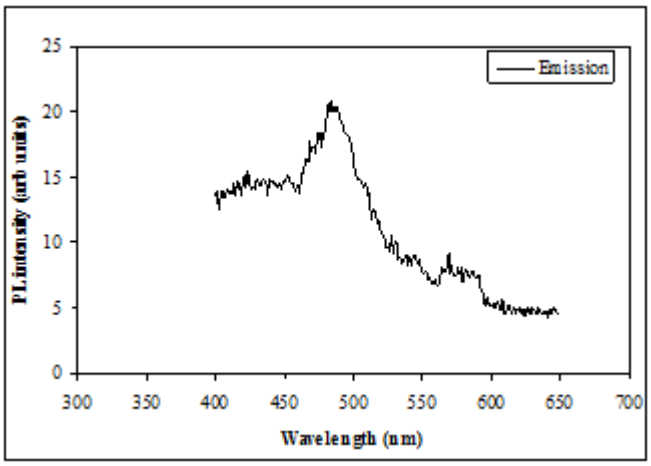


Fig.6 PL emission spectra of $Sr(VO_3)_2$:Tb(0.05 mol%) phosphors (λ_{ex} = 385nm)

Discussion - In the study of mechanoluminescence, the main objective is to understand the origin of ML and to develop efficient ML materials. It is the mater of speculation that how the energy added to the system dissipate and which simultaneously passing processes of the physical nature having dominating influence on the emission of light. The recent experiments which have been carried out to elucidate the excited state origins of the luminescence and to determine the mechanism, by which these states are populated, showed clearly that the emission of light during the mechanical deformation of solids is not attributed generally to friction. Since the mechanical energy can not populate directly the excited states of the molecules comprising the sample, some alternative process should be responsible for the ML excitation, Chandra [14]. Mechanoluminescence is one of the methods for studying radiation effects in solids. The presence of impurities enhances the generation/recombination of luminescence centers, defects etc. The ML intensity depends upon the number of populated traps and the recombination of probability of trapping and recombination sites. When the sample is fractured by the impact of piston, it seems that very intense electric field of the order of 10^6-10^7 Vcm^{-1} is produced due to the charging of newly created surface near the crack tip (Fig.1). Due to this electric field, release of electron from electron traps may take place. The subsequent recombination of electrons moving in the conduction band with the hole trapping centers, and the hole moving the valance band with electron trapping centers may release energy. This energy may non-radiatively be transferred to $Tb^{2+} \leftrightarrow Tb^{3+}$ ions causing their excitation and subsequent de-excitation of excited Tb^{3+} ions may give rise to the characteristic luminescence of the rare earth ions.

It is observed that ML intensity depends on the concentration of rare earth impurity doped. Undoped irradiated samples show very weak ML intensity, it increases with increasing doping concentration attains maximum value for a particular concentration of dopant then decreases with further increase in centration of dopant. Initially the number of luminescence centers and defect centers increases with increasing concentration of dopant, which causes increase in ML intensity with increasing dopant concentration. For the higher values of dopant concentration, concentration quenching of luminescence centers may take place and therefore, the ML intensity decreases with further increasing in concentration of the dopant. As the mater of the fact, the ML intensity is optimum for a particular concentration of the dopant (Fig.2). At high strain rate or impact velocity, the values of β_r, β_n, and (λ_r+ λ_n) are independent of the strain rate of rare earth doped vanadate based phosphors, however, the value of β depend on the strain rate. The dependence of β on the strain rate or impact velocity may be understood by in the following way. If $\tau = 1/\beta$ is the characteristic time related to the stopping of the piston impacted onto the rare earth doped vanadate based phosphors (Fig.3). ML emission spectrum of Tb doped γ-irradiated divalent metal metavanadate phosphors. Single peak at 482nm are observed for all the samples (Fig.4). It is observed that ML intensity increase

with increasing gamma dose given to the samples and seems to saturate for higher values of gamma doses. When the vanadate based phosphors are exposed to ionizing radiation the defect centers like cation vacancies and vanadate radicals are created. On increasing the ã-dose, the defect centers N_c, increases and thereby the peak intensity I_m (for the samples having single peak in their ML glow curve) and total ML intensity increases (Fig.5).

Menon et al Tb^{3+} emission peaks are found at 470-570 nm which are assigned to $^5D_4 \rightarrow {}^7F_j$ (j = 6, 5, 4, 3, 2, 1) transitions. Some emissions from $^5D_3 \rightarrow {}^7F_j$ (j = 5, 4, 3, 2, 1, 0) are also found from 400 to 485 nm [15]. The $^5D_4$'I$^7F_5$ line at approximately 550 nm is the strongest in nearly all host crystals. The reason is that this transition has largest probability for both the electric dipole and magnetic dipole induced transition. In present investigation two peaks around a band 473-563 nm have been observed in the Tb doped $Sr(VO_3)_2$ phosphors which are clearly due to $^5D_4 \rightarrow {}^7F_5$ and $^5D_4 \rightarrow {}^7F_5$ transitions of Tb^{3+} ions (Fig.6).

Conclusion - The $Sr(VO_3)_2$:Tb is less sensitive to ã-ray exposure and it is relatively difficult to excite luminescence by mechanical deformation. The similarity of ML spectra with PL spectra suggests that although there is difference in the process of excitation of electrons, involves the same optical transition centers as in other type of luminescence.

References :-

1. C.N. Xu, T. Watanabe, M. Akiyama, X.G. Zheng, Appl. Phys. Lett. **74** (1999) 2414.
2. C.N. Xu, T. Wantanabe, M. Akiyama, X.G. Zheng, Appl. Phys. Lett. **74** (1999) 1236.
3. C.N. Xu, T. Wantanabe, M. Akiyama, X.G. Zheng, Mater. Res. Bull. **34** (1999) 1491.
4. H.W. Zhang, H. Yamada, N. Terasaki, C.N. Xu, J. Electrochem. Soc. **155** (2008) J55.
5. T. Taira, A. Mukai, Y. Nozawa and T. Kobanyashi : Optics letters, **16,** 1995 (1991).
6. T. Hayashi, S. Hanihara and N. Yamaguchi, NEC Tech. J. (Japan) **44**, 75 (1991).
7. H. Saito, S. Chadda, R. S. F. Chang and N. Djeu, Optics letters **17**, 189 (1992).
8. M. Yu. Nikalskii, A. M. Prokhorov, T. A. Shcherbakov, N. V. Kravstov, O. F. Nanli and V. V. Firov, Quantum Electronics (USA) **23**, 999 (1993).
9. J. E. Bernard, V. D. Lokhnygn and A. J. Alock, Optics letters **18**, 2020 (1993).
10. N. Terasaki, C.N. Xu, Y. Imai, H. Yamada, Jpn. J. Appl. Phys. **46** (2007) 2385
11. R. B. Pode, A M Band, H. D. Juneja and S. J. Dhoble, Phys. Stat. Sol. (a) **157**, 493 (1996).
12. M. RAO, D. R. REDDY, B. K. REDDY and C. N. XU (2008): Physics Lett. A, **372**(22), 4122-4126.
13. JI SIK KIM, KEVIN KIBBLE, YONG NAM KWON and KEE-SUN SOHN (2009): Opt. Lett**. 34**, 1915-1917
14. B.P. CHANDRA (1985): Nucl. Tracks, **10,** 825.
15. S.N. MENON, S.S. SANAYE, T.K. GUNDURAO, R. KUMAR, B.S. DHABEKAR and B.C. BHATT (2003): Proceeding of National conference on Luminescence and its Applications, 193-198.

→

****

Many Wonderful Health Benefits From Medicinal Plants

Dr. Basanti Jain *

Abstract - There are numerous plants which have established their reputation as medicinal plants due to active components present in them. Hindu scriptures tell us that a wide range of plants like Ficus religiosa, ocimum sanctum, Azadirachta indica, Mangifera indica has divine qualities, hence used in number of religious activities and for health care of peoples.

Introduction - Medicinal plants are plants which have a recognized medical use. Ayurveda is a complete medical system, it deals with health in all its aspects ; Physical health, mental balance, spiritual well-being, social welfare, environmental considerations, dietary and life style habits daily living trends and seasonal variations in lifestyle, as well as treating and managing specific diseases.

Ayurveda teaches respect for nature and described as the way of living with awareness and promoting longevity. Medicinal properties of plants and their nature has been described in Rigaveda for the first time in ancient time. Now a days more than 2000 medicines are in use. Most of them are obtained from plants. Plants are used in various systems of treatment like Ayurvedic, Unani, Homeopathy, Allopathy and Aromapathy etc.

Materials and Use of Medicinal Plants - The uses of each plants and their medicinal utility have shown in Table-"A" ;
Table - A (See below)

Result & Discussion - These plants still deserve more deep systematic photochemical investigations with the help of more advanced separation and spectroscopic studies, for identifying the physiologically active components from them.

Present study shows that many plant species are associated with the sacred beliefs and have religious importance. These plant species are regularly used by the local people in various religious activities and traditional healing system.

References :-

1. Burger, A., Medicinal Chemistry, Inter Science Publishers (2nd ed.) New York, P 959 - 61, 1960.
2. Chaudhri, R.D., "Herbal Drug in Industry", New Delhi, P-46, 1988.
3. Robinson C, Cush D. The Sacred Cow: Hinduism and ecology. Journal of Beliefs & Values, 18(1) : 25-37. 1997.
4. Badoni A. Badoni K. Ethnobotanical Heritage. In : Kandari OP, Gusain OP, eds. Garhwal Himalaya: Nature, Culture & Society. Trans Media Srinagar (Garhwal),125-47. 2001.
5. Dhiman AK. Sacred Plant and their Medicinal uses. Daya Publishing House, Delhi - 2003.
6. Bussmann RW, Sharon D. Traditional medicinal plants use in Northern Peru: trackling two thousand years of being culture, Journal of Ethnobiology and Ethnomedicine, 2:46-64. 2006.

Table - A

Sl.	Local /English Name	Botanical name	Utility
1.	Peepal / Sacred fig tree	Ficus religiosa Linn.	• Bark is used in itching sensation and treatment of wounds. The oil medicated with its leaves is used as ear drops.
2.	Tulsi / Holy Basil	Ocimum sanctum Linn.	• Leaves of the plants are used in stomach disorder and cough & cold. It is also used for the treatment of skin diseases.
3.	Amhaldi	Curcuma amada Roxb.	• Rhizome of this plant is used for bacterial infections and stomach diseases.
4.	Ajwain/ Ajmund	Trachyspermum ammi	• Ajwain seeds help in effective weight loss as they fasten the bowel movement. Seeds are also purified

* Professor (Chemistry) Govt. Girls M.L.B. (P.G.) Autonomous College, Bhopal (M.P.) INDIA

			blood. Ajwain seeds help in improve the blood circulation towards heart by improving the nerve impulse.
5.	Methi	Trigonella / Foenum fenugreek	• Seeds and fruits are used as medicines. It is used to reduce fat from the body. It also controls diabetes.
6	Sarpgandha/Snake root	Rauwolfia serpentina	• Medicines are obtained from the roots of the plants are used to control blood pressure, dysentery and fever.
7	Pudina	Mentha arvensis Linn.	• It is used for various bacterial and stomach diseases.
8.	Giloe / Guluchi / Guduchi	Tinospora cordifolia	• The plant oil is effective in reducing pain and edema. Roots of this plant are used for the remedy of intestinal disorder.
9.	Harjor	Cissus quadrangularis	• The paste of the plant is used to rejoin the broken bones. Its paste along with milk is drunk to rejoin bones.
10.	Neem	Azadirachta indica	• Oil extracted from seeds is used for curing skin diseases and arthiritis. Leaves are used as insecticides.
11.	Arandi / Castor	Ricinus communis	• Seeds are used as purgative. Oil is used for massage of the body.
12.	Patharchatta / Patharchur	Trichodesma indicum	• Wash and chew two leaves of this plant daily with water in the morning, empty stomach. The stones will be dissolved in a few days.

****

Effects Of Coarse Grains On Glucose Level Of Type II Diabetic Patients Of Urban Area Of Bhopal (M.P)

Neetu Pal * Dr. Meenal Phadnis**

Abstract - The benefits of coarse grains one or many had been reschered in past to prove their beneficial effects on Type II diabetes, weight,CVD,B.P.But no research had been done on collective effect of all coarse grains(black gram,,cracked wheat, corn meal,,millets,pulses,oats, soy) on glucose level of type II diabetic individuals.So,this topic is chosen for research after finding the need of this research for type II diabetic individuals. The hypothesis is that their will be no effect of coarse grain consumption on glucose level of type II diabetic patients.The result indicates average reduction of 44.62 in pp,21.74 in fbs and 1.13 in HbA1c of the type II diabetic patients of experimental group. This proves positive effect of coarse grains on glucoselevel of type II diabetes individuals
Key words - Black gram,,cracked wheat, corn meal,,millets,pulses,oats, soy, Type II diabetic patients Pp,fbs,HbA1c.

Introduction - The prevalence of diabetes is increasing in word and India tremendously .Soon making India diabetic hub.(Joshi SR et al 2007,Kumar A et al 2013).Hence the need of widely applicable strategies to reduce diabetes and the complications associated with it . Diabetes is fundamentally a condition of disordered metabolism (Walterwillett et al 2002) in which the amount of glucose(sugar) in the blood is too high because the body can't use it properly.. In past researches it was proven that ifglucose levels of type II diabetic patient can be managed by consumption of certain food items So if the glucose levels are managed diabetes can also be managed.So if the diet of type II diabetic patient is planned properyaccording to the individual requirements glucose level of the patient could be managed. It will require dietary modifications as well as life style changes. In this respect coarse grains play a vital role as Indian diet mostly compost of coarse grains in one or other form.

In this research coarse grains were considered as all dried grains(pulses and cereal) consumed either in powdered form or broken but with its all physical components intact as whole grain atta,cracked wheat etc. The whole of grain consist of so many vital nutrients which help in reducing weight of type II diabetic patients.The benefits of coarse grain(cereals) in form of whole ,cracked for atta with all physical constituents intact documented in many repeated and recent studies studies are

1. Reduction in stroke risk by 30-36% ,
2. Reduced type 2 diabetes risk by 21-30%
3. Reduced heart disease risk by 25-28%
4. Better weight maintenance or weight loss to some extent
5. Healthier blood pressure levels.

Benefits of pulses with its husk intact in whole form like kidney beans or split form like black gram.

Dietary fibre has a range of health benefits -

1. Lower risk of heart disease
2. Manage and reduce risk of type 2 diabetes
3. Improved weight control
4. Improved digestive health
5. lower risk of digestive disorders (grains & legumes nutrition council 2016).

The possible components of coarse grains which makes them good for type II diabetic patients is that they are rich in energy-giving carbohydrates, with a low glycemic index rating for blood glucose control,a good source of B-group vitamins (especially folate), iron, zinc, calcium and magnesium,Abundance in fibre, including both insoluble and soluble fibre, plus resistant starch for colonic health benefits.

Despite so many health benefits of coarse grains they are not abundantly consumed by the individuals. So it become necessary to do the research to make people aware of benefits of coarse grains, to give them variety in their diet, to make their daily diet plan interesting and help them manage their glucoselevelpp,fbs and HbA1c,to minus the momotonosity of their diet.

Cereals And Pulses-Glucose -

1. High intake of whole grain cereals their products such as whole wheat bread is associated with a 20%-30% reduction in the rrisk of type 2 diabetes 1(gil et al2011).Many prospective studies have also shown a general inverse relationship between the consumumption of fibre rich foods and the risk of type 2 diabetes.It is also noteworthy that in

*Research Scholar, (HomeScience) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
**Professor, Govt. Maharani Laxmibai Girls (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA

all of these studies the intake of cereal fibre in particular was inversely associated with the incidence of diabetes (parillo and riccardi 2004)where as some clinical trials have shown an improvement in insulin sensitivity,while other studies have reported no effect on either glucose or insulin metabolism3(brownlee et al 2010.

The other study found that by suppressing free fatty acids levels in the blood,whole barley regulates blood sugar better than other grains and for upto 10 hr after consumption(Nilsson A et al 2006). The protective effects of whole grains may depend on the presence or interaction of several biologically active constituents including dietryfibre, vitaminE, magnesium, folate and other nutrients and nonnutrients(Slavin JL et al 1999).Dieteryfibre has been shown to decrease glucose,insulin and serum lipid concentrations in both diabetic and nondiabetic person(Anderson JW et al 1999,Chandalia M et al 2000).Magnesium a rich constituent of the grains germ is associated with low insulin concentration(Manolio TA et al 1991,Ma J et al 1995) and a low incidence of type 2 diabetes (Meyer KA et al 2000,Salmeron J et al 1997,Salmeron J et al 1997.

Association was found between whole grain intake and fasting insulin concentration was attenuated after adjustment for dieteryfibre and magnesium.This suggests that the apparent insulin-sensitizing effect of whole grains might be partially mediated by the effect of these nutrients(Nicola M McKeown et al 2002).Fibre intake is not only inversely associated with fasting insulin(Ludwig DS et al 1999),but insoluble and cereal nfibre intakes significantly reduce the risk of type 2 diabetes (Meyer KA et al 2000,Salmeron J et al 1997,Salmeron J et al 1997).The improved insulin sensitivity with higher fibre diets may occur because the gel forming properties of soluble fibres delays the rate of carbohydrate absorption(Anderson JW et al 1994).

In one study it was found that insoluble cereal fibre rather than soluble fibre was the predominant fibre having a favorable effect on fasting insulin and magnesium is another component in whole grains that may improve insulin sensitivity.Intracellular magnesium has also been linked to insulin sensitivity in metabolic studies(Resnick LM et al 1993,Paolisso G et al 1990),and clinical studies have shown that supplementation withmagnesium improves insulin sensitivity(Paolisso G et al 1989, Paolisso G et al1992).many researches were done in past concluding and provingnthe beneficial effects of fibre and magnesium,Low GI of cerals and pulsed in reducing the risk of type 2 diabetes by lowering fasting glucose and glucose levels in diabetic and non diabetic individuals. Legumes may also reduce the risk of diabetes through the second-meal effect.The second meal effect is the ability of legumes to lower both postprandial glycemia after the meal at which they are consumed and also at a subsequent meal later in the day or even on the following day. (Brighenti F, et al 2006) There are certain limitations of the study which could cause hindrance to the study. Those limitations are as given

A. Patient not adhering to the diet for the prescribed time.
B. Patient moves out of the place.
C. Patient feasts many times during the test period.
D. Patient pulls out of the work in the middle.
E. Patient does not keep the records properly.
F. Non availability of coarse grains (jawar,bajara) throughout the year.

Methodology - For the purpose urban area of Bhopal(M.P) is taken as sample area.Then the area was divided into five zones i.e north ,east,south,west and center. As the research work is experimental so the sample size taken was 30 -30 so that statistics could be used to its best to verify the work, with 6-6 patients from each zone.

Sample Size - The sample thus selected was divided into two groups:-

A. Control group
B. Experimental group

Eligibility criteria of sample -The sample thus taken was supposed to be type II diabetic,resident of Bhopal,s urban area because the study was on type II diabetic patients of urban area of Bhopal,also their lipid profile was also considered as one of the factor for the study to be chosen as sample .

Locations where the data were collected - The required data was collected from Krishana diabetic clinic and research center near matamandir,Bhopal M.P (India)

Sampling technique -The sampling method used to select the sample was purposive as specific type of sample was required for the research work. **Period**:-The sample was observed for the time period of 3-4 months for the required data . Everything was recorded at the prescribed time decided previously for the different attributes/variables. For this the sample of experimental was asked to consume 200-250gm of coarse grain(daliya,whole wheat atta,makkikaatta,oats,jawar, bajra, moong, urad, kidneybeans,lentil,blackgram,etc).The improvement was tested on different variables after a period of 3-4 months.

First reading was taken the time the sample was selected for the sudy,then the follow up was made regularly every month and then after 3rd month final reading was taken.

Tools Used - Different sort of tools were used to collect the required data for the proposed research work. Those tools are listed below.

(1) Biochemical Tests -

a. BLOOD SUGAR:-HbsA1c
PP
FBS or BSF

Result -

	pp(mg/dl	
	CONTROL	EXPERIMENTAL
	GROUP	GROUP
INITIAL(avg)	205.39	229.12
FINAL (avg)	213.03	184.5
Diff (avg)	7.64	-44.62

	fbs(mg/dl	
	CONTROL	EXPERIMENTAL
	GROUP	GROUP
INITIAL(avg)	141.3	155.27
FINAL (avg)	137.2	133.53
Diff (avg)	-4.1	-21.74

	HbA1c	
	CONTROL	EXPERIMENTAL
	GROUP	GROUP
INITIAL(avg)	8.2	8.72
FINAL (avg)	8.02	7.72
Diff (avg)	0.188	-1.13

(**Graph see in the last page)**

In the result it was found that over a period of three months their was an average increase of 7.64 in pp of control group where as subsequent decrease of 44.62 was noticed in pp of experimental group.InFbs of control group average decrease of 4.1 and in experimental group the reduction was of 21.74.Similarly in average HbA1c decrease of 0.188 was noticed in control group where as a decrease of 1.13 reported in experimental group.

Other Effects of Study - There was no harmful effect of the study on the sample where as it had some beneficial effects as relieve in constipation, less time taken in morning, long satiety .

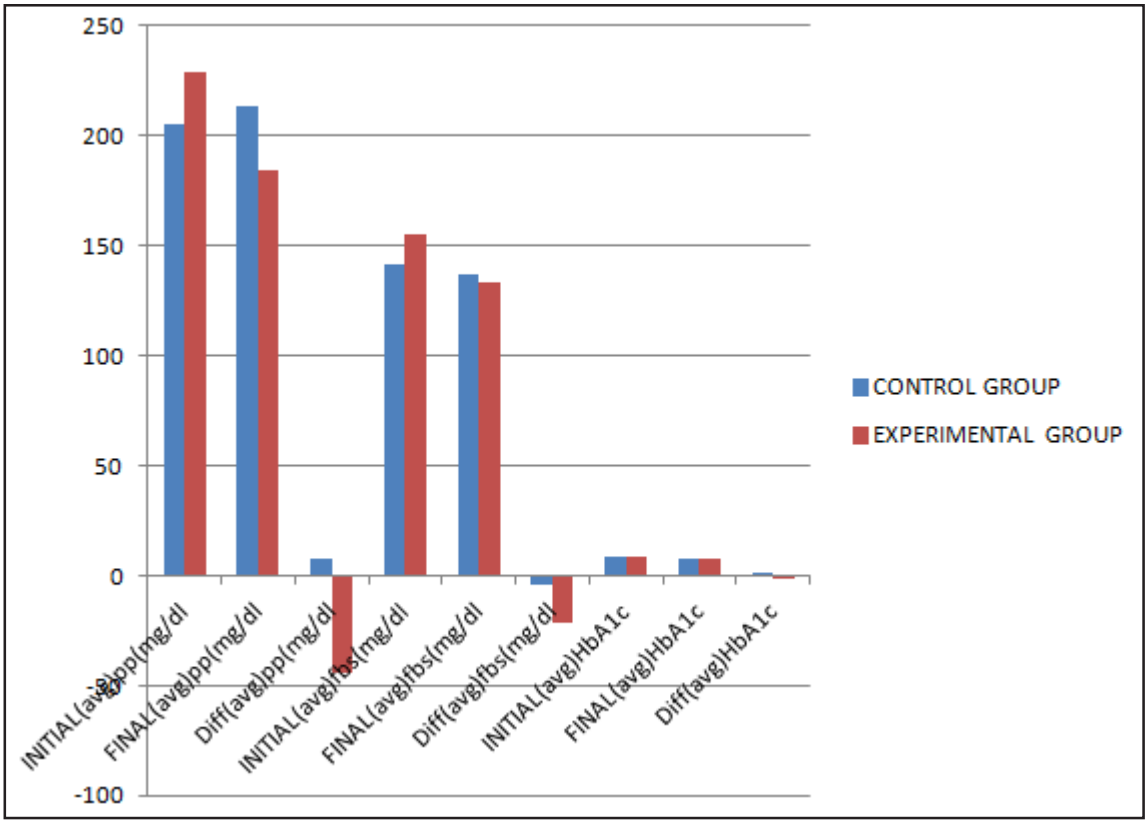
Conclusion - The research concludes that the consumption of coarse grains on regular base has significant positive effect on reduction of pp,fbs and HbA1cof type II diabetic patients.

Generalization of result -The result could be generalized for the whole Bhopal or M.Ps or on Indias urban area as the sample taken represents whole Bhopal in best possible way.

References :-

1. Anderson JW, Hanna TJ.Impact of nondigestible carbohydrates on serum lipoproteins and risk for cardiovascular disease. J Nutr1999;129 (suppl): 1457S–66S.
2. Anderson JW, Smith BM, Gustafson NJ.Health benefits and practical aspects of high-fiber diets. Am J ClinNutr 1994;59(suppl):1242S–7S.
3. Brighenti F, Benini L, Del Rio D, Casiraghi C, Pellegrini N, Scazzina F, et al.. 2006. Colonic fermentation of indigestible carbohydrates contributes to the second-meal effect. Am. J. Clin. Nutr. 83(4)
4. Brownlee et al., 2010
   I.A. Brownlee, C. Moore, M. Chatfield, D.P. Richardson, P. Ashby, S.A. Kuznesof, S.A. Jebb, C.J. Seal,Markers of cardiovascular risk are not changed by increased whole-grain intake: the whole heart study, a randomised, controlled dietary intervention,Br. J. Nutr., 104 (2010), pp. 125–134
5. Gil et al., 2011
   Gil, R.M. Ortega, J. Maldonado,Wholegrain cereals and bread: a duet of the Mediterranean diet for the prevention of chronic diseases,Pub. Health Nutr., 14 (2011), pp. 2316–2322
6. Chandalia M, Garg A, Lutjohann D, von Bergmann K, Grundy SM, Brinkley LJ. Beneficial effects of high dietary fiber intake in patients with type 2 diabetes mellitus. N Engl J Med 2000;342:1392–8.
7. Grains & legumes nutrition council American Journal of clinical Nutrition 2016.
8. Joshi SR, Parikh RM. India - diabetes capital of the world: now heading towards hypertension. J Assoc Physicians India. 2007;55:323–4.
9. Ludwig DS, Pereira MA, Kroenke CH, et al. Dietary fiber, weight gain, and cardiovascular disease risk factors in young adults. JAMA 1999;282:1539–46.
10. Manolio TA, Savage PJ, Burke GL, et al. Correlates of fasting insulin levels in young adults: the CARDIA study. J ClinEpidemiol 1991;44:571–8.
11. Ma J, Folsom AR, Melnick SL, et al. Associations of serum and dietary magnesium with cardiovascular disease, hypertension, diabetes, insulin, and carotid arterial wall thickness: the ARIC study. Atherosclerosis Risk in Communities Study. J ClinEpidemiol 1995; 48:927–40.
12. Meyer KA, Kushi LH, Jacobs DR Jr, Slavin J, Sellers TA, Folsom AR: Carbohydrates, dietary fiber, and incident type 2 diabetes in older women. Am J ClinNutr 71:921–930, 2000
    Meyer KA, Kushi LH, Jacobs DR Jr, Slavin J, Sellers TA, Folsom AR. Carbohydrates, dietary fiber, and incident type 2 diabetes in older women.Am J ClinNutr 2000;71:921–30.
13. Nicola M McKeown, James B Meigs, Simin Liu, Peter WF Wilson, andWhole-grain intake is favorably associated with metabolic risk factors for type 2 diabetes and cardiovascular disease in the Framingham Offspring Study1·2·3·4© 2002 American Society for Clinical Nutrition
14. Nilsson A, Granfeldt Y, Ostman E, Preston T, Björck I. Effects of GI and content of indigestible carbohydrates of cereal-based evening meals on glucose tolerance at a subsequent standardised breakfast. Eur J ClinNutr. 2006 Sep;60(9):1092-9.
15. Paolisso G, Scheen A, D'Onofrio F, Lefebvre P. Magnesium and glucose homeostasis. Diabetologia 1990;33:511–4.
16. Paolisso G, Sgambato S, Pizza G, Passariello N, Varricchio M, D'Onofrio F. Improved insulin response and action by chronic magnesium administration in aged NIDDM subjects. Diabetes Care 1989;12:265–9.
17. Paolisso G, Sgambato S, Gambardella A, et al. Daily magnesium supplements improve glucose handling in elderly subjects. Am J Clin Nutr1992;55:1161–7.
18. Parillo and Riccardi, 2004
    M. Parillo, G. Riccardi,Diet composition and the risk of type 2 diabetes epidemiological and clinical evidence,Br. J. Nutr., 92 (2004), pp. 7–19

19. Resnick LM, Barbagallo M, Gupta RK, Laragh JH.Ionic basis of hypertension in diabetes mellitus.Role of hyperglycemia. Am J Hypertens 1993;6:413–7.
20. Salmeron J, Manson JE, Stampfer MJ, Colditz GA, Wing AL, Willett WC. Dietary fiber, glycemic load, and risk of non-insulin-dependent diabetes mellitus in women. JAMA 1997;277:472–7.
21. Slavin JL, Martini MC, Jacobs DR Jr, Marquart L. Plausible mechanisms for the protectiveness of whole grains. Am J ClinNutr 1999;70(suppl):459S–63S.
22. Salmeron J, Ascherio A, Rimm EB, et al. Dietary fiber, glycemic load, and risk of NIDDM in men. Diabetes Care 1997;20:545–50.
23. Walter willett,JoAnne Manson &SiminLiu,Glycemic index load and risk of type II diabetes 1,2,3,American society of clinical Nutrition 2002



APPENDIX

		PP(Post Prandial)mg/dl				
	Control group			EXPERIMENTAL GROUP		
S.No	INITIAL	FINAL	diff	INITIAL	FINAL	diff
1	362	308	-54	260	134	-126
2	196	167	-29	142	141	-1
3	122	160	38	284	224	-60
4	203	220	17	215	150	-65
5	196	265	69	126	103	-23
6	161	200	39	212	174	-38
7	142	141	-1	180	161	-19
8	181	135	-46	161	184	23
9	209	393	184	251	163	-88
10	154	138	-16	101	164	63
11	200	160	-40	243	169	-74
12	195	178	-17	201	102	-99
13	285	221	-64	195	201	6
14	161	211.6	50.6	258	231	-27
15	332	237	-95	228	218	-10
16	154	250	96	302	165	-137
17	254.3	147	-107.3	224	192	-32
18	185	172	-13	294	220	-74
19	223.9	238	14.1	192.7	162	-30.7
20	186	149	-37	146	173	27
21	241	300	59	288	228	-60
22	280	294	14	248	196	-52
23	226	247	21	313	159	-154
24	210	155	-55	195	198	3
25	120	203	83	188	134	-54
26	258	186	-72	262	154	-108
27	194	208	14	226	289	63
28	158	224.8	66.8	566	358	-208
29	140.5	203.6	63.1	262	168	-94
30	232	279	47	110	220	110
Avg	205.39	213.0333	7.643333	229.1233	184.5	-44.6233

				FBS(mg/dl)			
					EXPERIMENTAL GROUP		
S.No	INITIAL	FINAL	diffd		INITIAL	FINAL	diff
1	250	162	-88		180	94	-86
2	91	99.6	8.6		109	92	-17
3	94.8	113.6	18.8		230	232	2
4	171	157	-14		107	170	63
5	105	139	34		137	126	-11
6	89.3	92	2.7		108	106	-2
7	109	92	-17		145	160	15
8	155	127	-28		85	127	42
9	114	145	31		132	115	-17
10	133	117	-16		96	141	45
11	118	156	38		143	93	-50
12	124	160	36		89	80	-9
13	210	188	-22		187	155	-32
14	97	121.9	24.9		169	157	-12
15	252	230	-22		148	115	-33
16	123	110	-13		200	118	-82
17	242.3	102	-140.3		180	160	-20
18	115	109	-6		89	107	18
19	102.4	95	-7.4		189.2	117	-72.2
20	184	129	-55		126	152	26
21	137	159	22		174	156	-18
22	113	113	0		144	151	7
23	160	159	-1		158	85	-73
24	168	202	34		124	132	8
25	101	139	38		261	132	-129
26	182	160	-22		73	93	20
27	129	135	6		140	182	42
28	112	132	20		419	241	-178
29	109.3	122	12.7		166	87	-79
30	148	150	2		150	130	-20
Avg	141.3033	137.2033	-4.1		155.2733	133.5333	-21.74

HbA1C CHART

	Control group				Experimental group		
S.No	INITIAL	FINAL	diff		INITIAL	FINAL	diffd
1	13	8.5	-4.5		12.9	6.9	-6
2	6.6	8.1	1.5		7.1	6.2	-0.9
3	5.7	6.9	1.2		9.5	8.7	-0.8
4	10	8.2	-1.8		7.4	7	-0.4
5	7	6.9	-0.1		8	7.4	-0.6
6	7.8	7.7	-0.1		7.1	6.9	-0.2
7	7.1	6.2	-0.9		9.3	8.1	-1.2
8	8.6	6.9	-1.7		6.2	5.8	-0.4
9	8.8	8.7	-0.1		10.1	6.7	-3.4
10	7.7	6.9	-0.8		6.5	6.8	0.3
11	7.2	8.5	1.3		7.4	6.9	-0.5
12	5.7	5.1	-0.6		8.8	7.7	-1.1
13	11.7	9.9	-1.8		9.5	8.2	-1.3
14	7.6	6.7	-0.9		8.1	8.3	0.2
15	11.1	10.7	-0.4		10.4	7.8	-2.6
16	9.9	8.4	-1.5		12.6	9.3	-3.3
17	9.8	9.6	-0.2		7.5	7.1	-0.4
18	7.1	7.3	0.2		9.5	7.3	-2.2
19	8.3	8.5	0.2		10.6	7.4	-3.2
20	8	6.1	-1.9		7.8	7.7	-0.1
21	7.1	8	0.9		10.2	9.2	-1
22	7.15	10.8	3.65		7.4	7.5	0.1
23	8.5	8.8	0.3		8.1	7.8	-0.3
24	9.8	10.1	0.3		5.7	5.1	-0.6
25	6.6	8.6	2		9.1	8.4	-0.7
26	8.5	7.7	-0.8		8.7	9.3	0.6
27	6.4	7	0.6		7.6	8.6	1
28	8.5	9.4	0.9		13.8	8.4	-5.4
29	6.2	7.2	1		8	8.1	0.1
30	8.8	7.2	-1.6		6.7	7.1	0.4
Avg	8.208333	8.02	-0.18833		8.72	7.59	-1.13

****

A Study on Effect of Mother's Educational Background on the Developmental Abilities of Pre - school Children

Prof. Usha Kothari * Rashmi Kandare **

Abstract - The mother child relationship is the only relationship one can have before entering the world. A mother is the first teacher for their child. Although a big part of a mother's job is to be responsible for the physical well being of the child, she is also responsible for the psychological well being. What does happen if the mother is not educated? The main question is whether the educational background of the mother affects the child outcomes. To test this, major scales have been used. The results confirm that the education of the mother is important for children's outcomes especially at the early stages.

Key words - Mother education, Child development and Home environment.

Introduction - Mothers play an important role in the development of children. In every culture, the responsibility of the upbringing and nourishing of a child lies in the hands of the mother. Due to this responsibility the women's education has gained quite an importance globally. A direct relationship is seen between a mother's educational level and their child's development. Educated mothers can help their children throughout their life, but most importantly they can help their children in their preschool years. The attitude, values and behaviour of mother influence and affect the child's social, physical, emotional and intellectual behaviour in later life.

Studies show that mothers intelligence and family demographic factors related not only to children's cognitive development but also pervasively to the provision of their social and physical home stimulation, Mother's of higher intelligence (i.e. verbal intelligence) education, and SES provided a social and physical environment that was generally more enriched and conducive to enhancing children's cognitive development. Additionally, it is interesting to note that studies have shown, mothers with higher educational achievements have been found to have more knowledge about the environmental factors that influence children's development. It appears that these mothers are more aware of what is necessary for intellectual development, school success and are acting on their knowledge to provide the experiences and the setting that facilitate such achievements.

Relevance of the study - The justification for relevance of a study may be given from the point of view of one major consideration. The major focus of the study related to over all development of children keeping in mind the educational background of the mother and environmental influences on various developments such as cognitive, language, motor and personal social have been conducted recently.

Research Objectives - The research seeks to study the relationship between the mother education and child development. The specific objectives of the study were :

- To study the affects of educational background of the mother on the early childhood years.
- To study that whether mother with different educational background differs significantly in their perspectives and expectations for their children.

Research Question - Based on the problem statement, the study sought to find answers to the following questions-

- Has the educational background of the mother affects the over all development of the pre-school children.
- Has the physical environment, variety of stimulation provided by the mother affects the language development of the children.

Selection of sample - The present study is conducted in the pre-schools lying within the municipal limits of Jodhpur city, Rajasthan. There are schools in jodhpur namely- Vidhyashram International School, Vidhyashram Public School, Montessori Child Center School, Army Public School, Little Flower School, Kabra School and Gyanoudai, and all will be covered by researcher. 150 Pre-school children from each social class will be selected. Thus, total 450 Pre-school children in the age range of 3 to 6 years will be purposively randomly selected for conducting the study. The distribution of the sample is presented in table no.1.

Distribution of Sample

GROUPS	SIZE OF THE SAMPLE
Upper SES	150
Middle SES	150
Lower SES	150
	450
Total No.	450

* Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

Hence the total sample from which the data is collected 450.

Conclusion - The influence of mother education on the developmental abilities of children are highly seen at the early stage, children of 4-5 and 5-6 years age group showed higher scores on conceptual and readiness abilities and language abilities when their mothers' were graduates as compared to mothers who were intermediate pass. Similarly, at home, language stimulation, maternal attitude, disciplining and total home environment scores increases with mother's education level.

References :-

1. Barnett and Belfied. (2006) The Study on effect of early childhood care & education program on children. University of Switzerland, Switzerland.
2. Blair C, Granger DA & Willoughby M. (2011) Salivary cortisol mediates effects of poverty and parenting on executive functions in early childhood. Child Development.; 82(6) : 1970-8
3. Denham, S.A., Renwick, S.M. & Holt, R.W.(1991). Working and playing together : Prediction of preschool social- emotional competence from mother- child interaction. Child Development, 62(2), 242-249.
4. Evans GW, Ricciuti HN & Hope S. (2010) Crowding and cognitive development. The mediating role of maternal responsiveness among 36- month old children. Environment and Behavior.; 42 (1) 135-148
5. Health, S.B. (1982). What no bedtime story means : narrative skills at home and school. Language in Society, 2, 49- 76.
6. Mohite, P. (1989). Mohite Home environment inventory : Child's observation technique. Agra : National Psychological corporation.
7. Shrivastava, G.P. (1984). "Manual of Socio-Economic Status". National Psychological Corporation, Agra.
8. Tett, L. and St Clair, R. (1996). Family literacy, the home and the school : a cultural perspective. Journal of Education Policy, 11(3), 363-75.

****

सुल्तानपुर जिले में स्वयं सहायता समूह की गतिविधियों का मूल्यांकन

स्वर्णिमा सिंह * कंचन दुबे ** डॉ. मंजू दुबे ***

प्रस्तावना – स्वयं सहायता समूह की अवधारणा – ग्रामीण क्षेत्रों में बैंको का तेजी से विस्तार होने के बावजूद ग्रामीण निर्धनों, विशेषकर सीमान्त कृषकों, भूमिहीन श्रमिकों, ग्रामीण शिल्पकारों आदि की एक बड़ी संख्या ऋण के गैर संस्थागत स्त्रोतों जैसे साहूकारों आदि पर निर्भर करती है। इन व्यक्तियों के पास बचत बहुत कम होती है, जो बैंक में नहीं रखी जाती लेकिन इन्हें थोड़ी–थोड़ी मात्रा में बार–बार ऋण की आवश्यकता पड़ती है। उक्त प्रक्रिया में लेनदेन की अधिक लागत ओर जोखिम के कारण बैंक इन व्यक्तियों के साथ लेनदेन में संकोच करते रहे हैं। लेकिन विश्व स्तर पर किए गए अनुभवों का निष्कर्ष है कि निर्धनों के साथ बैंकिंग व्यवसाय करना लाभप्रद और आकर्षक है। यह निर्धन लोग अपने में बचत एवं ऋण परिचालन की आदत का विकास करने के लिये स्वयं को छोटे समूहों में गठित करते है जिन्हें **स्वयं सहायता समूह** कहा जाता है।

'स्वयं सहायता समूह समान सामाजिक पृष्ठभूमि के ऐसे ग्रामीण निर्धनों का एक समूह है, जो स्वेच्छा से एक समूह के रूप में संगठित होकर एक सम्मिलित निधि में कुछ न कुछ बचत को एकत्रित कर समूह–निर्णय के अनुसार समूह के जरूरतमंद सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु देने के लिए परस्पर सहमत होते हैं।'[1]

'वास्तव में स्वयं सहायता समूह ग्रामीण, निर्धनों का छोटा, आर्थिक दृष्टि से एक समान ओर एक दूसरे से जुड़ा हुआ समूह है। समूह की आवश्यकताएँ एक समान होती हैं और सब मिलकर एक ही कार्य सामूहिक रूप से करना चाहते हैं यह स्वप्रेरणा से बचत के लिए बनाया गया समूह है। जिसे किसी भी समुदाय के 10 से 20 सदस्य मिलकर बना सकते हैं। सभी सदस्य अपनी छोटी–छोटी बचतों को एकत्रित कर साधारण निधि में योगदान देते हैं, जिसे समूह के निर्णय के अनुसार जरूरत मंद सदस्यों को उत्पादक तथा उपभोग के प्रयोजनों के लिए ऋण के रूप में प्रदान किया जाता है ताकि उनकी आय में वृद्धि हेतु वे अपना कोई व्यवसाय प्रारम्भ कर सकें।

'स्वयं सहायता समूह पंजीकृत अथवा अपंजीकृत हो सकते हैं प्रत्येक स्वयं सहायता समूह का बैंक में बचत खाता खोला जाता है। खाता एवं पास बुक समूह के नाम से होता है लेकिन उसके संयुक्त परिचालन हेतु समूह के सभी सदस्यों के हस्ताक्षर युक्त पारित संकल्प पत्र की प्रति, जिसमें किन्हीं तीन सदस्यों को प्राधिकृत किया गया हो बैंक में जमा करना आवश्यक होता है।'[2]

- **स्वयं सहायता समूह के उद्देश्य –** 'अल्प बचत एवं मितव्ययता की भावना पैदा कर सदस्यों द्वारा जमा किए गए धन को आपसी निर्णय से उत्पादन तथा अन्य आवश्यक आवश्यकताओं के लिए उपयोग करना। ग्रामीण निर्धनों एवं बैंको के बीच पारस्परिक विश्वसनीयता एवं आत्मविश्वास कायम कर पूरक ऋण युक्ति रचना तैयार कर प्रोत्साहित भी करना।'[3]
- **स्वयं सहायता समूह के कार्य –** 'स्वयं सहायता समूह का प्रमुख कार्य बचत एवं किफायत को प्रोत्साहित करना है। सदस्यों की बचत की आदत को नियमित करना है, चाहे बचत की राशि छोटी हो। इनका उद्देश्य पहले बचत फिर ऋण है। बचत के द्वारा समूह आत्मनिर्भरता की ओर कदम बढ़ाकर जरूरतमंद सदस्यों को ऋण देकर वित्तीय अनुशासन की शिक्षा प्रदान करते हैं, जो बैंक के साथ ऋण लेते समय काम आता है।'[4]
- स्वयं सहायता समूह का उदेश्य समूह के सदस्यों में बचत की आदत उत्पन्न करना है। बचत की आदत होने पर वे किफायत से व्यय करना भी सीखेंगे।
- स्वयं सहायता समूह अपने सदस्यों को उपभोग हेतु अथवा स्वरोजगार हेतु ऋण प्रदान करता है जिससे सदस्यों की आकस्मिक धन की आवश्यकता को पूर्ण किया जा सके।
- स्वयं सहायता समूह बैंकों से लिंकेज करके समुह के लिए ऋण प्राप्त करता है तथा समूह के सदस्यों को आवश्यकतानुसार वितरित करता है। समूह ऋण भी वसूली करके बैकों की समय सीमा में अदायगी भी करता है।
- स्वयं सहायता समूह के सदस्यों की समस्याओं पर विचार विमर्श करके उनके निराकरण का भी प्रयास करता है।
- समूह बैंक से ऋण प्राप्त करके उत्पादन कार्य करता है। इससे समूह की आमदनी होती है व उसके फंड में बढ़ौत्री होती है।
- **अध्ययन के उद्देश्य–**
- सुल्तानपुर जिले में स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियों का अध्ययन करना।
- स्वयं सहायता की वित्तीय स्थिति का अध्ययन करना।
- **शोध प्रविधि** – शोध अध्ययन हेतु सुल्तानुपर जिले के अमेठी विकासखण्ड से 40, भादर विकासखण्ड से 40, भेटुआ विकासखण्ड से 40 तथा सुल्तानपुर विकासखण्ड से 40 कुल 160 स्वयं सहायता समूहों का चयन किया गया। प्रत्येक समूह से तथ्यों का संकलन प्रश्नावली द्वारा किया गया प्राप्त समंकों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण कर निष्कर्ष प्रस्तुत किए

*शोधार्थी (गृहविज्ञान) शा. क. रा. क. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी (भूगोल) शा. क. रा. क. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
***प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष(गृहविज्ञान) शा. क. रा. क. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

गए।

- **वर्गीकरण** – सुल्तानपुर जिले में सर्वेक्षित स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियों को तालिका क्रमांक – 1 समूहों द्वारा लिए गए ऋण को तालिका क्रमांक– 2 तथा ऋण की अदायगी किये गए ऋण को तालिका क्रमांक – 3 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्रमांक – 1(देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका क्र. – 1 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि स्वयं सहायता समूहों की सर्वाधिक संख्या 59 (36–87%) खेती के साथ पशुपालन कार्य करने वाले समूहों की पाई गई तथा न्यूनतम संख्या खेती के साथ दुकान चलाने वाले स्वयं सहायता समूहों की संख्या – 40 (25.0%) पाई गई तथा खेती के साथ दुकान एवं पशुपालन करके वाले स्वयं सहायता समूहों की संख्या 19 (11.87%) पाई गई है।

तालिका क्रमांक – 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक– 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित सहायता समुहों द्वारा लिए गए ऋण में 2010, 2011, 2012 तथा 2013 वर्षों में निरन्तर वार्षिक उत्तरोत्तर वृद्धि पाई गई जो समूह द्वारा संचालित गतिविधियों की सक्रियता प्रदर्शित करती है। 2010 से 2013 तक के सभी वर्षों में सर्वाधिक ऋण भादर विकास खण्ड के स्वयं सहायता समूहों द्वारा लिया गया है तथा न्यूनतम ऋण लेने वाला विकास खण्ड भेटुआ पाया गया।

तालिका क्रमांक – 3 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका क्र. – 3 में स्वयं सहायता समूहों द्वारा ऋण अदायगी के तरीकों सम्बन्धी तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं। तालिका दर्शाती है कि 01 (0.62%) समूहों ने ऋण की अदायगी एक मुश्त तथा 135 (84.37%) ने किश्तों में की है। 24 (15.0%) ने ऋण की अदायगी नहीं की है।

किश्तों में ऋण की अदायगी करने वाले 36 (22.5%) अमेठी, 37 (23.12%) भादर, 32 (20.00%) भेटुआ तथा 30 (18.75%) संग्रामपुर विकास खण्ड के समूह पाये गये।

ऋण अदा न करने वाले समूहों में 04 (2.5%) अमेठी, 02 (1.25%) भादर, 08 (5.0%) भेटुआ तथा 10 (6.25%) संग्रामपुर विकास खण्ड के पाये गये। ऋण की अदायगी करने वाले स्वयं सहायता समूहों में सर्वाधिक प्रतिशत भादर समूह का तथा ऋण अदा न करने वाले समूह में सर्वाधिक समूहों संग्रामपुर विकास खण्ड के पाए गए।

'नवीन शोध संसार (एन इन्टरनेशनल मल्टी डिसीप्लीनरी जर्नल) वोल्यूम ख, इशू दतख, अक्टूबर से दिसम्बर 2016 में प्रकाशित सिंह एस., दुबे के. एवं दुबे एम. द्वारा किए गए सुल्तानपुर जिले के स्वयं सहायता समुहों के अध्ययन में बी.पी.एल सदस्यों की स्वयं सहायता समूह में सर्वाधिक संख्या भादर विकास खण्ड में 366 (19.31%) तथा न्यूनतम बी.पी.एल. सदस्य संख्या भेटुआ विकास खण्ड में 151 (7.96%) पाई गई थी। अमेठी विकास खण्ड के बी.पी.एल. सदस्यों की संख्या 261 (13.77%) द्वितीय एवं संग्रामपुर विकास खण्ड के बी.पी.एल. सदस्यों की संख्या 157 (8.39%) तृतीय स्थान पर पाई गई।'[5]

दोनों शोध अध्ययनों की विवेचना से स्पष्ट होता है कि भादर विकास खण्ड के सदस्य स्वयं सहायता समूहों में जिले के अन्य विकास खण्डों के स्वयं सहायता समूहों की तुलना में बीपी.एल. सदस्यों की संख्या सर्वाधिक है तथा उनके द्वारा वर्ष 2010 से 2013 तक लिए गए ऋण की राशि भी जिले के अन्य विकासखण्डों द्वारा ली गई राशि की तुलना में सर्वाधिक है जबकि भेटुआ विकास खण्ड के स्वयं सहायता समूहों में बी.पी.एल. सदस्यों की संख्या जिले विकास खण्डों की तुलना में न्यूनतम पाई गई तथा समूह के द्वारा वर्ष 2010–2013 तक लिया गया ऋण भी जिले के अन्य विकास खण्डों के स्वयं सहायता समूहों की तुलना में न्यूनतम पाया गया।

निष्कर्ष – सुल्तानपुर जिले में सर्वेक्षित स्वयं सहायता समूहों के अध्ययन से निम्न निष्कर्ष सामने आये–

- वर्ष 2011 से 2013 तक जिले के सभी विकास खण्डों (अमेठी, भादर, भेटुआ तथा संग्रामपुर) के स्वयं सहायता समूहों द्वारा लिए गए ऋण में वार्षिक उत्तरोत्तर वृद्धि पाई गई। जो समूह की बढ़ती हुई भागीदारी सुनिश्चित करती है।
- वर्ष 2011 से 2013 तक प्रत्येक वर्ष में भादर विकास खण्ड के स्वयं सहायता समूहों द्वारा सर्वाधिक ऋण लेकर सर्वाधिक सक्रिय भागीदारी का परिचय दिया गया।
- खेती के साथ साथ पशुपालन करने वाले स्वयं सहायता समूहों का प्रतिशत सर्वाधिक पाया गया जो समूह के रूझान को प्रदर्शित करता है।
- 85% स्वयं सहायता समूहों ने ऋण की अदायगी की तथा 15% समूहों ने ऋण की अदायगी नहीं की।
- 84.37% स्वयं सहायता समूहों ने किश्तों में ऋण की अदायगी को अपनाया भादर विकासखण्ड के एक स्वयं सहायता समूह ने एक मुश्त ऋण की सम्पूर्ण अदायगी की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम, ग्रामीण निर्धनों के साथ बैकिंग, राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, लखनऊ, 1999 पेज नं. 2
2. मित्तल, एम. शीर्षक 'महिला उद्यमिता एवं स्वयं सहायता समूह', पुस्तक– 'भारत में उद्यमिता विकास', सम्पादक दुबे वी एवं दुबे, एम., राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ क्रमांक 106–107।
3. सिंह, जयनाथ, पाण्डेय, एस.के., सक्रिय डवाकरा समूहों में स्वयं सहायता समूह के गठन एवं संचालन हेतु दो दिवसीय प्रशिक्षय, सत्र 1998–99, क्षेत्रीय ग्राम्य विकास संस्थान, रायबरेली, पेज नं. 1–2
4. वर्मा, एस,, शीर्षक 'स्व सहायता समूह', जर्नल – नवीन शोध संसार (एन इन्टरनेशनल मल्टी डिसीप्लीनरी जर्नल), वोल्यूम 2, इश्यू 10, अप्रैल–जून 2015, पृष्ठ क्रमांक 132
5. सिंह, एस. दुबे, के. दुबे एवं दुबे एम., 'सुल्तानपुर जिले के स्वयं सहायता समूहों का अध्ययन', नवीन शोध संसार, वोल्यूम I इश्यू XVI, अक्टूबर– दिसम्बर 2016, पृष्ठ क्रमांक 26–28

तालिका क्रमांक – 1
सर्वेक्षित स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियाँ

क्रं.	गतिविधियाँ	विकास खण्ड								योग	
		अमेठी		भादर		भेटुआ		संग्रामपुर			
		सं.	प्र.	सं.	प्र.	सं.	प्र.	सं.	प्र.	सं.	प्र.
1.	खेती + पशुपालन अन्य	14	8.75	11	6.87	14	8.75	20	12.50	59	36.87
2.	खेती + दुकान + अन्य	08	5.00	–	–	01	0.62	02	1.25	11	6.87
3.	खेती + दुकान + पशुपालन	06	3.75	03	1.87	04	2.50	06	3.75	19	11.87
4.	पशुपालन	05	3.12	15	9.37	07	4.37	04	2.50	31	19.37
5.	पशुपालन + दुकान	07	4.37	11	6.87	14	8.75	08	5.00	40	25.00
	योग	40	25	40	25	40	25	40	25	160	100

तालिका क्रमांक – 2
सर्वेक्षित समूहों द्वारा लिये गये ऋण का विवरण
(वर्ष 2010–2013 तक)

क्रं.	विकास खण्ड	ऋण की राशि			
		2010	2011	2012	2013
1.	अमेठी	7,27,000	7,73,000	7,46,000	14,46,000
2.	भादर	17,13,472	20,21,000	25,22,650	29,98,830
3.	भेटुआ	2,22,000	3,67,000	7,28,000	14,39,000
4.	संग्रामपुर	3,76,700	5,78,200	13,84,700	18,20,430
	योग	30,39,172	37,39,200	53,81,350	77,04,260

तालिका क्रमांक – 3
स्वयं सहायता समूहों द्वारा ऋण अदायगी का विवरण

क्रं.	विकास खण्ड	ऋण अदायगी का तरीका						योग	
		एकमुश्त		किश्तों में		अदा नहीं किया			
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	अमेठी	00	00	36	22.5	04	2.5	40	25%
2.	भादर	01	0.62	37	23.12	02	1.25	40	25%
3.	भेटुआ	00	00	32	20.00	08	5.00	40	25%
4.	संग्रामपुर	00	00	30	18.75	10	6.25	40	25%
	योग	01	0.62	135	84.37	24	15.00	160	100%

****

A Review of Investors' Perception of the Indian Capital Market in the Post-Reform Era

Anindita Banerjee*

Abstract - The Indian capital market is very old in its inception but very new in its character. Several significant financial sector reforms have gone into shaping the capital market of today. Primarily, the capital market is about the flow of funds from the surplus sectors to the deficit sector. Thus, the investors i.e. the supply side is very crucial to the growth and advancement of the capital market of an economy. Hence, this study is an approach to analyze the investors' perception towards the Indian capital market, their attitude towards the reform policies and most importantly the investors' outlook towards the future avenues and growth prospects of the Indian capital market.
Key Words - Capital market, Financial Sector Reforms, SEBI, Investors' perception, Investors' protection.

Introduction - The Capital Market is a market for long-term funds. The capital market includes all existing facilities and institutional arrangements developed for borrowing and lending medium and long-term funds available in the market. It is not a market for capital goods; rather it is a market for raising and advancing money capital for investment purposes. In the capital market, the demand for long term funds mostly arises from private sector manufacturing industries, agricultural sector and also from the government. Even the consumer goods industries usually need a considerable support from the capital market. Similarly, both the state and central government which are engaged in developing infra-structural facilities along with the development of basic industries also need a considerable support from the capital market. This reflects the demand side in a capital market, whereas the supply of funds usually comes from individual savers, corporate savings, various banks, insurance companies, specialized agencies and also the government. Hence the role and importance of the investors can be strongly advocated for creating a healthy environment for mobilization of resources in the capital market. The pivotal part played by sound investors in maintaining the health of the capital market of an economy cannot be undermined.

Since the nineties the economy has been through a vivid change in terms of regulatory mechanism, globalization and liberalization of the entire business practices. Before the reforms the capital market did grew considerably in volume and size but then it was considered a very tricky and risky investment avenues. Although the establishment of SEBI and other substantial financial sector reforms have managed to increase the number of investors, the growth seemed to be only quantitative and not qualitative. Inadequate regulations and supervisions to protect the investors' interest, lack of transparency in its trading operations on one end, delayed and dissatisfactory grievance redressal, series of scams and frauds on the other have acted as a major deterrent for healthy growth in the number of investors and buoyancy of capital market. This can be asserted well from the study conducted by Gupta (1992) wherein he concludes after a primary survey of investors that; a) Indian stock market is highly speculative, b) Indian investors are dissatisfied with the services provided to them by the brokers, c) margins levied by the stock exchanges are inadequate and d) liquidity in a large number of stocks in Indian markets is very low. There has been a superfluous and assiduous flow of reforms in the financial sector since the1991 aimed at increasing the viability of the Indian capital market, but the question here is how has an ordinary investor, irrespective of his size of investment taken up to the reform process. It becomes imperative to know the impact of such reform initiations on the general investor body. Hence, this study is an effort to understand the investors' perception towards the reforms and regulation and most importantly the relevance and significance of this entire process on the confidence level of the investors. For the purpose a huge body of literature was referred, to draw the inference on the investors' perception towards Indian capital market in the post-reform era.

Review of Studies on investors' perception in India - A study conducted by Sayuri (2004) has found that financial and capital market reforms have had a positive impact on these markets in India. However the financial and capital market remained shallow for several reasons. The poor infrastructure is evidenced by the frequent cases of malpractice and price manipulation. The results of this study reinforce the need for further financial and capital market

* Research Scholar, RPEG, UTD, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

reforms. However, in the same year Ghosh (2004) commented in his study that the Indian markets have started becoming more efficient. Contrary to the popular perception in the recent past, volatility has not gone up.

Nayak (2006) made an attempt to find out the common grievances and the regulatory measures undertaken to provide protection in the capital market. The study revealed that the new issue market in the post liberalization era was embedded with numerous problems. Although the problems have been less in comparison to the pre liberalization period, still they exist. Some of the major ones are that the brokerage charged is still high and the investors still considered the capital market as highly risky.

Subha. M.V, (2008), in her study addressed the current issues in the Indian capital market, lack of individual participation and the ways of restoring investor confidence. She concluded that the responsibility of creating an environment of trust and confidence lies with the regulators, stock exchanges and companies.

In another study Gopinathan and Rau (2009) state that markets became more efficient with the growing presence of institutional investors who predominantly go by fundamentals. FIIs are a potent force in determining the direction of the market and they have played a key role since their entry. They are engines of growth while lowering the cost of capital in the emerging market. The Society for Capital Market Research and Development, (2009), conducted a survey; the study was based on direct interviewing of a very large sample of 5908 household heads over 90 cities and across 24 states. The study states that price volatility, price manipulation and corporate mismanagement / fraud have persistently been the household investors' top three worries in India. A large percentage of investors had a negative opinion on company managements. A majority of retail investors in India do not regard mutual fund equity schemes as a superior investment alternative to direct holding of equity shares. Retail investors overwhelmingly prefer bank deposits rather than liquid / money market funds. Middleclass investors are long term and conservative.

Deene, Madari and Gangashetty, (2009), in their paper stated that a strong and vibrant capital market assists corporate sector initiatives, finance and exploration of new processes and instruments facilitates management of financial risk. Retail investor is the backbone of the capital market. But with the expansion of the capital market, scams and anomalies, also multiplies. It ultimately leads to the dilution of the faith of the small investor, mutual funds, pension funds, FII and insurance companies. Bhatta, (2009), in his paper makes an attempt to throw light on the investors' biases that influence decision making process. The paper suggests for a time bound program to educate and counsel the individual investors about the wisdom required in stock trading and be aware of unethical and tactical practices of brokers ,shady dealings of the companies and the insider trading.

Patidar (2010) analyzes the investors attitude towards investment and the pattern which clearly indicated that the investors' below the age of 35 are more risk taking, however they invest their money through the share brokers and the investing activity is no more confined to the rich and business class.

Bandgar (2011), in his study studied the existing pattern of financial instruments in India and the performance of middle class investors, their behaviour and problems. The study revealed that only 16% of the investors were facing difficulties in buying and selling securities. Middle-class investors were highly educated but they were lacking skill and knowledge to invest. The study also revealed that there was a moderate and continuing shift from bank deposits to shares and debentures. Panda and Tripathi (2011), in their study attempted to identify the investors' awareness and attitude towards public issues. A large number of investors were of the opinion that they were not in a position to get the required information from the company in time. A sizable number of investors were found to face problems while selling securities.

Ramarantnam and Jayaraman (2012) stated that the Indian capital market attained a significant development in the process of economic liberalization. The capital market has been proved to be an important place in financing the Indian corporate sector. Besides enabling mobilizing resources for investment, directly from the investors, providing liquidity for the investor, monitoring and disciplining company management, creating financial flows, attracting the institutional and retail investors, mediating companies and financial warehouses, channelizing funds for deficit fields are identified as major emerging functions of Indian capital market.

The SEBI and NCAER (2015) conducted a comprehensive survey of the Indian investor households, in order to study the impact of the growth of the securities market on the households and to analyze the quality of its growth. The study revealed that majority of the equity investors had long term motive of investment. Investors revealed that they had a number of broker related problems than the issuer related problems.

Objective and Methodology - The Primary objective of the study is to analyze the investors' perception towards the Indian stock market after the initiation of the reform policies.

For the purpose a random sample survey of 150 investors was conducted in the urban areas of Bhopal to gauge their perception towards the changes in the Indian stock market since the reform process initiation.

Data Analysis & Findings:

Table 1 (see in last page)

Table 2. Opinion about the reforms in the primary market for investors' protection

S.	Opinion	Frequency	Percentage
1.	Highly Satisfied	16	10.7
2.	Satisfied	43	28.7

3.	Dissatisfied	57	38
4.	Highly Dissatisfied	23	15.3
5.	Can't Say	6	4
6.	Nil	5	3.3

Source: Primary Survey

***Chart 1* (see in next page)**

Table 3. Factors that contribute to Non-participation in capital market activities

S.	Reasons	Response Frequency	Percentage
1.	Risky	28	18.7
2.	Low income	19	12.7
3.	Preference for saving with Banks	49	32.7
4.	Lack of interest and ignorance	23	15.3
5.	Preference for real estate	17	11.3
6.	Preference for insurance products	14	9.3

Source: Primary Survey

***Chart 2* (see in next page)**

Some other findings - Most of the investors' attribute for investment is based on the return on investments. The investors also attribute the liquidity criteria. Most of the investors who don't want to take risk and are busy prefer the option of mutual funds. A considerable amount of investors are investing for tax concessions and are concerned only for saving the tax. Educated investors are more aware investors and they keep themselves updated. Major investors' investments are influence advices of share brokers. The top investment options from investor's point of view are Real estate, Gold, PPF and mutual funds.

Conclusion - Regardless of setback in some years due to stock market scams, the sentiments seem positive due to the revival of investor interest in the market following encouraging corporate performance in recent period. In order to protect the investors, the regulation of the new issue market is essential due to the massive size of small investors in new issue market. Most of new investors make their first entry into equity investments through the new issue market. So retaining common investors' confidence in primary markets is important. Studies have also indicated that the Indian capital market suffers some serious inadequacies as a mechanism for raising capital. There is more speculation by investors rather than investment orientation. The current and potential investors in Indian capital market are quite vast. Gender also plays a vital role in investment perceptions. Small investors are much aware of the trends in capital markets, government policies and policies of corporate bodies. Corporate Social Responsibility also plays a significant role in investment habits of the investors. It is the duty of the market regulator to bring in stringent regulations and protect the investors from fraudulent and unhealthy practices in the market. Thus, a reform in the capital market is imperative. Investors are the major source of making the primary issues success. They should have enough confidence in the system to invest in it. The regulatory framework must be strict and stringent against all un-ethical practices. Investors must have an easy access to all the available information on the market and in no way their trust shall be lessened.

References :-

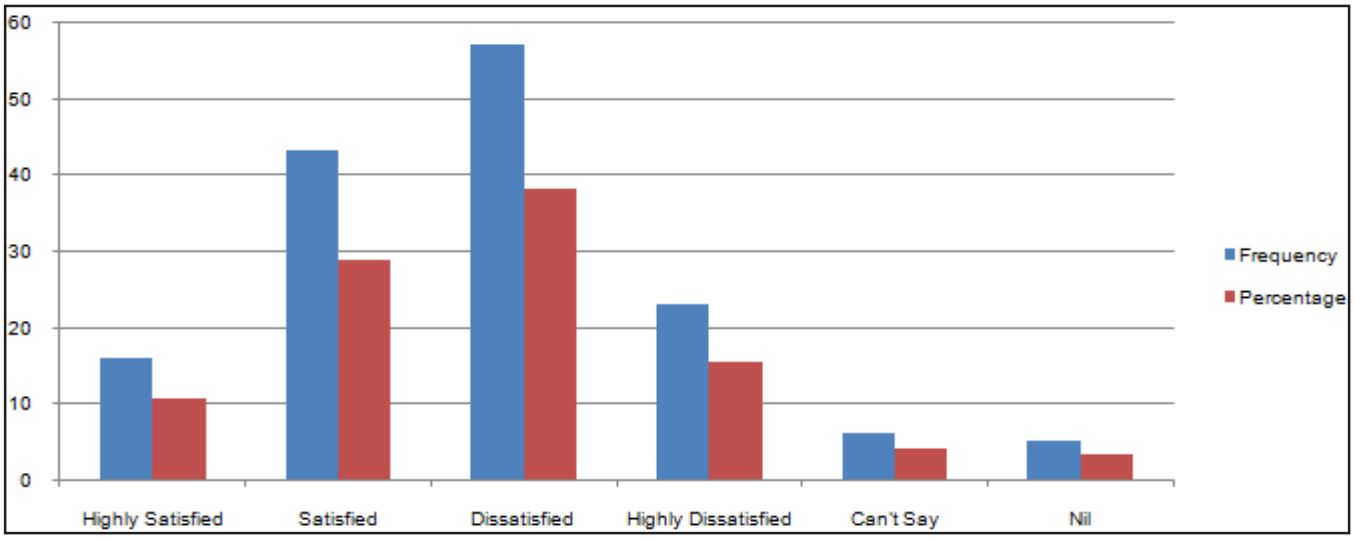
1. Bandgar, P.K, (2010), A study of Middle Class Investor's Preferences for Financial Instruments in Greater Bombay, Finance India, Vol. XIV. No.2, pp: 574-576.
2. Gupta L.C. (1992), Stock Exchange Trading in India: Agenda for Reform, Society for Capital Market Research and Development, Delhi, pp 123
3. Gupta L.C, Naveen Jain and Team, (2009), Indian Household Investors Survey-2004, Society for Capital Market Research and Development, Delhi.
4. Gopinathan N. Rau SS (2009), A study on the role of foreign Institutional Investors FII's in the Indian Capital Market, Journal of Contemporary research in Management
5. Mahabaleswara Bhatta H.S. (2009), Behavioral Finance- A discussion his individual investor biases, The Management Accountant ICWAI Journal Vol.44, No. 2, pp: 138-141.
6. Nayak J.K. (2006), Analysis of the Indian Capital Market: pre and post liberalization, International Journal of Management Practices & Contemporary Thoughts, pp 76-80
7. Patidar Sohan (2010), Investors Behavior towards share market – a study of Dhar district of MP, international Research Journal Vol. I, issue 13.
8. Panda K, Tapan N.P and Tripathi, (2011) "Recent Trends in Marketing of Public Issues: An Empirical Study of Investors Perception", Journal of Applied Finance, Vol. 7, No.1, pp: 1-6.
9. Raju MT, Ghosh Anirban (2004), Stock Market Volatility – An International Comparision, WP series No. 8.
10. Ramarantnam MS, Jayaraman R (2012), A study on impact of globalization for the recent development of Indian capital market, International Journal of Multidisciplinary Research Vol 2 issue .
11. Sayuri Shirai (2004), Impact of financial and capital market reforms on corporate finance in India, Asia-Pacific Development Journal Vol. 11, No. 2.
12. Shivkumar Deene, Madari D.M, Gangashetty, *Capital market Reforms: some issues,* WP, 2011 pp: 1-12.
13. Subha M.V, (2009) Indian Capital Markets, Indian Journal of Marketing, Vol. XXXVI, No. 12, pp: 21-22.
14. SEBI – NCAER, (2015) Survey of Indian investors, Vol. XXX, No.9, pp: 1201-1207.

Table 1. Profile of the respondent

Variables	Categories of variables	Frequency	Percentage
Gender	Male	87	58
	Female	63	42
Age (in years)	Below 25	3	2
	25 – 35 years	28	18.7
	35- 45 years	29	19.3
	45-55 years	47	31.3
	55-65 years	36	24
	65 years & above	7	4.7
Annual Income (in Rs.)	Below 3 lakhs	21	14
	3 – 5 lakhs	68	45.3
	5 – 7 lakhs	49	32.7
	7 lakhs & above	12	8

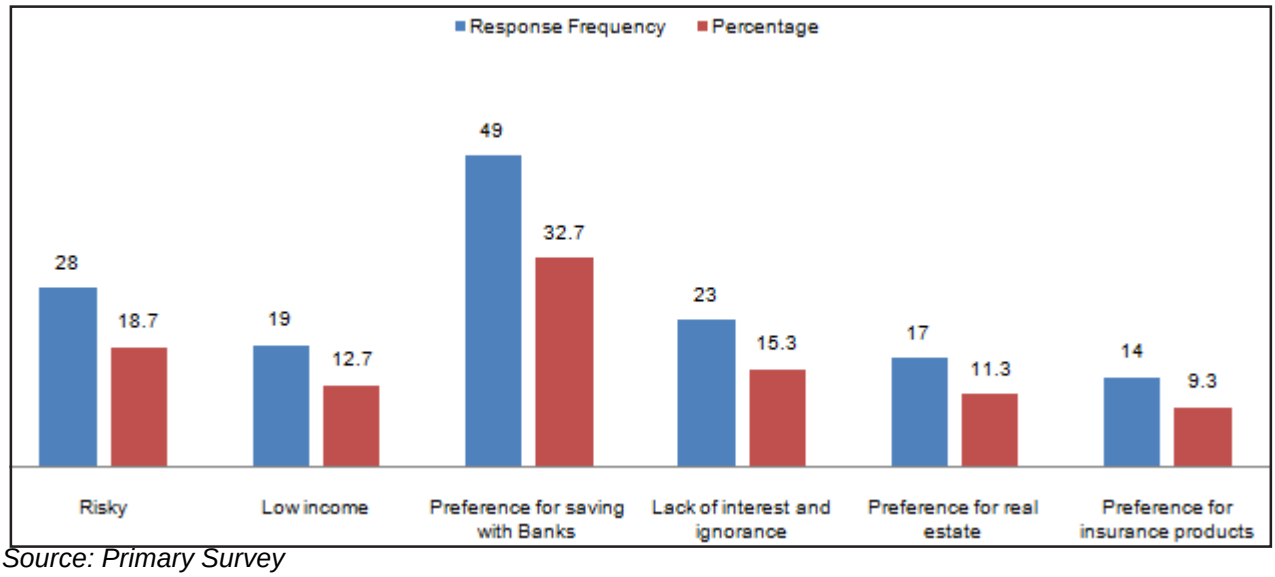
Source: Primary Survey

Chart 1.Opinion about the reforms in the primary capital market for investors' protection



Source: Primary Survey

Chart 2. Factors that contribute to non-participation in capital market activities



Source: Primary Survey

Participation of Women for Social and Economic Empowerment in Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) - A Study with Special Reference to Shajapur District

Dr. Rajendra Kumar Jain * Dr. Sunil Advani **

Abstract - The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) was launched in February 2006. It is an Indian Law that aims to guarantee the 'Right to work' and ensure livelihood security in rural areas by providing at least 100 days of guaranteed wage employment in a financial year to every household whose adult members volunteer to do unskilled manual work. This Act ensures on demand one hundred days of employment in a year to a household at the minimum wage and the Act is based on twin principles of universality and self selection. The Act places enforceable obligation on the state and gives power to rural women labourers. Schedule II paragraph 6 of MGNREGA provides for participation of women that at least 33% of the women should be provided employment under this Act. This study examines the participation of women for social and economic empowerment in Mahatma Gandhi National Rural Guarantee Act (MGNREGA) in Shajapur District of Madhya Pradesh.
Keywords - MGNREGA, Household, Right to work, Social and economic empowerment.

Introduction - The Government of India has passed The National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) in September 2005. It addresses mainly to rural poor and their fundamental Right to work and dignity. It also empowers local citizens to play an active role in the implementation of employment guarantee scheme through Gram Sabha, Social Audit, Participatory Planning and other means. It is consider to be a landmark in the history of poverty reduction strategies in India. This scheme intend to provide employment to the rural people during lean agriculture season and aims to create village asset and bring sustainable development. Major objective of the Act is to provide adequate employment to women at equal wage and to improve the quality of life of rural people who are vulnearable to out-migration in search of daily wage employment by channelizing the wage workforce towards development activities at the village level itself. This Act is different from the earlier employment programmes launched by Government of India. This Act is on one hand demand-driven and on the other, treats employment as a right of the rural households. Thus, the Act provides income directly to the unskilled workers in the rural areas. This Act was applied in third phase in the year 2008 in Shajapur District.

Meaning of Women Empowerment - Empowerment refers to increasing the social, educational, political or economic strength of individuals and communities. It is a multi-dimensional process, which should enable the individual or a group of individuals to realize their full identity and powers in all spheres of life. It consists of greater access to knowledge and resources, greater autonomy in decision-making to enable them to have greater ability to plan their lives. Empowerment of women means equal status to women. It includes higher literacy level and education for women, better health care for women, equal ownership of productive resources, increased participation in economic and commercial sectors, awareness of their rights and responsibilities, improved standard of living and acquiring self-reliance, self-esteem and self-confidence.

Social empowerment is understood as the process of developing sense of autonomy and self confidence and acting individually and collectively to change social relationships. On the other hand economic empowerment refers to allow women to think beyond immediate daily survival and to exercise greater control over both their resources and life choices. It enables women to make their own decisions around making investments in health and education and taking risks in order to increase their income.

Objectives of the study :

1. To know the socio-economic conditions of women job seekers.
2. To assess the impact of MGNREGA in empowerment of rural women.

* **Professor, Head of Department (Commerce) and Active Principal, Government College, Nalkheda, Dist. Agar-Malwa (M.P.) INDIA**

** **Guest Faculty (Commerce) Government Girls P.G. College, Shajapur (M.P.) INDIA**

3. To evaluate the quality of life of rural women working MGNREGA.

Hypothesis of the study :

1. There is no significant change in the socio-economic condition of rural women working in MGNREGA.
2. Quality of life of rural women is not improved.

Sample Design and Data Collection - Shajapur District of Madhya Pradesh is chosen for the present study. Two Blocks from Shajapur District namely Shajapur and Mohan Badodiya have randomly been selected for the collection of data. Further 5-5 villages from both Blocks were chosen and then 25 female beneficiaries of MGNREGA were selected from each village. In this way a sample size of 250 is taken into consideration for the study. Statistical tools like averages, percentages etc were used for data analysis.

The study is based on primary and secondary data. The primary data were collected by administering a structured schedule, exclusively prepared by keeping in view the objectives of the study from 250 randomly chosen female beneficiaries of the MGNREGA. Secondary data have been collected from Journals, Official Reports, Reference Books, Documents and Websites.

Analysis and findings - The survey results are organized as follows, in the first section, the demographic profile of the respondents is presented.

Table No. 1 Demographic Characteristics of Respondents

S.	Age	Number	Percentage
1	Below 18 years	02	0.80
2	18-25 years	95	38.00
3	25-45 years	133	53.20
4	Above 5 years	20	8.00
	Total	250	100.00
	Educational Qualification	Number	Percentage
1	Illiterate	148	58.20
2	Lower and Upper primary	93	37.80
3	High School	08	3.20
4	Higher Secondary	01	0.80
	Total	250	100.00
	Marital Status	Number	Percentage
1	Married	221	84.40
2	Unmarried	12	4.80
3	Widow	17	6.80
	Total	250	100.00
	Community	Number	Percentage
1	SC	182	72.80
2	ST	03	1.20
3	OBC	55	22.00
4	General (Unreserved)	10	4.00
	Total	250	100.00

Source : Primary data

Table No.1 indicates that majority of the beneficiaries [53.20%] belongs to the age group of 25-45 years and mostly among them [58.20%] are illiterate. 84.40% of the total respondents are married and schedule cast females having high participation rate of 72.80%.

Economic conditions of sample respondents:

Table No.2 – Economic conditions and income levels

S.	Particulars	Number	Percentage
1	Kuccha House	211	84.40
2	Semi-Pakka House	14	5.60
3	Pakka House	01	0.40
4	Rental House	24	9.60
	Total	250	100.00
1	Electricity	236	94.40
2	Fan	225	90.00
3	T.V.	165	66.00
4	Motorcycle	19	7.60
	Income levelsfrom MGNREGA per year	Number	Percentage
1	Below Rs. 6000	14	5.60
2	Between Rs. 6000-10000	96	38.40
3	Above Rs. 10000	140	56.00
	Total	250	100.00

Source : Primary data

As per Table No.2, 84.4% of the total beneficiaries possesses Kaccha House, 94.4% have electricity in their home and 56% of the total respondents have yearly income above Rs. 10000 from MGNREGA.

Quality of Life - Any development programme will impact not only the quality of living of the beneficiary but also the factors contributing to the empowerment within and outside the environment women deal with. Few indicators of empowerment like leadership qualities, mobilising skills, resource mobilisation, political participation, self confidence, decision making skills, financial management skills etc were measured asking question to the participatory beneficiaries in MGNREGA. In an attempt to ascertain women's participation in decision making on family affairs, respondents are asked to express their views on their role in decision making on important family affairs which influence socio-economic, political and cultural status of household as well as women. Majority respondents said that they actively involve in decision making on important aspects of family affairs. 22.4% respondents replied that wage received in MGNREGA is being used by themselves. 33.2% respondents said that there is a positive change in their life after having been participating in MGNREGA. 65.2% respondents answered that the level of honour received from family members and outside is moderate.

Suggestions - On the basis of the findings following suggestions can be made:

1. Respondents are not satisfied with the number of working days hence Government should increase the no. of working days under the scheme so that economic

empowerment of female took place effectively.

2. Respondents are dissatisfied with the wage rate under scheme so wage rate should be increased.
3. Provisions and objectives of the scheme should properly be communicated to female beneficiaries so that they will be motivated towards their participation in this scheme.

Conclusion - MGNREGA is an act that guarantees 100 days of empowerment to all rural people attain the age of majority. Through this employment programme govt. expect socio-economic development and empowerment of women. This study concludes that the Act does not improve the expected level of socio-economic conditions of rural women till now. By increasing the number of working days and wages, rural women improve the income level. To fasten the rate of improvement and quality of life, some development initiative can be integrated with the scheme.

References :-

1. Dr. Suman Pamecha, Indu Sharma – "Socio-economic impact of MGNREGA – A study undertaken among beneficiaries of 20 villages of Dungarpur District of Rajasthan".
2. Jyoti Pooniya, Critical study of MGNREGA : Impact and Women's Participation, International Journal of Human, Development and Management Science, 2012 1(I), 35-55.
3. www.nrega.nic.in
4. www.shajapur.nic.in

****

Cash Management System

Dr. Praveen Ojha *

Introduction - "Cash, like the blood stream in the human body, gives vitality and strength to a business enterprises." "Cash is both the beginning and end of working capital cycle - cash, inventories, receivables and cash. It is the cash, which keeps the business going. Hence, every enterprises has to hold and manage necessary cash for its existence. "The concept of cash management is not new and it has acquired a greater significance in the modern world of business due to change that took place in the conduct of business and ever increasing difficulties and the cost of borrowing. Cash management is the movement of funds through financial institutions to optimize liquidity. It is the management of corporate funds to increase interest income earned by maximizing investments and/or reducing interest paid by minimizing borrowings. Cash management deals with maintaining sufficient quantity of cash in such a way that the quantity denotes the lowest adequate cash figure to meet business obligations. Cash management involves managing cash flows (into and out of the firm), within the firm and the cash balances held by a concern at a point of time. The words, 'managing cash and the cash balances' as specified above does not mean optimization of cash and near cash items but also point towards providing a protective shield to the business obligations. "Cash management is concerned with minimizing unproductive cash balances, investing temporarily excess cash advantageously and to make the best possible arrangement for meeting planned and unexpected demands on the firms' cash."

Cash management is a financial discipline that uses the same principles, regardless of the type of business, size or age of an enterprise. Cash management is not an accounting function. The accountant records and reports transactions historically; the cash manager plans and executes these financial transactions. Cash managers use techniques, products and services to efficiently manage cash resources and satisfactorily resolve cash shortages or surpluses. With the use of basic cash management tools and techniques, cash becomes a corporate asset that contributes directly to the bottom line. Whether a company is flush with cash or experiencing a shortfall of funds, good cash management is critical to the success of every company.

Purpose of Cash Management -

1. **To eliminate idle cash balances -** Every dollar held as cash rather than used to augment revenues or decrease expenditures represents a lost opportunity. Funds that are not needed to cover expected transactions can be used to buy back outstanding debt (and cease a flow of funds out of the Treasury for interest payments) or can be invested to generate a flow of funds into the Treasury's account. Minimizing idle cash balances requires accurate information about expected receipts and likely disbursements.
2. **To deposit collections timely -** Having funds in-hand is better than having accounts receivable. The cash is easier to convert immediately into value or goods. A receivable, an item to be converted in the future, often is subject to a transaction delay or a depreciation of value. Once funds are due to the Government, they should be converted to cash-in-hand immediately and deposited in the Treasury's account as soon as possible.
3. **To properly time disbursements -** Some payments must be made on a specified or legal date, such as Social Security payments. For such payments, there is no cash management decision. For other payments, such as vendor payments, discretion in timing is possible. Government vendors face the same cash management needs as the Government. They want to accelerate collections. One way vendors can do this is to offer discount terms for timely payment for goods sold.

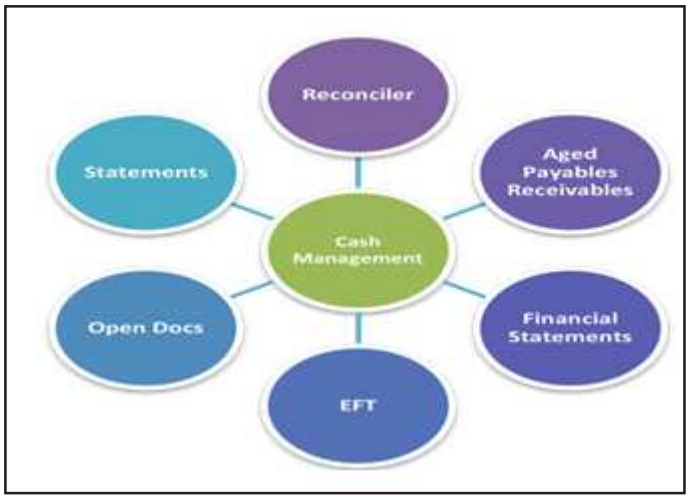
Elements of cash management -

- **Deposits -** Receiving funds and depositing receipts into the bank account as quickly as possible, while collecting adequate information to correctly identify the source of the payment.
- **Concentration -** Moving funds to a central location from which they are more efficiently managed for investing and disbursing.
- **Disbursement -** Paying funds by check or electronically to vendors, employees, investors, and others.
- **Information gathering, analysis and control -** Reporting funds information, including: current cash position, forecasted shortages and surpluses, cost-benefit of proposed changes in cash management operations or outsourced services, interest rate or foreign

*Professor and H.O.D (Commerce) Dr. Bhagwat Sahai Govt. College, Gwalior (M.P.) INDIA

currency risk exposure, and many other monetary circumstances which affect corporate resources.

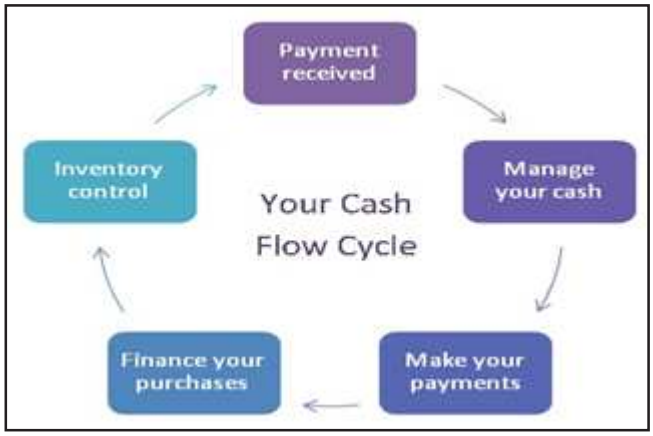
Cash Management System



The Liquidity Management module enables the management of all of a bank position while the collection of funds from decentralized entities. The module supports all types of pooling mechanism by defining Concentration Account as Zero Balance, Target Balance, and Range Balance. Our expertise is as in depth as it is all encompassing. It begins with almost all aspects of Cash management; we provide a for your all types of cash. who need cash management services, namely our cash delivery and pick-up services, cash processing. Cash Management powerful payments handles all types of paper based instruments including Banker and Customer Cheque, modern electronic instruments including IFT, UAEFTS, WPS, RTGS, SWIFT. The module helps banks manage large volume payments of dividend and interest warrants to prevent fraud by providing a single window to reconcile all payments transactions.

Cash Management Collections module enables complete control of the process of collecting funds through electronic and paper based modes, taking care of all credit arrangements and funds and instruments tracking. Cheque features include vaults and bins that physically map the instruments, handling all special conditions including swaps, cancellations and loss of instruments. The solution also tracks receivables on a real-time basis and facilitates reconciliation upon receiving funds.

Cash Management Process - Every successful company has a pool of cash that sustains the day-to-day activities of business. The uncertainty of cash inflows and outflows creates the challenge of ensuring that sufficient funds are available always to support the operating cycle. Cash flows of both types must be closely managed. The Basic Cash Management Process provides that timely information. The cash flow timeline includes the total time interval beginning with the first phase of the operating cycle, when resources are purchased, until the last step when receipts are collected. It consists of the following steps:



1. **Material purchases -** Acquisition of raw materials or merchandise for resale includes negotiation of the method of payment, credit terms and trade and payment discounts.
2. **Payment for resources -** All resources required to support sales, including labor, marketing and overhead expenses, incur financing costs until cash is collected for sales made. By managing the timing of disbursements, the cash manager can minimize implicit financing expenses.
3. **Sale of inventory or services -** Merchandise and other sales are most frequently accomplished by extending credit to customers. The timing of accounts receivable collection is a major focus in cash management.
4. **Collection of receipts -** Only when the customer has provided good funds for the merchandise or service does the cash flow cycle conclude for that transaction.

General principles of cash management -

1. **Determinable Variations of Cash Needs -** A reasonable portion of funds, in the form of cash is required to be kept aside to overcome the period anticipated as the period of cash deficit. This period may either be short and temporary or last for a longer duration of time. Normal and regular payment of cash leads to small reductions in the cash balance at periodic intervals. Making this payment to different employees on different days of a week can equalize these reductions.
2. **Contingency Cash Requirement -** There may arise certain instances, which fall beyond the forecast of the management. These constitute unforeseen calamities, which are too difficult to be provided for in the normal course of the business. Such contingencies always demand for special cash requirements that was not estimated and provided for in the cash budget. Rejections of wholesale product, large amount of bad debts, strikes, lockouts etc. are a few among these contingencies.
3. **Availability of External Cash -** Another factor that is of great importance to the cash management is the availability of funds from outside sources. There resources aid in providing credit facility to the firm,

which materialized the firm's objectives of holding minimum cash balance. As such if a firm succeeds in acquiring sufficient funds from external sources like banks or private financers, shareholders, government agencies etc., the need for maintaining cash reserves diminishes.

4. **Maximizing Cash Receipts -** Every financial manager aims at making the best possible use of cash receipts. Again, cash receipts if tackled prudently results in minimizing cash requirements of a concern. For this purpose, the comparative cost of granting cash discount to customer and the policy of charging interest expense for borrowing must be evaluated on continuous basis to determine the futility of either of the alternative or both during that particular period for maximizing cash receipts.
5. **Minimizing Cash Disbursements -** The motive of minimizing cash payments is the ultimate benefit derived from maximizing cash receipts. Cash disbursement can be brought under control by preventing fraudulent practices, serving time draft to creditors of large sum, making staggered payments to creditors and for payrolls etc.
6. **Maximizing Cash Utilization -** Although a surplus of cash is a luxury, yet money is costly. Moreover, proper and optimum utilization of cash always makes way for achievement of the motive of maximizing cash receipts and minimizing cash payments.

The cash Management services by banks -

- **Advanced Web Services -** now a day's most of the banks giving the web services and internet facility to their customers. This enables managers to create and authorize special internal logon credentials, allowing employees to send wires and access other cash management features normally not found on the consumer web site.
- **Account Reconcilement Services -** to maintain a cheque book most difficult task for big organizations as they have lots of transactions on daily basis to overcome this, banks have developed a system which allows companies to upload a list of all the checks that they issue on a daily basis, so that at the end the month the bank statement will show not only which checks have cleared, but also which have not.
- **Armored Car Services -** big organization have an large cash transaction on daily basis or hourly basis so bank provides the facility to collection of cash from their doorstep.
- **Automated Clearing House -** This system is criticized by some consumer advocacy groups; because under this system banks assume that the company initiating the debit is correct until proven otherwise an electronic system used to transfer funds between banks. Companies use this to pay others, especially employees.
- **Balance Reporting Services -** Corporate clients who are having a large cash transactions on daily basis and they need reporting so these sophisticated compilations of banking activity may include balances in foreign currencies, as well as those at other banks. They include information on cash positions as well as 'float'.
- **Lockbox: Retail services -** The companies where cash balance is very high for their convenience purpose bank provides a post box where corporate can maintain a cash balance called "Lockbox-Retail".
- **Cash Concentration Services -** Most of the time large corporate do not find an branch of their bank to near by their location. Therefore, they open bank accounts at various local banks in the area. To prevent funds in these accounts from being idle and not earning sufficient interest, many of these companies have an agreement set with their primary bank, whereby their primary bank uses the Automated Clearing House to electronically "pull" the money from these banks into a single interest-bearing bank account.
- **Lockbox - Wholesale services -** The corporate with small numbers of payment sometimes they want detailed processing. This might be a small manufacture company.
- **Reverse Positive Pay -** Reverse positive pay is similar to positive pay, but the process is reversed, with the company, not the bank, maintaining the list of checks issued. When checks are presented for payment and clear through the Federal Reserve System, the Federal Reserve prepares a file of the checks' account numbers, serial numbers, and dollar amounts and sends the file to the bank.
- **Positive Pay -** This is the service where the corporate electronically shares its check register of all written checks with the bank. The bank therefore will only pay checks listed in that register, with exactly the same specifications as listed in the register.
- **Sweep accounts -** These systems, excess funds from a company's bank accounts are automatically moved into a money market mutual fund overnight, and then moved back the next morning.
- **Zero Balance Accounting -** Corporate having a huge amount of stores or locations can very often be confused if all those stores are depositing into a single bank account. Traditionally, it would be impossible to know which deposits were from which stores without seeking to view images of those deposits. To help correct this problem, banks developed a system where each store is given their own bank account, but all the money deposited into the individual store accounts are automatically moved or swept into the company's main bank account.

Motives of holding cash - Every business transaction whether carried on credit or on cash basis ultimately results in either cash inflow or cash outflows. The pivotal point in present day financial management is to maximize cash generation and to minimize cash outflows in relation to the cash inflows.



1. **Transaction Motive -** It refers to holding of cash for meeting routine cash requirements and financing transactions carried on by the business in the normal course of action. This motive requires cash for payment of various obligations like purchase of raw materials, the payment of usage and salaries, dividend, income tax, various other operating expenses etc. However, cash receipts and cash payments do not perfectly synchronies with each other. Therefore, a firm requires an additional cash balance during the periods when payments are in excess of cash receipts. Thus transaction motive stresses on holding cash to meet anticipated obligations that are not counter balanced by cash receipts due to disparity of timings.
2. **Precautionary Motive -** Under precautionary motive, the need to hold cash arises for meeting any unforeseen, unpredicted contingencies or unexpected disbursements. Such motives provide a cushion to withstand unexpected cash requirements arising spontaneously at short notice due to various causes.In this regard, two factors largely influence the precautionary cash balance, degree of predictability and availability of short-term credit. If a cash management succeeds in estimating the cash requirements adequately, it escapes from maintaining big cash balance for emergency.
3. **Speculative Motive -** The speculative motive finds its origin out of the desire of an enterprise to avail itself the benefits of the opportunities arising at unexpected moments that do not happen to exist in the normal course of business. This motive represents a positive and aggressive approach. Reasonable cash reserve is maintained by concerns for exploiting profitable opportunities like bulk purchase of raw materials at discounted prices, purchasing securities when interest rates are expected to fall, postpone purchase of raw material if decline in prices is anticipated, etc.
4. **Compensation Motive:** Such motives require holding cash balance in case the concern enters into some loan agreement with the bank. Bank provides a great variety of services to its customers. For some of such services it charges commission or fee. While for other an indirect compensation is demanded by it by asking its customers to keep a minimum bank balance sufficient to earn a return equal to cost of services provided by it. Such balances are termed as compensating balances.

Cash manager's duties -

- **Monitoring the daily cash position:** On a daily basis, the cash manager typically spends the first part of the day developing the cash position. This exercise identifies shortages and surpluses in time to either borrow funds to cover the shortfall or invest excess funds. The cash manager first confirms the prior day's closing balance, typically using on-line or Internet bank reporting. Forecasted and scheduled disbursements, receipts, loan repayments, and maturing investment proceeds are then added and subtracted to calculate the day's cash flow. The cash manager also typically administers the credit facility borrowing on a day-to-day basis. This daily reconciliation process also provides an effective method of immediately revealing unauthorized or fraudulent transactions.
- **Controlling balances on deposit:** The cash manager maintains bank balances at a level adequate to avoid overdrafts and to compensate the bank for cash management services. Short-term borrowing may be necessary to meet the required balances. Excess funds are typically invested, short-or long-term, until they are required to cover capital or operating expenditures.
- **Moving funds as necessary:** The cash manager may control several different bank accounts, perhaps in different states or even foreign countries. The transfer of monies from one account to another is often a daily exercise to prevent cash shortages in the accounts and to promptly invest surpluses.
- **Managing short-term (working capital) borrowing and investing: Whether** a company is an overall investor or borrower, the unsynchronized timing of operating cash flows requires the cash manager to be both a borrower and an investor. On any given day, the cash manager may borrow to meet shortterm cash requirements or invest surplus cash.
- **Forecasting future shortages and surpluses:** To determine the amount and various maturities of the investment portfolio, the cash manager must predict future cash flows. Investing for a shorter period than necessary usually results in lost earnings; and investing for too long may cause premature security sales at a loss if funds are needed before maturity. Forecasting also allows the cash manager to plan for an adequate level of short-term credit facilities.
- **Managing banking relationships:** The cash manager maintains a mutually beneficial relationship with the company's bankers. If the cash manager develops an open and straightforward relationship, the banker can develop a good understanding of the company's operations and can bring relevant banking products and services to the attention of the cash manager.
- **Performing analytic reviews and feasibility studies of banking services:** The cash manager is the employee with primary responsibility for evaluating the

benefits and drawbacks to adding new or terminating existing banking services. A company selects a bank that offers reliable, cost-effective services. The cash manager is responsible for monitoring the bank's services and fees to ensure that the arrangement remains satisfactory and that pricing is contractually accurate.

- **Analyzing, designing and implementing cash management systems and procedures:** Through the day-to-day tasks involved in their job, cash managers know system requirements to carry out cash management efficiently. Cash managers have a professional responsibility to keep up-to-date on developments in cash management products and practices by attending conferences, reading journals, and other networking and continuous learning activities. While growing professionally, the cash manager acquires and updates the skills and knowledge necessary to implement the cash management systems and procedures best suited to the company objectives.

Function of cash management -

1. **Cash Planning -** Cash planning is a technique, which comprises of planning for and controlling of cash. It is a management process of forecasting the future need of cash, its available resources and various uses for a specified period. Cash planning, thus, deals at length with formulation of necessary cash policies and procedures in order to carry on business continuously and on sound lines.
2. **Managing Cash Flows** - The heading simply suggests an idea of managing properly the flow of cash coming inside the business i.e. cash inflow and cash moving out of the business i.e. cash outflow. These two are said to be properly managed only, if a firm succeeds in accelerating the rate of cash inflow together with minimizing the cash outflow.
3. **Controlling the Cash Flows** - As forecasting is not an exact science because it is based on certain assumptions. Therefore, cash planning will inevitably be at variance with the results actually obtained. For this reason, control becomes an unavoidable function of cash management. Moreover, cash controlling becomes essential as it increases the availability of usable cash from within | the enterprise.
4. **Optimizing the Cash Level** - A financial manager should concentrate on maintaining sound liquidity position i.e. cash level. All his efforts relating to planning, managing and controlling cash should be diverted towards maintaining an optimum level of cash. Optimization of cash level may be related to establishing equilibrium between risk and the related profit expected to be earned by the company.
5. **Investing Idle Cash**- Idle cash or surplus cash refers to the excess of cash inflows over cash outflows, which do not have any specific operations or any other purpose to solve currently. Generally, a firm is required to hold cash for meeting working needs facing contingencies and to maintain as well as develop goodwill of bankers.

What resources are available to learn more about Cash Management ? - As corporate treasury departments expand, there are new areas of responsibility thrust upon the cash manager. Often the department lacks the personnel or knowledge to implement senior management initiatives or effectively and smoothly incorporate policy changes and systems accompanying bank mergers. When a company expands into an international market, it become necessary to manage foreign currency exposure. Acquisitions, mergers and divestitures all result in changes to cash management procedures and bank account structures. Customer growth or operational changes and attrition may exceed the ability of staff to process payments. One of a cash manager's first and most important resources is his or her banker. As discussed in the section on banking relationships, keeping your banker fully informed and up to date on the company's plans and significant events allows the banker to introduce services and solutions consistent with the company's changing needs. There are a number of books, websites, periodicals and seminars addressing all areas of treasury and cash management.

A number of treasury and cash management consulting services are available throughout the world, with expertise in every area. Consultants can provide recommendations and guidance in finding software solutions, defining system requirements, evaluating and selecting banking products and services, developing investment strategies and policies, negotiating financial service contracts, designing payment systems and restructuring cash management procedures. Perhaps the most valuable resource for cash managers is a network of treasury professionals. A professional network is a sounding board, a resource for candid references and information on service providers, banks, new services and practices. Colleagues also share ideas, solutions and information about new developments and products.

Conclusion - With the changing era, companies and banks had taken a very reliable step to offer Cash Management Services to the Customers which helps to reduce the risk, the time taken in this technology era. This will definitely help to improve the economy condition of our country.

References :-

1. Corporate Cash Management: Steven Bragg
2. Cash Management: S.S. Modi
3. Cash Management: Howard Kier
4. Financial Management & Working Capital Management: Devendra Khakhdia
5. Corporate Treasury and Cash Management (Finance and Capital Markets Series): R. Cooper
6. India's Experience with Cash Management: Vijay Singh Chauhan
7. www.inc.com/guides/finance/cashmanagee
8. www.investopedia.com/terms/c/cashmgnt
9. *www.accountantnextdoor.com/what-is-cash-management-meaning*
10. www.hkiaat.org/images/uploads/articles/PBEII%20Cash%20Management.pdf

Factors affecting Consumer Buying Decisions : Special reference to Social Marketing

Rupesh Pallav *

Abstract - A new scenario of information technology and World Wide Web services provides the privilege to the consumers to identify the products prevailing in the market. Social sitesare very frequently used by the people. For this purpose nowadays many companies have their own websites and pages on social networking sites. These sites help the companies to know the opinions of the consumers. It is also beneficial to know the actual needs and desires of consumer. This is one of the best way to capture a large amount of population along with different demographics.
This study is an attempt to analyze the factors ofsocial marketing affecting the consumer buying decisions. A self-developed questionnaire is used as an instrument to collect the information and response. Factor analysis was applied to flush out the dynamics of social marketing. The study reveals certain important factors which can be used by the social marketers
Key words - Social Networking Sites, Social Marketing, Consumer Buying Decision.

Introduction - Social Marketing - Social marketing was "born" as a discipline in the 1970s, when Philip Kotler and Gerald Zaltman realized that the same marketing principles that were being used to sell products to consumers could be used to "sell" ideas, attitudes and behaviors. Kotler and Andreasen define social marketing as "differing from other areas of marketing only with respect to the objectives of the marketer and his or her organization. Social marketing seeks to influence social behaviors not to benefit the marketer, but to benefit the target audience and the general society."

In other words we can say that Social marketing is the use of commercial marketing strategies and techniques to improve the lifestyle of peoples and their purchasing Decision - physically, socially and economically.

Consumer Buying Decision - According to Walters & Paul, "Consumer BuyingDecision is the process whereby individuals decides what, when, where, how and from whom to purchase goods & services"

Consumer Buying Decision is the study of individuals, groups, or organizations that how they react or behave in different situations. Buying is one of the action of any individual when they are going to purchase something. The process they use to select and choose any products and services are known as buying decision of that individual. Consumer buying decision is one of the process of decision making of any buyer both individually and in groups such as how emotions affect buying decision. Consumer buying decision is changes according to different conditions such as demographically, culturally, traditionally, climatically, etc. Research has shown that consumer buying decision is difficult to predict, even for experts in the field. Relationship marketing is an effective way to know and to analyses the actual Consumer buying decision. One of the main aim of every business organizations is to satisfy the decision of consumers. Complete marketing is finally depending upon this. The study assumes that the consumers are actors in the market place.

Current Scenario of Social Marketing - As far as recent trend is concern the social marketing is a new prospect in the field of online environment. The rapid growth and emergence of online stores have turned users into consumers. It is the easiest way of communication between consumers and organizations. Social marketing plays an important role in the selling of product and services of the companies. In other words we can say that social marketing provides a platform between users and marketers to interact with each other easily about the products and services. Companies and marketers can easily get the views and opinion of the consumers. By the use of websites companies easily promotes their products and services which changes the mind setup of consumers.

There are many online services available on web which are the main source of social marketing like Facebook, YouTube, twitter, Linked in Google plus, Blogs, etc.

Factors that affect Consumer Buying Decision :

1. Motive of the Consumer for Purchasing.
2. Purchasing roles of Consumer.
3. Perception of Consumer.
4. Attitude of Consumer.
5. Psychological Decision of Consumer.

*Faculty (Management) Community College, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

Objectives of the Study :

1. To study the factor which effects the buying decision of consumer by Social Marketing.
2. To study the impact of different Social Sites/Advertising Strategies on the buying decision of consumers.
3. To conduct a deep review of literature by which emerging factors can be identified for further research in same field.

Research Methodology :

The Study - The study was exploratory in nature. The target population was online users/viewers.The data was collected using the self-developed questionnaire through personal contacts to know the responses of online users/viewers who frequently used social networking sites.

Tools for data analysis - Factor analysis was applied to know the underlying factors.

Review of Literature :

1. Vivek Bajpai et all (2012) found in their study that in the current scenario people don't have time to meet and interact with each other. Social media is the only way which helps them in connecting themselves by social networking sites. Apart from this media like Facebook is very advantageous in creating connection between product and individual. For this purpose there is a very great advertising opportunities for companies to introduce their products. Similarly other social media like Blogs are also very fruitful source to post comment on any event which needs to be publicized. And hence the purpose of this study is to expand the strategies which can take this viral marketing mode more effective than normal social media at present.

2. Simona Vinerean et all (2013) said in their study that the analysis of consumer Decision is very important for marketing success. As far as current scenario is concern consumers are using the internet and online social tools very frequently. The online consumers are the base of market worldwide. The conclusion of this research was analysis of four new types of social media consumers, namely Engagers, Expressers andInformers, Networkers, and Watchers and Listeners. This research provides new dimensions toclassify online consumers according to their responses, opinions, and feedbacks.

3. Jude Varcoe said in their study that the effectiveness of Social Marketing campaigns need to be considered at allfive levels of effectiveness (Awareness, Engagement, Decision, Social Normand Wellbeing). These level are very important to analyse for the betterment of business. The study showed that the base of every business is depend on these indicators.

4. Shahram Gilani nia and Bahram Sharif (2011)said in their study that the Social marketing is advantageous for the health of all. These strategies of advertising is healthy for all peoples. The benefit of future generations, will be based on social marketing's effectiveness. In this research the researchers relate the healthy environment of social sites with the promotional activities.

5. Romina Cachia (2008) found in their study that the social networking is a process which existed from the beginning of societies. But now a days a term online Social Networking Sites (SNS) plays an important role for the communication of peoples. In less than five years, sites like Facebook and Twitter engaged millions of users for networking.This study presented a result of effectiveness of social networking sites.

6. Charity Pradiptarini(2011)examined in their study that the social media marketing is a very new and effective means for attracting peoples to buy the products and services in the business and marketing field. Researchers analysed the Twitter which is most popular social site to know the Decision of consumers. The analysis could be more precise, if the companies were focusedon twitter time to time. Future studies will definitely give researchers clearer comparison of the social media marketing activities among each group to define the target audience of social media marketing.

Results and Discussion :

Factor Analysis - The data obtained for the study was analyzed by using "FACTOR ANALYSIS" for identification of key factor preferred by the respondents in the "Factors affecting Consumer Buying Decisions: Special reference to Social Marketing". Factor analysis identifies common dimensions of factors from the observed variables that have a high correlation with the observed and seemingly unrelated variance but no correlation among the factors. Principle component analysis is the commonly used method for grouping the variable under the few unrelated factor. A factor loading is the correlation between the original variable with specified factor and is the key to understanding the nature of a particular factor. In this study, principal component has been used since the objective is to summarize most of the original information in a minimum number of factors for prediction. Here the factors are extracted in such a way that factor axis are maintained at 100 degrees, meaning that each factor is independent of original variables factors also represent the underlying dimensions that summarize for in account for the original set of observed variables .An important concept in factor analysis is the rotation of the factors. We have used varimax rotation to simplify the factor structure. Only the factor having the latent value (eigen value) greater than one are considered. An eigen value is the column sum of square for a factor. It represents the amount of variance in data. We choose factor loading which near greater than 0.45 and loaded than on the extracted. A factor loading is the correlation between the original variable and the factors, and is the key to develop by the factor analysis based upon the appropriate for representing the underlying dimensions of particular factors.

Table 01 (see in last page)

Discussion :

Integrated Marketing - It is the first most important factor carrying weightage of 46.562 including sub variables, Number of Options, Mode of Payment, Feedback,

Comparison, Content about Product & Service, Social Marketing, Advertisement, Social Marketing Technology, Enough Content, Updates, Complete Information, Privacy Policy, Networking in providing services. Its highest weightage shows that this factor has to be considered by the Companies to maximize their customer strength as it shows the power of integration in the operations of online buying processes.

A consumer or online viewer/user in current scenario makes his purchase on online shopping sites not depending upon any one reason but it includes various inter-operable aspects. This factor represents the holistic need in marketing.

Convenience - It is the consequent factor which is carrying the weightage of 12.491 including sub variables,Ease and Comfort which represents the importance of convenience in one's life in current life style of a consumerwho spends most of his time on internet. Making purchases from home and receiving the same via home delivery is providing high ease in heavy traffic jams which is the second most priority of a consumer to reduce the time of shopping and is considered as a need from marketers to be met.

Presentation - It is the next factor carrying the weightage of 7.950 including variable display which is again affecting the buying decision of online users and customers because unlike off line market number of sites , products, services and price ranges are too variable in nature and high in number. This allows the user to go with best presented product with similar features to achieve high satisfaction.

Promotion - Followed by factor Presentation this factor carry weightage of 6.734 with variable promotion. Increasing user of social sites and internet to go social is creating new platform for promoting products and service by using these channels. This factor represents the importance of reach amongst customer in lesser time than offline promotional activities.

Implications of study :

Implications for Marketers - The study can be used by the marketers by studying the key factors of social marketing. These factors will be useful for marketers to enhance their products and services to attract more and more consumers.

Implications for the Companies - This research will help company to gain new insights from this perspective and to identify potential pitfalls and opportunities by these factors of social marketing.

Implications for Online Facilitators - Online facilitators are working as a platform between companies and their consumers. So these research are also very fruitful to online facilitators to change their services according to the consumer need and preferences.

Implications for Academicians - They can use it for further research by taking more constraints like system, technologies.

Conclusion -The motive of the research was triggered by personal interest in how the factors of social marketing affects the consumer's buying decisions. The available facilities of social marketing which offers users to change their buying decisions according to today's market.As far as recent trend is concern companies and organizations are very interested to do their promotional activities through these social sites to capture large number of customers. Every companies create their online pages to get the feedbacks and opinions of the customers. The Current Scenario says that the buying Decision of consumers is changing rapidly like never before, so the researchers said, companies should take care of the interest and taste of the buyers.

By this study we found four key factors which shows the affect of social marketingon consumer's buying decisions. The study shows that integrated marketing is the factor which represents the holistic need in marketing. It means that sub variables of integrated marketing affects the consumer buying decision by individually, each variable has their own efficiency which prorogue consumer for purchasing.Other factors also shows that comfortability and convenience are always attracts customer for purchasing in this busy life. Presentation and Promotion are also the key factor of social marketing which affects the consumer buying decision. Hence by these results we understand how social marketing affects consumer buying decisions.

Suggestions - This study can be used by marketers, companies, online facilitators, and academicians. This study includes 17 factors for research but some more possible factors can be added for better representation.

1. The companies should create an effective pages or links in social marketing.
2. Advertisements must be informative and effective by which viewers easily know about the products and their specifications.
3. Presentation must be clear, specific, and precise.
4. Content about product and services must be clear.
5. Time to time changes in the pages of social sites according to the feedbacks of consumers.
6. Proper marketing research is very important for the ease and comfort of the users.
7. Improve and enhance consumer convenience.

References :-

1. VivekBajpai, Dr. Sanjay Pandey, and Mrs. Shweta Shriwas (2012)*"Social Media Marketing: Strategies and its Impact"* International Journal of Social Science & Interdisciplinary ResearchVol.1 Issue 7, ISSN 2277 3630
2. Simona Vinerean, IulianaCetina, Luigi Dumitrescu& Mihai Tichindelean (2013), *"The Effects of Social Media Marketing on Online Consumer Behavior"*International Journal of Business and Management; Vol. 8, No. 14 ISSN 1833-3850 E-ISSN 1833-8119Published by Canadian Center of Science and Education
3. Jude Varcoe, "*Assessing the effectiveness of Social Marketing"* © Copyright by ESOMAR® -The World Association of Research Professionals

4. Shahram Gilani nia and Bahram Sharif(2011) *"Impact of Social Marketing on Consumption Reduction"*Journal of Applied Business and Economics vol. 12(5)
5. Romina Cachia (2008) *"Social Computing: Study on the Use and Impact of Online Social Networking"* IPTS Exploratory Research on the Socio-economic Impact of Social Computing EUR 23565 EN
6. Charity Pradiptarini (2011) *"Social Media Marketing: Measuring Its Effectiveness and Identifying the Target Market"* UW-L Journal of Undergraduate Research XIV
7. Hong Cheng, Philip Kotler, and Nancy R. Lee "*Social Marketing for Public Health: An Introduction"*
8. Dr. Bill Smith, *"Defining Social Marketing"*
9. Mobile commerce stats for small business, *"How can social media impact my business Make your marketing personal"*

Factor	Eigen Value		Variable Convergence	Loading
	Total	% of Variance		
1. Integrated Marketing	7.916	46.562	14.No. of Options	.892
			10. Mode of Payment	.892
			8. Feedback	.837
			9. Comparison	.835
			3. Content about Pr. & Ser.	.824
			5. Social Marketing	.803
			2. Advertisement	.787
			1. Social Mktg Technology	.772
			6. Enough Content	.749
			7. Updates	.736
			4. Complete Information	.735
			11. Privacy Policy	.614
			15. Networking	.587
2. Convenience	2.123	12.491	16. Ease	.987
			13. Comfort	.987
3. Presentation	1.351	7.950	12.Displays	.767
4. Promotion	1.145	6.734	17. Promotion	.830

****

Marketing Strategies of Dabur & Himalaya

Dr. Vishwas Sharma * Dr. Pradeep Kumar Sharma **

Abstract - In present scenario, it has become very difficult to grow, stabilize and excel in business performance in the absence of proper marketing strategies and consumer attitudes play important role in framing effective marketing strategy. The Ayurvedic medicines industry is also facing the same problem. This paper is focused towards revealing, evaluating and comparing the marketing mix strategies adopted by Dabur and Himalaya. Both the companies have a wider range of Ayurvedic products & have a huge presence in the overseas markets and are today available in more than 80 countries across the world, hence Their comparative study reveals various marketing related issues in this sector.

Key Words - Marketing Strategy, Marketing Mix, Ayurvedic Industry, Product Strategy, Consumer Attitudes, Dabur, Himalaya.

Introduction - In this competitive world, it has become very difficult to grow, stabilize and excel in business performance in the absence of proper marketing strategies. Marketing plays a prominent role in every industry. Marketing strategy allows firms to develop a plan that enables them to offer the right product to the right market with the intent of gaining a competitive advantage. We can also say that marketing strategy provides an overall vision of how to correctly position products in the marketplace while accounting for both internal and external constraints. The business environment is changing drastically. It is very difficult to predict about the future of any firm.

The Ayurvedic medicines industry is also facing the same problem. This paper has attempted to compare the marketing strategies of Dabur and Himalaya on the basis of company's representatives feedback. Dabur and Himalaya two major players in Ayurvedic industry. Both the companies have a wider range of Ayurvedic products & have a huge presence in the overseas markets and are today available in more than 80 countries across the world, hence Their comparative study reveals various marketing related issues in this sector.

Literature Review :

1. Borden N., (1984) mentioned that "Marketing is still an art, and the marketing manager, as head chef, must creatively marshal all his marketing efforts to advance the short and long term interests of his firm".
2. Rosenbloom B. & Dimitrova B. (2011) "Marketing refers to the acts of buying and selling in a market. It is also an exchange activity, which brings together suppliers and users of goods and services".
3. (Kotler, 2003; Brassington& Pettit, 2003) mentioned that the concept of marketing sets only the foundation for marketing management in order to put the goal of "value-creation" into practices. There are different toolkits that built as pillars for organizational marketing management framework. One of them is the world famous Marketing Mix (4Ps), which normally considered as governable framework to influence the consumer buying process and decisions.
4. T S Mahesh, et al (2011) concluded in their study that there is considerable influence of Marketing on the sale of Ayurvedic drugs. Marketing of Drugs have been neglected by most of the companies. Among the various elements of marketing, the element product with respect to its quality plays a prime role in determining the sale of ayurvedic drugs. Promotional Strategies plays a secondary role after the quality of product. Pricing, Place or availability do have their own impact but with a low intensity when compared to other elements.

Objective - The objective of this paper is to compare the Marketing mix strategies of Dabur & Himalaya.

Methodology - Primary data has been used to conduct this study. A self administered open ended questionnaire has been developed to get the feedback from company's representatives. There are 12 questions in this open ended questionnaire related to the Marketing Srategies of Dabur & Himalaya. 25 Representatives belonging to different levels from each company have been interviewed for this study.

Interpretation and Discussion - The researcher gathered

* Asst. Prof., Acropolis Technical Campus, Faculty of Management Studies, Indore (M.P.) INDIA
** Professor, Govt. Hamidia Arts and Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA

the feedback from the representatives of Dabur and Himalaya in order to compare and discuss the marketing strategies of their companies. Their responses gave fruitful direction to the research. Various open ended questions regarding the marketing strategies of Dabur and Himalaya were asked to the company's representatives. The ultimate focus was to compare the product, price, promotion and distribution strategies of Dabur & Himalaya.

Importance of Marketing Strategies for Dabur & Himalaya - According the feedback received from company's representatives, Dabur & Himalaya both the companies realize the importance of marketing strategies. The marketing strategies help the companies to achieve their objectives. The effective marketing strategy not only helps to achieve the corporate objectives but also the SBU objectives. One of the officials from Dabur India mentioned that the aggressive marketing can convert the question marks into stars. The officials from Himalaya Herbals also realize the importance of marketing strategy and time to time frame the strategies in order to get the competitive advantage in the market. Himalaya which was traditionally known for umbrella branding has now started branding its products individually. Dabur & Himalaya both the companies frame their marketing strategies keeping in view their objectives and prevailing market conditions.

Segmenting the Market - Market segmentation is the strategy marketing which involves separating a broad target market into subsets of consumers, businesses, or regions that have, or are supposed to have, common needs, interests, and priorities and then crafting and implementing strategies to target them. Dabur and Himalaya both are having different approaches for market segmentation. Following are the market segmentation methods used by Dabur & Himalaya:

1. Geographic Segmentation
2. Demographics Segmentation
3. Socio-Cultural Segmentation
4. Psychographic Segmentation
5. Buying Behavior Segmentation

Dabur is a company that aggressively follows the Behavior segmentation. The Research and Development team of Dabur found that Consumers like Dabur's Ayurvedic Products because of their no ill effects and low price as compared to other medicines. In current scenario all Ayurvedic Companies as well as in FMCG companies are Segmentation the market on the basis of Buyers'Behavior.

Comparing Product Strategies of Dabur & Himalaya - Product strategy mainly focuses on important factors like Product Mix, Product Width, Product length, Product Depth, Product Consistency, Product Life Cycle, Product Quality and Product Packaging.

Dabur & Himalaya both companies have rich product mix. The strength of these companies lies in their product quality, consistency and reliability. As reported by some representatives of Dabur India, despite having rich product portfolio, Dabur is cautious towards its products' quality and continuously doing R&D to enhance its product mix. Following the principal of Total Quality Management It takes care of quality at each and every level of manufacturing process. Dabur is technologically updating its manufacturing process for making its process speedy and hygienic. Dabur's packaging process has been enhanced in last few years.

A product strategy is the base of a product life-cycle and the execution plan for further development. Himalaya's Product strategy reflects the vision of Mr. Meraj Manal Chairman HDC. The dream of Mr Manal is to see Himalaya as a trusted brand in every household, symbolizing global leadership in herbal healthcare. Now days, Himalaya is constantly working to create innovative products that satisfy the health and personal care needs of contemporary living. Himalaya has an extremely rich portfolio of highly innovative Products containing hundreds of Products of numerous varieties. Himalaya's manufacturing process is equipped with highly technical equipments which make its process speedy and hygienic. Despite having many product lines and high depths, Himalaya doesn't compromise with the quality at any cost. Himalaya is seen as the loving and preferred brand of today's youth.

Himalaya is now a completely research-oriented company that allows Himalaya to produce safe, efficacious and consistent Ayurvedic Products.

Comparing the Pricing Strategies of Dabur & Himalaya - Price is the worth of a product or service in monetary terms. It is the value that is put to a product or service and is the result of a complex set of calculations, research and understanding and risk taking ability.

Dabur and Himalaya use the different approaches of pricing.

The pricing of products is done on the basis of cost, demand, competition, nature of products, seasonal variations, fashion, style, degree of differentiation, regulatory compliances, various taxes etc.

As mentioned by the representatives of Dabur, The pricing strategy of Dabur is mainly based on three main factors i.e. Cost, Competition and Demand. These three factors decide the pricing of Dabur's Products. Dabur has now become an external oriented company and seen as more practical in the market. Dabur India has just one definition of winning and achieving, and that means not just growing, but growing completely. Over the last few years, Dabur India has maintained its operating margins through judicious price hikes across products and reduction in pack sizes.

The pricing strategy of Himalaya Herbals is somewhat different from Dabur India. The representatives of Himalaya Herbals mentioned in their interviews that various pricing strategies like Premium pricing, Penetration pricing, Economy pricing, Skimming strategy, Comparative Pricing etc. are used by Himalaya for its products. The selection of strategy mainly depends on the uniqueness of Himalaya's Products. The degree of differentiation plays important role while selecting the pricing strategy. Himalaya uses premium

pricing for its skin care products like Himalaya Anti loss cream. While the economy pricing is used for products like Himalaya-Nourishing Cream and Honey Soap, Cucumber Soap etc. Sometimes Himalaya reduces the price of its products and introduces various offers for the consumers so that the consumers in market may feel that the Himalaya offers products at considerable prices. As a whole the pricing strategies of Dabur & Himalaya are framed keeping in view the various factors associated with the products and the prevailing market conditions.

Comparing the Promotional Strategies of Dabur & Himalaya - The objective of Promotional Strategy is to inform potential customers about the product & services and persuade them to buy the same. The promotion is the element of marketing mix is concerned with the activities that are undertaken to communicate with both customers and participants in the channel of distribution such that the objectives of sales are achieved. Advertising, Publicly, Sales promotion, trade promotion, personal selling etc are the various promotional activities performed by both the companies (Dabur & Himalaya).

There are many similarities and dissimilarities found among the promotional strategies of Dabur and Himalaya. Dabur is a company that strongly focuses to promote its products individually. It spends huge amount of money to promote its products. Dabur has associated mega celebrities like Amitabh Bachhan, Rani Mukhurjee, Vivek Oberoi, Mandira Bedi etc to establish the huge brand image. Himalaya's promotional approach is somewhat different from Dabur. Dabur promotes its products purely as FMCG products, while Himalayas' promotional strategy is a mix of FMCG & pharmaceutical. Dabur targets stockiest, retailers & customers individually for promoting its products. Various schemes like Trade allowances, contests, free samples, fun trips etc. are launched for stockiest and retailers while price deals, coupons, rebates, gift with purchase etc. are the schemes which Dabur launches for its customers.

Himalaya's promotional strategies includes Doctors meet program, reward programs, doctors' kit to passing out students of ayurvedic colleges, seasonal promotional activities etc.

Dabur & Himalaya both are using their websites and social networking sites to promote their products. In addition to above mentioned activities, Dabur is performing well in CSR activities which build its very positive image in the eyes of customers.

Comparing the Distribution Strategies of Dabur & Himalaya - Distribution strategy identifies which paths the company intends to take in order to get its products to the end user. It's the method that company use to get its product or service through various distribution channels to the ultimate purchaser or end-user.

Dabur and Himalaya both companies uses the third level of distribution channel. In third level of distribution channel the products reach from manufacturer to the final consumers while passing through brokers, wholesalers and retailers. Dabur's distribution network is known as one of its key strengths. Dabur reaches till the extremely remote customers due to its strong distribution network. Dabur's Distribution Channel is focused to enable easy access to its brands to customers, brand communication, and higher levels of brand experience.

In addition to the third level of distribution channel, Himalaya distributes its products through website and company sponsored outlets. Himalaya has extremely rich set of product mix. Due to this reason, sometime it becomes difficult for the company to make available its products to the extremely remote customers. Keeping in view this problem, the company has started distributing its products through website and its sponsored outlets. The sponsored outlets of the company are performing very well in the market. They make available even the rarest product of Himalaya's product mix. One of official of Himalaya mentioned in his interview that the company is trying to minimize the cost of its product while shortening the level of distribution channel.

Conclusion - Marketing strategies play important role for establishing a company. Dabur and Himalaya are the two big players of Ayurvedic Industry and their products' quality hold good position in the eyes of consumers. Their marketing strategies clearly indicate that there is cut throat competition in this Industry. Companies need to focus on new product innovation and product differentiation to survive in the market.

References :-

1. Chopin, Marc C. and Ali F. Darrat (2000), "Can Consumer Attitudes Forecast the Macroeconomy," American Economist, 44(1), 34-42
2. Czinkota, M.R. &Johnston, W.J. 1981, 'Segmenting US firms for export development', Journal of Business Research, Vol. 12, pp. 353-65.
3. Gaski, John F. and Michael J. Etzel (1986), "The Index of Consumer Sentiment toward Marketing," Journal of Marketing, (50)3, 71-82.
4. Griffith, D.A. 2010, 'Understanding multi-level institutional convergence effects on international market segments and global marketing strategy', Journal of World Business, Vol. 45, No. 1, pp. 59-67.
5. Lages, L.F., Lages, C. & Lages, C.R. 2005, 'Bringing export performance metrics into annual reports: the APEV scale and the PERFEX scorecard', Journal of International Marketing, Vol. 13, No. 3, pp. 79-104.
6. Leonidou, L.C., Katsikeas, C. S. & Samiee, S. 2002. 'Marketing Strategy Determinants of Export Performance: A Meta-Analysis', Journal of Business Research, Vol.55, No.1, pp. 51- 67

****

Education in India - An effort of Government

Roshni Siddiqui *

Abstract - Education is the basic need of human beings education makes human mind strong and fulfill ability to thinking power for self reliance. Educated person are the capital of any country Government and public should centralized their mind and effort for providing education. Though some problems are before the country but collective effort of government in public can be able to remove all difficulties of education. With other countries India is also proceeding for mass quality education.

Introduction - Education is the basic need of human beings., The education makes human mind strong and able to thinking power of any matter. Without education human is like animal and all ability and other moralities cannot be developed. From beginning human being got education from nature, his mental power developed as natural environment, further. Society began to provide education by oral method and it was based on weapon playing. After some time religious person progressed it up to present time. Several kind of education is providing with the progress of economic, social, political and cultural etc. The education is changing about all nation of the world. Givening education right to their citizens and it is running process of education and it cannot said what future of education will be.

Research Methodology:- Data collection is perform from secondary data sources. Different magazine, journals, Government reports, budget and newspapers are helpful for secondary data collection, classification, tabulation and analysis are performed from data.

Hypothesis -

- The education in India is not satisfactory due to lack of awaress of people.
- Budget on education is not sufficient for progress of education.
- Governments do not take proper interest for providing education of several verities.
- The expenditure of family budget of India on education is very short.

Objectives -

- To study the education level of India.
- To compare the education status of India with world level.
- To promote expenditure on education through government budget.
- To aware educational power of countrymen.

Description - Education is primary requirement of country men. Because education developes thinking power and create energy to proceed on progressing path different reports published by government and other agencies. So that the education in India is not better as it is in other countries. Some reports say that in 36 countries education has legal power in 166 countries free education in providing and it has legal frame and it 183 countries, the education is compulsory. The free education is remained difficult besides several efforts 121 million children and adults never went school or left in complete education. It is also wonder-able information about information that on universe level free education is providing to less than 15 year ages in India while world average is twelve year.

India is also developing country in case of education From nursery to higher education is providing in India by central and state govt or tiring to expenses much amount on education. The budget of education is given below:-

Table-1 **(See in the next page)**

The total budget on education of year 2015-16 was 68963 crores on school education it was 42219 crore and on higher education 26855 crores and it increase education in budget 2016-17 it is 72394 crore and in school education 43554 crores and on higher education. It is to 28840 crore though it increase 4.9% in comparison last year but it is 0.6% is less of total GDP.

Government Expenditure on education of India (Graph See in the next page)

Government levis 3% educational cess total income tax for educational purpose and 6% of total budget proposed for education. Inspite all the efforts the educational requirement is increasing with the increasing population of children. The total expenditure of education should be increased in GDP but it is seen that it is less of total GDP.

Problem - The problem of education in India is much difficult than other countries increasing population, lack of awareness. Lack professional education, the common

***Research Scholar (Commerce) A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA**

education is being difficult, while the education is the main tool for development, either it is economic, social political or cultural etc. The society is also not aware about education. The public watch to government for educational activities. While it should be done by the each person of the country.

Suggestion - Educated person of the nation should also take part to sprite education in every were of the country. For areas of the country should be taken in educational light. Different kind of education should be provided as common education, Technical and vocational education all kind of education important for development of manpower as well as national development. It is the duty of each person to centralized mind on education, because education is main weapon to fight against each evil of the society.

Conclusion - Our India is development country after independence education is the priority of state and central government specially 6-14 years of age is compulsory education and it is taken under the "right of education", Any citizen can make complain to government for educational facilities and within one kilometer circle, primary school is compulsory, beside of all effort education is a main problem of the country, it should be solved with public and government.

References :-

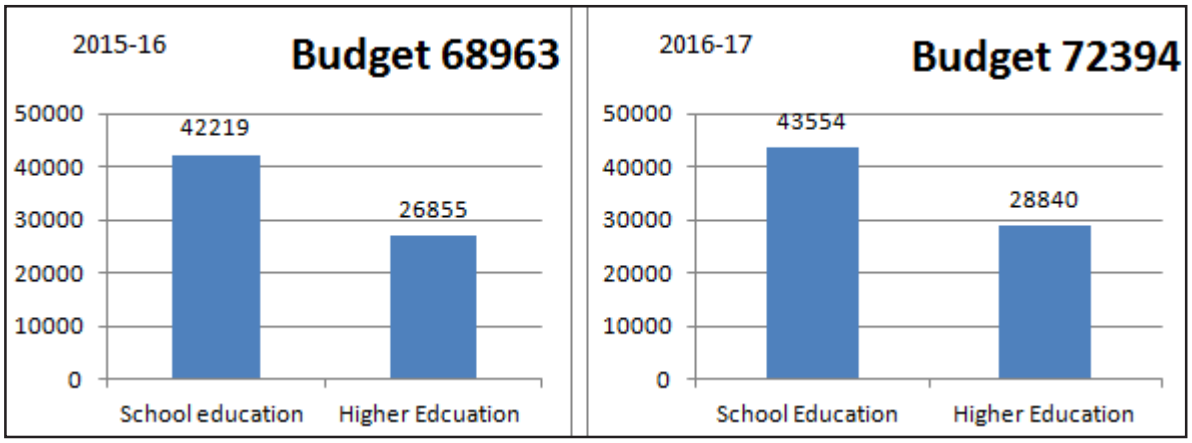
1. Economic Survey 2016-17
2. India 2017
3. Report of world educational foram
4. Patrika Daily Newspaper
5. www.google.com

Table-1
Government Expenditure on education in India (in crore Rs)

2015-16			2016-17		
Total Budget	Budget expenditure on school education	Budget expenditure on higher education	Total Budget	Budget expenditure on school education	Budget expenditure on higher education
68963	42219	26855	72394	43554	28840

Source - Economic survey 2016-17

Government Expenditure on education of India



****

भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड की शोधन क्षमता का विश्लेषण

डॉ. एस. के. खटीक * शहाना सईद **

शोध सारांश – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड की शोधन क्षमता के विश्लेषण हेतु अनुपात विश्लेषण तकनीक का उपयोग किया गया है। तथा इस अनुपातिक तकनीक के अन्तर्गत अल्पकालीन शोधन क्षमता हेतु चालू अनुपात, तरल अनुपात, रोकड अनुपात तथा दीर्घकालीन शोधन क्षमता के विश्लेषण हेतु कुल ऋण समता अनुपात, स्वामित्व अनुपात, चालू दायित्व का कुल सम्पत्तियों से अनुपात, निधि ऋण का कुल पूँजीकरण से अनुपात के माध्यम से विश्लेषण किया गया है। इस विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि कम्पनी की अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन शोधन क्षमता संतोषजनक नहीं है क्योंकि सम्बन्धित अनुपात एक निश्चित प्रमाप से कम है। इसलिए कम्पनी की अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन शोधन क्षमता में सुधान के आवश्यक प्रयास किया जाना चाहिए इस हेतु इस पेपर में आवश्यक सुझाव भी दिये गए हैं।

कुंजी शब्द – चालू अनुपात, तरल अनुपात, ऋण समता अनुपात, स्वामित्व अनुपात एवं दीर्घकालीन ऋण का कुल सम्पत्तियों से अनुपात।

प्रस्तावना – प्रत्येक व्यावसायिक कम्पनी या संस्था के वित्तीय नियोजन में कम्पनी की शोधन क्षमता को सुनिश्चित करना आवश्यक है। शोधन क्षमता का आशय अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन दोनों प्रकार के देय का भुगतान देय तिथि पर करने से है। जो कि कम्पनी की साख क्षमता तथा ख्याति को बनाए रखने में सहायक है। कम्पनी की शोधन क्षमता बनाए रखना तभी सम्भव है, जब कभी भी भुगतान की स्थिति उत्पन्न हो उस समय कम्पनी के पास भुगतान के लिए पर्याप्त कोष उपलब्ध हों। यही स्थिति कम्पनी की उत्तम शोधन क्षमता कहलाती है।

अर्थात् शोधन क्षमता कम्पनी की वह क्षमता होती है, जिससे कम्पनी स्वयं के दीर्घकालीन वित्तीय दायित्वों का भुगतान कर सके। शोधन क्षमता किसी भी कम्पनी के व्यवसाय को स्थिर रखने में उपयोगी है। यह दीर्घकालीन व्ययों एवं स्थायी वृद्धि की क्षमता को दर्शाती है यह शुद्ध तरलता के मापन का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। जो कम्पनी के कुल दायित्वों एवं कुल सम्पत्तियों के मध्य सम्बन्धों को प्रकट करती है। शोधन क्षमता की गणना से यह भी ज्ञात होता है कि कम्पनी की कुल सम्पत्तियों के प्रबंध में बाह्य दायित्वों के कितने भाग का प्रयोग किया गया है। कम्पनी की सम्पत्तियों से वसूल होने वाली राशि से क्या कम्पनी के बाह्य दायित्वों का भुगतान किया जा सकता है या नहीं।

कम्पनी की शोधन क्षमता की गणना का मुख्य उद्देश्य कम्पनी के ऋणों का भुगतान करने की क्षमता के मापन से है, जो कम्पनी के ऋणदाताओं को महत्वपूर्ण सूचनाएँ एवं सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करती है। शोधन क्षमता भावी विनियोक्ताओं के लिए कम्पनी के पूँजी ढाँचे के परीक्षण का महत्वपूर्ण स्त्रोत है, जो कम्पनी के भावी नियोजन में पथ प्रदर्शन का कार्य करती है। कम्पनी में अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन देय का भुगतान करने की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उचित शोधन क्षमता को बनाए रखना आवश्यक है। कम्पनी के भावी भुगतानों का उचित पूर्वानुमान कम्पनी की शोधन क्षमता के नियोजन में सहायक होता है।

अध्ययन का औचित्य – व्यावसायिक परिवेश में कार्यरत कोई भी कम्पनी अपने व्यवसाय को सुचारू रूप से संचालित करने एवं दैनिक क्रियाओं व दायित्वों के भुगतान के लिए पूर्ण रूप से वित्ता पर निर्भर रहती है। यह वित्त कम्पनी अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन समय अवधि के उपयोग के लिए बाहरी स्त्रोतों से प्राप्त करती है। कम्पनी वित्त के उचित प्रबंध द्वारा ही अल्पकालीन व दीर्घकालीन शोधन क्षमता की सामान्य स्थिति को बनाए रखने में सक्षम होगी अन्यथा कम्पनी की शोधन क्षमता कम्पनी के प्रत्येक विभाग को प्रभावित करेगी जिससे कम्पनी का व्यवसाय व ख्याति कम होगी इसीलिए कम्पनी की शोधन क्षमता का उचित ज्ञान होना आवश्यक है। जिससे व्यवसाय के प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में कम्पनी की सुदृढ़ता व सफलता को व्यवस्थित रूप में स्थापित किया जा सके।

यह विषय अध्ययन इसलिए भी और महत्वपूर्ण है कि शोधन क्षमता की स्थिति किस प्रकार बाहरी लेनदारों तथा कम्पनी को प्रभावित करती है। इन महत्वपूर्ण तथ्यों का ज्ञान होना आवश्यक है ताकि इन बिन्दुओं को ध्यान में रखकर कम्पनी भविष्य में अपनी व्यवसायिक नीतियों का वास्तविकता प्रदान कर सके जिससे कम्पनी की विद्यमानता व लोकप्रियता में वृद्धि हो।

शोध साहित्य की समीक्षा –

साहू 2002 – भारत की पेपर उत्पादक कम्पनियों का अध्ययन किया अध्ययन में यह पाया कि तरलता एक सफल कम्पनी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अतरलता की स्थिति किसी भी व्यवसाय को असफलता की और अग्रसर करती है एवं व्यवसाय को संचालित नहीं होने देती है। व्यवसाय में अधिक तरलता लाभदायकता के लिए भी हानिकारक होती है। अध्ययन में यह पाया कि भारत की पेपर उत्पादक कम्पनियाँ अधिक खराब स्थिति में पाई गई हैं। जिससे वह उभरने का प्रयत्न कर रही हैं।

भुनिया 2010 – टाटा स्टील लिमिटेड एवं लोएडस स्टील इन्डस्ट्रीज़ लिमिटेड का (वर्ष 1997 से 2006 तक) अध्ययन किया। अध्ययन में पाया कि

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

नकारात्मक परिवर्तन आवश्यक थे क्योंकि दोनों कम्पनियों की चालू सम्पत्तियाँ घट रही थी और चालू दायित्वों में वृद्धि हो रही थी। अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ कि चालू सम्पत्ति के घटने का कारण स्कन्ध और प्राप्तियों की कमी थी और यह भी देखा गया कि दोनों कम्पनियों के प्राप्ति प्रबंध भी सटीक नहीं पाए गए।

गोयल 2012 – एफ एम सीजी नामक हल, डाबर, गोदरेज कनज्यूमर, मारिको एवं कोलगेट पलमोलिव कम्पनियों का (वर्ष 2006 से 2011 तक) अध्ययन करने के लिए चयन किया। उन्होंने सम्बन्धित कम्पनियों की तरलता एवं शोधन क्षमता को मापने का प्रयास किया। अध्ययन में पाया कि तरलता एवं शोधन क्षमता के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है। अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि लाभदायकता में वृद्धि करने के लिए कम्पनी की तरलता का कम होना महत्वपूर्ण है। अध्ययन में यह भी पाया गया कि शोधन क्षमता की कमी से लाभदायकता में जो वृद्धि होती है। उसे शोधन क्षमता में वृद्धि करके संतुलित किया जा सकता है।

मारीमुथु 2012 – कुछ चयनित कम्पनियों की तरलता की स्थिति जानने के लिए अध्ययन किया। अध्ययन में पाया कि कम्पनियों के चालू एवं तरल अनुपात की स्थिति ब्याज आवरण अनुपात की तुलना में श्रेष्ठ है। उन्होंने निष्कर्ष दिया कि कम्पनियों को अपने तरलता स्तर प्राप्ति एवं कार्यशील पूँजी के भुगतान पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

पानीग्राही 2013 – भारत की पाँच सर्वश्रेष्ठ सीमेन्ट कम्पनियों जैसे अमबुजा सीमेन्ट, एसीसी सीमेन्ट लिमिटेड, इंडिया सीमेन्ट, मद्रास सीमेन्ट एवं श्री सीमेन्ट का (वर्ष 2001 से 2010 तक) अध्ययन किया। अध्ययन से ज्ञात हुआ कि छोटी कम्पनियों की तरलता की स्थिति वृहत कम्पनियों की तुलना में श्रेष्ठ पाई गई और इन कम्पनियों के चालू अनुपात, तरल अनुपात एवं कार्यशील पूँजी से चालू सम्पत्तियों तक वृद्धि का अनुपात नकारात्मक पाया गया जो तरलता की अनुचित स्थिति को दर्शाता है।

शोध विषय अध्ययन के उद्देश्य –

(i) शोधन क्षमता की अवधारणा का अध्ययन करना।

(ii) बीएचईएल की शोधन क्षमता का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

शोध विषय अध्ययन की परिकल्पनाएँ –

H_{01} शोध विषय अध्ययन की अवधि में चालू सम्पत्तियों एवं चालू दायित्वों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

H_{02} शोध विषय अध्ययन की अवधि में दीर्घकालीन ऋण पूँजी एवं स्वामित्व पूँजी में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विषय अध्ययन की संरचना – शोध विषय अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए द्वितीय समंकों का उपयोग किया जाएगा। जिसमें कम्पनी द्वारा प्रकाशित 11 वर्षो के वित्तीय विवरण, सांख्यिकीय रिर्पोट एवं अन्य सहायक प्रलेख समाचार पत्र-पत्रिका इन्टरनेट आदि का प्रयोग किया जाएगा। उपलब्ध समंकों का समूहीकरण, वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया जाएगा तथा परिकल्पनाओं की सार्थकता के लिए सांख्यिकीय औजारों का उपयोग किया जाएगा। जिसमें मुख्यत: माध्य, सहसम्बन्धों का विश्लेषण तथा टी टेस्ट तकनीक का उपयोग किया जाएगा जिससे परिकल्पनाओं की सार्थकता सिद्ध हो।

शोध विषय अध्ययन की सीमाएँ –

(i) अध्ययन में एक निश्चित अवधि के समंकों एवं सूचनाओं का प्रयोग किया जाएगा।

(ii) अध्ययन पूर्णत: द्वितीय समंको पर आधारित रहेगा।

(iii) आँकडों की विश्वसनीयता मुख्यत: अंकेक्षण पर पूर्णत: निर्भर करती है।

(iv) अध्ययन में समंकों को समूह, उपसमूह में वर्गीकरण विषय अध्ययन के आधार पर किया जाएगा।

बी.एच.ई.एल की शोधन क्षमता विश्लेषण – सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनियों में बीएचईएल भारत सरकार की ऊर्जा सम्बन्धित क्षेत्र में प्रमुख इंजीनियरिगं व निर्माणी कम्पनी है। जिसकी गणना विद्युत उपस्कर बनाने वाली विश्व की बारह शीर्ष कम्पनियों में की जाती है अत्याधिक प्रतिस्पर्धा के वातावरण में कम्पनी व्यापार में निरन्तरता बनाए रखने में सफल है। जिससे वर्ष 2013 में कम्पनी को महारत्न के रूप में सम्मानित किया गया है। कम्पनी की शोधन क्षमता के अध्ययन के लिए निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत अनुपातों का अध्ययन किया है, जो इस प्रकार है।

1. चालू अनुपात – चालू अनुपात की गणना चालू सम्पत्तियों तथा चालू दायित्वों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्ध को अभिव्यक्त करने के लिए की जाती है। चालू अनुपात को कार्यशील पूँजी अनुपात भी कहा जाता है। कम्पनी की अल्पकालीन वित्तीय स्थिति तथा तरलता का विश्लेषण करने के लिए चालू अनुपात का व्यापक स्तर पर उपयोग किया जाता है। यह अनुपात एक प्रकार से तरलता की माप है। इस अनुपात की गणना से प्रकट होता है कि कम्पनी की चालू सम्पत्तियाँ चालू दायित्वों का भुगतान करने के लिए पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं या नहीं। इस अनुपात से कम्पनी के पास अल्पकालीन दायित्वों का भुगतान करने के लिए उपलब्ध सम्पत्तियों की सूचना प्राप्त होती है। चालू अनुपात की गणना के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{चालू अनुपात} = \frac{\text{चालू सम्पत्तियाँ}}{\text{चालू दायित्व}}$$

Table 1
Curent Ratio of BHEL

Rs. In crore

Year	Curent Assets Rs.	Curent Liabilities Rs.	Ratio
2005-2006	16330.78	10320.02	1.58
2006-2007	21062.97	14420.11	1.46
2007-2008	27704.72	19820.84	1.40
2008-2009	36901.07	28332.90	1.30
2009-2010	42934.81	32441.72	1.32
2010-2011	43277.86	24938.68	1.74
2011-2012	48714.94	28722.93	1.70
2012-2013	50959.46	27832.56	1.83
2013-2014	52018.78	25542.75	2.04
2014-2015	48537.54	22207.48	2.19
2015-2016	46539.03	20936.54	2.22

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2016

निर्वचन – तालिका क्रमांक 1 में चालू सम्पत्तियों व चालू दायित्वों के मध्य अनुपात को दर्शाया गया है। जो वर्ष 2005-06 से 2015-16 तक की स्थिति को बतलाती है। अध्ययन अवधि के दौरान चालू अनुपात में बहुत अधिक उतार चढ़ाव देखने को नहीं मिलता है। वर्ष 2005-06 में अनुपात 1.58% है। जो अगले वर्ष 2006-07 में 0.12% घट कर 1.46% पर आ गया। इसी प्रकार वर्ष 2007-08 में अनुपात में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ। और अनुपात 0.06% कम होकर 1.40% की समान स्थिति पर आ गया।

वर्ष 2008-09 में अनुपात 0.10% की गिरावट के साथ 1.30% हो गया। वर्ष 2009-10 में अनुपात पुन: 0.02% की बढ़त के साथ 1.32% पर आ गया। और वहीं वर्ष 2010-11 में अनुपात 0.41% की वृद्धि के साथ 1.74% पर आ गया। किन्तु वर्ष 2011-12 में 0.04% की कमी के साथ अनुपात 1.70% पर देखा गया। वर्ष 2012-13 में अनुपात 0.13% बढ़कर 1.83% पर आ गया। यही स्थिति अगले वर्षों में भी देखी गई। जो कि वर्ष 2013-14 में 0.21% बढ़ कर 2.04% पर आ गई। वर्ष 2014-15 व 2015-16 में यह अनुपात 0.14% व 0.03% की वृद्धि के साथ अनुपात 2.19% व 2.22% के स्तर पर पहुँच गया।

2. तरल अनुपात – कोई भी कम्पनी अपने चालू दायित्वों का भुगतान कितनी सरलता से कर सकती है। इसका मूल्यांकन करने के लिए तरल अनुपात की गणना की जाती है। तरल अनुपात चालू अनुपात की तुलना में कम्पनी की तरलता को मापने का एक सटीक परीक्षण है। तरल अनुपात का आशय कम्पनी की सम्पत्तियों को रोकड़ में परिवर्तित करने तथा अल्पकालीन दायित्वों का देय तिथि पर भुगतान करने की क्षमता के मापन से है। तरल अनुपात की गणना के लिए चालू सम्पत्तियों में स्कन्ध तथा पूर्वदत्त व्यय को सम्मिलित नहीं किया जाता है। क्योंकि इन्हें सरलतापूर्वक रोकड़ में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। चालू दायित्व में बैंक अधिविकर्ष को नहीं लिया जाता है। क्योंकि यह मांग पर देय नहीं होते हैं। लेखांकन सिद्धान्त के आधार पर तरल अनुपात का आर्दश या परम्परागत माप 1:1 का होना सन्तोषप्रद माना जाता है। अनुपात की गणना के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{तरल अनुपात} = \frac{\text{चालू सम्पत्तियाँ- (स्कन्ध+पूर्वदत्त व्यय)}}{\text{चालू दायित्व - बैंक अधिविकर्ष}}$$

Table 2
Liquid Ratio Of BHEL

Rs. In crore

Year	Liquidity Assets Rs.	Curent Liabilities Rs.	Ratio
2005-2006	12586.41	10320.02	1.22
2006-2007	16845.30	14420.11	1.17
2007-2008	21968.32	19820.84	1.11
2008-2009	29064.05	28332.90	1.03
2009-2010	33699.35	32441.72	1.04
2010-2011	32425.81	24938.68	1.30
2011-2012	35270.44	28722.93	1.23
2012-2013	39195.64	27832.56	1.41
2013-2014	42221.23	25542.75	1.65
2014-2015	38435.88	22207.48	1.73
2015-2016	36901.64	20936.54	1.76

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2015

निर्वचन – तालिका क्रमांक 2 में तरल सम्पत्तियों व चालू दायित्वों के मध्य अनुपात को दर्शाया गया है। जो वर्ष 2005-06 से 2015-16 तक की अध्ययन अवधि में तरल अनुपात की स्थिति को बतलाती है। अध्ययन अवधि के दौरान तरल अनुपात में बहुत अधिक उतार चढ़ाव दिखाई नहीं देता है वर्ष 2005-06 में अनुपात 1.22% है, जो अगले वर्ष 2006-07 में 0.05% घट कर 1.17% पर आ गया। वर्ष 2007-08 में अनुपात 0.06% की कमी के साथ 1.11% पर आ गया। इसके पश्चात् अगले वर्ष 2008-09 में भी अनुपात 0.08% कम होकर 1.03% हो गया। वर्ष 2009-10 में अनुपात 0.01% की सामान्य वृद्धि के साथ 1.04% पर आ गया। वहीं अगले वर्ष 2010-11 में अनुपात 0.26% की वृद्धि के साथ 1.30% आ गया। वर्ष 2011-12 में अनुपात 0.07% कम होकर 1.23% पर देखा गया। वर्ष 2012-13 में अनुपात पुन: 0.18% की वृद्धि के साथ 1.41% पर आ गया। यही स्थिति अगले वर्षों में भी देखी गई। जो कि वर्ष 2013-14 में 0.24% बढ़कर 1.65% पर आ गया। वहीं वर्ष 2014-15 व 2015-16 में अनुपात 0.08% व 0.03% की वृद्धि के साथ 1.73% व 1.76%के स्तर पर पहुँच गया।

3. पूर्ण रोकड़ अनुपात – पूर्ण रोकड़ अनुपात की गणना रोकड तथा चालू दायित्वों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्धों को व्यक्त करने तथा कम्पनी की रोकड़ व चालू दायित्वों की वित्तीय स्थिति का विश्लेषण करने की लिए की जाती है। इस अनुपात की गणना से स्पष्ट होता है कि कम्पनी की रोकड चालू दायित्वों के भुगतान के लिए उपलब्ध है या नहीं। इस अनुपात की गणना से कम्पनी की रोकड़ की स्थिति स्पष्ट होती है। इस अनुपात की गणना का कोई माप निश्चित नहीं है। लेकिन चालू दायित्वों के भुगतान के लिए रोकड की मात्रा ज्ञात करने में उपयोगी है। अनुपात की गणना के लिए निम्न सूत्र का उपयोग किया जाता है।

$$\text{पूण रोकड़ अनुपात} = \frac{\text{रोकड़}}{\text{चालू दायित्व}} \times 100$$

Table 3
Cash Absolute Ratio of BHEL

Rs. In crore

Year	Cash Rs.	Curent Liabilities Rs.	Ratio
2005-2006	4133.97	10320.02	40.06
2006-2007	5808.91	14420.11	40.28
2007-2008	8386.02	19820.84	42.31
2008-2009	10314.67	28332.90	36.41
2009-2010	9790.08	32441.72	30.18
2010-2011	9630.15	24938.68	38.62
2011-2012	6671.98	28722.93	23.23
2012-2013	7732.05	27832.56	27.78
2013-2014	11872.93	25542.75	46.48
2014-2015	9812.70	22207.48	44.19
2015-2016	10085.99	20936.54	48.17

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2016

निर्वचन – तालिका क्रमांक 3 में रोकड़ व चालू दायित्वों के मध्य अनुपात को दर्शाया गया है, जो वर्ष 2005-06 से 2015-16 तक की स्थिति को बतलाती है। अध्ययन अवधि के दौरान पूर्ण रोकड अनुपात में बहुत अधिक उतार चढ़ाव देखने का नहीं मिलता है। वर्ष 2005-06 में अनुपात 40.06 है, जो अगले वर्ष 2006-07 में 0.22 बढ़ कर 40.28 पर आ गया। वर्ष 2007-08 में अनुपात 2.03 बढ़ कर 42.31 पर पहुचँ गया। वहीं वर्ष 2008-09 व 2009-10 में 5.90 व 6.23 की कमी के साथ 36.41 व 30.18 पर आ गया। लेकिन वर्ष 2010-11 में पुन 8.44 की वृद्धि के साथ अनुपात 38.62 हो गया। वहीं वर्ष 2011-12 व 2012-13 में 15.39 व 4.55 कम हो कर अनुपात 23.23 व 27.78 पर आ गया। वर्ष 2013-14 में अनुपात पुन: 18.70 की वृद्धि के साथ 46.48 पर पहुचँ गया। इसी प्रकार वर्ष 2014-15 में अनुपात में अधिक परिर्वतन नहीं हुआ और अनुपात 2.29 की कमी के साथ 44.19 के स्तर पर पहुचँ गया। लेकिन

वर्ष 2015-16 में 3.98% की वृद्धि के साथ अनुपात 48.17% पर आ गया।

4. कुल ऋण समता अनुपात – ऋण समता अनुपात को बाह्य समता अनुपात भी कहते हैं। इस अनुपात की गणना कम्पनी के अंशधारियों के कोष तथा दीर्घकालीन ऋण के मध्य सम्बन्धों को व्यक्त करने के लिए की जाती है। यह अनुपात कम्पनी की कुल सम्पत्तियों में कितना भाग अंशधारियों के कोष का तथा कितना भाग दीर्घकालीन ऋण का विनियोजित है इस बात की सूचना प्रदान करता है। ऋण समता अनुपात ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्र का उपयोग किया जाता है।

$$\text{कुल ऋण समता अनुपात} = \frac{\text{कुल दीर्घकालीन ऋण}}{\text{स्वामित्व कोष}}$$

Table 4
Total Debt Equity Ratio of BHEL
Rs. In crore

Year	Total Debt Rs.	Share holder's Fund Rs.	Ratio
2005-2006	10878.26	6627.66	1.64
2006-2007	14509.44	7853.10	1.85
2007-2008	19916.02	9436.28	2.11
2008-2009	28482.27	11098.51	2.57
2009-2010	32569.47	14390.13	2.26
2010-2011	39106.45	17990.29	2.17
2011-2012	41402.81	23826.97	1.74
2012-2013	39684.35	28893.41	1.37
2013-2014	39744.12	31078.10	1.28
2014-2015	34382.53	31863.87	1.08
2015-2016	33636.75	29918.52	1.12

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2016

निर्वचन – तालिका क्रमांक 4 में कुल ऋण एवं स्वामित्व कोष के मध्य अनुपात को दर्शाया गया है। जो वर्ष 2005-06 से 2015-16 तक की अध्ययन अवधि में कुल ऋण समता अनुपात की स्थिति को प्रकट करती है। अध्ययन अवधि के दौरान कुल ऋण समता अनुपात में परिवर्तन देखने को मिलता है। वर्ष 2005-06 में अनुपात 1.64% है। जिसमें अगले वर्ष 2006-07 में थोड़ी वृद्धि हुई। और अनुपात 0.21% से बढ़कर 1.85% पर आ गया। अगले वर्ष 2007-08 व 2008-09 में अनुपात क्रमश: 0.26% व 0.46% की वृद्धि के साथ 2.11% व 2.57% पर पहुँच गया। वर्ष 2009-10 में अनुपात 0.31% घट कर 2.26% हो गया। वर्ष 2010-11 में भी अनुपात 0.09% कम होकर 2.17% पर आ गया। हालांकि वर्ष 2011-12, 2012-13, 2013-14 व 2014-15 में अनुपात निरन्तर चार वर्षों में समान स्थिति के साथ 0.43%, 0.37%, 0.09% व 0.20% की कमी के साथ क्रमश: 1.74%, 1.37%, 1.28% व 1.08% के स्तर पर आ गया। वहीं वर्ष 2015-16 में अनुपात पुन: 0.04% की वृद्धि के साथ 1.12% पर पहुँच गया।

5. स्वामित्व अनुपात – स्वामित्व अनुपात की गणना कम्पनी की कुल सम्पत्तियों तथा स्वामी कोष के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्धों का विश्लेषण करने के लिए की जाती है। अर्थात् इस अनुपात की गणना से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कम्पनी की कुल सम्पत्तियों में स्वामित्व कोष का उपयोग किस सीमा तक किया गया हैं स्वामित्व अनुपात कम्पनी की दीर्घकालीन शोधन क्षमता को निर्धारित करने का महत्वपूर्ण अनुपात है। स्वामित्व अनुपात की गणना का सूत्र इस प्रकार है।

$$\text{स्वामित्व अनुपात} = \frac{\text{स्वामित्व कोष}}{\text{कुल सम्पत्तियों}} \times 100$$

Table 5
Proprietory Ratio of BHEL
Rs. In crore

Year	Share holder's Fund Rs.	Total Assets Rs.	Ratio (%)
2005-2006	6627.66	17505.92	37.86
2006-2007	7853.10	22362.54	35.12
2007-2008	9436.28	29352.30	32.15
2008-2009	11098.51	39580.78	28.04
2009-2010	14390.13	46959.60	30.64
2010-2011	17990.29	57096.74	31.51
2011-2012	23826.97	65229.78	36.53
2012-2013	28893.41	68577.76	42.13
2013-2014	31078.10	70822.22	43.88
2014-2015	31863.87	66246.40	48.10
2015-2016	29918.52	63555.27	47.07

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2016

निर्वचन – तालिका क्रमांक 5 में स्वामित्व कोष व कुल सम्पत्तियों के मध्य अनुपात को दर्शाया गया है। जो वर्ष 2005-06 से 2015-16 तक की अध्ययन अवधि में स्वामित्व अनुपात की स्थिति को बतलाती है अध्ययन अवधि के दौरान स्वामित्व अनुपात में उतार चढ़ाव देखने को मिलता है। वर्ष 2005-06 में अनुपात 37.86% है, जो अगले वर्ष 2006-07 में 2.74% घटकर 35.12% पर आ गया। वहीं वर्ष 2007-08 में अनुपात 2.97% घटकर 32.15% हो गया वर्ष 2008-09 में अनुपात 4.11% की कमी के साथ 28.04% पर पहुँच गया। वहीं वर्ष 2009-10 में अनुपात पुन: 2.60% की बढ़त के साथ 30.64% पर आ गया। वर्ष 2010-11 में अनुपात में 0.87% की वृद्धि देखी गई जिससे यह अनुपात 31.51% हो गया। वर्ष 2011-12 में अनुपात 5.02% बढ़कर 36.53% तक आ गया। वर्ष 2012-13 में 5.60% की वृद्धि देखी गई। जिससे यह अनुपात 42.13% हो गया। इसके पश्चात् अगले दो वर्ष 2013-14 व 2014-15 में भी वृद्धि का दौर दिखाई दिया और अनुपात क्रमश: 1.75% व 4.22% की वृद्धि के साथ 43.88% व 48.10% के स्तर पर पहुँच गया। वहीं वर्ष 2015-16 में 1.03% की गिरावट के साथ अनुपात 47.07% पर आ गया।

6. दीर्घकालीन ऋण का कुल सम्पत्तियों से अनुपात – इस अनुपात की गणना दीर्घकालीन ऋण व कुल सम्पत्तियों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्धों को प्रकट करने के लिए की जाती है। इस अनुपात के माध्यम से यह ज्ञात होता है कि कुल सम्पत्तियों की व्यवस्था में कितनी मात्रा में दीर्घकालीन ऋण का उपयोग किया गया है। दीर्घकालीन ऋण का कुल सम्पत्तियों से अनुपात की गणना दीर्घकालीन ऋण की सुरक्षा के माप की महत्वपूर्ण तकनीक है। क्योंकि दीर्घकालीन ऋण कुल सम्पत्तियों पर निश्चित प्रभार उत्पन्न करते हैं और यह अनुपात कम्पनी की दीर्घकालीन शोधन क्षमता की माप में सहायक है।

$$\text{दीर्घकालीन ऋण का कुल सम्पत्तियों से अनुपात} = \frac{\text{दीर्घकालीन ऋण}}{\text{कुल सम्पत्तियाँ}} \times 100$$

Table 6
Long Term Debt to Total Assets Ratio of BHEL
Rs. In crore

Year	Long term debt Rs.	Total Assets Rs.	Ratio (%)
2005-2006	558.24	17505.92	3.19
2006-2007	89.33	22362.54	0.40
2007-2008	95.18	29352.30	0.32
2008-2009	149.37	39580.78	0.78
2009-2010	127.75	46959.60	0.27
2010-2011	14167.77	57096.74	2.48
2011-2012	12679.88	65229.78	19.44
2012-2013	11851.79	68577.76	17.28
2013-2014	14201.37	70822.22	20.05
2014-2015	12175.05	66246.40	18.38
2015-2016	12700.21	63555.27	19.98

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2016

निर्वचन – तालिका क्रमांक 6 वर्ष 2005–06 से 2015–16 तक की अध्ययन अवधि में दीर्घकालीन ऋण का कुल सम्पत्तियों के मध्य अनुपात की स्थिति को दर्शाती है। अध्ययन अविध के दौरान दीर्घकालीन ऋण का कुल सम्पत्तियों के साथ अनुपात में उतार चढ़ाव देखने को मिलता है। वर्ष 2005–06 में अनुपात 3.19% है, जो अगले वर्ष 2006–07 व 2007–08 में 2.79% व 0.08% घट कर 0.40% व 0.32% पर आ गया। वर्ष 2008–09 में अनुपात 0.46% बढ़कर 0.78% पर पहुचँ गया। वहीं वर्ष 2009–10 में अनुपात 0.51% घट कर 0.27%पर आ गया। इसके पश्चात् अगले वर्ष 2010–11 व 2011–12 में 2.21% व 16.96% की वृद्धि के साथ अनुपात 2.48% व 19.44% के स्तर पर पहुचँ गया। वर्ष 2012–13 में अनुपात 2.16% कम हो कर 17.28% पर आ गया। वर्ष 2013–14 में यह अनुपात 2.77% की वृद्धि के साथ 20.05% पर पहुचँ गया। वहीं 2014–15 में यह अनुपात पुन: 1.67% घट कर 18.38% के स्तर पर आ गया। इसके पश्चात् वर्ष 2015–16 में अनुपात 1.60% की वृद्धि के साथ 19.98% पर आ गया।

7. चालू दायित्व का कुल सम्पत्तियों से अनुपात – यह अनुपात कम्पनी के चालू दायित्व व कुल सम्पत्तियों के मध्य सम्बन्धों को व्यक्त करता है। इस अनुपात की गणना कम्पनी की अल्पकालीन शोधन क्षमता को ज्ञात करने तथा भावी नियोजन का निर्धारण करने में सहायक है। अल्पकालीन ऋण दाताओं को यह अनुपात महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्रदान करता है। और यह भी ज्ञात होता है कि कम्पनी की सम्पत्तियों से चालू दायित्वों का भुगतान हो सकता है या नहीं इस अनुपात की गणना का मुख्य उद्देश्य अल्पकालीन दायित्वों के भुगतान की क्षमता के मापन से है। अनुपात की गणना का सूत्र इस प्रकार है।

$$\text{चालू दायित्वों का कुल सम्पत्तियों से अनुपात} = \frac{\text{चालू दायित्व}}{\text{कुल सम्पत्तियाँ}} \times 100$$

Table 7
Curent Liabilities To Total Assets Ratio of BHEL
Rs. In crore

Year	Curent Liabilities Rs.	Total Assets Rs.	Ratio (%)
2005-2006	10320.02	17505.92	58.95
2006-2007	14420.11	22362.54	64.48
2007-2008	19820.84	29352.3	67.53
2008-2009	28332.9	39580.78	71.58
2009-2010	32441.72	46959.6	69.08
2010-2011	24938.68	57096.74	43.68
2011-2012	28722.93	65229.78	44.03
2012-2013	27832.56	68577.76	40.59
2013-2014	25542.75	70822.22	36.07
2014-2015	22207.48	66246.4	33.52
2015-2016	20936-54	63555.27	32.94

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2016

निर्वचन – तालिका क्रमांक 7 वर्ष 2005–06 से 2015–16 तक की अध्ययन अवधि में चालू दायित्व का कुल सम्पत्तियों के मध्य अनुपात की स्थिति को दर्शाती है। अध्ययन अविध के दौरान चालू दायित्व का कुल सम्पत्तियों के साथ अनुपात में उतार चढ़ाव देखने को मिलता है। वर्ष 2005–06 में अनुपात 58.95% है, जो अगले वर्ष 2006–07 से 2008–09 में 5.53%, 3.05%, 4.05% की वृद्धि के साथ अनुपात 64.48%, 67.53% व 71.58% के स्तर पर पहुचँ गया। वर्ष 2009–10 व 2010–11 में अनुपात 2.50% व 25.40% घट कर 69.08% व 43.68% हो गया। वहीं वर्ष 2011–12 में अनुपात 0.35% बढ़कर 44.03% पर आ गया। इसके पश्चात् अगले वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक अनुपात 3.44%, 4.52%, 2.55% व 0.58% की कमी के साथ 40.59%, 36.07% 33.52% व 32.94% के स्तर पर पहुचँ गया।

8. निधि ऋण का कुल पूँजीकरण से अनुपात – इस अनुपात की गणना कम्पनी द्वारा बाह्य व्यक्तियों से प्राप्त दीर्घकालीन कोष और कम्पनी में उपलब्ध कुल दीर्घकालीन कोष के मध्य स्थापित सम्बन्धों को ज्ञात करने के लिए की जाती है, यह अनुपात कम्पनी की वित्तीय स्थिति को प्रकट करता है। कुल पूँजीकरण का वह भाग निधि ऋण कहलाता है। जिसे कम्पनी द्वारा बाह्य व्यक्तियों से वित्ता के रूप में प्राप्त किया जाता है। इस अनुपात की गणना से कम्पनी की कुल पूँजीकरण की राशि में निधि ऋण के समावेश की मात्रा का ज्ञान होता है। इस अनुपात की माप के लिए कोई स्वयं सिद्ध नियम या आदर्श मापन निर्धारित नहीं है लेकिन कम्पनी की बाह्य लोगों पर निर्भरता का कम होना कम्पनी की आर्थिक वित्तीय सुदृढ़ता के लिए अच्छा होता है। अनुपात की गणना निम्न प्रकार से की जाती है।

$$\text{निधि का कुल पूँजीकरण से अनुपात} = \frac{\text{निधि ऋण (दीर्घकालीन ऋण)}}{\text{कुल पूँजीकरण}} \times 100$$

Table 8
Funded Debt to Total Capitalisation Ratio of BHEL
Rs. In crore

Year	Funded Debt Rs.	Total Capitalisation Rs.	Ratio (%)
2005-2006	558.24	7185.90	7.77
2006-2007	89.33	7942.43	1.12
2007-2008	95.18	9531.46	1.00
2008-2009	149.37	11247.88	1.33
2009-2010	127.75	14517.88	0.88
2010-2011	14167.77	32158.06	44.06
2011-2012	12679.88	36506.85	34.73
2012-2013	11851.79	40745.20	29.09
2013-2014	14201.37	45279.47	31.36
2014-2015	12175.05	44038.92	27.65

2015-2016	12700.21	42618.73	29.80

Source - Annual Report of BHEL from 2005-2016

निर्वचन – तालिका क्रमांक 8 में दीर्घकालीन ऋण व कुल पूँजीकरण के मध्य अनुपात दर्शाया गया है, जो वर्ष 2005-06 से 2015-16 तक की अध्ययन अवधि में कुल पूँजीकरण की तुलना में दीर्घकालीन ऋण की स्थिति को बतलाती है। वर्ष 2005-06 में अनुपात 7.77% है। जो अगले वर्ष 2006-07 में 6.65% घटकर 1.12% पर आ गया। इसी प्रकार अगले वर्षों में अनुपात में अधिक परिर्वतन नहीं हुआ है, जो वर्ष 2007-08 में 0.12% कम होकर 1.00% हो गया। वर्ष 2008-09 में अनुपात में सामान्य वृद्धि देखी गई जो 0.33% की बढ़त के साथ 1.33% पर आ गया। वर्ष 2009-10 में अनुपात में पुन: 0.45% की गिरावट हुई और अनुपात 0.88% हो गया वर्ष 2010-11 में अनुपात सर्वाधिक 43.17% की वृद्धि के साथ 44.06% के स्तर पर पहुँच गया। हालांकि वर्ष 2011-12 में यह अनुपात 9.33% की गिरावट के साथ 34.73% पर आ गया। इसी प्रकार वर्ष 2012-13 मे अनुपात 5.64% कम होकर 29.09% पर आ गया वर्ष 2013-14 में अनुपात में पुन: 2.27% की वृद्धि हुई और अनुपात 31.36% पर देखा गया। वर्ष 2014-15 में अनुपात 3.71% की कमी के साथ 27.65% पर पहुँच गया। वहीं वर्ष 2015-16 में अनुपात 2.15% की वृद्धि के साथ 29.80% के स्तर पर आ गया।

परिकल्पनाओं का परीक्षण

शुन्य परिकल्पना

H_{01} शोध विषय अध्ययन की अवधि में चालू सम्पत्तियों एवं चालू दायित्वों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

टी-टेस्ट विधि द्वारा चालू अनुपात के मध्य स्टुडेंट टी-टेस्ट परीक्षण

$$t = \frac{r}{\sqrt{1-r^2}} \times \sqrt{n-2}$$

$$t = \frac{.77}{\sqrt{1-(.77)^2}} \times \sqrt{11-2}$$

$$t = \frac{.77}{\sqrt{1-.5929}} \times \sqrt{9}$$

$$t = \frac{.77}{\sqrt{.4071}} \times 3$$

$$t = \frac{.77 \times 3}{.6380}$$

$$t = \frac{2.31}{.6380}$$

t = 3.621

$t_{0.05}$ = 2.262

t का परिकलित मान = 3.621

t का 5 प्रतिश्त लेवल पर सारणीयन मान = 2.262

यहाँ परिकलित मान > सारणीयन मान

$t > t_{0.05}$ = 3.621 > 2.262

शोध विषय के अध्ययन में ली गई परिकल्पना पूर्ण रूप से सार्थक नहीं है। अत: ली गई परिकल्पना अस्वीकृत है। क्योंकि सारणीयन मान परिकलित मान से कम है। अत: यहाँ स्पष्ट है कि कम्पनी की चालू सम्पत्तियों एवं चालू दायित्वों में अधिक अंतर है। अर्थात् चालू सम्पत्तियों में वृद्धि चालू दायित्वों के कारण नहीं हो रही है। बल्कि चालू सम्पत्तियों में वृद्धि चालू दायित्वों के अलावा अन्य स्त्रोतों के कारण भी हो रही है। जैसे स्वामित्व कोष इत्यादि।

शुन्य

$$t = \frac{r}{\sqrt{1-r^2}} \times \sqrt{n-2}$$

$$t = \frac{.70}{\sqrt{1-(.70)^2}} \times \sqrt{11-2}$$

$$t = \frac{.70}{\sqrt{1-.4900}} \times \sqrt{9}$$

$$t = \frac{.70}{\sqrt{.5100}} \times 3$$

$$t = \frac{.70 \times 3}{.7141}$$

$$t = \frac{2.1}{.7141}$$

t = 2.941

$t_{0.05}$ = 2.262

t का परिकलित मान = 2.941

t का 5 प्रतिश्त लेवल पर सारणीयन मान = 2.262

यहाँ परिकलित मान > सारणीयन मान

$t > t_{0.05}$ = 2.941 > 2.262

शोध विषय के अध्ययन में ली गई परिकल्पना पूर्ण रूप से सार्थक नहीं है। अत: ली गई परिकल्पना अस्वीकृत है। क्योंकि सारणीयन मान परिकलित मान से कम है। अत: यहाँ स्पष्ट है कि कम्पनी के कुल ऋण एवं स्वामित्व कोष में अधिक अंतर है। क्योंकि दोनों के स्त्रोत अलग अलग प्रकार के हैं। अर्थात् ऋण पूँजी एवं स्वामित्व पूँजी दोनों एक नहीं हैं। इसलिए इनमें सार्थक अन्तर है।

निष्कर्ष –

- बी.एच.ई.एल के चालू अनुपात की स्थिति संतोषजनक नहीं है। क्योंकि औसत अनुपात 1.65:1 है, जो कि 2:1 से कम है। यह स्थिति कम्पनी पर नकारात्मक प्रभाव ड़ाल रही है। क्योंकि कम्पनी को दैनिक खर्चों के भुगतान करने में कठिनाईयाँ हो रही हैं। ऐसी स्थिति में इसमें सुधार की आवश्यकता है।
- बी.एच.ई.एल के तरलता अनुपात की स्थिति संतोषजनक है। क्योंकि तरल सम्पत्तियाँ तरल दायित्वों की तुलना में अधिक हैं। कम्पनी पर यह अनुपात सकारात्मक प्रभाव ड़ाल रहा है। इससे कम्पनी आसानी से नगद में चालू दायित्वों का भुगतान कर सकती है, यह अनुपात औसतन 1:1 से अधिक है।
- पूर्ण रोकड़ अनुपात की स्थिति भी कम्पनी की संतोषजनक है। क्योंकि कम्पनी कम से कम चालू दायित्वों का भुगतान लगभग 40 प्रतिशत के आस पास तुरन्त कर सकती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि कम्पनी के पास पर्याप्त मात्रा में नगद राशि है, वह आसानी से अपने अल्पकालीन ऋण का भुगतान कर सकती है। कम्पनी की अल्पकालीन शोधन क्षमता की स्थिति संतोषजनक है। क्योंकि कम्पनी के पास में पर्याप्त मात्रा में रोकड़ की राशि उपलब्ध है।
- बी.एच.ई.एल का ऋण समता अनुपात संतोषजनक नहीं है। क्योंकि कम्पनी द्वारा ऋण पूँजी का लगभग 28 प्रतिशत अंश पूँजी की तुलना में उपयोग किया जा रहा है। ऋण समता अनुपात की गणना तालिका से यह निष्कर्ष निकलता है कि कम्पनी स्वामित्व पूँजी का अधिक उपयोग कर रही है। तथा ऋण पूँजी का कम उपयोग कर रही है। क्योंकि कम्पनी द्वारा रूढ़ीवादी विचारधारा के अन्तर्गत पूँजी का विनियोग कर रखा है, जो कि कम्पनी के लिए लाभप्रद नहीं है। इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि कम्पनी वित्तीय जोखिम नहीं उठाना चाहती जिसके फलस्वरूप ही कम्पनी कम ऋण पूँजी का उपयोग कर रही है।
- बी.एच.ई.एल के स्वामित्व अनुपात की स्थिति संतोषजनक है क्योंकि कुल सम्पत्तियों में स्वामित्व कोष लगभग 36 प्रतिशत है तथा शेष बचा हुआ भाग बाहरी विनियोगकर्ताओं द्वारा कुल ऋण में विनियोग किया गया है। बाहरी विनियोगकर्ताओं में दीर्घकालीन एवं अल्पकालीन विनियोगकर्ताओं का समावेश है।
- कम्पनी की दीर्घकालीन शोधन क्षमता की स्थिति संतोषजनक है क्योंकि कम्पनी के दीर्घकालीन ऋण कुल सम्पत्तियों की तुलना में कम हैं। कम्पनी के दीर्घकालीन ऋण औसतन लगभग 10 प्रतिश्त के आसपास है, कम्पनी आसानी से दीर्घकालीन ऋण का भुगतान कर सकती है। लेकिन कम्पनी दीर्घकालीन ऋण पूँजी का लाभ नहीं उठा रही है। जबकि कम्पनी की स्थिति अच्छी है, इसकी प्रत्याय दर भी अधिक है ऐसी स्थिति में कम्पनी को दीर्घकालीन ऋण पूँजी का लाभ उठाना चाहिए।
- चालू दायित्वों की स्थिति कुल सम्पत्तियों की तुलना में संतोषजनक है। क्योंकि चालू दायित्व औसतन 50 प्रतिशत के आस पास हैं ऐसी स्थिति में कम्पनी अपने चालू दायित्वों का आसानी से भुगतान कर सकती है। इसलिए कम्पनी की अल्पकालीन शोधन क्षमता की स्थिति भी संतोषजनक है। क्योंकि कम्पनी के पास पर्याप्त मात्रा में कुल सम्पत्तियाँ हैं।
- बी.एच.ई.एल के निधि ऋण का कुल पूँजीकरण से अनुपात की स्थिति संतोषजनक है। शोध विषय अध्ययन की अवधि के दौरान दीर्घकालीन ऋण कुल पूँजीकरण का 17.90 प्रतिशत हैं जो कि बहुत ही कम हैं। इससे स्पष्ट होता है कि दीर्घकालीन ऋण की पूँजी पूर्ण रूप से सुरक्षित है तथा कम्पनी के द्वारा दीर्घकालीन ऋण कम उपयोग किए जा रहे हैं। इस स्थिति का बाहरी पक्षकारों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है क्योंकि कम्पनी की दीर्घकालीन शोधन क्षमता अच्छी है तथा उनकी राशि पूर्ण रूप से सुरक्षित है।

सुझाव –

- बी.एच.ई.एल को अपनी चालू सम्पत्तियों में वृद्धि करनी चाहिए। तथा चालू दायित्वों में कमी करनी चाहिए। इस हेतु कम्पनी को स्वामित्व कोषों से भी चालू सम्पत्तियों का प्रबंध करना चाहिए। जिससे इस अनुपात में सुधार हो सके।
- बी.एच.ई.एल को तरल अनुपात की वर्तमान स्थिति को भविष्य में बनाए रखना चाहिए। जिससे कम्पनी को तरलता का लाभ मिल सके। यह अनुपात अप्रत्यक्ष रूप से कम्पनी की उधार लेने की क्षमता एवं धन सम्पदा में वृद्धि कर रहा है।
- पूर्ण रोकड़ की वर्तमान स्थिति को भी मज़बूत करते हुए इस स्तर को भविष्य में बनाए रखना चाहिए जिससे की कम्पनी की अल्पकालीन शोधन क्षमता बनी रहे।
- बी.एच.ई.एल को दीर्घकालीन ऋण पूँजी एवं अल्पकालीन ऋण पूँजी में वृद्धि करनी चाहिए तथा कम्पनी को ऋण पूँजी के मिश्रण का लाभ उठाना चाहिए। यदि कम्पनी अल्पकालीन ऋण पूँजी का उपयोग करती है। तो उसके व्यवसाय पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा तथा कम्पनी की धन सम्पदा में वृद्धि होगी
- बी.एच.ई.एल की कुल सम्पत्तियों को देखते हुए ऋण पूँजी में और अधिक वृद्धि करनी चाहिए तथा कुल ऋण पूँजी का लाभ उठाना चाहिए। क्योंकि कम्पनी की ऋण पूँजी पूर्ण रूप से सुरक्षित भी है और कम्पनी की आर्थिक स्थिति भी अच्छी है।
- कम्पनी की आर्थिक स्थिति को देखते हुए ऋण पूँजी का अधिक उपयोग करना चाहिए क्योंकि कम्पनी की प्रत्याय दर ब्याज दर से अधिक है। ऐसी स्थिति में कम्पनी को ऋण पूँजी का अधिक उपयोग कर इसका लाभ उठाना चाहिए। अत: कम्पनी को अपनी ऋण पूँजी में वृद्धि करनी चाहिए।
- कम्पनी को अपनी वर्तमान स्थिति को भी भविष्य के लिए बनाए रखना चाहिए इस हेतु कम्पनी को वर्तमान स्थिति को अत्याधिक मज़बूत करना चाहिए। जिससे कि भविष्य में भी कम्पनी की अल्पकालीन शोधन क्षमता संतोषजनक रह सके।
- बी.एच.ई.एल को स्थायी लागत वाली पूँजी की मात्रा को बढ़ाना चाहिए। क्योंकि कम्पनी के पास परिवर्तनशील लागत वाली पूँजी अधिक मात्रा में है। तथा कम्पनी के पास संचय की राशि भी अधिक है। इन तथ्यों को

ध्यान में रखकर कम्पनी को स्थायी पूँजी में वृद्धि करनी चाहिए। जिससे कम्पनी की धन सम्पदा में वृद्धि हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल, जे.के. एवं अग्रवाल, आर.के. (1998), 'प्रबंधकीय लेखांकन' रमेश बुक डिपो जयपुर।
2. अग्रवाल, जी.पी. एवं गुप्ता, के.सी. (1985), 'वित्तीय लेखांकन' एम.जे पब्लिकेशन मेरठ।
3. अग्रवाल, एम.आर. (1998), 'प्रबंध लेखांकन' मयूर पेपर बैक्स नोएडा।
4. अग्रवाल, एम.डी. एवं अग्रवाल, एन.पी. (2000), 'वित्तीय प्रबंध' रमेश बुक डिपो आगरा।
5. अग्रवाल, एम.डी. (2005), 'वित्तीय प्रबंध' रमेश बुक डिपो जयपुर।
6. अग्रवाल, एम.डी. एवं अग्रवाल, एन.पी. (1988–89), 'वित्तीय प्रबंध' रमेश बुक डिपो आगरा।
7. आर,के.शर्मा. (1992), 'प्रबंधकीय लेखांकन' कल्यानी पब्लिकेशन।
8. कुलश्रेष्ठ, आर.एस. (1987), 'निगमों का वित्तीय प्रबंध' साहित्य भवन आगरा।
9. कुलश्रेष्ठ, आर.एस. (2001), 'वित्तीय प्रबंध' साहित्य भवन पब्लिकेशन।
10. कुलश्रेष्ठ, आर.एस. एवं राठी,ए.एम. (2005), 'वित्तीय प्रबंधन' साहित्य भवन नई दिल्ली।
11. कुलश्रेष्ठ, आर.एस. एवं राठी, एम.जे. (2008), 'वित्तीय प्रबंध' एस बीपीडी पब्लिशिंग हाउस आगरा
12. कुमार, राजीव. (2011), 'वित्तीय लेखाकंन' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
13. खनूजा, एस.एस. एवं करीम, ए. (2011), 'उच्चतम निगमीय लेखे' एस.बी.पी.डी साहित्य भवन आगरा।
14. गुप्ता, एस.पी. (1992), 'प्रबंधकीय लेखांकन विधि' साहित्य भवन आगरा।
15. गुप्ता, एस.पी. एवं अग्रवाल, वी.एम. (1994), 'एडवान्स एकाउंट्स' शिवलाल अग्रवाल एडं कम्पनी इन्दौर।
16. गुप्ता, एस.पी. (2005), 'वित्तीय प्रबंध' साहित्य भवन आगरा।
17. गुप्ता, एस.पी. (2008), 'प्रबंधकीय निर्णय हेतु लेखांकन' साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।
18. ठाकुर, आर.एस. (1990), 'कम्पनी विधि' युगबोध प्रकाशन रायपुर छत्तीसगढ़।
19. जैन, एस.सी. (2010), 'भारतीय कम्पनी अधिनियम' कैलाश पुस्तक सदन भोपाल।
20. वर्मा, जी.डी. शर्मा. आर.के. एवं गुप्ता, शशि. के. (2013), 'वित्तीय प्रबंधन' कल्याणी पब्लिशन्स नई दिल्ली।
21. सिंह, एच.के. (2001), 'वित्तीय प्रबंधन' साहित्य भवन आगरा।
22. सक्सेना, एस.सी. (2002), 'प्रबंध के सिद्धान्त' साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा।
23. शर्मा, डी.सी. (1986–87), 'वित्तीय प्रबंध के मूल तत्व' केदारनाथ रामनाथ मेरठ।
24. शर्मा, वीरेन्द्र. प्रकाश. (2013), 'रिसर्च मेथोडोलॉजी' पंचशील प्रकाशन जयपुर।
25. Annual Reports of BHEL from year 2005-06 to 2014-16

****

ग्वालियर व्यापार मेला के आर्थिक प्रभाव का विश्लेषण

डॉ. दर्शना राठौर *

शोध सारांश – ग्वालियर व्यापार मेला इस क्षेत्र का ही नहीं, वरन् उत्तर भारत में प्रगति मैदान के भारतीय व्यापार मेला प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा आयोजित मेले के बाद सबसे बड़ा एवं कई अर्थों में अपने प्रकार का एक अद्वितिय मेला बन गया है, एवं ग्वालियर तथा चंबल संभाग की सामाजिक, आर्थिक एवं साँस्कृतिक धरोहर का परिचायक एवं केन्द्र बिन्दु है। इस अंचल की पूरी जनता ग्वालियर मेले में प्रतिवर्ष नियमित रूप से भाग लेती है। वर्तमान समय में यह मेला लगभग 30–40 दिन की अवधि का होता है। इसका प्रांरभ पशु मेले के रूप में होता है तथा समापन व्यापार मेले के रूप में होता है । इसमें सम्पूर्ण राष्ट्र के व्यापारी भाग लेते है।

शोधार्थी के अध्ययन का उद्देश्य ग्वालियर व्यापर मेले के आर्थिक प्रभाव का विश्लेषण करना है। इस कार्य के लिए शोधार्थी द्वारा दो उद्देश्यों ग्वालियर व्यापार मेला का व्यापारियों पर पड़ने वाले आर्थिक प्रभाव का अध्ययन एवं ग्वालियर व्यापार मेला का उपभोक्ताओं पर पड़ने वाले आर्थिक प्रभाव का अध्ययन को शामिल किया है तथा दो परिकल्पनाओं ग्वालियर व्यापार मेला एवं व्यापारियों के मध्य नकारात्मक संबंध एवं ग्वालियर व्यापार मेला एवं उपभोक्ताओं के मध्य नकारात्मक संबंध को शामिल किया है। शोधार्थी द्वारा निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर किए गए अध्ययन में दोनों परिकल्पनाएँ सही सिद्ध हुई हैं।

शब्द कुँजी – उपभोक्ता (सैलानी), व्यापारी एवं आर्थिक प्रभाव।

प्रस्तावना – ग्वालियर व्यापार मेले का प्रारंभ पशु मेले के रूप में वर्ष 1905 में सिंधिया घराने के सदस्य एवं पूर्व ग्वालियर राज्य के तत्कालीन महाराजा स्व.माधौराव शिन्दे जी द्वारा कराया गया था। उनकी दूरदर्शिता एवं परिकल्पना के परिणाम स्वरूप आज यह ग्वालियर व्यापार मेला के रूप में परिवर्तित होकर विख्यात हो रहा है। यह मेला प्रारंभ में नगर के प्रसिद्ध सागरताल के पास के मैदान में लगाया जाता था। इस स्थान का चयन वर्ष 1918 में मेले का स्थान बदलकर वर्तमान मेला परिसर में लगाया जाने लगा। यह मेला लगभग 104 एकड़ के विशाल भू–भाग पर फैला हुआ है। मेला परिसर में 1250 पक्की दुकानें, 500 पक्के चबूतरें है। परिसर में एक खुला रंगमंच एवं एक कला मंदिर भवन भी है, जिसमें मेला अवधि के दौरान साँस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं एवं देश–विदेश के कलाकार अपनी प्रस्तुती देते हैं।

ग्वालियर व्यापार मेले से व्यापारियों को आय होती है, किन्तु साथ ही मेला परिसर में अपनी दुकान लगाने के संबंध में अनेक प्रकार के व्यय भी होते है, जिसका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष आर्थिक प्रभाव व्यापारियों, उपभोक्ताओं एवं समाज पर पड़ता है। अत: शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध कार्य में ग्वालियर व्यापार मेला का व्यापारियों एवं उपभोक्ताओं पर पड़ने वाले आर्थिक प्रभाव का अध्ययन किया जा रहा है।

साहित्य रूपरेखा – ग्वालियर व्यापार मेला पर सर्वप्रथम शोधार्थी द्वारा स्वंय ही शोध कार्य किया गया है। जिसका शीर्षक 'श्रीमंत माधवराव सिंधिया ग्वालियर व्यापर मेला का आर्थिक एवं वित्तीय अध्ययन' है। इस शोध प्रबंध पर शोधार्थी द्वारा वर्ष 2007 में शोध उपाधि प्राप्त की गई। शोधार्थी के अतिरिक्त अन्य किसी शोधार्थी द्वारा इस क्षेत्र में कोई भी कार्य वर्तमान समय तक नहीं किया गया है। अत: शोधार्थी द्वारा अपने शोध कार्य में अपने ही शोध प्रबंध की सहित्य रूपरेखा उल्लेखित है।'

शोध प्रविधि – किसी भी शोध कार्य को संमकों के बिना पूर्ण नहीं किया जा सकता। अत: शोध कार्य में संमकों के संकलन का महत्वपूर्ण स्थान है। शोधार्थी द्वारा शोध कार्य के लिए संमको का संकलन प्राथमिक एवं द्वितीय संमको के आधार पर किया गया है। जिसमें शोधार्थी द्वारा मेला व्यापारियों एवं सैलानियों से साक्षात्कार द्वारा प्राथमिक संमको का संकलन किया गया एवं द्वितिय समकों का संकलन मेला प्रधिकरण द्वारा प्रकाशित विवरण पत्रिका, दैनिक समाचार पत्र, जर्नल, शोध प्रबंध एंव बेवसाइट द्वारा किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. ग्वालियर व्यापार मेला का व्यापारियों पर पड़ने वाले आर्थिक प्रभाव का अध्ययन।
2. ग्वालियर व्यापार मेला का उपभोक्ताओं पर पड़ने वाले आर्थिक प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना –

1. ग्वालियर व्यापार मेला एवं व्यापारियों के मध्य नकारात्मक संबंध।
2. ग्वालियर व्यापार मेला एवं उपभोक्ताओं के मध्य नकारात्मक संबंध।

निर्वचन एवं विश्लेषण – व्यापारियों द्वारा दुकान पर किया जाने वाला व्यय शीर्षक में ग्वालियर व्यापार मेला के प्रमुख पाँच सेक्टर के व्ययों का विस्तृत वर्णन किया गया है। यह पाँच सेक्टर इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर, मनोरंजन सेक्टर, कपडा सेक्टर, फर्नीचर सेक्टर एवं होटल तथा रेस्टोरेन्ट सेक्टर हैं।

इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर ग्वालियर व्यापार मेले का एक महत्वपूर्ण अंग है। मेले में इलेक्ट्रॉनिक संसार की लगभग सभी कम्पनियॉ बढ़–चढ़कर हिस्सा लेती है, इसमें विडियोकॉन, फिलिप्स, एल.जी.सेमसंग, आई.एफ.बी,

* फेकल्टी ऑफ कॉमर्स, वी.आर.जी.पी.जी कॉलेज, मुरार, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

ब्हर्लपूल, अकाई, हायर, सोनी आदि प्रमुख है। यह सभी अपने नये नये उत्पाद जैसे- फ्रीज, वॉशिंग मशीन, सी.डी.प्लेयर, एल.ईडी., होम थियेटर आदि आकर्षक मूल्यों पर लाती है।ग्वालियर व्यापार मेला में मनोरंजन के लिए अपना एक अलग स्थान है। जिसमें मनोरंजन के लिए विभिन्न प्रकार के झूले, सर्कस, जादू का खेल, मौत का कुआँ आदि महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

मेले में लगाए जाने वाले कपडा सेक्टर में ग्वालियर के साथ-साथ सम्पूर्ण भारतवर्ष के व्यापारी अपनी दुकाने लगाते है। इसमें कश्मीर, राजस्थान, गुजरात, के साथ-साथ अन्य राज्यों की संस्कृति की झलक परिधानों के द्वारा देखने को मिलती है। फर्नीचर सेक्टर में फर्नीचर व्यापारी अपनी नई रेंज के साथ दुकाने लगाते हैं। इसमें लोहे एवं लकड़ी का डबल बेड, सिंगल बेड, सोफा सेट, सोफा कम बेट सेट, डायनिग टेबल, ड्रेसिंग टेबल, महाराजा कुर्सियाँ आदि प्रमुख है।

ग्वालियर व्यापार मेला परिसर में होटल एवं रेस्टोरेन्ट सेक्टर में विगत 50 वर्षो से यादव चाट भण्डार एवं हरिद्वार चाट भण्डार के व्यापारी अपनी दुकान लगाते आ रहें हैं। इसके साथ ही चोटी वाला,साउथ इंडियन कैफे, चायनीज हाउस भी मेला सैलानियों के लिए जायकेदार व्यजंन लेकर आते है। ग्वालियर व्यापार मेला में भेलपूरी, पापड़, खजला एवं सॉफ्टी का भी महत्वपूर्ण स्थान है। अत: मेला सैलानियों के लिए सभी प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन ग्वालियर व्यापार मेला में उपलब्ध रहते है।

शोधार्थी द्वारा अध्ययन के लिए इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर में एल.ई.डी. एवं सी.डी.प्लेयर (साउन्ड सिंस्टम) मनोरंजन सेक्टर में झूला सेक्टर, कपड़ा सेक्टर में रेडीमेड गार्मेन्ट एवं होटल/रेस्टॉरेन्ट सेक्टर में भेलपूरी, सॉफ्टी आदि के व्यापारियों की आय-व्यय को शामिल किया गया है।

तालिका -1 व चार्ट-1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका -1 में विभिन्न सेक्टर के व्यापारियों द्वारा मेले में दुकान लगाने के संबंधमें किए जाने वाले व्ययों को दर्शाया गया है। इन व्ययों में दुकान किराया, बिजली किराया, यातायात व्यय, साजसजा एवं रख रखाव पर किए जाने वाले व्ययों को शामिल किया गया है।

तालिका 1 से स्पष्ट है, कि इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर के व्यापारी दुकान किराये के रूप में 12000 रूपये, बिजली किराया 10,000 रूपये, यातायात व्यय 5000 रूपये, साज सज्जा एवं रखरखाव पर क्रमश: 25000 एवं 20000 रूपये व्यय करता है। इस प्रकार इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर के व्यापारी द्वारा दुकान पर किया जाने वाला कुल व्यय लगभग 72000 रूपये होता है मनोरंजन सेक्टर के व्यापारियों द्वारा दुकान किराया 28000 रूपये, बिजली किराया 23000 रूपये, यातायात व्यय पर 6000 रूपये, साज सज्जा व्यय पर 8000 रूपये एवं रखरखाव पर 10000 रूपये व्यय किए जाते है। कपड़ा सेक्टर के व्यापारियों द्वारा दुकान किराया 10,000 रूपये, बिजली किराया 6000 रूपये, साज सज्जा व्यय पर 10,000 रूपये एवं रख रखाव पर 10000 रूपये व्यय किए जाते है। इसी प्रकार फर्नीचर सेक्टर के व्यापारियों द्वारा दुकान किराया 12000 रूपये बिजली किराया 8000 रूपये, यातायात व्यय 6000 रूपये, साज सज्जा व्यय 12000 रूपये एवं रखरखाव पर 10000 रूपये व्यय किए जाते है तथा होटल/रेस्टोरेंन्ट सेक्टर के व्यापारी द्वारा दुकान किराया के रूप में 10000 रूपये, बिजली किराया 6000 रूपये, यातायात व्यय 8000 रूपये, साज सज्जा व्यय 15000 रूपये एवं रख रखाव पर 12000 रूपये व्यय किए जाते है।

इस प्रकार ग्वालियर व्यापर मेला में विभिन्न सेक्टर के व्यापारियों द्वारा दुकान लगाने के संबंध में किया जाने वाला कुल व्यय इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर में 72000, मनोरंजन सेक्टर (झूला सेक्टर) में 75000, कपडा सेक्टर में 42000, फर्नीचर सेक्टर में 48000, एवं होटल/रेस्टोरेन्ट सेक्टर में 51000 है।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है मनोरंजन सेक्टर के व्यवसायी का कुल व्यय सर्वाधिक है।

तालिका 2 व चार्ट-2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका 2 से स्पष्ट है कि 20 वर्ष से कम आयुवर्ग के उपभोक्ताओं की रूचि सबसे कम फर्नीचर सेक्टर एवं कपड़ा सेक्टर में है, जो कि क्रमश: 20 प्रतिशत एवं 30 प्रतिशत है। इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर में इस आयुवर्ग के लोगों की रूचि अपेक्षाकृत अधिक है। जो 50 प्रतिशत है, एवं सर्वाधिक रूचि मनोरंजन सेक्टर में है, जो 100 प्रतिशत है, चुँकि इस आयुवर्ग में बच्चे एवं युवा दोनों ही शामिल है। इसलिए इनकी रूचि मेला में मनोरंजन सेक्टर में सर्वाधिक होती है।

20 वर्ष से 40 वर्ष की आयुवर्ग में युवावर्ग आता है। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है, कि इस आयुवर्ग की रूचि मनोरंजन सेक्टर एवं इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर में अधिक है, जो क्रमश: 90 प्रतिशत एवं 80 प्रतिशत है इसके पश्चात इस आयुवर्ग के लोगो की रूचि फर्नीचर सेक्टर में देखने को मिलती है जो 60 प्रतिशत तथा सबसे कम रूचि इस आयुवर्ग की कपड़ा सेक्टर में है जो मात्र 30 प्रतिशत ही है।

उपरोक्त तालिका में सबसे अंत में शोधार्थी ने 40 वर्ष से अधिक के आयुवर्ग के उपभोक्ताओं को शामिल किया है। इस आयुवर्ग में प्रोढ़ा अवस्था एवं वृद्धा अवस्था के उपभोक्ता आते है। उपरोक्त टेबल से स्पष्ट है कि इस आयुवर्ग के उपभोक्ताओं की रूचि भी मनोरंजन सेक्टर में सर्वाधिक है, जो 80 प्रतिशत है। इसके पश्चात इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर एवं फर्नीचर सेक्टर मे इस आयुवर्ग की रूचि है जो क्रमश: 60 प्रतिशत एवं 50 प्रतिशत दर्शायी गई है सबसे कम रूचि इस आयुवर्ग के उपभोक्ताओ की कपड़ा सेक्टर में है जो मात्र 20 प्रतिशत है।

तालिका एवं ग्राफ 2 से स्पष्ट है, कि सभी आयु वर्ग के उपभोक्ताओं की सर्वाधिक रूचि ग्वालियर व्यापार मेला के मनोरंजन सेक्टर में है एवं सबसे कम रूचि कपडा सेक्टर में है।

तालिका 3 - व्यापारियों की आय

व्यापारी	आय (रूपयें)
इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर	85000
मनोरंजन सेक्ट	90000
रकपडा सेक्टर	35000
फर्नीचर सेक्टर	40000
होटल/रेस्टोरेन्ट सेक्टर	40000

चार्ट-3 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तलिका 3 से स्पष्ट है, कि इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर के व्यापारियों के मेला अवधि में लगभग रू 85000 आय होती है। मनोरंजन सेक्टर के व्यापारियो को लगभग रू 90,000 आय होती है कपडा सेक्टर के व्यापारियों को लगभग रू 35000 की आय होती है तथा फर्नीचर सेक्टर एवं होटल/रेस्टॉरेन्ट सेक्टरों के व्यापारियों की सम्पूर्ण मेला अवधि में क्रमष: 40,000, 40,000 रूपये की आय होती है।

परिणाम - शोधार्थी द्वारा ग्वालियर व्यापार मेला के आर्थिक प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए ग्वालियर व्यापार मेला के इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर,

मनोरंजन सेक्टर, कपडा सेक्टर, फर्नीचर सेक्टर एवं होटल/रेस्टोरेन्ट सेक्टर के व्यापारियों की आय व्यय एवं उपभोक्ताओं की इन सेक्टरों के प्रति रूचि का विश्लेषण किया गया। विश्लेषण करने के पश्चात् यह ज्ञात हुआ कि इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर एवं मनोरंजन सेक्टर के व्यापारियों की आय, व्यय की तुलना में कुछ ही अधिक है, जबकि अन्य सेक्टरों की आय, व्यय की तुलना कम है। जिस कारण व्यापारियों को मेला परिसर में दुकान लगाने पर कोई लाभ नहीं होता हैं । इसी प्रकार मेला परिसर में आ रहे उपभोक्ताओं (सैलानियों) की रूचि भी कम होती जा रही है, मेला सैलानी सिर्फ मेला घूमने ही आते हैं। उनकी मेले से वस्तुएँ खरीदने के पक्ष में रूचि कम ही देखने को मिलती है। इसका कारण मेला में विभिन्न सेक्टरों के उत्पादों में मिल रही कम छूट एवं बढती हुइ कीमतें है। परिणाम स्वरूप व्यापारी वर्ग एवं उपभोक्ता वर्ग दोनों ही ग्वालियर व्यापार मेला से आर्थिक रूप से प्रभावित होते है।

परिकल्पना 1 – ग्वालियर व्यापार मेला प्राधिकरण द्वारा चार्ज किया जाने वाला दुकान किराया व बिजली किराय अधिक होने के परिणाम स्वरूप व्यापारियों द्वारा मेला परिसर में दुकान लगाने पर किया जाने वाला व्यय, आय की तुलना में अधिक होता है। जिस कारण व्यापारी वर्ग को कई बार हानि भी वहन करनी पडती है। अत: यहॉ परिकल्पना 1 ग्वालियर व्यापार मेला एवं व्यापारियों के मध्य नकारात्मक संबंध सही सिद्ध होता है।

परिकल्पना 2 – वर्तमान में ग्वालियर व्यापार मेला परिसर में घुमने आने वाले उपभोक्ताओं (सैलानियों) की संख्या में कमी हुई है तथा उपभोक्ताओं की मेला परिसर में लगने वाले विभिन्न सेक्टरों (मनोरंजन सेक्टर को छोडकर) के प्रति रूचि में भी कमी हुई है अत: शोधार्थी द्वारा ली गई परिकल्पना 2 ग्वालियर व्यापार मेला एवं उपभोक्ता के मध्य नकारात्मक संबंध सही सिद्ध हुई।

सुझाव –

1. ग्वालियर व्यापार मेला प्राधिकरण द्वारा व्यापारियों से लिया जाने वाला दुकान किराया कम चार्ज किया जाना चाहिए। जिससे उत्पादों की कीमतें कम की जा सकें।
2. ग्वालियर व्यापार मेला प्राधिकरण द्वारा होटल/रेस्टॉरेन्ट सेक्टर के व्यापारियों की व्यंजनों को गुणवता बढाने एवं साफ सफाई के विशेष निर्देष दिए जाने चाहिए। जिससे उपभोक्ताओं की रूचि इस ओर अधिक बढ़े।
3. ग्वालियर व्यापार मेला प्राधिकरण द्वारा समय समय पर ऐसे सार्थक प्रयास किए जाने चाहिए, जिससे व्यापारी वर्ग एवं उपभोक्ता वर्ग दोनो ही लाभान्वित हो।

निष्कर्ष – शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र 'ग्वालियर व्यापार मेला के आर्थिक प्रभाव का अध्ययन' में ग्वालियर व्यापार मेला के कुछ प्रमुख सेक्टर को अध्ययन की दृष्टि से शामिल किया गया है शोधार्थी द्वारा अध्ययन के उद्देश्यो को पूरा करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर, मनोरंजन सेक्टर, कपडा सेक्टर, फर्नीचर सेक्टर एवं होटल/रेस्टॉरेन्ट सेक्टर के व्यवसायियों द्वारा ग्वालियर व्यापार मेला में दुकान लगाने पर किए जाने वाले व्ययों का अध्ययन किया, साथ ही मेला परिसर में घूमने आने वाले सैलानियों (उपभोक्ताओं) की इन सेक्टर के प्रति रूचि का अध्ययन किया। इस अध्ययन से शोधार्थी को ज्ञात हुआ कि, व्यापारियों द्वारा मेला प्राधिकरण में दुकान लागाने पर किया जाने वाला व्यय आय की तुलना में अधिक हो रहा है। व्यय अधिक होने के कारण व्यापारी अपने सामान का मूल्य अधिक कर देते है। इस कारण मेले में घूमने आने वाले उपभोक्ता वर्ग की रूचि इन सेक्टरों में कम होती जा रही है। जिससे व्यापारियों को कई बार घाटा भी उठाना पड़ता है। इस कारण व्यापारी वर्ग वर्तमान में ग्वालियर व्यापार मेले में दुकान लगाने में कम सहमत हो रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आर्य, एस.पी.,सामाजिक सर्वेक्षण की पद्तियाँ, साहित्य भवन, आगरा।
2. डॉ. द्विवेदी एवं डॉ. शुक्ला, रिसर्च मेथोडोलॉजी, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर वर्ष 2014
3. जैन, बी.एम.,रिसर्च मैथोडोलॉजी, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, वर्ष 2015
4. डॉ. कपिल, एच.के, अनुसंधान विधियाँ, हर प्रसाद भार्गव, पुस्तक प्रकाशन, आगरा, वर्ष 2010

पत्र–पत्रिकाएँ–

1. ग्वालियर व्यापार मेला (वार्षिक), ग्वालियर व्यापार मेला का अधिकृत प्रकाशन।
2. ईनर न्यूज,समाचार पत्रिका (साप्ताहिक) मेला अवधि में।
3. वार्षिक विवरण, ग्वालियर व्यापार मेल प्राधिकरण ग्वालियर।
4. स्मृति(वार्षिक पत्रिका), ग्वालियर व्यापार मेला, ग्वालियर।

शोध प्रबंध –

1. राठौर, दर्शना, 'श्रीमंत माधवराव सिंधिया ग्वालियर व्यापार मेला का आर्थिक एवं वित्तीय अध्ययन' जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर, वर्ष 2007

बेवसाईट –

1. www.gwaliortrdefair.com
2. www.gtf@gwalior tradefair.com

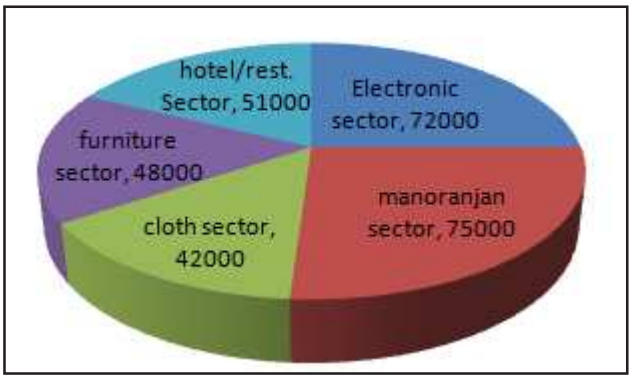
तालिका –1

व्यापारियों द्वारा दुकान पर किया जाने वाला व्यय

व्यापारी	दुकान किराया	बिजली किराया	यातायात व्यय	साज सज्जा व्यय	रख रखाव (कर्मचारी) व्यय	कुल व्यय
इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर	12000	10000	5000	25000	20000	72000
मनोरंजन सेक्टर	28000	23000	6000	8000	10000	75000
कपडा सेक्टर	10000	6000	6000	10000	10000	42000
फर्नीचर सेक्टर	12000	8000	6000	12000	10000	48000
होटल/रेस्टोरेन्ट सेक्टर	10000	6000	8000	15000	12000	51000

स्त्रोत – वार्षिक विवरण, ग्वालियर व्यापार मेला प्राधिकरण, ग्वालियर ।

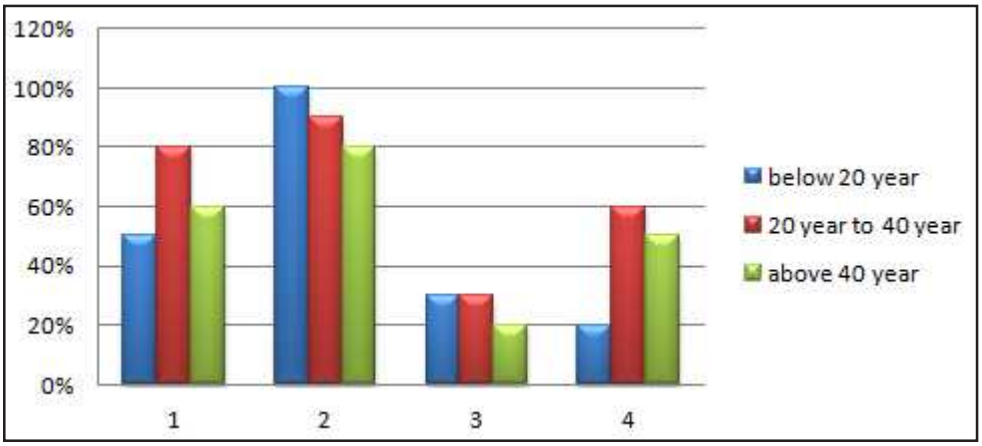
चार्ट – 1



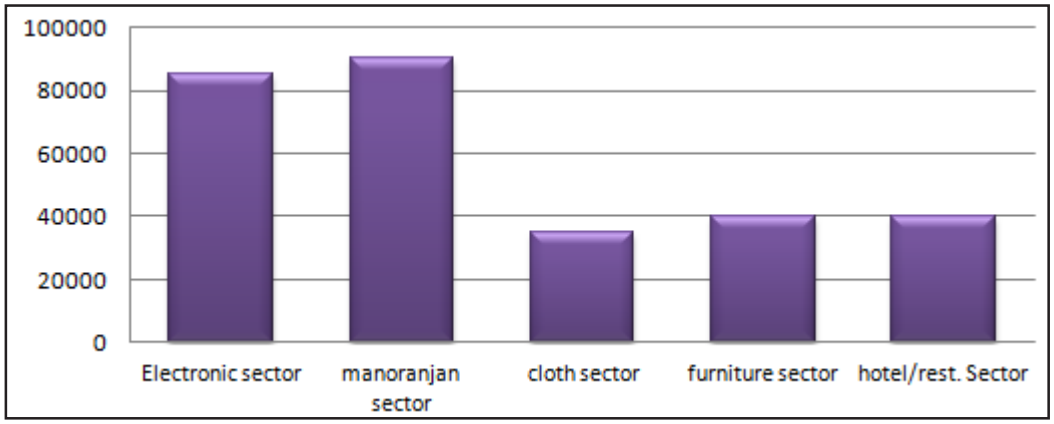
तालिका 2
उपभोक्ता की रूचि (प्रतिशत में)

उपभोक्ता (आयुवर्ग में)	इलेक्ट्रॉनिक सेक्टर	मनोरंजन सेक्टर	कपडा सेक्टर	फर्नीचर सेक्टर
20 वर्ष से कम	50	100	30	20
20 वर्ष– 40 वर्ष	80	90	30	60
40 वर्ष से अधिक	60	80	20	50

चार्ट – 2



चार्ट – 3



****

लघु एवं मध्यम प्रकार के व्यापार में वित्तीय प्रबंधन

डॉ. देवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय * आशीष सिंह **

प्रस्तावना – किसी भी व्यापार की मूल क्रियाओं का आधार स्तंभ वित्त माना जाता है। विशेषकर उत्पादन एवं विपणन सम्बन्धी क्रियाओं में वित्त उसी प्रकार का कार्य करता है, जो मशीन को चलानें में तेल का या मानव शरीर को चलाने में रक्त का होता है। वित्त के आभाव में न तो कोई व्यापार स्थापित किया जा सकता है और न संचालित व विकसित किया जा सकता है। वित्त की आवश्यकता उन क्षेत्रों मे भी होती है,जहां किसी न किसी प्रकार की आर्थिक क्रियाएं सम्पन्न होती हैं। हस्बैण्ड व **डाकरी(**Husband and Dockery) के शब्दों में,' आर्थिक क्रिया के बहाव को निर्देशित करने और उसके निर्विघ्न संचालन के लिए कुछ तो होना चाहिए। वित्त ही ऐसा साधन है, जो इस कार्य को सन्पन्न कर सकता है।'

लघु एवं मध्यम प्रकार के व्यापार जिनकी आधारशिला छोटी मात्रा में उपलब्ध पूंजी से रखी जाती है। ऐसे व्यापार में वित्तीय प्रबंधन का महत्व और बढ जाता है, उपलब्ध पूंजी का इस प्रकार से प्रयोग किया जाय कि व्यापार का सही तरीके से संचालन हो सके। ऐसा तभी सम्भव है, जब व्यापारियों द्वारा वित्त का सही प्रकार से प्रबन्ध किया जाए।

व्यापार में किन–किन स्थानों पर वित्त की आवश्यकता है,और भविष्य में किन–किन स्थानों में वित्त की आवश्यकता महसूस की जाएगी। यथा सम्भव सही पूर्वानुमान लगाकर उनकी पूर्ति के लिए स्त्रोंतो की व्यवस्था करना विनियोक्ताओं द्वारा प्रदत्त फण्ड का अधिकतम प्रभावशाली ढंग से उपयोग करना। छोटे एवं मध्यम प्रकार के व्यापारियों के लिए एक बहुत बडी चुनौती है। व्यापारी द्वारा वित्त सम्बन्धी लिए गए निर्णय उसके व्यापार की भविष्य की दशा एवं दिशा तय करते हैं।

वित्तीय प्रबन्ध वह प्रबंधकीय क्रिया है, जो फर्म को वित्तीय संसाधनों के नियोजन एवं नियंत्रण से सम्बन्धित है। दूसरे शब्दों में,यह व्यावसायिक उपक्रम के समग्र उद्धेश्य(मुख्यत: अंशधारियों की सम्पदा को अधिकतम करना) को पूरा करने के लिए सम्पत्तियों को प्राप्त करने, वित्तीय करने एवं प्रबन्ध करनें से सम्बन्धित है।

आधुनिक दुनिया में जहां पुस्तकीय लाभ की तुलना में धनात्मक रोकड प्रवाह अधिक महत्वपूर्ण है, वित्तीय प्रबंध को धनात्मक रोकड़ प्रवाह को सुनिश्चित करने के लिए व्यावसायिक उपक्रम के भविष्य के लिए नियोजन के रुप में भी परिभाषित किया जा सकता है। कुछ विशेषज्ञ वित्तीय प्रबन्ध को धन प्रबन्ध को विज्ञान कहते हैं।

Raymond chambers द्वारा दी गयी परिभाषा इस प्रकार है– 'वित्तीय प्रबन्ध में वित्तीय उद्देश्यों के लिए एक उपक्रम के वित्तीय संसाधनों को प्राप्त एवं प्रयोग करनें सम्बन्धी क्रियाओं के पूर्वानुमान, नियोजन, संगठन, निर्देशन, संयोजन एवं नियंत्रण को सम्मिलित किया जाता है।'

Phillippatus द्वारा दी गयी विस्तृत परिभाषा है– 'वित्तीय प्रबन्ध प्रबन्धकीय निर्णयों से सम्बन्धित है। जिसका परिणाम किसी फर्म के लिए अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन साख को प्राप्त करना तथा वित्तीयन करना है।'

यह परिभाषा उस स्थिति का वर्णन करती है, जो विशिष्ट सम्पत्तियों (या सम्पत्तियों के समूह)के चयन तथा एक उपक्रम के आकार एवं वृद्धि की विशिष्ट समस्या के चयन की आवश्यकता समझती है। इन निर्णयों का विश्लेषण कोषों के सम्भावित आगमन तथा प्रबन्धकीय निर्णयों पर उनके प्रभावों पर आधारित है।

जैन 1965, अपने शोध अध्ययन में विभिन्न वित्तीय संस्थागत उपक्रमों के प्रदर्शन का अध्ययन करते हुए यह पाया कि वित्तीय सहायता प्रदान करने वाले उपक्रम लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों को वित्तीय सहायता प्रदान करनें के मामले में उनका प्रदर्शन संतोषजनक नहीं है। जबकि वृहद उपक्रमों को वित्तीय सहायता प्रदान करने में उनका प्रदर्शन का स्तर उच्च रहा है। जो प्रदर्शित करता है कि वित्तीय संस्थान वृहद उपक्रमों को वित्तीय सहायता देने में ज्यादा रुचि लेती है, अपेक्षाकृत लघु एवं मध्यम उपक्रमों के। Jeswal 2012, भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों की भूमिका पर अपना विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि देश की आर्थिक एवं सामाजिक विकास में लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों की महत्वपूर्ण भूमिका है, कमजोर अर्थव्यवस्था एवं मंदी काल में ये उपक्रम बहुत तेजी से उभरकर सामने आये हैं। अर्थव्यवस्था के कुल सकल औद्योगिक मूल्य में इनका योगदान 40% का है। यही कारण रहा है कि मंदी के समय जब सारे विश्व की अर्थव्यवस्था कमजोर पड़ गयी, हमारी अर्थव्यवस्था पर इसका उतना ज्यादा प्रभाव नहीं पडा।

Ministry of micro, small and medium enterprise (2008–09), में प्रस्तुत आंकडों के अनुसार, भारतीय अर्थव्यवस्था में 6% से ज्यादा की वृद्धि दर दर्ज की गयी, इस वृद्धि दर में से लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों का बहुत बडा योगदान रहा है क्योंकि उसी आंकडों से यह भी जानकारी प्राप्त होती है कि लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों में 2008–09 के दौरान उत्पादन वृद्धि दर 11% रही।

Prime minister task force की जनवरी 2010 में प्रस्तुत एक रिपोर्ट के अनुसार लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों को उचित मात्रा में, सही समय पर ऋण प्रदान करनें में विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

* एसो. प्रोफेसर –महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.) भारत

Nishant.P. द्वारा किए गए सर्वेक्षण में साझेदारी फर्म से जुडे हुए व्यापारियों में से 41.67% व्यापारियों को ऋण लेने में वित्तीय संस्थानों द्वारा बहुत ज्यादा कागजी कार्यवाही करवायी जाती है, उसके उपरान्त ही ऋण प्रदान किया जाता है सिक्युरिटी के रुप में पर्याप्त संपत्ति न होने की वजह से ऋण देने में विलम्ब किया जाता है जिससे उनके व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए इन्होंने अपने सुझाव में कहा है कि जिला उद्योग केन्द्र द्वारा लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों को लेखांकन संबंधी प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। सरकार द्वारा इन केन्द्रों में लेखांकन संबंधी प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि इन उपक्रमों केा लेखांकन एवं वित्त संबंधी कार्य करने में समस्या का सामना न करना पड़े। Sudha Venkatesh के अनुसार, पिछले दो वर्षों से लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों में स्थिर दर से वृद्धि दर्ज की गई है मगर केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा इनके विकास के लिए जो कदम उठाए गए हैं, वह पर्याप्त नहीं हैं। सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं का इन उपक्रमों को लाभ नहीं मिल पा रहा है, ये उपक्रम स्वयं की क्षमता पर ही अपना व्यवसाय बढानें का प्रयास कर रहें हैं।

Naidu and Chand(2011) ने लघु एवं मध्यम प्रकार के उपक्रमों के वित्तीय संबंधी समस्याओं को तीन श्रेणियों में बांटा है, वित्तीय उपलब्धता की समस्या, परिचालन की समस्या, और प्रशासनिक विक्रय देनदारी संबंधी समस्या। इन समस्याओं को दूर कर दिया जाए तो इन उपक्रमों का विकास बहुत तीव्र गति से होगा।

Economic survey of India (2009-10), के अनुसार भारत में लगभग 60 लाख लघु एवं मध्यम प्रकार के उद्योगों से 80 लाख लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ है, जो कि रोजगार के क्षेत्र में इन उपक्रमों के योगदान केा प्रकट करता है।

वित्तीय प्रबन्ध के दो आधारभूत पहलू हैं- कोषो की प्राप्ति तथा व्यावसायिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए इन कोषों का प्रभावी प्रयोग।

कोषों की प्राप्ति या उपलब्धता (Procurement of funds) – चूंकि कोष विभिन्न स्त्रोंतों से प्राप्त किये जा सकते हैं, अत: व्यावसायिक संस्थान उनकी प्राप्ति को हमेशा एक जटिल समस्या समझते हैं। एक व्यावसायिक उपक्रम के लिए कोषों के कूछ स्त्रोत हैं:

विश्वव्यापी प्रतियोगिता परिदृश्य में वित्त जुटाने के लिए उपलब्ध साधनों पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है वरन् संसाधनों को नवोन्मेशी विधियों उत्पादों के द्वारा जुटाना चाहिए, जो विनियोक्ताओं की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। हम सतत् रुप से कोषों के नवीन एवं रचनात्मक स्त्रोत देख रहें हैं, जो आधुनिक व्यावसायों को तेजी से बढने में सहायता कर रहे हैं। उदाहरण के लिए, कार्बन साख में व्यापार कोषों का एक अन्य स्त्रोत बन गया है।

विभिन्न स्त्रोतों से जुटाए गए कोषों की जोखिम, लागत एवं नियंत्रण की दृष्टि से भिन्न विशेषताएं होती हैं - कोषों की लागत, न्यूनतम होनी चाहिए तथा जोखिम एवं नियंत्रण के मध्य उचित सन्तुलन रखना चाहिए। नये व्यवसाय के वित्तीयन के लिए स्त्रोत का चुनाव करते समय एक अन्य महत्वपूर्ण विचारणीय घटक समता तथा ऋण के मध्य सन्तुलन रखना है, जो व्यवसाय के लिए उपयुक्त कोष संरचना सुनिश्चित कर सके।

कोषों का प्रभावशाली उपयोग (Effective Utilisation of funds) - वित्त-प्रबन्धक कोषों के प्रभावशाली उपयोग के लिए भी उत्तरदायी है। उसको उन बिन्दुओं की ओर इंगित करना होता है जहां कोष बेकार पड़े हैं तथा जहां कोषों का उचित उपयोग नहीं हो पा रहा है। सभी कोष निष्चित लागत तथा निश्चित जोखिम के आधार पर एकत्र किए जाते हैं। यदि इन कोषों का उपयोग इस प्रकार नहीं होता है कि इनके एकत्रीकरण की लागत की तुलना में वे अधिक आय उतपन्न कर सकें तो व्यापार चलाने का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। अत: कोषों का उचित एवं लाभदायक प्रयोग महत्वपूर्ण है। कोष प्रयोग के कुछ मुख्य पहलू हैं –

स्थायी संपत्तियों के लिए प्रयोग (Utilisation for fixed Assets) - कोषों का विनियोग इस ढंग से होना चाहिए ताकि कम्पनी अपनी वित्तीय शोधन क्षमता को बिना खोए इसका श्रेष्ठतम उपयोग कर सके। पूंजीगत बजटन (या विनियोग मूल्यांकन) नियोजन प्रक्रिया है, जो यह निर्धारित करने के लिए प्रयुक्त की जाती है कि क्या फर्म का दीर्घकालीन विनियोग, जैसे- नयी मशीनरी, मशीनरी का पुनर्संस्थापन , नवीन संयंत्र, नवीन उत्पाद और शोध विकास परियोजनाएं वांछनीय प्रत्याय(लाभ) प्रदान कर सकेंगी।

कार्यशील पूंजी का प्रयोग (Utilisation for working capital) – वित्तीय प्रबन्धक को पर्याप्त कार्यशील पूंजी (working capital) की आवश्यकता भी ध्यान में रखनी चाहिए। उसे यह सुनिश्चित करना होता है कि जब फर्म श्रेष्ठतम कार्यशील पूंजी के स्तर पर होने का लाभ प्राप्त कर रही होती है तो उसे अधिक मात्रा में कच्चे माल, ऋण तथा रोकड के रुप में कोषों को रोकना नहीं चाहिए।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन में सतना जिले के सभी लघु एवं मध्यम प्रकार के पंजीकृत, अपंजीकृत व्यापारिक प्रतिष्ठानों का चयन उत्तरदाता के रुप में किया जा रहा है। दैव निदर्शन विधि का प्रयोग करते हुए कुल लघु एवं मध्यम प्रकार के प्रतिष्ठानों में से 30 व्यापारिक प्रतिष्ठानों का चयन शोध के लिए किया गया है। अनुसूची के माध्यम से उत्तर प्राप्त किए गए, प्राप्त उत्तर को विश्लेषणात्मक रुप में परिणाम प्रस्तुत किया गया है। परिणामों के आधार पर आवश्यक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं।

उद्देश्य – वर्तमान समय में प्रतियोगिता का स्तर बहुत बढ गया है, ऐसी स्थिति में लघु एवं मध्यम प्रकार के व्यापार में वित्त संसाधन एवं उपयोगिता का सही प्रबंधन करना हर व्यापारी के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य है, प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य इस प्रकार है-

- व्यापारिक व्ययों के कम से कम करना जिससे लाभ अधिक हो सके।
- व्यापार के वित्तीय संसाधनों में से उचित संसाधन के चुनाव मे सहयोग प्रदान करना।
- वित्त का व्यापार में सही प्रबंधन एवं नियंत्रण करना।
- व्यापारिक जोखिमों को कम से कम करना जिससे लाभ अधिकाधिक हो सकें।
- वृहद व्यापारिक इकाइयों के मध्य लघु एवं छोटे क्षेत्र के व्यापारियों का अस्तित्व कायम रहे ऐसा प्रयास किया गया है।
- पूंजी बजटन की प्रक्रिया से व्यापारियों को अवगत करना।

आंकडों का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन के लिए सतना जिले के लघु एवं मध्यम प्रकार के व्यापारियों में से न्यायदर्श विधि का प्रयोग करते हुए अनुसूची के माध्यम से प्रश्नों के उत्तर जाननें को प्रयास किया गया है। प्राप्त उत्तरों के आधार पर यह परिणाम प्राप्त होता है कि 29% व्यापारियों द्वारा ही वित्तीय बजट तैयार किया जाता है। 29% व्यापारियों नें व्यापार को चलाने के लिए ऋण लिया है। बाकी व्यापारियों ने स्वयं की पूंजी लगाई है। छोटे या

मध्यम प्रकार के व्यापार में पूंजी की कम आवश्यकता होती है, इसलिए इस प्रकार की प्रतिक्रिया मिलना स्वाभाविक है। 76% व्यापारियों ने भविष्य की जोखिमों के लिए उचित फंड की व्यवस्था लाभ में से करके रखी है। फंड के अन्य स्त्रोंतो को ज्यादा महत्व नहीं दिया है। उधार माल खरीदने और बेचने के मामले में क्रमश: 94% और 82% व्यापारी उधार लेन –देन करते हैं। 59% व्यापारियों द्वारा व्यापारिक खर्चों को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं किया गया है। वित्तीय प्रबंधन संबंधी जागरुकता की कमी के कारण ऐसी प्रतिक्रिया हमें प्राप्त हुई है। बैंक लेन देन के मामले में 50% व्यापारिक उपक्रमों द्वारा कुल लेनदेन का 30% से कम लेनदेन बैंकों के माध्यम से किया जाता है। जिसके कारण इनको बैंक से व्यापारिक ऋण लेने में समस्याओं का सामना करना पडता है तथा उन 50% व्यापारियों में से केवल 11% व्यापारियों द्वारा बैंक समाधान विवरण तैयार किया जाता है जो बैकिंग लेनदेन संबंधी उदासीनता का सूचक है। 28% व्यापारियों द्वारा कभी भी अपनी व्यापारिक लेनदेन का आंतरिक अंकेक्षण नहीं करवाया गया है, वित्तीय योजनाओं को तैयार करनें व उनके प्रबंधन में अंकेक्षकों का बहुत बड़ा योगदान होता है। व्यापारियों को समय– समय पर अंकेक्षण संबंधी कार्य करवाने चाहिये। 90% व्यापारियों द्वारा अपने लेखांकन संबंधी कार्य का कभी भी विश्लेषण नहीं किया गया है। व्यापारियों में लेखांकन संबंधी ज्ञान के स्तर के मामले में 44% व्यापारियों के ज्ञान का स्तर औसत दर्जे से भी कम रहा है। 22% व्यापारियों का मुख्य उद्देश्य विक्रय विस्तार व 17% व्यापारियों का मुख्य उद्देश्य लाभ वृद्धि है। किन्तु यह कैसे प्राप्त होगा इसकी कोई निश्चित योजना तैयार नहीं की गई है। बिना योजना के उद्देश्य प्राप्त करने का मार्ग बहुत कठिन है। 35% लघु एवं मध्यम प्रकार के व्यापारियों द्वारा आज भी कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली का प्रयोग नहीं किया जाता है। जिसमें से 59% व्यापारियों द्वारा इसका मुख्य कारण आर्थिक समस्या बताया है तथा 29% व्यापारियों को कम्प्यूटरीकृत लेखांकन प्रणाली पर विश्वास नहीं है, जो कि उनके कम्प्यूटर के प्रति निम्न ज्ञान के स्तर को प्रदर्शित करता है। जागरुकता का आभाव इन आंकडों से स्पष्ट रुप से प्रदर्शित हो रहा है।

सुझाव एवं निष्कर्ष –

- लघु एवं मध्यम प्रकार के व्यापारियों में वित्तीय प्रबंधन के प्रति उदासीनता पाई गई है, इन्हें वित्त के स्त्रोंतो (source) एवं उपयोग (use) के प्रति जागरुक किया जाना चाहिए।
- पूंजी के अन्य स्त्रोंतो का उपयोग व्यापारियों द्वारा नहीं किया जा रहा है।जिसके कारण व्यापार के क्षेत्र में वृद्धि करने में रुकावट आ रही है।
- वित्तीय प्रबंधन के उपकरणों की जानकारी न होने की वजह से व्यापारिक खर्चों को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं किया जा रहा है यहां जानकारी का अभाव हमने अपने अनुसंधान में पाया।
- प्रशिक्षित लेखापालों की कमीं भी एक कारण है, जिनके कारण वित्त के साधनों का सही प्रकार से प्रयोग नहीं हो पा रहा है। इसलिए व्यापार में प्रशिक्षित लेखापालों की आवश्यकता है।
- वित्तीय प्रबंधन की जानकारी न होने के कारण व्यापारियों द्वारा व्यापार की प्रगति का सही विश्लेषण करनें में कठिनाई अनुभव हो रही है।

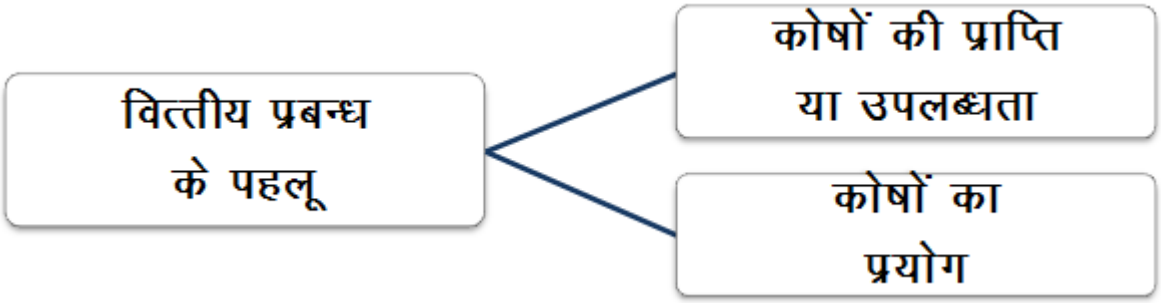
अत: वित्त की उपलब्धता, उसके स्त्रोत तथा उसका सही प्रकार से प्रयोग करके ही व्यापार को प्रगति की ओर अग्रसर किया जा सकता है। इसके लिए व्यापारियों को जागरुक होना अति आवश्यक है।

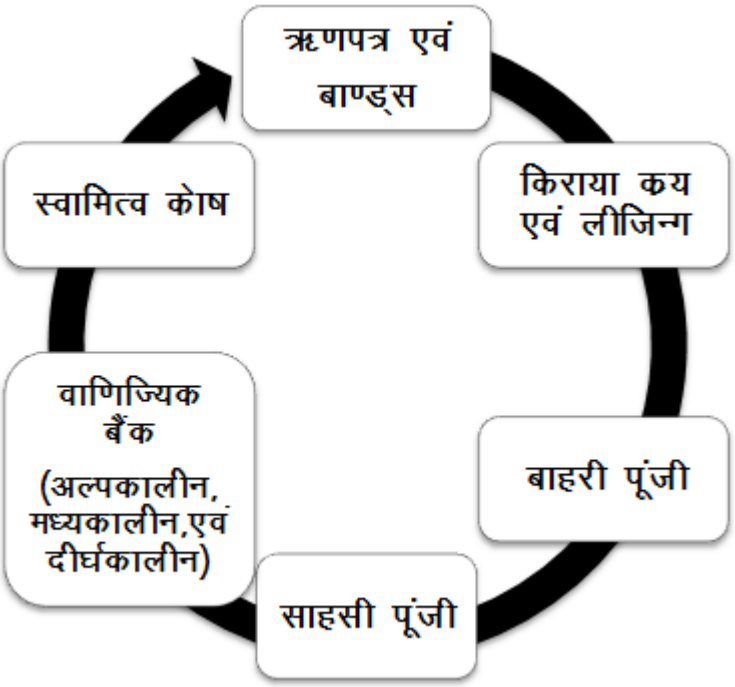
संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Financial Management(IPCC) BOOK, The Institute Of Chartered Accountants Of India(ICAI) 2015.
2. U.A.H.A Rathnasiri ,The Financial Management Practice Of Small And Medium Enterprise, Research Paper, Global Journal Of Contemporary Research In Accounting (GJCRA) VOL -2, 2015
3. डां. के.एल.गुप्ता, प्रबंधकीय लेखांकन, साहित्य भवन पब्लिकेषन्स आगरा,2013.
4. I.M. Pandey, Financial Management Book ,Vikas Publishing House Pvt.2005 .
5. Nalla Bala Kalyan Kumar (2012) , "Financial Management In Msmes In India", IJEMR – September 2012- Vol 2.
6. Aradhana Relhan(2013), " E-Accounting Practices Of Smes In India", International Journal Of Technical Research(IJTR) Vol. 2, Issue 1, Mar-Apr 2013.
7. R. Jeswal, "Role Of SME In Indian Economy", National Conference On Emerging Challenges For Sustainable Business, 2012.
8. Msmes Annual Report, "Introduction: Background Of Msmes", Ministry Of Micro, Small And Medium Enterprises,Government Of India, Http:// Www.Dcmsme.Gov.In/ANNUALREPORT-MSME-2012-13P.Pdf
9. Jaskaran Singh(2014), "Problems Related To The Financing Of Small Firms In India", International Journal Of Innovative Research And Development(*ISSN 2278 – 0211) .*
10. Sudha Venkatesh(2012), " Smes In India: Importance And Contribution", ASIAN JOURNAL OF MANAGEMENT RESEARCH 792 Volume 2 Issue 2.
11. Chandra, S., (2004), Small Industries Development Organization (SIDO) In Global Perspective, Laghu Udyog Samachar: Journal Of Small Scale Industries, 28-29(12-2), Pp 249-253.
12. Report Of Prime Minister S Task Force., (2010), Micro Small And Medium Enterprises, Government Of India. Http://Msme.Gov.In/PM_MSME_Task_Force_ Jan2010.Pdf, Accessed On June 23, 2011 .
13. Nishanth P.(2014), "BARRIERS FACED BY MICRO, SMALL AND MEDIUM ENTERPRISES IN RAISING FINANCE", Abhinav National Monthly Refereed Journal Of Research In *Commerce & Management* Volume 3, Issue 5
14. Naidu, S., & Chand, A. (2012). A Comparative Study Of The Financial Problems Faced By Micro, Small And Medium Enterprises In The Manufacturing Sector Of Figi And Tonga. *International Journal Of Emerging Markets .*

15. Ashok Thampy(2010), "Financing Of SME Firms In India Interview With Ranjana Kumar, Former CMD, Indian Bank; Vigilance Commissioner, Central Vigilance Commission" IIMB Management Review (2010).

16. Annual Report Of MSME Of India, (2010-11), Growth And Performance Of Msmes And4th Census Of Msmes, Development Commissioner (MSME), Government Of India. Http://Msme.Gov.In/MSME Annual-Report-2010-11.





****

जनजातीय विकास में कृषि यंत्रीकरण के प्रति कृषकों की रुचि (पश्चिमी निमाड़ जिलों के विशेष संदर्भ में)

रंजना चौहान * डॉ. विनोद गुप्ता **

प्रस्तावना – भारत जैसे विकात्सोन्मुख देश के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए कृषि का विकास अति आवश्यक हैं। कृषि द्वारा ही जनजातीय विकास की उन्नति के साथ औद्योगिक अर्थव्यवस्था का निर्माण सम्भव हैं। पश्चिमी म. प्र. में ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वाधिक जनाभार हैं। इनकी जीवन शैली एवं सामाजिक–आर्थिक संरचना नगरीय सभ्यता एवं संस्कृति से भिन्न हैं। जनजातीय क्षेत्रों के समाज का विकास कृषि के विकास में प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हैं। अन्य प्रदेशों के मुकाबले भारतीय कृषि अभी भी काफी पिछड़ी हुई हैं। इसका मुख्य कारण आज भी भारतीय ग्रामीण कृषकों को खेती के पुराने तरीकों व उपकरणों पर निर्भर रहना पड़ता हैं। जहाँ तक अनुसूचित जनजातीय क्षेत्रों के विकास में आधुनिक कृषि तकनीकी की भूमिका का सवाल हैं, उन्हें आधुनिक कृषि को अपनाने में कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हैं। इन समस्याओं में दुर्गम एवं पहुंच विहीन क्षेत्र, शिक्षा एवं जागरुकता की कमी, आर्थिक पिछड़ेपन एवं शोषण आदि खाद्यान्नों का अभाव और कृषि उपज मण्डियों एवं बाजारों का दूर होना प्रमुख कारण हैं। आधुनिक कृषि तकनीकी के उपयोग से उत्पादन अधिक मात्रा में प्राप्त होता हैं। यदि कृषि का विकास होता हैं, उत्पादन में वृद्धि होती है, तो लोगों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार होगा। उनका सामाजिक जीवन, रहन–सहन आदि सभी में परिवर्तन होगा।

आधुनिक कृषि तकनीकी अपनाने से कृषकों के आर्थिक जीवन में काफी वृद्धि हो रही हैं, जिससे हमें यह पता चलता हैं कि कृषि यंत्रीकरण के प्रति कृषकों की रुचि सुचारु रूप से अग्रणी हैं। जिसके सम्बन्ध में वे कृषक जो कृषि यंत्रीकरण के पक्ष में हैं, उनका मत हैं कि कृषि यंत्रों का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिए। उत्तम बीज एवं रासायनिक खाद कीटनाशक दवाएँ आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए। आधुनिक तकनीकी के प्रयोग से कृषक खाद्य संकट से छुटकारा पा सकता हैं।

अध्ययन की पद्धति – प्रस्तुत शोध कार्य को पूरा करने के लिए शोध विधि की निदर्शन विधि का सहारा लेकर शोध क्षेत्र बड़वानी जिलें के दो विकासखण्ड व खरगोन जिलें के दो विकासखण्ड का चयन निदर्शन विधि से किया गया एवं इन चयनित विकासखण्डों से भी निदर्शन विधि के सहारे प्रत्येक विकासखण्डों में से 5–5 गांवों का चयन किया गया। जिसमें प्रत्येक गांव के 15–15 ग्रामीण कृषकों का चयन किया तथा इस प्रकार कुल 300 ग्रामीण कृषकों का चयन किया गया।

कृषि यंत्रीकरण के पक्ष में तर्क से ही कृषि यंत्रीकरण के प्रति कृषकों की रुचि का पता लगाया जा सकता हैं।

1. **प्रति हेक्टेयर उत्पादन में वृद्धि –** कृषि यंत्रीकरण के प्रयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि होती हैं। रासायनिक उर्वरकों तथा उत्तम किस्म के बीजों के प्रयोग तथा कीटनाशक दवाईयों के प्रयोग से उत्पादन में 25 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक वृद्धि की जा सकती हैं।
2. **उत्पादन लागतों में कमी –** कृषि यंत्रीकरण के प्रयोग द्वारा उत्पादन की औसत लागत को घटाया जा सकता हैं। कृषि कार्य अधिक कुशलतापूर्वक होने लगता हैं, जिससे उत्पादन में वृद्धि होती हैं।और औसत लागत स्वत: ही कम हो जाती हैं।
3. **कृषकों की आय में वृद्धि –** जब उत्पादन में लगातार वृद्धि व लागतों में कमी होती हैं, तो कृषकों की आय में भी वृद्धि होती हैं।
4. **रोजगार अवसरो का सृजन –** कृषि यंत्रीकरण से कृषि का विकास होता हैं। साथ–ही–साथ सहायक उद्योग जैसे मशीनों सम्बन्धी उद्योग, बीज संरक्षण सम्बन्धित संस्थान, उर्वरक उद्योग भी पनपने लगते हैं। जिनसे रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती हैं।
5. **उपभोक्ताओं को लाभ –** कृषि में यंत्रीकरण से उत्पादन में वृद्धि तथा उत्पादन लागत में कमी दोनों ही के परिणामस्वरूप बाजार में कृषि उत्पादों की कीमत कम होती हैं, जिसका सर्वाधिक लाभ उपभोक्ता वर्ग को मिलता हैं।
6. **समय व श्रम की बचत –** कृषि में यंत्रीकरण से समय व श्रम की बचत हैं, व एक ही वर्ष में दो से तीन फसलें प्राप्त करना सम्भव हुआ हैं।
7. **कठिन कार्यों में लाभ –** कृषि में यंत्रीकरण से कठिन से कठिन कार्य जैसे–पथरीली और बंजर भूमि को साफ करना, ऊँची–नीची भूमि को समतल करना तथा एक साथ अधिक भूमि पर फसल बोना या काटना आदि कार्य सरलता से व शीघ्र किया जा सकता हैं।
8. **फसलों की सुरक्षा –** कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग द्वारा फसलों को कीड़े–मकोड़ों, चूहों तथा रोगों से बचाया जा सकता हैं, जिससे उत्पादन बढ़ता हैं।
9. **श्रमिकों की कार्य कुशलता में वृद्धि –** कृषि यंत्रीकरण के प्रयोग करने से श्रमिकों की कार्य कुशलता बढ़ गई हैं। वर्तमान में वह एक निश्चित समय में पहले की अपेक्षा अधिक और उच्च गुणवत्ता वाला काम कर सकते हैं।
10. **व्यापारिक फसलों पर बल –** कृषि यंत्रीकरण के कारण कृषक व्यापारिक फसलों का उत्पादन करने में सक्षम हो गए हैं। वे खाद्य फसलों के स्थान पर व्यापारिक फसलों को बढ़ावा देने लगे हैं। इससे

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) राजीव गाँधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, पिपल्यामण्डी, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

अनेक उद्योगों का भी विकास होता हैं।

कृषि यंत्रीकरण के प्रयोग से कृषि के उपरोक्त लाभ प्राप्त हो सकते हैं, परन्तु जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी व खेतों के छोटे आकार छोटे होने से कृषि की आर्थिक स्थिति गम्भीर हैं। इस कारण खेतों में यंत्रों का प्रयोग दोषपूर्ण भी सिद्ध हुआ हैं, बहुत से किसान बेरोजगार हो जाएंगे और वे कृषक जो खेतों में श्रम करके अपनी आजीविका चलाते हैं, जो कृषि यंत्रीकरण के विरोधी हैं। वे कृषि के यंत्रीकरण के विपक्ष में तर्क देते हैं। जो इस प्रकार हैं

1. **अशिक्षा –** भारतीय कृषक अशिक्षित होने के कारण विकास करना नहीं चाहते। वे रुढ़िवादी व परम्परावादी होने के कारण कृषि यंत्रीकरण का विरोध करते हैं व इसके प्रयोग का ज्ञान भी उन्हें नहीं होता।
2. **आर्थिक समस्या –** कृषकों की स्थिति प्रारम्भ से ही दयनीय रही हैं। कृषि यंत्रों के प्रयोग के लिए अधिक पूँजी लगानी पड़ती हैं, जिससे भारतीय कृषक असमर्थ रहते हैं और कृषि यंत्रों का प्रयोग नहीं कर पाते।
3. **जोतों का छोटा आकार –** कृषि जोतों के छोटे आकार में कृषि यंत्रों का प्रयोग असम्भव हैं। भारत में जोतों का औसत आकार 1.41 हेक्टेयर हैं। यहाँ 31.1 प्रतिशत जोते 1 से 4 हेक्टेयर के बीच हैं, जबकि 61.6 प्रतिशत जोतें एक हेक्टेयर से भी छोटी हैं।
4. **खनिज तेलों का अभाव –** कृषि यंत्रों में खनिज तेलों जैसे पेट्रोल, डीजल व तेल अधिक लगता हैं, जिसकी पूर्ति के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता हैं। यंत्रीकरण में वृद्धि अर्थात् खनिज तेलों की मांग में भी वृद्धि होना जो कि देश के भविष्य के लिए उचित नहीं हैं।
5. **बेरोजगारी में वृद्धि –** कृषि यंत्रीकरण में मानव श्रम की आवश्यकता बहुत कम होती हैं, जिससे बेरोजगारी में वृद्धि होती हैं।
6. **पशु शक्ति का बेकार होना –** भारत में पशुओं की संख्या अधिक हैं। कृषि यंत्रीकरण के प्रयोग से वे बेकार हो जाएंगे तथा उनसे कोई लाभ प्राप्त न होने पर भी उनके जीवित रहने की व्यवस्था करनी होगी जो कि देश के विकास के लिए उपयुक्त नहीं हैं।
7. **टूट–फूट की मरम्मत –** कृषि यंत्रों के खराब होने पर सीधे शहर जाना होता हैं तथा इनकी टूट–फूट की मरम्मत की सुविधा भी गाँव में नहीं मिल पाती हैं।
8. **जानकारी का अभाव –** किसानों को प्राय: कृषि यंत्रों के प्रयोग तथा लाभों की जानकारी नहीं होती व ग्रामीण क्षेत्रों में इससे सम्बन्धित उचित जानकारी देने वाली संस्थाओं का भी अभाव होता हैं, जिससे किसान इसका लाभ नहीं उठा पाते हैं।

कृषि यंत्रीकरण के विपक्ष के जो तर्क हैं, उनमें से अधिकांश अधिक प्रभावशाली नहीं हैं : –

1. कृषि यंत्रीकरण से बेरोजगारी की समस्या बढ़ने लगेगी यह तर्क अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं, क्योंकि यंत्रीकरण से यातायात, कोयले, लोहे के उद्योग के क्षेत्र में विकास होगा जिनमें रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे। इस प्रकार यंत्रीकरण से जो लोग बेकार हो जाएगे। उन्हें इस उद्योग में रोजगार मिल जाएगा।
2. कृषि जोतों के छोटे आकार में कृषि यंत्रों का प्रयोग असम्भव हैं, तर्क संगत है, भूमि का अपविभाजन एवं अपखण्डन एक वास्तविक बाधा नहीं है, क्योंकि सरकारी नीति संयुक्त कृषि अपनाने की हैं। छोटे खेतों के लिए भी आधुनिक यंत्रों का प्रयोग किया जा सकता हैं, क्योंकि वर्तमान समय में 20 से 25 एकड़ खेत के लिए भी उचित कृषि मशीनरी सुलभता से उपलब्ध होने लगी हैं।
3. पशु शक्ति का बेकार होना यह तर्क संगत नहीं हैं, क्योंकि हम यही चाहते हैं कि भारत में पशुओं की कमी हो, क्योंकि दाना–चारे की समस्या भारतीय अर्थव्यवस्था पर बहुत ही भार स्वरूप हैं।
4. कृषि यंत्रों के खराब होने व खनिज तेलों का विदेशों पर निर्भर होना भी तर्क संगत नहीं हैं, क्योंकि विकास की ओर देखा जाए तो यंत्रों का उत्पादन देश में ही किया जा सकता हैं। देश में यंत्रों व उसके छोटे–मोटे पूर्जों का निर्माण होने लगा हैं।

तालिका– 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अनुसार सर्वेक्षित कृषकों द्वारा कृषि में प्रयुक्त तकनीक का 61.00 प्रतिशत दोनों कृषि तकनीकी का उपयोग करते हैं। 32.33 प्रतिशत आज भी पूर्णत: परम्परागत कृषि तकनीक अपनाते हैं। सबसे कम 6.67 प्रतिशत सर्वेक्षित कृषक ही पूर्णत: आधुनिक कृषि तकनीकी को स्वीकार कर रहे हैं। बड़वानी जिलें में 58 प्रतिशत दोनों कृषि तकनीकी, 36 प्रतिशत परम्परागत कृषि तकनीकी एवं 6 प्रतिशत आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग करते हैं। खरगोन जिलें में 64 प्रतिशत दोनों कृषि तकनीकी, 28.67 प्रतिशत परम्परागत कृषि तकनीकी, 7.33 प्रतिशत आधुनिक कृषि तकनीकी का पूर्ण उपयोग करते हैं।

अत: स्पष्ट हैं, कि पश्चिमी निमाड़ जिलों में सबसे अधिक कृषकों द्वारा आधुनिक एवं परम्परागत (दोनों) कृषि तकनीकी का उपयोग किया गया हैं। आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग बहुत कम हैं। पश्चिमी निमाड़ जिलों में बड़वानी जिलें की अपेक्षा खरगोन जिलें के अधिक सर्वेक्षित कृषकों द्वारा आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग किया जाता हैं। यह शिक्षा एवं जागरूकता का प्रमाण हैं।

तालिका– 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अनुसार यह स्पष्ट होता हैं, कि जिन सर्वेक्षित कृषकों द्वारा आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग किया जा रहा हैं, उनमें सबसे अधिक 72.41 प्रतिशत कृषक अधिक उत्पादन के लिए आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग कर रहे हैं शेष 24.14 प्रतिशत सर्वेक्षित कृषक दोनों कारण को महत्वपूर्ण मानते हैं। मात्र 3.45 प्रतिशत कृषक गुणवत्ता हेतु आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग करते हैं।

निष्कर्ष – उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कृषि यंत्रीकरण एक अच्छी नीति हैं। कृषि यंत्रीकरण से उत्पादकता वृद्धि होने से आर्थिक विकास में भी वृद्धि हो रही हैं। कृषकों को अधिक शक्ति उपयोग की समस्या प्रमुख हैं। एक कृषक अपने कार्य का मशीनीकरण तभी करेगा। जब उसे इस बात का पूर्ण विश्वास हो जाए कि ऐसा करना लाभकारी हैं। तभी वह आंशिक रूप से कृषि यंत्रीकरण को अपनाने में सफल होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **अग्रवाल, ए. एन. (2008) ;** 'भारतीय अर्थव्यवस्था' New Age Intrnetional Pub. New Delhi
2. **यादव, डॉ. बी. एस., ऋचा सिंह व नन्दिनी शर्मा (2008)** ; 'भारतीय अर्थव्यवस्था', यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली
3. **दोमडिया, डॉ. डी. एम., बारड, डॉ. बी. आर. (2014)** ; 'ग्रामीण अर्थव्यवस्था के आधार', रावत प्रकाशन, नई दिल्ली – 110 002

तालिका– 1 : सर्वेक्षित कृषकों द्धारा कृषि में प्रयुक्त तकनीक का विवरण

सं.कृ.	कृषि तकनीक	बड़वानी		खरगोन		योग	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	परम्परागत	54	36.00	43	28.67	97	32.33
2	आधुनिक	09	6.00	11	7.33	20	6.67
3	दोनों	87	58.00	96	64.00	183	61.00
	योग	**150**	**100.00**	**150**	**100.00**	**300**	**100.00**

तालिका– 2 : सर्वेक्षित कृषकों द्धारा कृषि यंत्रीकरण उपयोग के कारण

सं.कृ.	कृषि यंत्रीकरण उपयोग के कारण	बड़वानी		खरगोन		योग	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अधिक उत्पादन के लिए	72	73.47	75	71.43	147	72.41
2	गुणवत्ता के लिए	03	3.06	04	3.81	07	3.45
3	दोनों	23	23.47	26	24.76	49	24.14
	योग	**98**	**100.00**	**105**	**100.00**	**203**	**100.00**

****

रेल्वे में कार्यरत कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन (रतलाम रेलवे मण्डल के विशेष सन्दर्भ में)

ममता कुशगोतिया *

प्रस्तावना – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के विकास में प्राथमिक क्षेत्र और द्धितीयक क्षेत्र के बाद तृतीयक क्षेत्र का महत्वपूर्ण स्थान होता है। यातायात व परिवहन तृतीयक क्षेत्र के महत्वपूर्ण अंश हैं और इनका विकास इस क्षेत्र में कार्यरत कर्मचारियों की आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। भारत में कृषि और उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों और कर्मचारियों की स्थितियों, परिस्थितियों और व्यवस्थाओं के सम्बन्ध में अनेक आर्थिक अध्ययन किए गए हैं, परंतु इन क्षेत्रों को विकास की ओर उन्मुख करने में सहायक तृतीयक क्षेत्र और विशेषकर इसके यातायात व परिवहन वाले हिस्से में कार्यरत कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति, परिस्थिति पर विचार, विनिमय, अध्ययन, मनन और चिन्तन न के बराबर है। यदि देश की अर्थव्यवस्था को विकास के मार्ग पर अग्रसर रखना है तो तृतीयक क्षेत्र का विस्तार व विकास आवश्यक है और इसके लिए इसमें कार्यरत कर्मचारियों की कार्यदशाओं आर्थिक परिस्थितियों की जानकारी, उसकी कमियों की खोज व निदान आवश्यक है अत: इसी को दृष्टिगत रखते हुए विषय का चयन किया गया है।

भारतीय रेलवे के 17 क्षेत्रों में एक क्षेत्र 'पश्चिम रेलवे' है। जिसकी स्थापना 15 नवम्बर 1951 को हुई। इसका मुख्यालय मुंबई में है तथा इससे संबंधित मण्डल मुंबई (सेन्ट्रल) रतलाम, राजकोट, अहमदाबाद, भावनगर, वड़ोदरा है। रतलाम रेलवे मण्डल में समस्त कर्मचारियों को चार वर्गों में बाँटा गया है। भारतीय रेलवे में इन कर्मचारियों की भर्ती एवं नियुक्ति चार प्रकार से होती है–

1. संघ लोक सेवा आयोग द्धारा
2. कर्मचारी चयन आयोग द्धारा
3. रेलवे भर्ती बोर्ड द्धारा
4. क्षेत्रीय व मण्डल मुख्यालय द्धारा।

वर्तमान में रतलाम रेलवे मण्डल में कुल 15563 कर्मचारी कार्यरत है। इनमें वर्ग ए तथा बी में 133 राजपत्रित व शेष वर्ग सी तथा डी में 15430 अराजपत्रित कर्मचारी है। छठे वेतन आयोग के अनुसार वर्ग ए तथा बी राजपत्रित अधिकारियों का वेतनमान 15,600 से 80,000 के मध्य है और वर्ग सी तथा डी का वेतनमान 4,440 से 20,200 के मध्य है। भारतीय रेलवे एवं रेलवे मण्डल द्धारा जो भी विकासात्मक एवं अन्य नियमित कार्य किए जाते हैं, उसका सम्पूर्ण सफल संचालन कार्मिक प्रबंध पर ही निर्भर करता है, लेकिन कर्मचारियों का वेतन उनके कार्य की तुलना में कम है, जिससे रतलाम रेलवे मण्डल के कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं है और कर्मचारियों में वेतन के प्रति व्यापक असंतोष की भावना है।

विकसित देशों में कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति सम्बन्धी विषय पर विभिन्न जर्नलों में शोध पत्र प्रकाशित हुए है लेकिन विकासशील देशों में अभी भी इस क्षेत्र में पर्याप्त शोध का अभाव है, यहीं कारण है कि इस पहलू पर एक बड़े स्तर पर शोध कार्य की आवश्यकता है, तभी हम कर्मचारियों व देश दोनों का सर्वांगीण आर्थिक विकास कर सकते हैं।

रतलाम रेलवे मण्डल के सर्वेक्षित कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति – आय वर्तमान में आर्थिक जीवन का केन्द्र बिन्दु है, जिसमें प्रभावपूर्ण मांग, उपभोग, उत्पादन, रोजगार आदि आर्थिक क्षेत्रों को प्रभावित करने की क्षमता होती है। जिस व्यक्ति की आय जितनी अधिक होती है। उसे उतना ही अधिक समृद्धशाली, प्रभावशाली व विकसित माना जाता है। किसी भी व्यक्ति एवं समाज का आर्थिक कल्याण आय पर निर्भर करता है किसी भी संस्था, उद्योग, व्यवसाय या विभाग के कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति को ज्ञात करने के लिए आर्थिक सर्वेक्षण में आय पक्ष, व्यय पक्ष, बचत एवं ऋण पक्ष का अध्ययन करना आवश्यक है।

सर्वेक्षित कर्मचारियों की वेतन से प्राप्त आय

तालिका 1

मासिक आय के आधार पर सर्वेक्षित कर्मचारियों का वर्गीकरण

क्र.	आय समूह (रुपये में)	सर्वेक्षित कर्मचारियों की संख्या	प्रतिशत
1	5000 से कम	0	0
2	5000 से 10000	220	44.0
3	10000 से 15000	99	19.8
4	15000 से 20000	84	16.8
5	20000 से 25000	46	9.2
6	25000 से 30000	40	8.0
7	30000 से 35000	9	1.8
8	35000 से अधिक	2	0.4
	योग	**500**	**100**

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त आँकड़ो के आधार पर।

इस आय अध्ययन में सर्वेक्षित 500 कर्मचारियों को उनकी मासिक आय के आधार पर 6 आय वर्गों में बाँटा गया है।

परिवार की कुल एवं प्रति–व्यक्ति आय – परिवार की कुल आय द्धारा उनका निरपेक्ष अध्ययन किया जा सकता है परन्तु सापेक्ष अध्ययन हेतु प्रति–व्यक्ति औसत आय ज्ञात करना आवष्यक है। तालिका 9.6 में सर्वेक्षित परिवारों की कुल मासिक आय और प्रति–व्यक्ति आय का विवरण है। जो इस प्रकार है –

तालिका 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)
तालिका 3 (देखे आगे पृष्ठ पर)

* (म.प्र.) भारत

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था देशवासियों के आर्थिक विकास के लिए कार्य करती है। वर्तमान में रतलाम रेलवे मण्डल कार्यरत कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए हमने प्रत्येक श्रेणी के कर्मचरियों की आर्थिक स्थिति को प्रश्नावली द्वारा जानने का प्रयास किया है जो काफी हद तक सफल रहा है। उसके आधार पर कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण कर बचत की राशि को स्पष्ट किया और यह पाया कि जैसे-जैसे परिवार की मासिक आय बढती है,उनकी बचत भी बढती जाती है अत: निष्कर्ष के रूप में यह स्पष्ट हैं कि जिस देश की आय अधिक होगी उस देश के निवासियों का जीवन स्तर उन्नत होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महाप्रबंधक की वार्षिक वर्णनात्मक रिपोर्ट 2006-07, रेल मंत्रालय, रेलवे बोर्ड।
2. श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक सम्बंध, डॉ. टी.एन. भगोलीवाल एवं श्रीमति प्रेमलता भगोलीवाल, प्रकाशन, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, प्रकाशन वर्ष 2004
3. Railway Eastablishment Rules and Labour Laws, K.P. Sharma and Sanjiv Malhotra, Bahri Brothers, Edition 2012
4. पंचवर्षीय योजनाएँ।
5. रेल बजट।

तालिका 2

सर्वेक्षित परिवारों की कुल एवं प्रति-व्यक्ति औसत मासिक आय

क्र.	आय समूह (रुपये में)	परिवारों की संख्या	कुल सदस्य संख्या	कुल मासिक आय	प्रति व्यक्ति औसत आय	प्रतिशत
1	10000 से कम	205	1025	1312000	1280	8
2	10000 से 20000	190	950	2280000	2400	16
3	20000 से 30000	89	470	1790000	3808	24
4	30000 से 40000	16	53	442000	8340	52
	योग	**500**	**2498**	**5824000**	**15828**	**100**

स्रोत - सर्वेक्षण से प्राप्त आकँड़ो के आधार पर।

तालिका 3

सर्वेक्षित कर्मचारियों द्वारा विभिन्न मदों पर किया जाना वाला व्यय

क्र.	व्यय की मद	आय समूह					
		10000 रु. आय वाले निम्न आय वर्ग		20000 रु. आय वाले मध्यम आय वर्ग		30000 रु. आय वाले उच्च आय वर्ग	
		व्यय राशि	प्रतिशत	व्यय राशि	प्रतिशत	व्यय राशि	प्रतिशत
1	भोजन	3890	38.9	6440	32.2	8790	29.3
2	वस्त्र	580	5.8	1960	9.8	3390	11.3
3	आवास	1000	10.0	2000	10.0	3000	10.0
4	प्रकाश व ईधन	550	5.5	1120	5.6	1740	5.8
5	प्रसाधन	140	1.4	400	2.0	750	2.5
6	शिक्षा	630	6.3	1400	7.0	2250	7.5
7	स्वास्थ्य	350	3.5	600	3.0	860	2.8
8	मनोरंजन	500	5.0	700	3.5	900	3.0
9	सामाजिक व्यय	500	5.0	980	4.9	1290	4.3
10	व्यसनों पर व्यय	210	2.1	520	2.6	930	3.1
11	संचार व्यय	250	2.5	800	4.0	1200	4.0
12	अन्य व्यय	500	5.0	1080	5.4	1600	5.4
13	कुल व्यय	9100	91.0	18000	90.0	26700	89.0
14	बचत	900	9.0	2000	10.0	3300	11.0
	योग	**10,000**	**100**	**20,000**	**100**	**30,000**	**100**

स्रोत :- सर्वेक्षण से प्राप्त आकँड़ो के आधार पर

संपूर्ण ग्रामीण एवं भूमिहीन ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का अध्ययन (उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रूपा मिश्रा *

प्रस्तावना – भारत सरकार द्वारा अप्रैल 2002 से क्रियान्वित संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना में केंद्रांश एवं राज्यांश का अनुपाल 75:25 है। योजनांतर्गत भारत सरकार द्वारा खाद्यान्न नि:शुल्क प्रदान किया जाता है, जो प्रति मानव दिवस 5 किलो ग्राम खाद्यान्न एवं शेष राशि नगद प्रदान की जाती है। खाद्यान्न परिवहन का व्यय राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराना खाद्यान्न की सुरक्षा एवं पोषक स्तर में सुधार लाना, स्थायी सामुदायिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिसम्पत्तियों का सृजन एवं अधोसंरचना का विकास करना है। इस योजनांतर्गत ग्रामीण निर्धन परिवार एवं अकुशल श्रमिक, अत्यधिक गरीब महिलाए अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति एवं जोखिम पूर्ण व्यवसाय से निकाले गए बच्चों के माता-पिता को रोजगार मूलक कार्यों में प्राथमिकता देने के साथ-साथ महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत रोजगार के अवसर सुरक्षित रखे जाने का प्रावधान है। इस योजनांतर्गत कुल उपलब्ध राशि में से 30 प्रतिशत जनपद पंचायतों को 20 प्रतिशत जिला पंचायत को तथा ग्राम पंचायत को 50 प्रतिशत राशि आवंटित की जाती है। ग्राम पंचायतों को उपलब्ध राशि (नगद एवं खाद्यान्न की कीमत को जोड़कर) का 50 प्रतिशत अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के बसाहट क्षेत्र में अधोसंरचना विकास पर व्यय किया जाना अनिवार्य है। शेष राशि अन्य कार्यों पर व्यय की जा सकती है एवं जिला पंचायत एवं जनपद पंचायतों को उपलब्ध राशि में से न्यूनतम 22.50 प्रतिशत राशि गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के परिवारों को व्यक्तिगत लाभ की योजनाओं पर व्यय की जा सकेगी।

उमरिया जिले में संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना का क्रियान्वयन पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत किया जाता है, जिसे ग्रामीण जनों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हुए नगद राशि एवं खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाता है। जिले में संपूर्ण रोजगार योजना की जनपद पंचायत खण्डवार स्थिति का विवरण निम्नानुसार है :-

संपूर्ण रोजगार योजना की जनपद पंचायतवार स्थिति
(वर्ष 2009-10 से 2013-14 तक) (तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)

विवरण से स्पष्ट होता है कि जिले में संपूर्ण रोजगार योजनांतर्गत वर्ष 2009-10 से 2013-14 की अवधि में कुल स्वीकृत लागत. 436.30 लाख रूपये हैं, जिसमें सबसे अधिक जनपद पंचायत करकेली की हैं, जिले में स्वीकृत लागत अनुसार व्यय भी किया गया है, जिसमें नगद मजदूरी 218.16 लाख रूपये तथा खाद्यान्न 5571.00 क्विंटल मजदूरी के रूप में भुगतान किया गया है। सबसे अधिक जनपद पंचायत करकेली में नगदी मजदूरी 114.37 लाख तथा सबसे अधिक खाद्य जनपद पंचायत करकेली में 2294.00 क्विंटल का भुगतान किया गया है। जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में व्यक्तियों की जनसंख्या के अनुपात में रोजगार योजना की प्रगति काफी कम है।

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के क्रियान्वयन उपलब्ध कराए गए रोजगार खाद्यान्न विवरण आदि जैसे कार्य जो संपूर्ण योजना अंतर्गत किये जा रहे हैं। इस संबंध में उमरिया जिले की तीनों जनपद पंचायतों के चयनित उत्तरदाताओं का व्यक्तिगत सर्वेक्षण साक्षात्कार के माध्यम से किया गया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि संपूर्ण रोजगार योजना अंतर्गत मानपुर जनपद पंचायत में 52 प्रतिशत, जनपद पंचायत करकेली में 49 प्रतिशत एवं जनपद पंचायत पाली में 37 प्रतिशत लोग लाभान्वित हुए। इस प्रकार सबसे अधिक मानपुर जनपद पंचायत और सबसे कम पाली जनपद पंचायत के व्यक्तियों को इस योजना का लाभ प्राप्त हुआ है। भारत सरकार एवं मध्यप्रदेश सरकार द्वारा पंचायती राज्य अंतर्गत संचालित संपूर्ण स्वरोजगार योजना के माध्यम से ग्रामीण व्यक्तियों के विकास के निर्धारित लक्ष्य से लाभावितों का प्रतिशत न्यून है, किंतु योजना के संचालन से प्रगति निरंतर जारी है।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना – इस योजना का प्रारंभ 1983-84 में भूमिहीन कृषि मजदूरों को कृषि के अतिरिक्त समय में रोजगार सुविधाए देने के उद्देश्य से किया गया। इस योजना का उद्देश्य भूमिहीन श्रमिकों को वर्ष 100 दिन रोजगार देना तथा गावों में स्थायी सम्पत्ति का निर्माण करना था, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था में तीव्र वृद्धि हो सके।

इस योजना का प्रमुख उद्देश्य प्रत्येक ग्रामीण भूमिहीन परिवार के कम से कम एक सदस्य को साल में 100 दिन का रोजगार देना था। केन्द्रीय शासन से यह स्पष्ट किया है कि पिछड़े हुए और सुदूर क्षेत्रों को जहाँ पर बेरोजगार भूमिहीन मजदूर ज्यादा है, विशेष ध्यान दिया जाए। इसमें 20 सूत्रीय कार्यक्रम संबंधी कार्य लेना प्रस्तावित था। लिंक सेट्स फील्ड चैनल बनाना सामाजिक वानिकी भूमि संरक्षण कार्य आदि। चूँकि कार्यक्रम के अंतर्गत मेटेरियल तथा प्रशासकीय व्यय मिलाकर 50 प्रतिशत तथा 50 प्रतिशत मजदूरी पर व्यय किया जा सकता था।

उमरिया जिले में पंचायती राज्य व्यवस्था के अंतर्गत जनपद पंचायत मानपुर, करकेली एवं पाली जनपद पंचायतों में इस योजना को प्रारंभ करते हुए भूमिहीन महिला एवं पुरूष कृषि मजदूरों को रोजगार उपलब्ध कराने के दिशा में निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। विभिन्न वर्षों में इसकी प्रगति हेतु शासन द्वारा आवश्यक राशि उपलब्ध कराई जा रही है। वर्ष 2009-10 से 2013-14 तक में भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना की प्रगति का विवरण निम्नानुसा प्रस्तुत है

उमरिया जिले में राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी

* (अर्थशास्त्र) पाली प्रोजेक्ट बिरसिंहपुर पॉली, जिला - उमरिया (म.प्र.) भारत

योजना की वर्षवार प्रगति – (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक)

तालिका

क्र.	वर्ष	स्वीकृत लागत (लाख रू.में)	व्यय (लाख रू.में)	रोजगार संख्या
1	2009–10	232.73	184.00	1115
2	2010–11	226.30	165.99	1894
3	2011–12	243.14	195.47	2472
4	2012–13	269.25	228.84	3285
5	2013–14	305.96	294.18	4312

स्त्रोत– जिला पंचायत उमरिया (म.प्र.)

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि वर्ष 2009–10 में इस योजना के अंतर्गत उमरिया जिले में स्वीकृत लागत 232.73 लाख रू0 की गई, जिसमें 184.00 लाख रूपये व्यय किया गया, जिसमें 1115 भूमिहीन परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराया गया, जो कि निरंतर विभिन्न वर्षों में प्रगति होती रही, जो कि वर्ष 2013–14 में स्वीकृत लागत बढ़कर 305.96 लाख रूपये हो गई व्यय लागत में वृद्धि होकर 294.81 लाख रूपये हो गई रोजगार के स्तर में भी वृद्धि होकर 4312 हो गई। उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि उमरिया जिले की राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना की प्रगति में निरंतर वृद्धि हो रही है तथा उनके आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में वृद्धि हो रही है।

उमरिया जिले के विभिन्न जनपद पंचायतों के अंतर्गत ग्रामों के चयनित परिवारों का व्यक्तिगत सर्वेक्षण साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से किया गया, जिससे इस योजना के क्रियान्वयन से होने वाली प्रगति एवं उनके आर्थिक पहलू की जानकारी प्राप्त हो सके किए गए सर्वेक्षण के आधार पर इस योजना से निम्नानुसार लाभान्वित परिवारों की स्थिति पाई गई।

राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना से लाभांवित परिवारों की स्थिति – तालिका

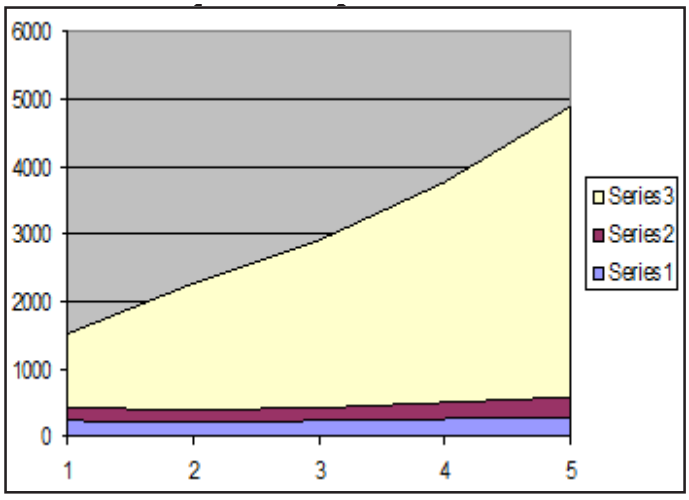
क्र.	जनपद पंचायत	लाभांवितों का प्रतिशत
1	मानपुर	57
2	करकेली	69
3	पाली	56
योग		**60.67**

स्त्रोत – व्यक्तिगत सर्वेक्षण से प्राप्त रिपोर्ट।

उपरोक्त व्यक्तिगत सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि उमरिया जिले में 60.68 प्रतिशत परिवारों को राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना से लाभ प्राप्त हुआ है, जिसमें सबसे अधिक जनपद पंचायत करकेली के 69 प्रतिशत परिवारों को लाभांवित हो रहे है तथा सबसे कम जनपद पंचायत पाली के 56 प्रतिशत परिवार लाभांवित हो रहे हैं।

इस प्रकार सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि यह योजना भूमिहीन परिवारों के आर्थिक प्रगति में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी।

उमरिया जिले में राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना की वर्षवार प्रगति



1. स्वीकृत लागत(लाख रुपये में)
2. व्यय राशि (लाख रुपये में)
3. रोजगार संख्या

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जिला पंचायत उमरिया म.प्र. से प्राप्त आंकड़ें।
2. व्यक्तिगत सर्वेक्षण।
3. जिला सांख्यकीय पुस्तिका उमरिया 2012–13, 2013–14
4. भारत में पंचायती राज – अरूण श्रीवास्तव रावत पब्लिषर्स जयपुर 1994

संपूर्ण रोजगार योजना की जनपद पंचायतवार स्थिति – (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक)

तालिका

क्र.	जनपद पंचायत	स्वीकृत लागत (लाख रूपये में)	व्यय विवरण			
			नगदी	खाद्यान्न		
			नगदी मजदूरी भुगतान (लाख रू.में)	चावल क्वि.	गेहूँ क्विं.	योग क्वि.
1	मानपुर	119.24	59.62	975.00	840.0	1815.00
2	करकेली	228.73	114.37	1244.0	1050.0	2294.00
3	पाली	88.33	44.17	672.00	790.0	1462.00
	योग	436.30	218.16	2891.0	1680.0	5571.00

स्त्रोत– जिला पंचायत उमरिया (म.प्र.)

खरगोन जिले के ग्रामीण क्षेत्रो में खरीफ एवं रबी फसल बीमा - एक अध्ययन

डॉ. रश्मि चौहान *

प्रस्तावना - भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि एवं अन्य कार्यो की जोखिम से बहुत पूर्ण होती है। कृषि सुखे, बाढ आदि की जोखिम से बहुत अधिक प्रभावित होती है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि के साथ पशुधन यथा गाय, भैस, बैल, बकरी, भेड आदि रेशम कीट तथा मधुमक्खी, पौधा रोपण तथा बागवानी फसले, कृषि यंत्र, व्यक्ति तथा ग्रामीण दुर्घटना आदि परिसम्पत्तियॉ बहुत जोखिम पूर्ण होती है। अत: जरूरी है कि कृषक एवं ग्रामीणों को जोखिम के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान की जाए। भारत में बीमा 1939 से प्रभावी हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के बीमा उद्योग की दशा सुधारने के लिए प्रयास किए गए। सन् 1950 में बीमा अधिनियम में अनेक महत्वपूर्ण संसोधन किए गए। सन् 1956 में भारत में लाईफ इंन्योरेन्स कार्पोरेशन लिमिटेड की स्थापना की गई। भारतीय जीवन बीमा निगम केवल व्यक्ति को जीवन जोखिमो से सुरक्षा प्रदान करता है। जीवन के साथ-साथ परिसम्पत्तियो की सुरक्षा भी बहुत महत्वपूर्ण होती है। परिसम्पत्तियो को जोखिम सुरक्षा प्रदान करने हेतु सामान्य बीमा अधिनियम 1972 पारित किया गया।

विषय का चयन - खरगोन जिले की अर्थव्यवस्था पूर्ण रूप से कृषि एवं ग्राम आधारित है। जिले कि 84.5 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है तथा कृषि एवं वनोपज से अपनी जीविका चलाती है। इस क्षेत्र की कुल कार्यशील जनसंख्या का 75 प्रतिशत भाग कृषि कार्यो में संलंग्न है। कुल कृषि भूमी के मात्र 25 प्रतिशत भाग पर ही सिंचाई सुविधाऍ उपलब्ध है।

जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार एवं आय के प्रमुख साधन आज भी कृषि ही है। जिले की कृषि पूर्णरूप से मानसुन पर निर्भर है। कृषक एवं ग्रामीण परीवार कई जोखिमों के साथ अपने कार्यो को ईश्वर के भरोसे सम्पन्न करते है। जिले में ग्रामीण क्षेत्रों की फसलो का बीमा जागरूकता के अभाव में एवं आय की कमी से बहुत कम मात्रा में होता है। जिससे ग्रामीणों की जोखिमें बहुत अधिक बनी रहती है। यदि ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पन्न जोखिमों से बीमा सुरक्षा प्रदान होती है, तो इस पिछड़े जिले के ग्रामीण परिवारों एवं कृषकों का विकास होगा जो प्रदेश एवं राष्ट्र के लिए लाभप्रद होगा।

अनुसंधान के उद्देश्य - इस शोध प्रबंध का प्रस्तुतिकरण निम्नलिखित उद्देश्यो की पूर्ति हेतु किया गया है-

1. इस बात का अध्ययन करना कि कृषक खरीफ एवं रबी फसल बीमा में से किसे अधिक महत्व देतें है और क्यों ?
2. यह अध्ययन करना कि किसानों को बीमा सुरक्षा का लाभ प्राप्त हुआ है या नही।
3. जिले में बीमित कृषि भूमि का अध्ययन करना।
4. बीमा सुरक्षा से अधिक लाभ प्राप्त हो सके इस हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

खरगोन जिले में फसल बीमा की प्रगति - कृषि का मानसुन पर निर्भर होना तथा फसलो में कीट प्रकोप व अन्य प्राकृतिक आपदाओं से कृषि कार्य जोखिम भरा हो गया है। कृषकों की फसलों को हुए नुकसान की क्षतिपूर्ति के लिए बीमा अनिवार्य हो गया है। खरगोन जिले में फसल बीमा की प्रगति का अध्ययन अगामी तालिकाओं में किया गया है -

खरगोन जिले में बीमित कृषि भूमि - खरगोन जिले के कृषक भी बोयी गई अधिक से अधिक कृषि भूमि का फसल बीमा करवाने लगे है। खरगोन जिले में सकल बोयी गई कृषि भूमि में से फसल बीमा कर आवरण प्राप्त कृषि भूमि की स्थिति अग्रतालिका में दी गई है-

तालिका (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि खरगोन जिले में वर्ष 2005-06 व 2009-10 में कृषि भूमि के बीमित क्षेत्र में कमी आयी है। इसी प्रकार खरीफ मौसम के बीमित क्षेत्र में वर्ष 2007-08 में कमी हुई। वर्ष 2009-10 में रबी मौसम में 195739 हैक्टेयर तथा खरीफ मौसम में 288636 हैक्टेयर कृषि भूमि फसल बीमा योजना के अन्तर्गत बीमित थी। जिले की अधिक से अधिक कृषि भूमि को बीमा कवरेज में लाने का प्रयास किया जा रहा है।

खरगोन जिले में फसल बीमा धन - बीमा धन फसल की प्रकृति के अनुसार अलग-अलग होता है। खाधान्न फसलों का बीमाधन कम तथा व्यापारिक फसलों का बीमाधन अधिक होता है। खरगोन जिले में बहुतायत में खाद्यान्न फसले बोयी जाती है, इसलिए यहॉ बीमा राशि अधिक नहीं है।

तालिका

खरगोन जिले में फसल बीमा के तहत बीमा धन (करोड़ रूपयो में)

क्र.	वर्ष	रबी मौसम	खरीफ मौसम	योग
1	2005-06	2.98	15.02	18.00
2	2006-07	3.01	15.51	18.52
3	2007-08	3.49	15.63	19.12
4	2008-09	3.85	15.69	19.54
5	2009-10	3.54	15.96	19.50

स्त्रोत-फसल बीमा नोडल एजेन्सी जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित खरगोन।

खरगोन जिले में बीमा धन की तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 2005-06 में रबी मौसम एवं खरीफ दोनो फसलो की सकल बीमा राशि 18.00 करोड़ रूपये थी, जो फसलो के कुल मूल्य की जुलना में बहुत कम होती है। इस राशि में 2.98 करोड़ रूपये का रबी फसलो के लिए तथा 15.02 करोड़ रूपये का बीमा खरीफ फसलों का किया गया था। वर्ष

* एम.ए.,पीएच.डी (अर्थशास्त्र) खरगोन (म.प्र.) भारत

2009-10 में फसल बीमा की राशि बढकर 19.50 करोड़ रूपये हो गई। कृषि उत्पादो की कीमतो में वृद्धि, कृषि आगतो में वृद्धि के कारण ऋण मान आधारित फसल बीमा की राशि में 05 वर्षो में बढ़ गई किन्तु यह वास्तविक कीमतों से कई गुना कम थी जो कृषकों के लिये हितकारी नहीं कहीं जा सकती।

खरगोन जिले के कृषकों को फसल बीमा की प्राप्त क्लेम राशि – रबी मौसम और खरीफ मौसम दोनों में ही फसल को क्षति पहुँचती है। फसल क्षति होने पर कृषकों को बीमा की राशि प्राप्त होने पर उनकी क्षति की थोड़ी भरपाई हो जाती है। फसले तो बहुत अधिक खराब होती है, लेकिन बीमा की शर्तो को पूरा न कर पाने के कारण कृषकों को बहुत कम राशि प्राप्त हो पाती है–

तालिका

खरगोन जिले के कृषकों को फसल बीमा के तहत प्राप्त क्लेम राशि –

क्र.	वर्ष	रबी मौसम	खरीफ मौसम	योग
1	2005-06	197565.43	0911125.02	1108690.45
2	2006-07	218413.28	2413215.00	2631628.28
3	2007-08	152799.19	4861702.86	5014502.05
4	2008-09	114390.11	2642834.08	2757224.19
5	2009-10	137053.29	1642881.21	1779934.50

स्त्रोत – फसल बीमा नोडल एजेन्सी जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित खरगोन।

उपरोक्त तालिका खरगोन जिले के कृषकों को फसल बीमा के तहत प्राप्त क्लेम राशि का वर्णन करती है। वर्ष 2005-06 में जिले के कृषको को कुल 1108690.45 रूपये की राशि क्षतिपूर्ति के रूप में प्राप्त हुई जिसमें 197565.43 रूपये रबी मौसम में तथा 0911125.02 रूपये खरीफ मौसम की फसलों के लिए क्षतिपूर्ति प्राप्त हुई। क्षतिपूर्ति की राशि में बीच के वर्षो में उच्चावन की स्थिति बनी है। वर्ष 2009-10 में रबी मौसम में कृषको को 137053.29 रूपये की तथा खरीफ मौसम में 1642881.21 रूपये की बीमा राशि प्राप्त हुई।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र खरगोन जिले के कृषक भी फसलों के नुकसान होने फसल बीमा के लाभ प्राप्त कर रहे है लेकिन फसल बीमा के अन्तर्गत उन्हे जो जो क्षतिपूर्ति राशि दी जा रही है वह पर्याप्त नहीं है। जिले में फसल बीमा के अन्तर्गत बीमित कृषकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। यहॉ पर रबी मौसम की तुलना में खरीफ मौसम की फसलों का बीमा अधिक हुआ है। वर्ष 2009-10 में 55266 कृषको ने रबी मौसम की फसलों का तथा 117396 कृषको ने खरीफ मौसम की फसलों का बीमा करवाया । अध्ययन अवधि में फसल बीमा करवाने वाले कृषको की संख्या में वृद्धि व कमी होती गई।

फसल बीमा के अन्तर्गत बीमा धन जितना अधिक होता है, कृषकों को उतनी अधिक मात्रा में बीमा सुरक्षा प्रदान प्राप्त होती है। खरगोन जिले में वर्ष 2005-06 में खरीफ एवं रबी मौसम की फसलों का जो बीमा हुआ उसका कुल धन 18.00 करोड़ रूपये तथा जो बढ़कर 2009-10 में 19.50 करोड़ रूपये हो गया। लेकिन फसल बीमा के अन्तर्गत उन्हें जो क्षतिपूर्ति राशि दी जा रही है वह पर्याप्त नहीं है। वर्ष 2005-06 में 13289 कृषकों को 1108690.45 रूपये की क्षतिपूर्ति का भुगतान किया गया । इसी प्रकार वर्ष 2009-10 में 13135 कृषकों को 1779934.50 रूपये का क्षतिपूर्ति भुगतान किया गया। संख्या की द्रष्टि से यदि तो फसल बीमा के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति प्राप्त करने वाले कृषकों को संख्या बहुत कम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. The Indian economic journal, journal of India economic association.
2. Kumaran K.P.—Rural Tension in India collage book dept. Jaipur (2005).
3. Pathak B.S. (1986) Gop. Insurance: Ret .
4. यादव सुबह सिंह –कृषि अर्थषास्त्र (2002) रावत पब्लिकेशन, दिल्ली।
5. सिंह सुदामा – भारतीय अर्थव्यवस्था (2009) राधा पब्लिकेश4न, नई दिल्ली।
6. पन्त डी.सी.– भारत में ग्रामीण विकास (2001) कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
7. yyy.aicofindia.com
8. www.gicofindia.com
9. www.kisanwatch.org
10. www.mpgov.in

तालिका

खरगोन जिले में फसल बीमा के अन्तर्गत बीमित क्षेत्र (हेक्टयर)

क्र.	वर्ष	रबी मौसम	वृद्धि/कमी	खरीफ मौसम	वृद्धि /कमी
1	2005-06	190123	-4095	280111	+16698
2	2006-07	192211	+2088	281582	+1471
3	2007-08	197913	+5702	274792	-6790
4	2008-09	207284	+9371	286201	+11409
5	2009-10	195739	-11545	288636	+2435

स्त्रोत–फसल बीमा नोडल एजेन्सी जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित खरगोन।

****

महिलाओं के विकास में स्वरोजगार का महत्व

कमलराज सिंह उइके *

प्रस्तावना – उद्यमिता देश में अनुमानित 35 करोड़ महिलाए कामकाजी आयु की है। इनका योगदान विभिन्न उत्पाद गतिविधियों के माध्यम से आसानी से प्राप्त हो सकता है। लघु एवं कुटीर उद्योगों में आसानी से प्राप्त हो सकता है। लघु एवं कुटीर उद्योगों में महिलाओं का भूमिका इतनी सार्थक हो सकती है कि उत्पादन स्तर को अत्यधिक ऊपर उठाने में आशा के अनुरुप सफलता मिल सकती है।

भारतीय समाज में तथा विश्वव्यापी स्तर पर महिलाओं के प्रश्न को असमानता के साथ जोड़ा गया है। महिलाओं और पुरुषों का चौथा संस्करण अभी कुछ सयम पहले ही जारी किया है। इसे पढ़कर अधिकांश भारतीयों को निराशा ही होगी क्योंकि वर्ष 2009 की 134 देशों की इस सूची में चीन 60वें नम्बर पर है, इस साल इस सूची में आइसलैंड पहले स्थान पर है। खुद विश्व आर्थिक मंच की इन सूची में बताया गया है कि भारतीयों की तुलना में चीनी महिलाये बेहतर स्थिति में है।

पिछले कुछ समय से भारतीय अर्थव्यवस्था तकरीबन 9 फीसदी की दर से बढ़ती रही है मगर इस सूची में भारत 113 से 114 पायदान के बीच ही उलझा रहा है। इसका सीधा सा मतलब निकाला जा सकता है, कि भले ही देश की अर्थव्यवस्था में तेज गति से सुधार आया है। मगर इससे महिलाओं को कुछ खास फायदा नहीं हुआ है।

समानता का अर्थ अत: समता मूलक समाज की स्थापना है, जिसमें राज्य के सभी नागरिकों को समान अधिकार होगें। भारत ही नहीं समूची दुनिया में आज महिला सशक्तिकरण का दौर है फिर भी महिलायें आगे क्यों नहीं बढ़ पा रही है। भारत की आबादी में महिलाओं की लगभग आधी हिस्सेदारी है। मगर जब बात महिला विकास की आती है, तो उन्हें इससे कोई विशेष लाभ मिलता नजर नही आता है।

कार्ल मार्क्स तथा एगिल्से ने भी स्वीकार्य किया है, कि स्त्रियों का उद्धार और उनकी पुरुषों से समानता तब तक असंभव है, जब तक कि उन्हे समाज के उत्पादकीय कार्यो से वंचित करके घरेलू कामों तक सीमित रखा जाता है।

आज महिलाए विभिन्न क्षेत्रों में सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। यदि हम कामकाजी महिलाओं की संख्या के आधार पर विकास कर रही है जिसके चलते वे आर्थिक रुप से स्वतंत्र भी हो रही है, अपनी कामकाजी प्रवृत्ति के कारण आधुनिक महिलाएं सम्मान भी प्राप्त कर रही है। चंदा कोछड़ किरण मजुमदार शा, विनीता वालिस और बड़ी बड़ी कम्पनियों में ऊंचे औहदे पर बैठी महिलाओं जिन पर भारत को गर्व है। पर अगर हम गहनता से इस बात पर विचार करें तो पता चलता है कि भारतीय कम्पनियों या संगठनों मे शीर्ष पदो पर पहुचने वाली महिलाओं की संख्या काफी कम है। राजनीति में शीर्ष पर प्रधानमंत्री श्रीमति इंदिरा गॉधी एवं राष्ट्रपति श्री प्रतिभा पाटिल महिलाओं का गौरव बढ़ाया है पर यहां भी सफल महिलाओं की संख्या बहुत की कम है। आखिर क्या वजह है कि भारत के ऊंचे प्रबंधकीय पदो पर इतनी कम महिलाए इसकी मुख्य वजह यह है कि देश में महिलायें इतनी शिक्षित नहीं है, कि उन्हें इतने ऊंचे पदो पर बिठाया जा सके।

कामकाजी महिलाओं की संख्या के लिहाज से चीन के बाद भारत का दुनिया में दूसरा स्थान है। एक अनुमान के मुताबिक इस समय देश में महिलाओं के पास अधिकार है, जिनमें से अधिकांश महिलाएं ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित है। हालांकि इनमें से ज्यादातर रोजगार शारीरिक श्रम तक सीमित है। इन गतिविधियों में मुख्य रुप से खेतों और निर्माण क्षेत्रों मजदूरी तथा घरेलू कार्य शामिल है।

इनमें से ज्यादातर रोजगार से महिला सशक्तिकरण या उनके दशा को बेहतर बनाने में कोई मदद नहीं मिली इससे उनके उत्पीड़न को भी बढ़ावा मिला। कामकाजी महिलाओं को बाहर का काम करने के साथ ही घर के काम भी पूर्व की भांति करने पड़ रहे है। अपनी सभी जिम्मेदारियों को पूरा करने के बावजूद कठिन परिश्रम से कमाई गई राशि को अपनी मर्जी के मुताबिक खर्च करने का आज भी अधिकारी महिलाओं को नहीं है। उस धन पर भी अभिभावकों का ही अधिकार नियंत्रण होता है।

अमर्थ सेन ने अपने शोध पत्र एक्शपेशन ऑफ एटाइटिलमेंटस में लिखा है कि यदि अधिकारों का विस्तार कर दिया जाए तो विकास अपने आप हो जाएगा। भारतीय महिलाओं को भी आज अधिकार दिए जाने की जरुरत है। महिला रोजगार की प्रकृति व विशेषता – वे रोजगार कौन से हैं, जिनमें महिलाएं जुड़ी हुई है ? ग्रामीण महिलाओं के लिए वेतन रहित कामगार/ सहायिकाएं सबसे बड़ा समूह (41 प्रतिशत) और उसके बाद आकस्मिक कामगार (31 प्रतिशत) कृषि व बुनकर संबंधी कार्य संकट में है और पुरुष धनार्जन हेतु महिलाओं को छोड़कर गांव से बाहर जा रहे है और उन महिलाओं को स्व–नियोजित या अपने लिए काम करने वाली के रुप में दर्ज किया जाता है। समय के साथ आकस्मिक कामगारों में लगभग (4 प्रतिशत) की कमी आई है। नियमित कामगारों के क्षेत्र में बढ़ोतरी होने के बावजूद वे अनुपात में काफी कम (6 प्रतिशत) है।

शहरी कामगार महिलाओं के संबंध में समग्र तौर पर स्थिति सुधरती दिखाई दे रही है क्योंकि 20 वर्षो के दौरान नियमित कामगारों की संख्या में 10 % प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। हालांकि महिलाओं की कार्य भागीदारी दर 2011–12 में शहरी क्षेत्रों में काफी कम मात्रा 15% है। इससे स्पष्ट है कि जिस तरह से नियमित कार्य को परिभाषित किया जाता है वह समग्र स्थिति (ट्रेड) के प्रतिकूल जाता है। यह न्यूनतम वेतन व संतोष जनक कार्य स्थितियों

* शोद्यार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

के साथ औपचारिक, विनियमित कार्य नहीं है। यह कार्य का बदतर रुप हो सकता है किन्तु निर्धारित कार्यकाल में निरंतर रोजगार प्रदान करता है। इसमें संविदा रोजगार के विभिन्न प्रकारों के अलावा सवेतन घरेलू कार्य और अन्य सेवा क्षेत्र के कार्य मसलन शॉप सहायक, स्वागती आदि शामिल है। इसलिए नियमित कामकारों के बड़े हिस्से को भी उभरते असंगठित हिस्से के रुप में देखा जाना चाहिए। यह किस प्रकार का कार्य है? एक ओर महिलाएं संभवत: परिवार के अन्य सदस्यों से स्वतंत्र होकर आय प्राप्त कर रही हैं। जिसका उपयोग वे अपनी मर्जी से अधिकतर नियमित उपभोग के खर्चो के लिए कर सकती है।

महिलाओं के लिए शासकीय सेवाओं में आरक्षक – उद्देश्य–महिलाओं को प्रोत्साहन और समाज की मुख्य धारा में शामिल करना।

योजना का स्वरुप और कार्य क्षेत्र – 1 नवम्बर 1956 से लागू इस आरक्षक प्रावधान के अनुसार अब शासकीय सेवाओं में महिलाओं के लिए 33 % स्थान आरक्षित किए गए है। सेवाओं में नियुक्ति के लिए महिलाओं को उच्चतम आयु सीमा में 10 वर्षो का छूट रहेगी। इस छूट के फलस्वरुप अब 43 वर्ष तक की उम्र की महिलाएं शासकीय सेवाओं में नियुक्ति के लिए पात्र होगी। आरक्षित वर्ग महिलाओं के लिए उच्चतम आयु सीमा 48 वर्ष तक रहेगी। महिलाओं को यह आरक्षण सभी श्रेणी के पदों में भर्ती पर मिलेगा। महिलाओं को दिया गया यह आरक्षण सभी सरकारी दफ्तरों, स्थानीय संस्थओं, पंचायतों, विकास प्राधिकरणों, विश्व विद्यालयों, निगमों, कंपनियों और सहकारी समितियों की सेवाओं में भी लागू होगा। आरक्षक व्यवस्था कार्यभारित और आकस्मिकता से वेतन वाले पदो पर भी लागू होगी।

पात्र हितग्राही – सभी वर्गो की शिक्षित बेरोजगार, नौकरी की इच्छुक महिलाएं।

हितग्राही चयन प्रकिया – नौकरियों के लिए विज्ञापित पदों में दी जाने वाली शर्तो के अनुरुप संबंधित शासकीय विभाग और अन्य नियोजकों द्वारा।

महिला किसान सशक्तिकरण परियोजना – मध्य प्रदेश में 1 अप्रैल 2012 से शुरु हो रहे राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के उपघटक के रुप में महिला किसान सशक्तिकरण परियोजन्य का कार्यान्वयन भी शुरु होगा कृषि क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति में बदलाव और सुधार के मकसद से उनके सशक्तिकरण के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए इस परियोजना का क्रियान्वयन किया जा रहा है। यह परियोजना मण्डला, बालाघाट, डिंडोरी, झाबुआ, बड़मानी, टीकमगढ़, छतरपुर, सीहोर, धार, सागर, बैतूल, दमोह, छिंदवाड़ा, सिवनी, देवास, और उमरिया सहित 16 जिलों में क्रियान्वित की जाएगी। इस परियोजना में स्व सहायता समूहो के जरिये करीब 60 हजार महिला किसान लाभान्वित हो सकेगी।

जाबालि योजना – मध्य प्रदेश में बेड़िया, बॉछड़ा और सॉसी जाति की महिलाओं व बच्चों के उत्थान के लिए क्रियान्वित की जा रही है, जाबालि योजना में विदिशा जिले को भी शामिल किया गया है। अभी यह योजना 6 जिलों रायसेन, राजगढ़, सागर, मुरैना, उज्जैन और छतरपुर में संचालित की जा रही थी। जाबालि योजना से एन.जी.ओ. द्वारा स्वैच्छिक संस्थानो के माध्यम से बेड़िया–बॉछड़ा और सॉसी जाति के बच्चों के लिए 13 आश्रम शालाएं संचालित की जा रही है।

तेजस्विनी ग्रामीण महिला सशक्तिकरण योजना – यह योजना मध्य प्रदेश सरकार द्वारा महिलाओं के हितार्थ 5 जून 2006 से प्रारंभ की है। इन्टरनेशनल फण्ड फॉर एग्रीकल्चर डेवलपमेंट के सहयोग से लागू की जाने वाली 161.59 करोड़ रुपये की आठ वर्षो की इस परियोजना द्वारा छ: जिलों के 2400 गांवो में 12000 महिला स्व सहायता समूहों का सदृढ़ीकरण किया जाएगा। इस योजना में 1.80 लाख महिलाएं लाभान्वित होगी। यह परियोजना प्रदेश के बालाघाट, डिंडोरी, मण्डला, पन्ना, छतरपुर, और टीकमगढ़ में चालू है। इस योजना का लक्ष्य महिलाओं का स्व सहायता समूह तैयार कर महिलाओं की माइक्रोफाइनेसिंग सेवाओं तक पहुँच बढ़ाया है तथा बेहतर जीविका उपार्जन के अवसर उपलब्ध कराया है। यह योजना मध्य प्रदेश महिला बाल विकास के अंतर्गत महिला वित एवं विकास निगम द्वारा क्रियान्वित की जा रही है।

महिला एवं बाल सुरक्षा इकाई कार्यक्रम – महिला एवं बच्चों से संबंधित समस्याओं का निदान कर उन्हें शीघ्र न्याय दिलाए जाने के उद्देश्य से प्रत्येक जिला मुख्यालय पर जिला न्यायाधीश की अध्यक्षता मे 'महिला एवं बाल सुरक्षा ईकाई' का गठन किया गया है। यह इकाई महिला एवं बच्चों में उनके विधिक अधिकारों कर्तव्यो के संबंध में उन्हें जागरुक कर उनकी समस्याओं का निदान करती है।

उज्जवला योजना – व्यावसायिक यौन शोषण की शिकार महिलाओं के उद्धार, पुनर्वास, तथा उन्हे फिर समाज की मुख्य धारा से जोड़ने हेतु 4 दिसम्बर 2007 से उज्जवला योजना का शुभारम्भ केन्द्र सरकार द्वारा किया गया है। इस योजना में व्यावसायिक यौन शोषण रोकथाम पीड़ित के लिए आवास एवं चिकित्सा (पुनर्वास) समाज की मुख्यधारा में लाया तथा स्वदेश भेजना।

मुख्यमंत्री कन्या अभिभावक पेंशन योजना – मध्य प्रदेश सरकार ने 24 सितम्बर 2012 को मुख्यमंत्री कन्या अभिभावक पेंशन योजना को मंजूरी प्रदान की।

पात्रता – इस योजना के तहत पेंशन की पात्रता उन अभिभावकों को होगी जिनकी सिर्फ पुत्रियॉ हैं और वे आयकर दाता नहीं है।

योजना लाभ – योजना के मुताबिक पुत्रियों के माता–पिता दोनों में से किसी की आयु 60 वर्ष या उससे अधिक हो ऐसे अभिभावकों को रुपये 500/– प्रतिमाह पेंशन दी जाएगी। यह पेंशन वृद्धावस्था पेंशन के अतिरिक्त होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सामान्य अध्ययन – मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
2. योजना – 648, सूचना भवन, सीजीओ परिसर लोधी रोड नई दिल्ली 110003
3. महावीर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स 237 विश्वकर्मा नगर इन्दौर 2431251

****

सर्वहारा वर्ग का विकास – शिक्षा द्वारा जनचेतना से संभव

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – अत्यंत प्राचीनकाल से ही हिन्दू समाज विभिन्न जातियों का समाज रहा है। जाति व्यवस्था में समाज को स्पष्ट रूप से चार भागों में बांटा है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र (दलित)। कार्य के अनुसार वर्ण व्यवस्था में लोगों को कई छोटे – छोटे वर्गों में बाँट दिया। यहाँ समाज दो भागों में विभाजित कर दिया गया। एक उच्च वर्ग और दूसरा सर्वहारा वर्ग। उच्च वर्ग ने शुरू से ही समाज के एक बड़े वर्ग को हाशिए पर रखा है। उच्च वर्ग ने समाज के सर्वहारा वर्ग को जीवन जीने के लिए सीमित अधिकार दिए। जीवन जीने की कसौटी बहुत गढ़कर और छांटकर एक वर्ग विशेष के लिए रखी गई।

प्राचीन भारत में वंचन अप्राप्य था। समाज में व्यक्ति को अपने वर्ग के अनुसार शिक्षा दी जाती थी। जैसे ब्राह्मणों को धर्म – कर्म की शिक्षा, क्षत्रियों को विद्या तथा राजनीति, वैश्यों को वाणिज्य एवं कृषि विज्ञान की तथा शूद्रों को विविध साधारण कलाओं और हस्तकार्य की शिक्षा दी जाती थी। समाज में कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था थी। इस प्रकार किसी भी रूप में किसी भी जाति का शोषण या पिछड़ापन तथा वर्ण व्यवस्था के कारण किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं मिलता है। **रामायण** काल में महर्षि वाल्मिकी जो मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम के पुत्रों लव एवं कुश के गुरू एवं संरक्षक थे सर्वहारा वर्ग से ही संबंधित थे। इसी समय शबरी जो जाति से भीलनी थी, अपने भक्ति कर्म के कारण ऋषि समाज में प्रिय थी। **महाभारत** काल में दासी पुत्र विदुर, महर्षि वेदव्यास जो मल्लाह कन्या सत्यवती के पुत्र थे और महाभारत महाकाव्य के रचियता माने जाते हैं, अपने समय के सर्वाधिक प्रतिष्ठित ऋषियों में थे। मल्लाह कन्या सत्यवती का हस्तिनापुर नरेश शान्तनु से विवाह होना भी उस समय के कर्म प्रधान वर्ण व्यवस्था एवं स्वस्थ शिक्षा व्यवस्था की ओर इंगित करते हैं। इस प्रकार प्राचीनकाल में शिक्षा व्यवस्था भेदभाव रहित एवं वर्ण आधारित थी।

बौद्धकाल में महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म में चारों वर्णों को स्थान दिया। इस काल (ईसा पूर्व 582) में धार्मिक, व्यवहारिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक ज्ञान प्रदान किया जाता था। इस काल में आकर निम्नवर्ग को स्वतंत्रता तथा अधिकार मिला। यह वर्ग बौद्ध विहारों तथा मठों में जाकर शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। **मुस्लिम काल** में धार्मिक कट्टरता के कारण हिन्दू और बौद्ध शिक्षा केन्द्रों को समाप्त कर दिया गया। इस काल में मदरसों और मकतबों का निर्माण मुस्लिम शिक्षा के प्रचार प्रसार हेतु किया गया जिसमें बिना किसी भेदभाव के सभी जाति और धर्म के बालक विद्यार्जन कर सकते थे। इस काल में हिन्दुओं की शिक्षा की उपेक्षा की गयी। परंतु मुगलकाल में दलित वर्ग की शिक्षा में उतार का काल था। मुगलकाल में शिक्षा का आधार धार्मिक था तथा इस युग में शिक्षा की सुविधाऐं बहुत कम थीं। परिणामस्वरूप शिक्षा पर बहुत कम ध्यान दिया गया।

15वीं – 16वीं शताब्दी में भक्ति आंदोलन के फलस्वरूप अस्पृश्य जातियों में शिक्षा के माध्यम से सामाजिक चेतना का संचार हुआ। कबीर, रैदास, नानक आदि संतों ने अपने विचारों द्वारा निम्न वर्गीय समाज को जागृत किया। इन सबने पुरजोर जातिवाद का विरोध किया। संपूर्ण भक्ति आंदोलन, जनसाधारण के आंदोलन के रूप में उभरकर सामने आया। जिसने जातिवाद, अंधविश्वास, अस्पृश्यता, रूढ़िवादिता, धार्मिक आडंबरों की आलोचना की।

कम्पनी शासनकाल में भारतीय शिक्षा में 'निस्पंदन सिद्धांत इनके संचालकों की देन थी जो कि दलित वर्गों की शिक्षा पर अधिक व्यय करने के पक्ष में नहीं थे। सिर्फ उच्च वर्ग को ही शिक्षित करना चाहते थे। लार्ड मैकाले ने विवरण पत्र (1835) में निस्पंदन सिद्धांत का समर्थन किया। इसके अतिरिक्त उस समय भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल ऑकलैंड ने 24 नवम्बर 1839 में इसे स्वीकार किया।

स्वामी दयानंद ने अछूतोद्धार कार्यक्रम चलाए एवं स्वामी विवेकानंद तथा दूसरे महापुरूषों ने समाज सुधार के कार्यक्रम किए। गोपाल कृष्ण गोखले ने 1905 में 'सर्वेन्ट ऑफ इण्डिया' नामक संस्था स्थापित की इस संस्था के माध्यम से स्त्री शिक्षा, पिछड़ी जातियों की शिक्षा, औद्योगिक शिक्षा एवं शास्त्रीय शिक्षा के विकास के लिए विशेष कार्य किए। अस्पृश्यता आंदोलन द्वारा पिछड़ी जातियों में नव चेतना आई, नव जागरण हुआ, स्त्री और अछूतों के लिए शिक्षा का मार्ग खुला।

सन् 1921 के बाद का समय राष्ट्रीय आंदोलनों का समय था। इस अवधि में सरकार तथा राष्ट्रीय नेता राष्ट्रीय आंदोलनों में व्यस्त हो गये। परिणामस्वरूप दलित वर्ग की शिक्षा की ओर न तो सरकार का ध्यान गया और नहीं राष्ट्रीय नेता ध्यान दे पाए। सन् 1937 में जब प्रांतों में स्वशासन की स्थापना हुई तब सर्वहारा वर्ग के उद्धार के प्रयास किए गए। **ब्रिटिश भारत** में अनेक सामाजिक सुधारकों में राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, मदनमोहन मालवीय, ज्योतिबा फुले, पेरियार स्वामी, नारायण स्वामी, महात्मा गांधी ने सामाजिक चेतना का संचार कर दलितों को शिक्षित करने हेतु विशेष प्रयास किए।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत सरकार ने योजनाबद्ध आर्थिक विकास की प्रक्रिया पर अधिक बल दिया गया। चूंकि मानव विकास शिक्षा के बिना असंभव है। निश्चित रूप से उपरोक्त सुधारों के लिए शिक्षा का बहुत महत्व है। वर्तमान परिपेक्ष्य में शिक्षा गारंटी योजना, प्रौढ़ शिक्षा एवं महिला शिक्षा पर भी बल दिया गया। आर्थिक एवं सामाजिक विकास के रास्ते शिक्षा से ही खुलते हैं। डॉ. अंबेडकर ने कहा भी है कि विद्यार्थी ही देश का भविष्य है, उन्हें

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

ऊँचे स्तर की शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करना चाहिए क्योंकि ज्ञान ही शक्ति है। सभी वर्गों के लिए किसी प्रकार के भेदभाव के बिना समाज में समता और न्याय की स्थापना करना असंभव है। अत: सर्वहारा वर्ग के लोगों को शेष समाज के बराबर लाने के लिए भारतीय संविधान की धारा 341 तथा 342 के प्रावधानों के अंतर्गत विशेष अधिकार प्रदान किए गए हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात् (1948-49) नवम्बर 1948 में **राधाकृष्णन आयोग** का गठन देश में विश्वविद्यालय शिक्षा के संबंध में रिपोर्ट देने हेतु किया गया था। स्वतंत्र भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में इस आयोग की रिपोर्ट का अत्यंत महत्व है। इसी आधार पर 1953 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का गठन किया गया।

कोठारी शिक्षा आयोग - (1964-66) जुलाई 1964 में डॉ. डी. एस. कोठारी की अध्यक्षता में एक उच्चस्तरीय आयोग का गठन शिक्षा के सभी पक्षों तथा चरणों के विषय में साधारण सिद्धांत, नीतियों तथा राष्ट्रीय नमूनों की रूपरेखा तैयार कर उनसे सरकार को अवगत कराना था। आयोग ने वर्तमान शिक्षा नीति की कठोरता की आलोचना की तथा शिक्षा नीति को इस प्रकार लचीला बनाए जाने की आवश्यकता पर बल दिया जो बदलती परिस्थितियों के अनुकूल हो। आयोग की सिफारिशों के आधार पर 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की गई। जिसमें प्राथमिक शिक्षा, जिसमें 14 वर्ष की आयु तक नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा पर बल दिया गया।

संविधान में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य निम्न वर्गों के शैक्षिक तथा आर्थिक हितों को बढ़ावा देने तथा सामाजिक कमियों को शिक्षा से दूर करने के लिए सुरक्षा और संरक्षण की व्यवस्था की गयी।

निम्नवर्ग की शैक्षणिक हितों को प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्ति के लिये राज्यकोष के अनुदान में वृद्धि की जाए, शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियाँ, छात्रावास, बुकबैंक, मध्यान्ह भोजन, शिक्षा ऋण बैंकों के माध्यम, आरक्षण, विशेष नि:शुल्क कोचिंग, उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश के लिए अंकों में छूट आदि सभी योजनाओं में करोड़ों रूपये का प्रावधान किया।

निम्नवर्ग के आर्थिक और जीवन स्तर में वृद्धि के लिए भी आरक्षण व्यवस्था, सरकारी नौकरियों में आरक्षण, शीघ्र प्रमोशन, कल्याणकारी सुविधा चिकित्सा, यात्रा, शिक्षा भत्ता देना, छात्रवृत्तियाँ, संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था को रोजगारपरक तथा व्यवसायोन्मुखी बनाना, आवासीय विद्यालयों की स्थापना करना प्रमुख शैक्षिक विकास के उपाय के रूप में अपनाए गए हैं।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि किसी भी वर्ग की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए सामाजिक एवं शैक्षणिक स्थिति में सुधार लाना आवश्यक है सर्वहारा वर्ग के मसीहा कहे जाने वाले डॉ. अंबेडकर जी ने स्वंय शिक्षा के संदर्भ में कहा है कि - 'शिक्षा सिंह के दूध की भांति है, यदि पाओगे तो दहाड़ना आ जाएगा।'

सर्वप्रथम निम्न कमजोर वर्ग स्वंय अपनी अस्मिता को पहचानने का प्रयास करे इसके लिए आवश्यक है शिक्षा। मानव जीवन के विकास की जड़ शिक्षा ही है। शिक्षा में आरक्षण की बात बार - बार उठाई जाती है, किन्तु मेरी दृष्टि में आरक्षण शिक्षा रूपी सुविधा पाने का 'झरोखा' साबित हो सकता है, आत्मविकास रूपी 'दरवाजा' कदापि नहीं। इसलिए इस वर्ग को स्वंय शिक्षा प्राप्ति के लिए संघर्ष करना पड़ेगा। साथ ही शासन उन्हें आरक्षण के बजाय अन्य मूलभूत सुविधाऐं मुहैया कराए। जिससे सर्वहारा वर्ग अपने बल बूते पर अपनी प्रतिभा के द्वारा आत्मसम्मान की रक्षा करते हुए विकासोन्मुख हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत का संविधान - जय नारायण पाण्डेय पृष्ठ क्रमांक 280
2. आर्थिक समीक्षा - 2003 - 2004
3. सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष - डॉ. बी.आर. अंबेडकर पृष्ठ 75
4. भारतीय दलितों की समस्याऐं एवं समाधान - सिंह आ.जी. पृष्ठ 14- 16
5. आरक्षण - भ्रांतियाँ, अपेक्षाऐं एवं उपलब्धियाँ - गुप्ता रामप्रताप - अप्रैल 2004
6. शिक्षा का समाजशास्त्र - एम. एम. लवानिया पृष्ठ - 49,50

****

Minorities Women's Political Participation In Indian Democracy Problems And Suggestions

Dr. Abha Saini *

Introduction - Famous Political Thinker Maxi said in the Book *Modern Democracies*," Democracy is a search for a way of life in which the Voluntary free intelligence and activity of man can be harmonized and coordinated with the least possible coercion and it is the belief that such a way of life is the best way for all mankind, the way most in keeping with the nature of men and the nature of the universe." Maxi statement suits Indian parliament democracy Because In India every person has freedom and equality to choose one's choice of government .Political awareness in Indians shows real democracy .majority and Minority both are participated in political activities. Women, half population of India also represent the picture of Indian democracy. Women empowerment especially their Economic upliftment and their role in the positive social change is directly proportional to the participation of its members in the polity .The recent trends about political participation in the country reflects the poor status of Indian women. In these participation minorities women's role is only countable.

The objective of the present paper is to discuss their role and problems. It analysis the various dimensions of minorities women' political participation and recognition of their political condition.

Minorities Women's Political Participation- Minority religious communitiesinindiawhichinclude Muslims, Sikhs, Christians, Buddhists, Zoroastrians (Parsis) and Jains notified as minority communities as notified by GOI in Gazette [1]under Section 2 (c) of the National Commission for Minorities Act, 1992. though the majority of the people living in this land are Hindus [82.41%], people belonging to other religious communities such as Muslims [11.67%], Christians [2.32%], Sikhs [2%], Buddhists [0.77%], Jains [0.41%] and oth-ers rO.43%] are also living along with the Hindus by enjoying on par similar rights and opportuni-ties. India is the largest democratic country in the world .Effective Political participation is a pre-requisite for strengthening the institutional structure of democracy. Women play a vital role in decision making and political process. As for as in concern of minorities, women's role in political participation is negligible. Participation in the political process represents the turnout of women voters and number of women candidates in each election and their participation in the decision making process.

Problems and challenges - Women face the existence of disparity and disadvantage in their political participation. The causes and barriers that limit women's political participation are their social and physical images. In India, the role women play in society and the images we have of them have developed not simply from the exigencies of Biology and social situations but are rather deeply rooted in myths and legends and the religion of the culture. Her position and status in society, her nature has been issues of debates and discussion informed by religion, tradition and culture, feminism and any times down right ignorance and bigotry.

To understand the status of women in the society an examination of their political status is necessary. Through the political status is interlinked with the socio-economic status, it has the capacity to influence the transformation of the socio-economic system. It has now been accepted that women's right to vote and to occupy political position is fundamental to women's status. Its effect on women is that political awareness has increased not only Hindu women but also minorities' women. The obligation of the State to ensure and facilitate the participation of women in politics and the initiatives taken by the State in terms of legislative actions, policies and programs and their effectiveness evolve strategies to enhance the involvement of women especially minorities' women in all activities of the political processes.

In spite of the provisions of the constitutional equality, religious minorities in India, often experience some problems among which the need for security and protection is very often felt by the minorities. Especially in times of communal violence, caste conflicts, observance of festivals and religious functions on a mass scale, minority groups often seek police protection. Government in power also finds it difficult to provide such a protection to all the members of the minorities. It is highly expensive also. State governments which fail to provide such protection are always criticized. Though the Constitu-tion provides for equality and equal opportunities to all its citizens including the religious minori-ties, the biggest minority community, that is, Muslims in particular, have not availed themselves of these facilities. There is a feeling among them that they are neglected.

*H.O.D. & Associate Professor (Political Science) J.K.P.P.G. College, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA

However, such a feeling does not seem to exist among the other religious minority communities such as the Christians, Sikhs, Jains and Buddhists, for they seem to be economically and educationally better than the majority community. The women of these minority communities also face the same problem but they participate in election voting with majority. Although Rajia Sultana, Bhekaji Kama,Annie Besant to Nazma Heptulla and Smriti Irani can see minorities' women 's role in decision making politics yet they are only countable. Now minorities' women is struggling hard to better her lot against the heavy odds set to strangulate her life, suffocate her living, stifle her strength strain her work and scandalize her name in political field.

Conclusion and suggestions - Theoretically in India minorities' women enjoys political life but there is tremendous difference between the ideal, the aspirations, reality and the practice.

Education,Politicalawakening,economic independence and quotas for them are clearly the most efficient tools for improving minorities' women's representation in politics whether it is in participation or decision making process. Besides this media should play a productive role in enhancing women's participation.

References :-

1. Bano Afsar, "Indian Women", Kilaso Books, New Delhi, 2003.
2. Dr. Rath, Sharda, Dr. Rath Navaneeta, "Women in India (A Search for Identity)", Anmol Publications Pvt. Ltd., New Delhi.
3. Dr. Krishanamurty GVG, Ahuja M.L., "General elections in India Electral Politics, Electoral Reforms and Political Parties", Icon Publications Pvt. Ltd., New Delhi, 2005.
4. Kumar Ashok, "Indian Women Towards 21st Century", Criterion Publication, New Delhi.
5. Mehta Arti, "Progressive Women and Political identity", Kanishka Publishers and Distributors, New Delhi, 2004.
6. Pujari, Prem Lata & Mumari Vijay Kaushik Vol. I,II & III, "Women Power in India" Kanishka Publishers Distributors.
7. R Indira & Deepak Kumar Behera, "Gender and Society in India" Volume one theme papers and urban studies, Manak Publications Pvt. Ltd., 1999.
8. Vidya K.C., "Political Empowerment of women at the Grassroots", Kanishka Publishers & Distributors, New Delhi, 1997.

****

दलितों के राजनीतिक विकास में डॉ. भीमराव अम्बेडकर की भूमिका

डॉ. आनंद कुमार भारतीय *

शोध सारांश – भारत रत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर भारत के प्रसिद्ध विधिवेत्ता, चिंतक और संघर्षशील योद्धा थे। उनमें अपार नेतृत्व शक्ति थी। वे प्रखर बुद्धि के धनी थे। उनमें करूणा का भी भाव था। वह भारतीय संविधान के प्रमुख निर्माता थे। इन सभी क्षेत्रों की प्रगति के साथ सामाजिक, धार्मिक पृष्ठभूमि से आच्छादित यह एक जटिल समस्या है, जो समाज के लिए अभिशाप निरूपित है। वह है, वर्ण और जाति से उत्पन्न अस्पृश्यता और समाज के विघटन की समस्या जिसे साम्प्रदायिकता का नाम दिया जाता है। उन्होंने दलितों की दयनीय स्थिति में सुधार शिक्षा, संस्कृति, आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक विकास से संभव है। पूर्व की समस्या को ध्यान में रखते हुए उन्होंने संविधान में ऐसे उनके हित की बात कही। भारत के राष्ट्रीय आंदोलन ने अम्बेडकर की सक्रिय भूमिका कांग्रेस से कुछ अलग थी। उनके जीवन में दलितों को लेकर जो टीस थी, वह उन्हें स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाले अग्रणी नेताओं को सोचने से कुछ अलग करती थी। अम्बेडकर परमदेशभक्त और राष्ट्रीय एकता के समर्थक थे।

शब्द कुंजी – अछूतोद्धार।

प्रस्तावना – भारतीय लोकतंत्र को गतिमान हुए 58 वर्ष हो चुके हैं और स्वाधीनता का फल चखे 69 वर्ष। मतदाता लोकतंत्र का स्थापित प्रतिमान बन चुका है। इस अवधि में सभी मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय राजनीतिक दलों के घोषणा–पत्र का आधारभूत मन्तव्य गरीबी दूर करना प्रत्येक चुनाव के लिए रीढ़ की हड्डी की भांति रहा है। इनमें आर्थिक क्षेत्र में सड़क, बिजली, पानी, बांध स्टील प्लांट की प्रगति के साथ कृषि, व्यापार और उद्योग क्षेत्र में भी आशातीत प्रगति हुई है। टेक्नोलॉजी, इंटरनेट, हवाई सेवाओं में गुणातीत सफलता और एटम शक्ति के परीक्षण इसके जीते जागते उदाहरण है।

इन सभी क्षेत्रों की प्रगति के साथ एक सामाजिक, धार्मिक पृष्ठभूमि से आच्छादित एक जटिल समस्या है, जो समाज के लिए अभिशाप निरूपित है। वह है, वर्ण और जाति से उत्पन्न अस्पृश्यता और समाज के विघटन की समस्या जिसे साम्प्रदायिकता का नाम दिया जाता है। हिन्दू धर्म में इसे कोई समस्या के रूप में नहीं देखा गया है। वर्ण धर्म के नाम पर इसे धर्म का आवश्यक अंग मानकर सतत चलती रहने वाली जीवंत प्रक्रिया है। इससे निश्चय ही हिन्दू समाज में सदैव ऊँचे और नीचे के भाव वाली असमानता जीवंत बनी रही।

इन अवधारणाओं का अंत राजनीतिक अधिकार और संरक्षण के बिना असंभव रहा। इस क्षेत्र में अभूतपूर्व जागृति पैदा करके उनमें स्वाभिमान जगाने का जो कार्य डॉ. बी.आर. अम्बेडकर द्वारा किया वैसा अन्यत्र था ही नहीं। हिन्दू समाज में व्याप्त असमानता, सामाजिक भेदभाव एवं अस्पृष्यता का मूलोच्छेद भारतीय संविधान के माध्यम से विधिवत संभव हुआ। परिणामत: अनुसूचित जातियों ने इन कुरीतियों से स्वाभिमान के साथ लड़ना सीख लिया है, वे सत्याग्रह का अर्थ जान सके हैं और श्रेष्ठतम स्थान राष्ट्रपति के पद को सुशोभितकर सके हैं। इन्हीं के फलस्वरूप डॉ. अम्बेडकर के लिए आदर और सम्मान सूचक संबोधन **बाबा साहेब, दलितों के मसीहा** और बौद्ध धर्म में **बोधिसत्व** से जाने गए हैं।[1]

डॉ. अंबेडकर ने दलितों की सोई हुई चेतना को जगाया। उनमें एक नई चेतना का संचार किया। उन्होंने बताया कि अपने पुर्खों के पापों का फल भोगने का रूढिवादी विचार निकाल दे। उन्हें अपनी बेड़ियां इसी जन्म में तोड़ फेंकने का आव्हान किया जो उनका जन्मसिद्ध अधिकार है।

डॉ. अम्बेडकर एक नाम नहीं है, वरन् एक प्रतीक है। अम्बेडकर एक सामाजिक क्रांति के प्रतीक है। यथा स्थिति के विरूद्ध सामाजिक क्रांति को और अम्बेडकर की स्मृति को सम्मान देने का केवल एक ही तरीका है वह यह कि ऐसा वातावरण पैदा किया जाए कि शिक्षित लोग अम्बेडकर के अनुसूचित जाति मुक्ति का जो मिशन प्रारंभ किया था उसके लिए समर्पित हो जाए मैं सरकारी कर्मचारियों से आंदोलन में भाग लेने के लिए नहीं कहता। मैं आपसे केवल यह अपेक्षा करता हूँ कि आप अपना कर्त्तव्य करते समय नियमानुसार दलित लोगों को न्याय प्रदान करें तथा निर्भीक होकर लोगों को बताए कि आप अमुक अनुसूचित जाति के सदस्य है।[2]

उनके जीवन का ध्येय अछूतोद्धार था और जुलाई 1924 को **बहिष्कृत हितकारिणी सभा** की स्थापना कर अछूतोद्धार आंदोलन को प्रारंभ किया। जिसका दलितों में शिक्षा का प्रचार–प्रसार इनके बीच वाचनालय, समाज केन्द्र, विद्या केन्द्र स्थापित करना, आर्थिक स्थिति सुधारने, औद्योगिक, कृषि विद्यालय स्थापित करना, उनकी कठिनाईयों को दूर करने का प्रतिनिधित्व करना है।[3]

उन्होंने गोलमेज सम्मेलन, लंदन में अछूतों के प्रतिनिधि के रूप में 1930,1931 व 1932 में भाग लेकर पूना समझौते को कार्यरूप दिया। संवैधानिक सुधार और दलित सुरक्षोपायों के प्रति वे जीवंत सजग रहे। इन प्रावधानों को परिष्कृत रूप में भारतीय संविधान में ड्राफ्टिंग कमेटी के अध्यक्ष के रूप में संयोजित करने में सफल हुए।

डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म में व्याप्त सामाजिक असमानताओं को मिटाने के लिए अहिंसात्मक आंदोलनों का नेतृत्व प्रदान किया जिनमें महाड़

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,अशोक नगर (म.प्र.) भारत

आंदोलन, नासिक के कालाराम मंदिर में प्रवेश, महार वतन का विरोध आदि को उल्लेखित किया गया है।

अम्बेडकर का अछूतोद्धार संबंधी कार्यक्रम सामाजिक एकता के सिद्धांत पर आधारित था। वे समझते थे कि दलित तथा अछूत वर्ग संवैधानिक तथा राजनीतिक अधिकारों के माध्यम से ही अपनी स्थिति सुधार सकते है। इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि राष्ट्रीय जीवन में समानता में अपनी क्षमताओं को खो चुका है, इन अधिकारों के समुचित प्रयोग का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।[4]

अम्बेडकर ने शिक्षा के प्रचार-प्रसार के साथ ही शिक्षा के स्वरूप के विषय में विचारों का उल्लेख किया है। वहीं समाज जाग्रत है, जिसके विचार हर क्षेत्र में अद्यतन है। पराधीन भारत के लिए संसार की बदलती परिस्थितियों से अवगत होने के लिए न तो संस्कृत, न उर्दू-फारसी और न पाली सहायक हो सकती थी। अत: अंग्रेजों के अधीन क्षेत्र में अंग्रेजी के सिवाय अन्य मार्ग उपलब्ध ही न था। संसार के जागृत देशों के साहित्य का अवगहन इसी के माध्यम से संभव था। फ्रांस, रूस आदि की राज्य क्रांति, सामंती युग के विद्रोह का इतिहास, वाल्टेयर, रूसों, दिदरो के विचारों के साथ ही औद्योगिक क्रांति वैज्ञानिक नई खोजों के सूत्र अंग्रेजी भाषा से ज्ञात हो सकते थे। भारत के अंध-युग में लुप्त भारतीय संस्कृति के ग्रंथों को अनेक भारतीयों ने विदेशों में जाकर शिक्षा प्राप्त करते समय पढ़ा। वहां का समाज वर्ण और जाति से पीढ़ित नहीं होने से सभी को स्वतंत्र वातावरण में समानता के स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने का लाभ संभव हो सका था। इस प्रकार के वातावरण से अम्बेडकर अत्यंत प्रभावित हुए और इसका समर्थन उनके द्धारा किया गया है।[5]

दलितों को संवैधानिक संरक्षण के प्रावधानों का भी उल्लेख किया गया है। उनके सुधारवादी प्रयास, हिन्दू कोडबिल के विषय पर भी प्रकाश डाला गया है। भारतीय संविधान में राजनीतिक आरक्षण का औचित्य भी उनकी दृष्टि में इसीलिए था कि - केवल प्रस्ताव पास कर देने से करोड़ों अछूतों की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक उन्नति नहीं हो सकती। कागजी घोड़ो ने कभी घुड़दौड़ में भाग नहीं लिया है। अछूतों की उन्नति तभी हो सकती है, जब उन्हें सरकारी नौकरियों, विधान सभाओं और लोक सभाओं में आबादी के अनुपात से सुरक्षित सीटें मिलें।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि भारत रत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर भारत के प्रसिद्ध विधिवेत्ता, चिंतक और संघर्षशील योद्धा थे। उनमें अपार नेतृत्व शक्ति थी। वे भारतीय संविधान के प्रमुख निर्माता थे। भारत रत्न डॉ. भीमराव जी अम्बेडकर दलितों के मसीहा थे। उन्होंने समाज में दलितों के अलावा अल्पसंख्यक वर्ग के हितों के लिए भी नए संविधान में अधिकारों की मांग की जिसमें उन्हें समान मूल अधिकार, भेदभाव पूर्ण व्यवहार के विरूद्ध संरक्षण, सरकारी नौकरियों में स्थान सुरक्षित, विधान सभाओं में स्थान सुरक्षित, अल्पसंख्यकों की उन्नति के लिए अलग से एक विभाग की स्थापना, सामाजिक बहिष्कार करने वालों को कड़े दण्ड की व्यवस्था और शोषण की समाप्ति।

उन्होंने दलितों की दयनीय स्थिति में सुधार शिक्षा, संस्कृति, आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक विकास से संभव है। पूर्व की समस्या को ध्यान में रखते हुए उन्होंने संविधान में ऐसे उनके हित की बात कही। भारत के राष्ट्रीय आंदोलन ने अम्बेडकर की सक्रिय भूमिका कांग्रेस से कुछ अलग थी। उनके जीवन में दलितों को लेकर जो टीस थी। वह उन्हें स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाले अगणी नेताओं को सोचने से कुछ अलग करती थी। अम्बेडकर परमदेशभक्त और राष्ट्रीय एकता के समर्थक थे। 1947 में उन्होंने देशी रियासतों को भारतीय संघ में सम्मिलित होने का परामर्श दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मूर्ति, एस.एस.; सामाजिक दर्शन, कल्चरल, पब्लिशर्स अमीनाबाद, लखनऊ।
2. दिनकर, डी.सी.; डॉ. भीमराव अम्बेडकर स्मृति ग्रंथ, बोधिसत्व प्रकाशन क्षितवापुर पजावा, लखनऊ 1994
3. शास्त्री, शंकरानंद; पूना पैक्ट बनाम गांधीजी, बहुजन कल्याण प्रकाशन, सआदतगंज, लखनऊ-3
4. दिनकर, डी.सी.; डॉ. भीमराव अम्बेडकर स्मृति ग्रंथ, शिक्षा और विवाह खण्ड-दो, बोधिसत्व प्रकाशन क्षितवापुर पजावा, लखनऊ 1994
5. शर्मा, डॉ. गोविंद प्रसाद; भारतीय राजनीतिक चिंतन, मध्यप्रदेश हिंदी प्रकाशन अकादमी भोपाल।

****

नये संदर्भ में भारत-आसियान संबंध

डॉ. संजय कुमार यादव *

प्रस्तावना – भारत आसियान संबंध की वास्तविक शुरूआत 1992 में आसियान द्वारा भारत को क्षेत्रक वार्ता भागीदार का दर्जा प्रदान किए जाने से हुआ। क्षेत्रक वार्ता भागीदार का अर्थ है, भारत को कुछ समिति क्षेत्र में सहयोग का अवसर दिया गया। उस समय यह सहयोग सांस्कृतिक, पर्यटक जैसे क्षेत्रों तक सीमित था। 1994 में इसमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी को भी जोड़ दिया गया। 1996 में आसियान द्वारा भारत को पूर्ण वार्ता भागीदार का दर्जा प्रदान करने के सहयोग के बहुआयामी तथा व्यापक मार्ग खुल गए। वर्ष 2002 में कम्बोडिया के नामपेन्ह में आसियान-भारत सम्मेलन हुआ, जिसके बाद आसियान-भारत संबंध में एक नई उच्चता की ओर बढ़े। तब से आसियान-भारत शिखर वार्ता वार्षिक आधार पर आयोजित होने लगी। ये सभी प्रगति लगभग एक दशक में हुई, जिसके द्वारा आसियान और भारत के बीच सहयोग और साझेदारी का महत्व स्पष्ट हो सका। इन शिखर सम्मेलनों में 20 दिसम्बर, 2012 को नई दिल्ली में आसियान-भारत शिखर सम्मेलन को यादगार कहा जा सकता क्योंकि एक तो इस वर्ष आसियान और भारत के मध्य संबंध का 20 वाँ वर्ष था, शिखर सम्मेलनों का 10 वॉ तथा इसमें आसियान और भारत के मध्य सामरिक भागीदारी हेतु भी सहमति बनी। 12 नवम्बर, 2014 को ने.पी.ताव, म्यांमार में आयोजित किए गए 12वें आसियान-भारत शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी और आसियान नेताओं ने भारत-आसियान रणनीतिक भागीदारी की वर्तमान स्थिति की समीक्षा की।[1] उन्होंने आसियान को भारत की पूरब के कार्यनीति का मुख्य बिन्दु बना दिया है और सभी क्षेत्रों में संबंधों में को सुदृढ़ करने का आह्वाना किया और आसियान-भारत कनेक्टिविटी परियोजनाओं के तीव्र कार्यान्वयन और परियोजना वित्तपोषण को सुविधाजनक बनाने के लिए विशेष सुविधा स्थापित करने की घोषणा की। प्रधानमंत्री ने 13 नवम्बर, 2014 को नेई पेई टा में 9वें पूर्व एशिया शिखर सम्मेलन में भाग लिया और अन्य विश्व नेताओं के साथ महत्वपूर्ण क्षेत्रीय तथा वैश्विक मुद्दों पर विचारों का आदान-प्रदान किया।[2]

राजनीतिक और सुरक्षात्मक सहयोग – भारत को आसियान का वार्ता भागीदार बनने से लेकर सहयोग अब कार्यात्मक सहयोग के दायरे को पार कर राजनीतिक और सुरक्षात्मक आयाम को भी आच्छादित कर चुका है। भारत, आसियान भारत वार्ता संबंधों के अन्तर्गत आसियान के साथ परामर्शी बैठकों की एक पूरी श्रृंखला में भाग ले चुका है, जिसमें मंत्रिस्तरीय बैठकें, वरिष्ठ अधिकारियों की बैठकें और विशेषज्ञों के स्तर की बैठकें शामिल हैं। वार्ताओं के साथ ही साथ आसियान द्वारा प्रारंभ किए गए सहयोगात्मक व्यवस्थाओं के अन्तर्गत क्षेत्रीय संवाद और क्षेत्रीय एकीकरण को बढ़ावा देने हेतु आसियान क्षेत्रीय मंच (ARF) डाक मंत्रीस्तरीय सम्मेलन (PMC) , पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन (EAS) मेकांग-गंगा सहयोग तथा बिम्सटेक (BIMSTEC) में भी भागीदारी किया।

आर्थिक सहयोग व मुक्त व्यापार समझौता – आसियान और भारत के मध्य व्यापार और निवेश प्रवाह आसियान के अन्य वार्ता भागीदारों की तुलना में अपेक्षाकृत कम रहा है। 1993-2003 के दौरान आसियान-भारत द्विपक्षीय वार्षिक व्यापार में 11.2% वार्षिक दर से ही वृद्धि हुई। इस अवधि में यह वर्ष 1993 के 2.9 बिलियन अमेरिकी डॉलर से वर्ष 2003 में 12.0 बिलियन अमेरिक डॉलर तक ही पहुँचा। भारत एवं आसियान के बीच द्वीपक्षीय व्यापार अब 80 अरब डॉलर का है जिसके वर्ष 2015 के अंत तक 100 अरब डॉलर तथा वर्ष 2022 उसे दोगुना करने का लक्ष्य रखा गया। विगत आठ वर्षो में भारत में आसियान निवेश 27.9 अरब डॉलर का है जबकि आसियान क्षेत्र में भारतीय निवेश 32.4 अरब डॉलर का है।[3]

आसियान और भारत दोनों ने आर्थिक क्षमता की पहचान कर व्यापार की इस प्रवृत्ति को देखते हुए व्यापार तथा निवेश को मजबूती से आगे बढ़ाने के लिए प्रशस्त करने के लिए एक आसियान-भारत मुक्त व्यापार क्षेत्र की स्थापना हेतु समझौते पर बातचीत करने के लिए सहमत हुए। 2003 में द्वितीय आसियान-भारत शिखर सम्मेलन के समय ही दोनों पक्षों ने व्यापक आर्थिक सहयोग समझौते (Comprehensive Economic Cooperation Agreement - CECA) पर हस्ताक्षर किया था, जिसने मुक्त व्यापार की दिशा में ठोस आधार प्रदान किया। मुक्त व्यापार क्षेत्र में वस्तुओं, सेवाओं और निवेश सभी को शामिल किया गया है। छ: वर्षो के वार्ता के पश्चात ट्रेड इन गुड्स (Trade in Goods - TIG) समझौते पर अगस्त 2009 को बैंकाक में हस्ताक्षर किया गया। आसियान-भारत के मध्य इस समझौते पर हस्ताक्षर ने दुनिया के सबसे बड़े मुक्त व्यापार बाजार के निर्माण के लिए मार्ग प्रशस्त किया।[4] इसके अंतर्गत 1.8 बिलियन जनसंख्या है, जिसका कुल समेकित सकल घेरेलू उत्पाद 2.8 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर है। मुक्त व्यापार समझौते में दो गतिशील क्षेत्रों के बीच कुल 90 प्रतिशत कारोबारी उत्पादों पर टैरिफ में छूट प्रदान किया जाएगा। इसे छूट में 2016 तक लगभग 4000 वस्तुएं समेकित हो जाएंगी। आसियान-भारत व्यापार समझौता 1 जनवरी 2016 से लागू हो चुका है। दोनों पक्षों द्वारा निजी क्षेत्रों में भी सहयोग को बढ़ावा देने का प्रयास किया जा रहा है। इसके अंतर्गत आसियान-भारत बिजनेस काउन्सिल को भी पुन: सक्रिय किया जाएगा। ज्ञातव्य है कि पहला आसियान-इंडिया बिजनेस फेयर एण्ड कल्कलेव (AIBFC) 2-6 मार्च, 2011 को नई दिल्ली में आयोजित हुआ था।

आसियान और भारत के बीच उड्डयन क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने हेतु

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

आसियान और भारत के उड्डयन मंत्रियों के बीच नवम्बर 2008 को मनीला में 14 वें शिखर सम्मेलन में एक उड्डयन सहयोग फ्रेमवर्क को स्वीकार किया गया। परिवहन से संबंधित विविध क्षेत्रों, जैसे – भूमि परिवहन, समुद्री परिवहन, सीमा प्रबंधन, सीमा शुल्क, आव्रजन, रसद और सुरक्षा इत्यादि में सार्वजनिक निजी भागीदार (पी.पी.पी.) के आधार पर सहयोग बढ़ाने के लिए आसियान–भारत दिल्ली सम्मेलन (2012) में एक फ्रेमवर्क को प्रस्तुत किया था। इस प्रस्तावित परियोजना में एक बड़ी उपलब्धि भारत – म्यांमार – थाईलैंड त्रिपक्षीय राजमार्ग परियोजना है। वर्तमान में इस परियोजना में लाओस और कंबोडिया को भी शामिल कर लिया गया है।[5] भारत ने यह परियोजना पूर्वोत्तर क्षेत्र को राजमार्ग प्रणाली के साथ आसियान राजमार्ग नेटवर्क से जोड़ने हेतु बनाया है। भारत–आसियान देशों से संपर्क बढ़ाने एवं आपसी सहयोग हेतु दो नीतियों (**पूर्व की ओर देखो नीति, एक्ट ईस्ट पॉलिसी**) की शुरूआत की है जो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत–आसियान संबंधों को विश्लेषित करती है।

पूर्व की ओर देखो नीति – पूर्व की ओर देखो नीति भारत द्वारा द.पू. एशिया के देशों के साथ बडे पैमाने पर आर्थिक और सामरिक संबंधों को विस्तार देने, भारत को एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में स्थापित करने और इस इलाके में चीन के प्रभाव को संतुलित करने के उद्देश्यों से बनाई गई नीति है। वर्ष 1991 में नरसिंह राव सरकार द्वारा शुरू की गयी। इस नीति के साथ ही भारत के विदेश नीति के परिप्रेक्ष्यों में एक नई दिशा और नए अवसरों के रूप में देखा गया और वाजपेयी सरकार तथा मनमोहन सरकार ने भी इसे अपने कार्यकाल में लागू किया।[6]

विभाजन के फलस्वरूप भौगोलिक एकाकीपन ओर दशकों तक आर्थिक ह्रास से ग्रस्त इस क्षेत्र को इस नीति में बहुत सारी संभावनाएं दिखीं। समृद्ध और संपन्न दक्षिण–पूर्वी अर्थव्यवस्थाओं के साथ जुड़ने कि संभावनाओं को देखते हुए क्षेत्र को अनायास ही अपने एकाकीपन के बंधन से मुक्ति पाने ओर प्रगति कि और बढ़ने की उम्मीदें हिलोरे लेने लगी। 1992 में शुरू हुए पूर्व की ओर देखो नीति की कभी औपचारिक व्याख्या नहीं की गयी। मिजोरम से आने वाले एक पूर्व भारतीय राजनयिक और इस नीति को आकार देने वालों में से एक पुरोधा इस नीति का परिचय कराते हुए कहते है, यह नीति दक्षिण–पूर्वी और उत्तर–पूर्वी एशियाई क्षेत्रों के गतिशील और उदीयमान अर्थव्यवस्था वाले देशों के साथ भारत के आर्थिक संबंधों को और व्यापकता एवं गहराई प्रदान करने और अन्य प्रकार के सहयोग कि सतत प्रक्रिया है।

वस्तुत: यह नीति शीत युद्ध की समाप्ति के बाद उभरे नए वैश्विक और क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्यों, शक्ति संतुलन और भारत की नई आर्थिक नीतियों के साथ विदेश नीति के समन्वय की अवधारणा का परिणाम है जिसके मूल रूपरेखाकर के रूप में तत्कालीन वित्त मंत्री मनमोहन सिंह जी को देखा जाता है। यह इन क्षेत्रों के साथ नए रिश्ते बनाने की शुरूआत नहीं थी बल्कि प्राचीन काल के, किन्तु एक दीर्घावधि से अपेक्षित रिश्तों को पुनर्जीवित करने की कोशिश थी।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी – दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ भारत पूर्व की ओर देखो नीति से एक्ट ईस्ट की ओर संक्रमण कर गया है। भारत की विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ सक्रिय नीति अपनाने पर बल दिया और इसे 'एक्ट ईस्ट' नाम दिया। जीवंत एशिया के दोनों विकास धुरियों के बीच सभी क्षेत्रों में संलग्नता को नये स्तर तक ले जाना है। मोदी सरकार के डेढ़ वर्षो में ही द्विपक्षीय यात्राओं की निरंतरता से यह नीति जमीन पर भी उतरती दिखायी दी। अपनी सिंगापुर यात्रा के दौरान विदेश मंत्री ने कहा कि पूर्व की ओर देखो अब पर्याप्त नहीं है, एक्ट ईस्ट की जरूरत है।[7]

भारत की एक्ट ईस्ट नीति तथा जापान व आस्ट्रेलिया के साथ निकटता वस्तुत: दक्षिण पूर्व एशियाई क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने का प्रयास है। ऐसा अमेरिकी थिंक टैंक मानते हैं। चूंकि चीन क्षेत्र में अपनी सैन्य उपस्थिति बढ़ा रहा है और दक्षिण चीन सागर पर अपना दावा करने वाले देश चीन की बढ़ती उपस्थिति को रोकने के लिए भारत, जापान एवं आस्ट्रेलिया की ओर उन्मुख हो रहे है।

भारत की एक्ट ईस्ट नीति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा आधारिक संरचना संपर्क का अभाव है। हालांकि दोनों क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक व वाणिज्यिक संबंध है परंतु आधारित संरचना संपर्क का नहीं होना प्रमुख बाधा है। इस दिशा में कई प्रयास किए जा रहे है। भारत–म्यांमार–थाईलैंड त्रिपक्षीय राजमार्ग परियोजना पर काम चल रहा है, जो मणिपुर के मोरेह से म्यांमार के मांडले होते हुए थाईलैंड के माए सोत तक जाएगी। इसी प्रकार कालादान परियोजना के द्वारा मिजोरम के लॉवंगतलाई को म्यांमार के सिटवे बंदरगाह को जोडा जाएगा। इसके अलावा म्यांमार से संपर्क बढाने के लिए रिह–तिदिम व रिह फलाम सड़क परियोजनाओं पर काम चल रहा है।[8] बांग्लादेश–चीन–भारत–म्यांमार आर्थिक गलियारा इन चारों देशों को जोडेगी। दक्षिण एशिया एवं दक्षिण पूर्व एशिया के बीच कोई रेल संपर्क नहीं है। एक बार इन क्षेत्रों के बीच सड़क संपर्क स्थापित हो जाता है, तो ट्रास एशियन रेलवे दिल्ली–हनोई के बीच रेल संपर्क बहाल कर सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. India's Foregin Policy – V.P.Dutt
2. टाईम्स ऑफ इण्डिया – नवम्बर 2014
3. वार्षिक रिपोर्ट – 2014–15 भारत सरकार, विदेश मंत्रालय ।
4. Bankok Ghosna prta- Aug. 2009
5. Indian Foreign Policies – B.R.Nanda
6. Indian Foreign Policies – Puspesh Panth
7. Jan-stta – Oct. 2014
8. Dainik Jagran – Dec. 2014

****

लालबत्ती के प्रयोग पर रोक – लोकतंत्र, समानता एवं संविधान के अनुरूप

विनोद कुमार साहू*

शोध सारांश – स्वतंत्रता के पश्चात् भारत 26 जनवरी 1950 को लोकतांत्रिक राज्य बना। आज भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। हमारे नये संविधान की प्रमुख विशेषता रही है कि विशेषाधिकारों को समाप्त कर देश के समस्त नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के समानता का अधिकार प्रदान करना है, किन्तु स्वातंत्रोत्तर भारत में शैन: शैन: जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों का लालबत्ती गाड़ियों के प्रयोग के द्वारा विशेषाधिकार का प्रयोग करने वाले समूह या वर्ग का जन्म हुआ। जिसके परिणाम स्वरूप देश में नागरिक साधारण और विशेष में बंट गए। 01 मई 2017 भारतीय लोकतंत्र का ऐतिहासिक दिन है, जब मोदी सरकार ने विशिष्टता के प्रतीक लालबत्ती के प्रयोग पर रोक लगा दी है। अब संविधान प्रदत्त समानता को सिद्धांत एवं व्यवहार रूप से सभी नागरिक महसूस कर रहे है।

प्रस्तावना – 01 मई 2017 से मोदी सरकार द्वारा अप्रैल में केबिनेट में लिए गए निर्णय के अनुरूप वी.वी.आई.पी. संस्कृति को पोषित करने वाले और विशिष्ट दिखने के प्रतीक गाड़ियों मे लालबत्ती के प्रयोग पर पूरे देश में रोक लगा दी। वाहन एक्ट के नियम 108 (1),(2) और तीन के तहत् केन्द्र एवं राज्य सरकारों के वी. आई. पी. को लालबत्ती लगाने का हक मिला हुआ है, किन्तु अब इन नियमों में आवश्यक संशोधन कर देशभर में लालबत्ती के प्रयोग पर पूर्ण पाबंदी लगाई गई है। इसके तहत् अब संवैधानिक पदों– राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, राज्यपाल, मुख्यमंत्री, न्यायाधीशों केन्द्र एवं राज्य सरकार के मंत्रियों, निगम मंडलों, आयोग के अध्यक्षों, सहित केन्द्र राज्य सरकार के अधिकारियों के वाहनों से लालबत्ती हटा लिए गए है।

स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान द्वारा भारत एक प्रजातंत्रात्मक राज्य बना तथा संविधान द्वारा देश के सभी नागरिकों को समान मानते हुए प्रस्तावना, मौलिक अधिकार एवं राज्य नीति के निदेशक तत्वों में समानता की विस्तृत व्याख्या की गई है। संविधान द्वारा देश के सभी नागरिक समान है, किन्तु खास या विशिष्ट बनने या दिखने की चाहत सत्ता में बैठे लोगों की देन है, जो स्वतंत्रता के बाद से लेकर अब तक इन वर्गो द्वारा इसे पोषित किया जाता रहा है। लोकतंत्र एक ऐसी शासन प्रणाली है जिसमें नागरिकों को आम और खास में फर्क न करते हुए सभी को समान अधिकार सुविधाएं या अवसर मुहैया कराने पर बल देता है। किन्तु देश की स्वतंत्रता के इतने वर्षो के पश्चात समानता, सिद्धांत और व्यवहार में अलग–अलग परिलक्षित होता रहा है।

लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में शासक और प्रशासक वर्ग जनता के सेवक या लोकसेवक कहलाते है। वर्तमान में राज्य पुलिस राज्य न होकर लोक कल्याणकारी राज्य कहलाते है। प्रारंभिक काल में राज्य के द्वारा केवल वे ही कार्य किए जाते थे, जिनका करना राज्य के अस्तित्व के लिए नितान्त आवश्यक होता था, किन्तु वर्तमान समय में राज्य के कार्य नागरिकों को वे सभी सुविधाएं और अवस्थाएं प्रदान करना है, जिनके द्वारा उनकी भलाई और उन्नति हो सके। जनता के चुने हुए प्रतिनिधि एवं प्रशासनिक अधिकारी इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। पूर्व में प्रचलित शासन प्रणाली जैसे राजतंत्र, एकतंत्र से अलग इस शासन प्रणाली में ये वर्ग जनता के प्रति पूर्ण रूप से उत्तरदायी होते है। इनके द्वारा नीति का निर्माण और उसका क्रियान्वन के केन्द्र बिन्दु जनता होती है। किन्तु यह एक दुर्भाग्यजनक स्थिति है कि समानता के सिद्धांत पर कार्य करने वाले एवं जनता का, जनता के द्वारा, जनता के लिए इस शासन प्रणाली में भी सत्ता के पहुंच एवं भागीदारी निभाने वाले लोगों ने श्रेष्ठवर्ग या अभिजन या विशिष्ट वर्ग उत्पन्न कर लिए है, जिसके परिणाम स्वरूप देश की जनता आम और खास में बंट गई। लालबत्ती इसी मानसिकता का देन है। देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के अनुसार हर एक भारतीय एक वी. आई. पी. है और लालबत्ती की संस्कृति काफी पहले खत्म हो जानी चाहिए। खुशी है कि आज एक ठोस शुरूवात हुई है। उन्होंने वी. आई. पी. के स्थान पर ई. पी. आई. अर्थात् एवरी पर्सन इज इम्पार्टेंट का नारा देकर संविधान निर्माता बाबा साहब डॉ. वी.आर. अम्बेडकर के प्रत्येक व्यक्ति की प्रत्येक क्षेत्र में समानता, राष्ट्रपिता महात्मागांधी एवं लोकनायक जयप्रकाश नारायण के सर्वोदय के विचार एवं पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्मवाद को साकार करने की दिशा में यह एक ठोस, प्रशंसनीय एवं सकारात्मक प्रयास है।

लालबत्ती के प्रयोग पर रोक की आवष्यकता क्यों –

1. वी.आई.पी. संस्कृति समानता के वृहद सिद्धांत के विरूद्ध है।
2. इससे देश की प्रत्येक नागरिक की गरिमा एवं प्रतिष्ठा की प्राप्ति संभव हो सकेगा।
3. वी.आई.पी. संस्कृति से नागरिक अधिकारों का हनन होता है, तथा भाई भतीजावाद और भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है।
4. देश के प्रत्येक नागरिक का लोकतंत्र और कानून के शासन पर विश्वास बढ़ेगा। सभी क्षेत्रों में उनकी भागीदारी बढ़ेगी।
5. यह एक प्रगतिशील और परिपक्व लोकतंत्र का परिचायक है।

विश्व के विभिन्न देशों में वी.आई.पी.

देश	वी. आई. पी. की संख्या
अमेरिका	252
आस्ट्रेलिया	205

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धरमजयगढ़, जिला – रायगढ़ (छ.ग.) भारत

ब्रिटेन	84
फ्रांस	109
जापान	125
चीन	435
रूस	312
जर्मनी	142
भारत	5 लाख 79 हजार 92

निष्कर्ष – विशिष्टता का प्रतीक लालबत्ती के इस्तेमाल पर पाबंदी प्रगतिशील एवं परिपक्व लोकतंत्र का सकारात्मक कदम है। सभी क्षेत्रों में बदलाव के प्रतीक बनी मोदी सरकार ने संविधान के प्रावधान के अनुरूप इस महत्वपूर्ण निर्णय के द्वारा देश के सभी नागरिकों को समान और बराबरी का संदेश दिए है। लोकतंत्र में विशिष्ट वर्ग नहीं बल्कि सभी व्यक्ति विशिष्ट एवं खास है और प्रत्येक व्यक्ति का मूल्य और महत्व समान है। यह निर्णय नि:संदेह मोदी सरकार के 'सबका साथ, सबका विकास' के मूल मंत्र पर आधारित है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के अनुसार सन् 2022 में हम भारतवासी स्वतंत्रता के 75 वर्ष पूर्ण कर हीरक जयंती मनायेंगे। अत: प्रत्येक भारतीय संकल्प ले कि वे अपने–अपने तरीके से देश के निर्माण और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगे। देश मजबूती के साथ आगे बढ़ रहा है, जिसमें 125 करोड़ भारतवासियों का योगदान अह्म है।

अत: विश्व का विकसित, सिरमौर और शक्तिशाली राष्ट्र बनाने में सभी भारतीय विशिष्ट और खास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कश्यप, सुभाष – हमारा संविधान, भारत का संविधान और संवैधानिक विधि।
2. सलिल, अनिल कुमार – भारत का संविधान प्रभात पेपर बैक्स प्रकाशक, नई दिल्ली 2010
3 फड़िया बी.एल. एवं – भारतीय शासन एवं राजनीति साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा जैन पुखराज।
4. पुरोहित बी.आर. – राजनीति शास्त्र के मूल सिद्धांत उदयपुर राजस्थान
5. संधु, ज्ञान सिंह – हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय।
6. समाचार पत्र –
   - दैनिक भास्कर।
   - हरिभूमि।
   - नई दुनिया।
   - नवभारत।
   - पत्रिका।

****

भारत-जापान संबंध

डॉ. संजय कुमार यादव *

प्रस्तावना – भारत व जापान एशिया के दो सबसे पुराने लोकतंत्र है तथा दोनों देशों के लोगो के बीच प्राचीन समय से ही सांस्कृतिक संपर्क एवं सद्भाव बरकरार रहे है। आपस में जुड़ते वैश्विक हितों, महत्वपूर्ण नौ वहन अंतर-संपर्क और बढ़ती अंतर्राष्ट्रीय जिम्मेदारियों ने भी इन दोनों देशों को एक दूसरे के करीब ला दिया है, दोनों देश शांति एवं स्थिरता, कानून (अंतर्राष्ट्रीय) और खुली वैश्विक व्यापार व्यवस्था के प्रति कटिबद्ध है।

भारत व जापान के मध्य संबंधो का इतिहास काफी पुराना है इन दोनों के बीच यह रिश्ता 6 वीं शताब्दी ईसा पूर्व में तब से हुआ जब बौद्ध धर्म जापान आया रास बिहारी बोस ने 1924 'भारत स्वतंत्रता लीग' तथा 1926 में -सर्व एशिया लीग' की जापान में स्थापना की। सुभाषचन्द्र बोस ने भी सिंगापुर मे आजाद हिंद फोज (IMA) की स्थापना जापान सरकार के सहयोग से की। परन्तु इन घनिष्ठ ऐतिहासिक संबंधो के बावजूद भी भारत-जापान के संबंध उतने मित्रतापूर्ण नहीं रहे बल्कि दोनों देशों के संबंधों में निरंतर उतार चढ़ाव देखने को मिला।[1]

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत ने 28 अप्रैल 1952 को जापान के साथ राजनैतिक संबंध स्थापित किए। तब नेहरू ने टोक्यो चिड़ियाघर को उपहार में दो हाथी भी दिए थे। जिन्हें जापानी आदर के साथ याद करते है। अतीत कि इस मजबूत नींव पर दोनों देश मिलकर आधुनिक विश्व में अपनी जगह बनाना चाहते है। भारत - जापान के संबंध हाल के वर्षो में काफी मजबूत हुए है। जापान के सम्राट एवं सम्राज्ञी ने 50 वर्षो के पश्चात भारत मे नवंबर 2013 में ऐतिहासिक यात्रा की जो भारत व जापान के बीच होते प्रगाढ़ संबंध का द्योतक है। भारत और जापान के रिश्तों को बेहतर बनाना नरेन्द्र मोदी की एक ईस्ट नीति का हिस्सा है, जिसका लक्ष्य एशिया प्रशांत के देशों के साथ भारत के रिश्तों को मजबूत करना है। इसलिए आबे और मोदी को दिलचस्पी पारस्परिक व्यापार को बढ़ाने की है जो 2014 में 15 अरब डॉलर थी।[2] जापान के निर्यात में भारत का हिस्सा सिर्फ 1.2 प्रतिशत है जबकि चीन को जापान का 18.3 प्रतिशत निर्यात होता है। जापान ने आने वाले पांच सालों में भारत में करीब 35 अरब डॉलर निवेश करने का फैलला लिया है। दोनों देशों रिश्तों की गहराई इसलिए जरूरी है कि अनुमानों के अनुसार, आगामी कुछ वर्षो में ही भारत, चीन की जनसंख्या को पार कर देगा किंतु भारत, तकनीक और बुनियादी सुविधाओं में चीन मे एक दशक से भी ज्यादा पीछे है। जापान की तकनीक और भारत की जनसंख्या मिलकर चीन की विस्तारवादी महत्वाकांक्षाओं के विरूद्ध एक शक्तिशाली युति बनाते है। दोनों का निकट आना एशिया ही नहीं विश्व में कूटनीतिक संतुलन बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है, वहीं दूसरी आरे विकास की राह में ये दोनों देश एक-दूसरे के पूरक साबित होंगे।

- दक्षिण चीन सागर की प्राकृतिक संपदा के दोहन में, भारत और जापान दोनों की रूचित है और साथ ही समुद्र से होकर जाने वाले जलमार्ग और वायुमार्ग पर उन्हें चीन की प्रभुसत्ता स्वीकार नहीं, किंतु चीन द्वारा उस क्षेत्र पर अपना अधिकार घोषित करने के प्रयास दोनों देशों को रास नहीं आ रहे। अभी तक भारत, चीन के विरूद्ध किसी भी तरह के व्यत्वयों से बचता रहा है किंतु उसने जापान के साथ संयुक्त बयान में किसी का नाम न लेते हुए नसीहत दे दी कि राष्ट्रों को अंतर्राष्ट्रीय जल और वायु मार्गों पर किसी भी तरह के एकतरफा कार्यवाही से बचना चाहिए। नाम न होते हुए भी इशारा सीधे-सीधे चीन की ओर था।
- इस तरह भारत और जापान की तेजी से निकट लाने में चीन का भी महत्वपूर्ण योगदान है। भारत और जापान दोनों ही चीन की विस्तारवादी महत्वकांक्षाओं को भलीभांति समझते हैं और इसलिए दोनों के पास साथ आकर इस ड्रेगन को रोकने के साझा प्रयास करने के अतिरिक्त कोई अन्य उपाय भी नहीं।

वर्ष 2007 भारत व जापान के बीच होते प्रगाढ़ संबंध का द्योतक है। वर्ष 2007 को भारत-जापान मित्रतावर्ष मनाया गया। तथा जुलाई 2010 से भारत-जापान के बीच 22 वार्ता का आयोजन हुआ तथा प्रधानमंत्री शिंजो अबे ने जनवरी 2014 में भारत की यात्रा की तथा मोदी ने वार्षिक शिखर बैठक हेतु 30 अगस्त से 3 सितम्बर 2014 तक जापान की सरकारी यात्रा की तथा अभी हाल में शिजो अबे तीन दिवसीय भारत यात्रा पर 11 दिसंबर 2015 को नई दिल्ली पहुंचे जहां जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) में अबे को डाक्ट्रेट की मानद उपाधि से सम्मानित किया।[3] दिनांक 12-दिसम्बर 15 को अबे मोदी के साथ वाराणासी गए और गंगा आरती में भाग लिया। इस यात्रा के दौरान महत्वपूर्ण समझौते पर हस्ताक्षर किए गए तथा साझा विजन डाक्यूमेंट 2025 जारी किया गया। जो निम्न है —

- भारत व जापान ने बुलेट ट्रेन, रक्षा एवं नाभिकीय ऊर्जा समेत कई समझौते किए। इनमे बहुप्रतीक्षित मुम्बई अहमदाबाद बुलेट ट्रेन समझौता शामिल है, भारत की इस पहली हाई स्पीड ट्रेन परियोजना को शुरू करने के लिए जापान 12 अरब डालर (लगभग 80 हजार करोड़ रूपये) का 1 प्रतिशत की दर से आसान कर्ज देगा जो 50 वर्ष के लिए है। नागरिक सहयोग हेतु नाभिकीय ऊर्जा के क्षेत्र का समझौता इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण कहा जा सकता है, इस समझौते से भारत के लिए जापान की नाभिकीय प्रौद्योगिकी व नाभिकीय रिएक्टरों के भारत के लिए निर्यात का मार्ग प्रशस्त हो गया है, इस ऐतिहासिक समझौते के लिए जापान ने एक महत्वपूर्ण परम्परा को तोड़ा है, परमाणु युद्ध से प्रभावित जापान का रूख नाभिकीय सहयोग के मामले में बहुत कड़ा रहा है तथा नाभिकीय अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर न करने वाले किसी भी देश के साथ नाभिकीय सहयोग समझौता उसने अभी

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

तक नहीं किया था 1998 में जब भारत ने पहला परमाणु परीक्षण किया था, तब उस पर प्रतिबन्ध लगाने वाला पहला देश जापान ही था, भारत के एनपीटी पर हस्ताक्षर न करने के बाजवूद उसके साथ परमाणु सहयोग समझौता सम्पन्न करना भारत–जापान सम्बन्धों की सुदृढ़ता तथा परमाणु ऊर्जा मामले में भारत की विश्वसनीयता का परिचायक है वैसे भारत इससे पूर्व अमेरिका, रूस, द. कोरिया, मंगोलिया, फ्रांस, नामीबिया, कनाडा, अर्जेन्टीना, कजाखिस्तान व आस्ट्रेलिया के साथ परमाणु सहयोग समझौता सम्पन्न कर चुका है तथा अब जापान के साथ ऐसा समझौता होने से जापान की कम्पनियाँ भी भारत में नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र स्थापित कर सकेंगी तथा नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन के लिए आवश्यक प्रौद्योगिकी भारत अब जापान से भी ले सकेगा।

- दोनों ने सुरक्षा परिषद में सुधार तथा अंतर्राष्ट्रीय व क्षेत्रीय मसलों पर लम्बी चर्चा की। मोदी ने कहा भारत के आर्थिक सपनों को साकार करने में जापान से बढ़कर कोई मित्र नहीं हो सकता है। अबे को व्यक्तिगत मित्र तथा भारत–जापान साझेदारी का विराट विजेता बताते हुए कहा कि विश्वसनीय सुरक्षा के लिए विख्यात शिकन्सेन (बुल्ट ट्रेन) के माध्यम से मुंबई–अहमदाबाद के बीच हाई–स्पीड ट्रेन का समझौता ऐतिहासिक है। इस मार्ग पर वर्ष 2018 में काम शुरू होने की संभावना है तथा 2023 तक रेल सेवा शुरू किया जाना प्रस्तावित है।[4]
- दोनों देशों के बीच रक्षा क्षेत्र में दो समझौते हुए एक रक्षा उपस्करो एवं प्रौद्योगिकी के हस्तान्तरण का है दूसरा वर्गीकृत सैन्य सूचनाओं की सुरक्षा के सम्बन्ध में है।
- नाभिकीय ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग पर सहमति का स्वागत करते हुए तकनीकी ब्यौरों का अध्ययन करने के बाद समझौते पर हस्ताक्षर किए जाएंगे।
- मोदी ने घोषण की हमारे विशेष रिश्तों को देखते हुए भारत व जापान 1 मार्च 2016 से जापानी नागरिकों को वीजा आन अराइवल की सुविधा देगा।
- समझौते के तहत पहली बार भारत, जापान को देश में बनी मारूति सुजुकी की कारे निर्यात करेगा। मेक इन इंडिया पहल के अंतर्गत यह कदम उठाया जा रहा हैं
- जापान ने लगभग 83 हजार करोड़ रूपये का मेक इन इंडिया कोष स्थापित किया है, इसका उद्देश्य द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ाना है। जापान की इस पेशकस के बदले भारत ने जापान को इण्डिस्ट्रयल टाउनशिप में निवेश आकर्षित करने के लिए विशेष पैकेज डिजाइन करने का वादा किया है।[5]
- जापान ने एशिया–प्रशांत आर्थिक सहयोग संगठन (ऐपेक) में भारत की सदस्यता के लिए अपना समर्थन दिया है। जापान ने कहा कि उसने भारत को चार निर्यात नियंत्रण संगठनों, न्यूक्लियर स्पलायर्स ग्रुप (एनएसजी) वासेनार, एमटीसीआर में भारत को सदस्यता का वचन दिया है।
- **साझा विजन डॉक्यूमेंट – 2025**

1. दक्षिणी चीन सागर में शांति एवं स्थिरता के लिए साझा प्रयास।
2. भारत के बुनियादी विकास के लिए जापान सवा 3 तीन अरब का स्पेशल फण्ड बनाएगा। जापान स्पेशल फण्ड से उत्तरी–पूर्वी राज्यों का विकास होगा।
3. भारत–अमेरिका के मालाबार नेवी सैन्य अभ्यास में जापान भी नियमित भागीदार बनेगा।
4. दोनों देशो की तीनों सेनाओं के बीच भी आपसी सहयोग का संकल्प।
5. भारत जापान पूर्व एशिया शिखर बैठक में समुद्री सुरक्षा के लिए मिलकर काम करेगा।[6]

आर्थिक सम्बन्ध :–

- वर्ष 2013–14 में द्विपक्षीय व्यापार 18.43 अरब डालर था।
- भारत जापान करेंसी स्वेपिंग (In-JA currency swap agreement) ने आर्थिक सहयोग हेतु 15 अरब डालर का मुद्रा संबंधी एक समझौता किया है, इसके जारिए दोनों देश अपनी–अपनी मुद्रा की यू.एस.ए डालर में परस्पर अदला–बदली कर सकेंगे। जिससे विदेशी विनियम का इस्तेमाल करने में मदद मिलेगी।
- दिल्ली–मुम्बई औद्योगिक गलियारा (DMIC) यह 90 अरब डालर की वृहत आधारिक संरचना परियोजना है, जो जापान के सहयोग से पूरी होगी। दोनों देशों ने दिसम्बर 2006 में हस्ताक्षर किए थे। यह गुजरात, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र सहित 6 राज्यों में सात नये शहर बसाए जाएंगे। कुल लम्बाई 1483 किमी. है। इसमें केन्द्र की हिस्सेदारी 49 प्रतिशत तथा 51 प्रतिशत जापान की है।[7]
- 2 2 वार्ता 6 जुलाई 2010 को दिल्ली में संपन्न हुई। जापान ऐसी वार्ता अपने पारस्परिक गठबंधन देशों यथा – यू.एस.ए व आस्ट्रेलिया से करता रहा है। भारत के साथ ऐसी वार्ता से यह लगता है कि दोनों के बीच संबंध नई दिशा की और बढ़ रहे है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि दोनों देशों के मध्य संबंधो का यह दायरा तेजी से विस्तृत हो रहा है गत 2015 का वर्ष इस दृष्टिकोण से महत्वूर्ण है कि दिसम्बर 2015 में शिजो अबे का भारत दौरा भारत जापान संबंधो को मौजूदा स्तर से बढ़ाकर और आगे ले जाने में सहायक है। जापान की भारत से बढ़ रही निकरटता के मूल में तीन कारण महत्वपूर्ण है। 1. आर्थिक कारण 2. दक्षिण चीन सागर में चीन द्वारा आक्रामक दृष्टिकोण अपनाना। तीसरा भारत का पिछले दशक में संयुक्त राष्ट्र एनएसजी तथा सीटीबीटी पर हस्ताक्षर न करने के बावजूद परमाणु अप्रसार में शानदार रिकॉर्ड बनाए रखने की वजह से यू.एस.ए सहित फ्रांस, बिट्रेन तथा रूस जैसे देशों के साथ परमाणु समझौता करना। इसके परिणामस्वरूप जापान ने भी अब भारत के साथ असैन्य परमाणु सहयोग समझौता करने की उत्सुकता प्रदर्शित की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. India's Foregin Policy – V.P. Dutt
2. India Japan Relations – Arpita Mathur
3. Changing Dynamics of India – Japan Relation- Shamshad Ahmad Khan, 2017
4. इण्डियन एक्सप्रेस – सितम्बर 2014
5. टाईम्स ऑफ इण्डिया – सितम्बर 2014
6. भारत जापान विशेष सामरिक और वैश्विक भागीदार के लिए टोक्यो घोषणा पत्र – सितम्बर 2014
7. जनसत्ता – अक्टूबर 2016

****

बौद्ध युगीन भारत के प्रमुख नगर

डॉ. शुक्ला ओझा *

प्रस्तावना – यद्यपि भारत एक कृषि प्रधान देश होने के कारण ग्राम प्रधान देश रहा है तथापि प्राचीनकाल में ही अनेक नगरों का विकास इस युग की विकास गाथा को प्रस्तुत करता है। वैदिक सभ्यता से पूर्व सिन्धु घाटी सभ्यता नगरीय सभ्यता थी। जिसमें मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा के रूप में दो बड़े नगरों का अस्तित्व प्रकाश में आया था। किन्तु वैदिक युग में ग्रामीण व्यवस्था प्रभावी रही किन्तु व्यापार एवं राजनीति के त्वरित विकास ने नगरों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। बौद्ध युग आते एक तो भारत में अनेक नगर स्थापित हो गए थे। जिनके उल्लेख बौद्ध ग्रंथों एवं जैन साहित्य में उपलब्ध है। ये नगर राजनीतिक सशक्तिकरण, औद्योगिक विकास एवं व्यापारिक उन्नति के प्रतीक थे। बौद्ध साहित्य के अनुशीलन से अनेक नगरों का परिचय मिलता है। बौद्ध युग में व्यापारिक प्रगति ने समाज में वरिष्ठ वर्ग का महत्व बढ़ा दिया था। जो मुख्यत: इन नगरों से सम्बद्ध था। इस प्रकार नगरों के विकास ने राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सभी पक्षों को प्रभावित किया था।

बौद्ध युगीन नगरों में नगर निर्माण कला व भवन निर्माण कला किस प्रकार की थी। इसकी व्यापक व्याख्या बौद्ध साहित्य में नहीं मिलती है। तथापि इनमें उपलब्ध कुछ उल्लेखों एवं संकेतों के आधार पर यह ज्ञात होता है कि इस समय नगर दुर्ग रूप में बनाए जाते थे। जिसके चारों ओर प्राकार अथवा परकोटा होता था। दुर्ग में राजमहल, राजकीय इमारतें , बाजार तथा रिहायशी मकान इत्यादि बनाए जाते थे। दुर्ग के बाहर उपनगरों में नागरिक जन के आवास होते थे। पत्थर, ईंट और लकड़ी तीनों से निर्मित मकान होते थे। वियपिटक में मकानों की दीवारों पर प्लास्टर करने वाले मसाले का भी उल्लेख मिलता है। जातक कथाओं में सात मंजिले भवनों अथवा राजयूमक प्रासाद का भी उल्लेख मिलना इस युग की भवन एवं नगर निर्माण कला की उन्नति का परिचायक है। गन्दे जल की निकासी की व्यवस्था का उल्लेख भी इन ग्रंथों में मिलता है। बौद्ध युग में स्नान शालाओं का बड़ा महत्व था, इससे संबंधित अनेक वर्णन प्राप्त होते हैं। ये विवरण स्पष्ट करते हैं कि बौद्ध युग नगरीय सभ्यता के विकास का युग था। इनके विकास में गणतंत्रों की भी विशिष्ट भूमिका रही थी। जो राजवंश के स्थान पर स्थापित हुए थे। इस काल का इतिहास बौद्ध काल के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी विशेषता एवं पुलिस प्रबन्ध नगरों के विकास में सहायक बना। इस युग के प्रमुख नगर इस प्रकार थे।

1. **अयोध्या –** यह कौशल देश में सरयू नदी के तट पर स्थित था। रामायण काल में कौशल राज्य की राजधानी होने के कारण इसका बहुत अधिक महत्व था। किन्तु बौद्ध युग में कौशल राज्य की राजधानी श्रावस्ती बन जाने के कारण इसका प्रभाव क्षीण हो गया था। इस अयोध्या नगर के अतिरिक्त दो अन्य अयोध्या नगरियों का उल्लेख भी बौद्ध साहित्य में मिलता है जिनमें से एक गंगा तट पर तथा दूसरी पश्चिमी भारत में अवस्थित थी।

2. **चम्पा –** चम्पा नदी के तट पर स्थित यह नगर अंग राज्य की राजधानी था। अंग राज्य बिहार के उत्तर पूर्वी भाग में अवस्थित था। चम्पा आधुनिक भागलपुर के 24 मील पूर्व में स्थापित था। बाद में अंग राज्य के मगध राज्य में समाहित हो जाने के कारण चम्पा के प्रभाव में कमी आयी थी। अंग साम्राज्य का सर्वप्रथम उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है। ऐतरेय ब्राह्मण, रामायण, महाभारत, पुराणों में भी इसकी चर्चा की गयी है। गौतम बुद्ध की मृत्यु के समय चम्पा भारत के प्रमुख 6 नगरों में से एक था। चम्पा नगर अपने धन वैभव के साथ- साथ व्यापार वाणिज्य के लिए भी प्रसिद्ध था। यहाँ के व्यापारियों ने दक्षिण पूर्वीय एशिया में चम्पा के नाम से बस्तियों की भी स्थापना की थी। वर्तमान समय में यह नष्ट हो चुका है, इसके भग्नावशेषों पर कुछ ऐसे ग्राम स्थापित हैं जो चम्पा का स्मरण दिलाते हैं।

3. **वाराणसी या बनारस –** काशी राज्य की राजधानी वाराणसी वरूण एवं असी नदी के तट पर बसर हुआ था। यह ज्ञान, शिल्प, व्यापार एवं समृद्धि के लिए प्रसिद्ध था। जैन तीर्थकर पार्श्वनाथ के पिता यहाँ के शासक रह चुके थे। बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त विवरण के अनुसार इस नगर का विस्तार 85 वर्गमील तक था। वाराणसी बौद्ध युग का प्रसिद्ध नगर था।

4. **राजगृह –** मगध राज्य की प्रारंभिक राजधानी बनने का गौरव राजगृह को प्राप्त हुआ, जो पहाड़ियों पर बसा हुआ था। यह नगर अपने वैभव के लिए प्रसिद्ध था। जैसे-जैसे मगध साम्राज्य शक्तिशाली बनता गया वैसे-वैसे राजगृह का भी महत्व बढ़ता गया। शिशुनाग वंश के शासनकाल में इसके स्थान पर पाटलिपुत्र को मगध की राजधानी बना देने से इसका महत्व कम होने लगा था। यह लगभग तीन मील की परिधि में फैला हुआ था। राजगृह के प्राचीन दुर्ग के भग्नावशेष आज भी उपलब्ध है।

5. **सांकल या शाकल –** यह मद्रदेश की राजधानी था। महाभारत का एक प्रमुख चरित्र माद्री यही की रहने वाली थी। आधुनिक स्यालकोट ही शाकल के नाम से बौद्ध युग में प्रसिद्ध था। आगे चलकर शुंगकाल में तिब्बती इतिहासकार तारानाथ ने शाकल से ही पुष्यमित्र शुंग द्वारा बौद्ध श्रमणों का दमन करने की घोषणा करने का आरोप लगाया था। उत्तर-पश्चिमी भारत का यह प्रमुख नगर था तथा व्यावसायिक एवं राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र था।

6. **मथुरा –** प्राचीन भारत के सोलह महाजनपदों में से एक प्रमुख राज्य शूरसेन की राजधानी मथुरा थी, जो चौड़े राजमार्गो द्वारा विविध नगरों से जुड़ा हुआ था। ब्रजमण्डल का यह प्रमुख केन्द्र था जो यमुना के तट पर बसा हुआ था। इसका उल्लेख जातक कथाओं में भी मिलता है। यह मत्स्य राज्य के दक्षिण में स्थित था।

7. **रोरूक या रोरण –** भारत के पश्चिमी समुद्र तट पर स्थापित यह नगर

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

सौवीर राज्य की राजधानी था। बौद्ध युग में यह भारत का प्रमुख बन्दरगाह था। भारत के समस्त व्यापारिक केन्द्रों से व्यापारिक काफिले यहाँ माल लेकर आते थे, जिसे यहाँ से विदेशों को भेजा जाता था।

8. श्रावस्ती – आधुनिक अवध क्षेत्र में बौद्ध युग में कौशल राज्य स्थापित था। उत्तरी कौशल राज्य की राजधानी श्रावस्ती थी, जिसके खण्डहर आजकल भी गौण्डा जिले के सहेट-मट्टेर गाँव में पाए जाते हैं। यह अत्यंत समृद्ध एवं उन्नत नगर था।

9. कौशाम्बी – चेदि राज्य के पूर्व में यमुना के तट पर वत्स का राज्य था। प्रारंभ में हस्तिनापुर इसकी राजधानी थी किन्तु इस नगर के बाढ़ में बह जाने के कारण निचक्षु ने कौशाम्बी को वत्स राज्य की राजधानी बनाया गया। यह वर्तमान इलाहबाद क्षेत्र के निकट स्थित था तथा बनारस से लगभग 230 मील दूरी पर था। यह क्षेत्र सूती वस्त्र के लिये बहुत प्रसिद्ध था।

10. साकेत – यह कौशल राज्य में स्थित था तथा कुछ समय के लिए उसकी राजधानी भी बना था। बौद्ध सुत्तों में इसे भारत के सबसे बड़े नगरों में से एक माना जाता था। यह श्रावस्ती से लगभग 45 मील दूरी पर स्थित था। इसकी पहचान वर्तमान उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले में सई नदी के तट पर स्थित सुजान कोट के रूप में अनेक विद्धानों ने की है।

11. वैशाली – यह लिच्छिवी गणराज्य की राजधानी थी, जो आधुनिक मुज्जफपुर जिले के बसाड़ नामक स्थान पर स्थित थी। ये सार्वजनिक भवनों, विशाल राजप्रासादों, विहारों, चैत्यों आदि के लिये प्रसिद्ध थी। यहाँ के निवासी महावीर स्वामी और महात्मा बुद्ध दोनों के सम्पर्क में होने के कारण इनकी उन्नति में सहायता मिली।

12. अन्य प्रमुख नगर – बौद्ध युग में अनेक नगर व्यापारिक गतिविधियों के केन्द्र होने के कारण विख्यात थे, तो कुछ अन्य नगर राज्यों की राजधानी होने का गौरव रखते थे। काम्पिल्य पांचाल्य राज्य की राजधानी होने के कारण राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र थी। इसी प्रकार मिथिला विदेह राज्य की राजधानी थी। बौद्ध साहित्य में इसका उल्लेख मिलता है तथा इसके पचास मील क्षेत्र में विस्तार बताया गया है। उज्जयिनी तथा महिष्मति अवन्ति राज्य की राजधानी के रूप में विख्यात थी। वैशाली भी इस युग का प्रमुख नगर था जो प्रसिद्ध वज्जि संघ की राजधानी भी था। पाटलिपुत्र की स्थापना शिशुनाग वंश के समय हुयी थी जो कालान्तर में मगध राज्य की राजधानी एवं व्यापारिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र बना। इन प्रसिद्ध नगरों के अतिरिक्त बौद्ध ग्रंथों में अन्य नगरों के भी नाम मिले हैं यथा- उक्कट्ठ, अट्टक, अस्सपुर, कीटगिरि, इल्लिद्धवंश, यरूकुच्छ, सुप्पारक इत्यादि।

13. जैन साहित्य में वर्णित नगर – जैन धर्म भी बौद्ध धर्म का समकालीन रहा है। यही कारण है कि जैन साहित्य भी अनेक नगरों के विवरणों से परिपूर्ण है तथा यहाँ की नगरीय संस्कृति के उद्घाटित करने में उपयोगी सिद्ध होते हैं। प्रसिद्ध जैन ग्रंथ उदवासगदसाओ में अनेक नगरों के नाम उल्लिखित है यथा वनिअग्राम, चम्पा, वाराणसी, पोलसपुर, राजगिह, सेतथ्य, काम्पिल्लपुर, सावट्ठी, वैशाली, मिथिला, अलवी, कौशाम्बी, उज्जयिनी, तक्षशिला, सगुल, संसुमार, कपिलवस्तु, साकेत, इन्द्रप्रस्थ, उक्कट्ठ, पाटलिपुत्र, कुशीनारा इत्यादि।

14. बन्दरगाह की भूमिका में नगर – बौद्ध युग व्यापार वाणिज्य के विकास का स्वर्णिम युग था। इस समय आध्यात्मिक क्षेत्र में जितने परिवर्तन दिखाई देते है। उससे भी अधिक तेजी से विकास एवं बदलाव आर्थिक क्षेत्र में भी नजर आते हैं। इस युग में आन्तरिक एवं बाह्य दोनों ही व्यापार में अभूतपूर्व उन्नति हुई। यही कारण है कि अनेक नगर बन्दरगााह के रूप में प्रसिद्धि अर्जित करते हैं। ये बन्दरगााह रूपी नगर समुद्रतट पर ही नहीं वरन नदियों वाले क्षेत्रों में भी स्थापित थे। यथा चम्पा एवं बनारस बौद्ध युग के प्रसिद्ध बन्दरगाह थे जहां से जहाज पहले नदी में तथा फिर समुद्र में जाते थे। कुमार महाजनक ने सुवर्ण भूमि के लिए चलते हुए चम्पा से प्रस्थान किया था। इसी प्रकार सीलानिसंस जातक में समुद्र में एक जहाज के टूट जाने पर जलमार्ग द्वारा उसके यात्रियों के बनारस पहुंचने का उल्लेख है। गंगा की नगरी बनारस का बंदरगाह के रूप में आर्थिक जगत में महती योगदान रहा था। किन्तु सूदूरवर्ती देशों में जाने के लिए नदी तटवर्ती नगरों के स्थान पर समुद्रतटवर्ती नगरों का प्रयोग बन्दरगाह के रूप में किया जाता था। लोसक जातक में समुद्र तट पर स्थित बन्दरगाह गंभीरपत्तन का व्यापक उल्लेख मिलता है। जिसमें यहां से जहाजों के चलने और वहां से समुद्रों में प्रवेश का वर्णन महत्वपूर्ण है। सुसोन्दि जातक में भरूकच्छ बन्दरगाह का उल्लेख किया गया है, जहां से बड़ी संख्या में जहाज द्वारा व्यापारिक गतिविधियों के संचालन की जानकारी मिलती है। इसी प्रकार सप्पारक जातक में भी भरूकच्छ पत्तन का उल्लेख समुद्रतट पर विद्यमान बडे ब़न्दरगाह के रूप में किया गया है। अन्य बौद्ध ग्रंथों से ताम्रलिप्ति, सुप्पारक, रोरूक, कावेरपत्तन इत्यादि नगरों की बंदरगाह के रूप में व्यापक जानकारी उपलब्ध है।

पेरिप्लस के वर्णनानुसार दक्षिणापथ के पश्चिमी तट पर सबसे महत्वपूर्ण बन्दरगाह भृगकुच्छ ही था। इसके थोड़ा दक्षिण की ओर शूर्पारक और सिंध के मुहाने पर बारबेरिकम भी इस काल का प्रसिद्ध बन्दरगाह था। दीर्घनिकाय तथा जातकों में वर्णित रोरूक का बन्दरगाह कच्छ की खाड़ी के तट पर स्थित था। इसी प्रकार बौद्ध ग्रंथ मिलिन्दपन्हों के अनुसार यहां से भारतीय जहाज मलयप्रायद्धीप, चीन, गुजरात, कढियावाड़, सिकन्दरिया, कोरोमण्डल तट, पूर्वी द्धीप समूह इत्यादि प्रदेशों को जाते थे तथा उनके स्वामी बहुत धनी हो गए थे। बन्दरगाह के रूप में ये नगर आर्थिक समृद्धि, कला एवं संस्कृति के प्रमुख केन्द्र के रूप में अपनी पहचान बना रहे थे। बौद्ध साहित्य से बन्दरगाह के रूप में अपनी पहचान बना रहे थे। बौद्ध साहित्य से बन्दरगाह के रूप में इन नगरों की भूमिका स्पष्ट हो जाती है।

इनके अतिरिक्त भी अन्य नगर उस युग में थे, जिनका उल्लेख इन जैन अथवा बौद्ध ग्रंथों में नहीं आ सका है क्योंकि ये ग्रंथ धार्मिक परिप्रेक्ष्य में रचे गए हैं। इनमें प्रसंगवश अनेक नगरों के नामों का उल्लेख किया गया है। इन नगरों के उत्थान ने जैन व बौद्ध संस्कृति के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। आर्थिक उन्नति एवं समृद्धि की झलक दिखायी तथा राजकीय वैभव का चित्र प्रस्तुत किया जो तत्कालीन इतिहास को प्रस्तुत करने में अत्यंत उपयोगी है। मौर्य युग के पूर्व के निर्माण कार्य समय के प्रवाह के साथ नष्ट हो जाने के कारण इन नगरों के भवनों के भग्नावशेष तो आज उपलब्ध नहीं है किन्तु साहित्य में इनका वर्णन इनकी महत्ता को स्पष्ट करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रोज, डेविड्स - बुद्धिस्ट इण्डिया।
2. जैन ग्रंथ - उदवासगदसाओ।
3. लॉ, बी.सी. - दि एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी।
4. स्मिथ, व्ही.ए. - दि ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया।
5. त्रिपाठी, आर.एस. - हिस्ट्री ऑफ एनशिएन्ट इन्डिया।
6. अल्तेकर, ए.एस. - स्टेट एण्ड गवनमेन्ट इन एनशिएन्ट इण्डिया।
7. रॉयस, डेविड्स - बुद्धिस्ट इण्डिया।
8. बौद्ध ग्रंथ - विनय पिटक एवं जातक कथाऐं।

****

तात्या टोपे की निमाड़ यात्रा

डॉ. प्रवीण मालवीया *

प्रस्तावना – बड़वानी जिले के स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास अधूरा ही रहेगा यदि 1857 ई. के विद्रोह के साहसी नेता तात्या टोपे की निमाड़ में स्वतंत्रता संग्राम सम्बन्धी गतिविधियों व घटनाओं का उल्लेख इस ऐतिहासिक दस्तावेज में न किया जाए। जब स्वतंत्रता संग्राम की ज्वाला से सम्पूर्ण उत्तर भारत लाल हो चुका था, यह ज्वाला दक्षिण भारत में नहीं दिखाई दे रही थी।'19 जून 1858 में जब ग्वालियर के किले पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया और दूसरे दिन रानी लक्ष्मी बाई वीरगति को प्राप्त हो गई, तो तात्या टोपे सहित अन्य नेता बच निकलने में सफल हो गए।'[1]

ग्वालियर की पराजय से कहीं ब्रिटिश विरोधी क्रांति का सूर्य अस्त न हो जाए, अत: तात्या टोपे ने सुदूर दक्षिण में स्वतंत्रता संघर्ष की ज्वाला को प्रज्ज्वलित करने के लिए दक्षिण की ओर पलायन किया।

अक्टूबर 1858 में दक्षिण पहुँचने के प्रयास में तात्या टोपे ने नर्मदा पार की थी। सतपुड़ा पर्वत श्रेणियाँ पार करने के बाद अगले माह वह ताप्ती घाटी के रास्ते ही पूर्वी निमाड़ में प्रविष्ट हुआ। खण्डवा पहुँचकर उसने सभी दिशाओं में अपना मार्ग अवरूद्ध पाया। खानदेश की ओर बढ़ने में ह्यूरोज उसका मार्ग रोके खड़ा था तथा जर्नल राबर्ट्स के कारण वह गुजरात की ओर नहीं बढ़ सकता था बरार की ओर से भी ब्रिटिश सेना उसका पीछा करने के लिए बढ़ती आ रही थी।

'तात्या टोपे ने असीरगढ़ पर आक्रमण किया परन्तु जब उसने देखा कि असीरगढ़ की रक्षा की व्यवस्था काफी सुदृढ़ है तो वह अपने साथियों सहित खण्डवा लौट आया। उसने खण्डवा सिविल डिस्पेंसरी व यात्री बंगले में आग लगाकर उन्हें नष्ट कर दिया। तात्या टोपे ने खण्डवा से खरगोन के कमाविसदार को पत्र लिखकर अपनी सेना के लिए आवश्यक रसद व सुविधाएँ उपलब्ध कराने को कहा तथा पत्र द्वारा यह भी उल्लेख किया की उनका उद्देश्य गांव या शहर के लोगो को परेशान करना कदापि नही है।'[2]

तात्या टोपे ने खरगोन में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में उत्साह का संचार किया तथा अंग्रेजों के प्रतिनिधियों को पकड़कर सजाऐं देने की कोशिश की।

तात्या टोपे की विद्रोही फौज ने लेफ्टिनेंट कर्नल दिलशेर खाँ को गिरफ्तार कर लिया। बागियों ने स्पष्टीकरण मांगा कि क्रांतिकारियों को सरकारी फौज ने क्यों मारा है? तात्या टोपे ने स्वयं दो बार पूछा कि विद्रोहियों को सजाएँ दिए जाने के क्या कारण है, वह भी जानना चाहते थे कि नाना जगताप व अन्य लोगों को फांसी पर क्यों टांगा गया। तात्या टोपे ने दिलशेर खान को फांसी पर लटकाने का निर्णय किया किन्तु उसके मित्रों के आग्रह को ध्यान में रखते हुए उसे जीवनदान दे दिया तथा सहमत हो जाने पर अच्छे पद का प्रस्ताव भी किया।

निमाड़ में तात्या टोपे की गतिविधियों के दो प्रत्यक्षदर्शी रहे जिनमें एक बख्शी खुमानसिंह और दुसरे कर्नल दिलशेर खान है। इन दोनों ने अपनी एक रिपोर्ट 6 जनवरी, 1859 को होल्कर सरकार को प्रस्तुत की थी। बख्शी खुमानसिंह व दिलशेर खान ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि 'तात्या टोपे का दल खरगोन से जुलवानिया होते हुए गुरूवार को 25 नवंबर को राजपुर पहुँचा। रास्ते में उन्होंने टेलिग्राम के तारों को काट दिया। केप्टन हुचिनसन लिखता है कि विद्रोही 25 नवंबर को राजपुर के महत्वपूर्ण केन्द्र पर पहुँचे और उन्होंने राजपूर के थानेदार देवीसिंह को गिरफ्तार कर लिया। इसी बीच खाज्या नायक अपने 400 अनुयायियों के साथ तात्या टोपे के दल से जा मिला भीमा नायक व मालसिंह भी इनमें शामिल थे। यहाँ से चलकर यह दल तात्या टोपे के नेतृत्व में 25 नवंबर की शाम बड़वानी जा पहुँचा। इन क्रांतिकारियों के पहुँचने का समाचार पाकर बड़वानी का राजा पर्वतीय क्षेत्र में भाग गया। बाद में बड़वानी नरेश ने स्वयं तात्या टोपे के दल के विषय में लिखा है कि 25 नवंबर की शाम 500-600 विद्रोहियों का एक समूह आया और उसने राजा को कैद कर लिया। राजा को विद्रोहियों के शिविर में लाया गया जहाँ उसे मध्य रात्रि तक रखा गया। राजा से उन्होंने पर्वतीय क्षेत्र में जाने वाले रास्तों व नर्मदा के घाटों के विषय में पूछा।'[3]

राजा ने उन्हें बताया कि पर्वतों में कोई रास्ता नहीं और पिछले तीन महिनों में किसी ने नर्मदा नदी को पैदल पार नहीं किया है। इस पर मध्य रात्रि में राजा को मुक्त कर दिया गया। राजा अपने महल लौट आया और उसने ब्रिटिश शिविर तक यह समाचार पहुँचाने का प्रयास किया किन्तु उस समय गाँव का कोई भी व्यक्ति जाने के लिए तैयार न था किसी तरह राजा ने 2 भृत्यों के साथ कागज पत्र भेजे, किन्तु विद्रोहियों ने उन्हें पकड़ लिया। अगले दिन क्रोधित विद्रोहियों ने बड़वानी नगर को ध्वस्त करने की योजना बनाई किन्तु इसी बीच उन्हें यह समाचार मिला कि ब्रिटिश फौज उनके विरूद्ध राजपुर से कूच कर गई है। उन्होंने बड़वानी से अपना शिविर उठा लिया और भीलखेड़ा के पास से नदी पार की नर्मदा नदी के दूसरे किनारे पर स्थित चिखल्दा ग्राम में पहले से ही सैनिक दस्ते उपस्थित थे। इन्होंने क्रांतिकारियों पर आक्रमण कर दिया। इस अप्रत्याशित आक्रमण में 9-10 क्रांतिकारी मारे गए। अपने साथियों की मौत से क्रांतिकारी उग्र हो उठे और उन्होंने चिखल्दा ग्राम को ध्वस्त कर दिया तथा यहीं अपना शिविर भी स्थापित किया।

इधर कैप्टन इलबर्ट तात्या टोपे का पीछा करते हुए अपनी सैन्य टुकड़ी लेकर भीलखेड़ा तक आ पहुँचा लेकिन क्रांतिकारियों के भय से वह नर्मदा पार करके चिखल्दा तक आने का साहस नहीं जुटा पाया। भोपावर के सवारों (जो पहले बड़वानी थाने की ड्यूटी पर थे।) ने क्रांतिकारियों का मार्गदर्शन

* पीएच.डी.(इतिहास) शासकीय शहीद भीमानायक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

किया। जब क्रांतिकारियों ने चिखल्दा से अपना शिविर उठाकर कुक्षी की ओर रवाना किया तो कैप्टन इलबर्ट ने नर्मदा पार की। तात्या टोपे का दल कुक्षी होते हुए अलीराजपुर रवाना हो गया।

कहा जाता है कि बड़वानी छोड़ते समय तात्या टोपे ने भीमा नायक से नर्मदा पार करवाने का आग्रह किया था।

'नदी पार करने से पूर्व भीमा ने तात्या और उसके सैनिकों के लिए 7 नावों की व्यवस्था की। तात्या ने जाने से पहले अपनी तलवार भीमा को भेंट की। उसने भीमा को दी गई तलवार की धार पर अंगुठा रखा और तब लहुलुहान अंगुठे से भीमा को रक्त का तिलक करते हुए कहा कि 'यदि में अपनी मातृभूमि पर मनचाहा करने में सफल हुआ तो तुम्हारे इस उपकार का बदला अवश्य चुकाऊँगा'। इस छोटी सी घटना से भीमा बहुत अधिक द्रवित हुआ।इसके बाद से तो भीमा अंग्रेजों से मुकाबला करने के लिए और भी दृढ़ प्रतिज्ञ हुआ। राष्ट्रीयता के भाव से केवल भीमा ही नहीं प्रभावित हुआ, अपितु छोड़ने आए भीमा के साथी भी उस घुमक्कड़ राष्ट्रभक्त के प्रति श्रृद्धा से नम हो उठे।'[4]

बड़वानी सहित पूरे निमाड़ में प्रस्फुटित एंव पल्लवित क्रांति पर तात्या टोपे का अत्यधिक गहरा प्रभाव पड़ा। निमाड़ के क्रांतिकारियों को कुछ समय के लिए तात्या टोपे के रूप में क्रांति के एक सुयोग्य नेता और पथ-प्रदर्शक की प्राप्ति हुई। तात्या टोपे के नेतृत्व में क्रांतिकारियों में जोश और उत्साह का संचार हुआ।

'तात्या टोपे निमाड़ के क्रांतिकारियों के लिए संजीवनी बना। इस क्षेत्र के जो क्रांतिकारी हतोत्साहित हो रहे थे, तात्या की मात्र उपस्थिति से पुन: संगठित हो उठे। तात्या की मौजूदगी से क्रांतिकारियों में नव-जीवन का संचार हुआ।'[5]

इस प्रकार बड़वानी जिला क्षेत्र में तात्या टोपे के नेतृत्व में क्रांतिकारियों की गतिविधियाँ संचालित होती रहीं। उन्होंने बड़वानी सहित सम्पूर्ण निमाड़ को स्वाधीनता के लिए आंदोलित किया। फलत: उनके अल्प प्रवास के बाद भी क्रांति की चिंगारी इस क्षेत्र में लंबे समय तक जलती रही।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तात्या टोपे की गिरफ्तारी, लेख रामकृष्ण नायक, म.प्र. संदेश 10-25 अक्टूबर 1881, पृष्ठ क्र.11
2. निमाड़ का योद्ध भीमा नायक, डॉ. शिवनारायण यादव, पृष्ठ क्र.11
3. 1857 स्वाधीनता संग्राम में जनजातीय बलिदान डॉ. शिवनारायण यादव, स्वराज संस्थान संचालनालय, भोपाल पृष्ठ 228
4. जनयोद्धा भीमा नायक, डॉ. एम.एल. वर्मा 'निकुंज', स्वराज संस्थान संचालनालय, भोपाल, संस्करण-2009, पृष्ठ-49
5. निमाड़ में प्रथम स्वाधीनता संग्राम, शोध ग्रंथ, प्रो. महेश लाल गर्ग, पृष्ठ 177

****

वैदिक साहित्य में गणपति

डॉ. मनीषा पाण्डेय *

प्रस्तावना – प्राचीन भारतीय संस्कृत साहित्य में यदि गणेश जी के स्वरूप का विश्लेषण किया जाए तो वेद, उपनिवद, वेदाल, महाकाव्य ग्रन्थ आते है। जिनमें गणेश का स्वरूप का विवरण प्राप्त होता है।

श्री गणेश जो वैदिक देवता है। परन्तु वेदों में इनका नाम गणपति न होकर बृहस्पति है। शतपत ब्राम्हण के भाष्यकार हरिदास स्वामी के गुरू स्कन्द स्वामी अपने ऋग्वेद भाष्य में लिखते है।

विध्नेश विधि मार्तण्ड चन्द्रेन्दोन्पेन्द्र वन्दित:।
नमों गणपते तुम्यं ब्रहम्णां ब्रहम्णस्पते।।

आचार्य बल्देव उपाध्याय ने भी अपनी पुस्तक 'धर्म और दर्शन' में लिखा है कि 'गणपति को बृहस्पति होने में तनिक भी संदेह नही है। गोवर्धन पीठार्धाश्वर जगदगुरू शंकराचार्य स्वामी' निरंजन देव तीर्थ ने भी गणपति की वैदिकता को प्रस्तुत करते हुये लिखा है कि, ऋग्वेद, यजुर्वेद आदि के गणानांत्वा गणपति हवामहे' इत्यादि मंत्रों में गणपति का सुस्पष्ट उल्लेख है। वेदी में गणपति का ही नाम बृहस्पति है। इससे स्पष्ट हैं कि वैदिक देवता ब्रह्मस्पति ही विध्नेश गणपति है। लौकिक साहित्य में गणेश के दो मुख्य गुण वर्णित है। एक विद्या, बुद्धि एवं धन का प्रदाता और दुसरा विघ्नहरण तथा दुष्टों का दमन। गण शब्द समूह का वाचक होता है। समूहों का पालन करने वाले को गणपति कहते है।

ज्योतिष शास्त्र अनुसार गण तीन होते है। देवगण, मनुष्यगणा:, राक्षसगण तीनों का स्वामी होने के कारण वह गणपति है। गणपति के ऐसे स्वरूपों का वर्णन हम ऋग्वेद एवं यजुर्वेद के सूक्तों में पति है। दृष्टव है।

ऋग्वेद – ऋग्वेद के एक मंत्र में यह स्पष्ट हो जाता है कि गणपति की उत्पत्ति प्रथम हुई है।

गणानां त्वा गणपति: हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिँ हवामहे निर्धानां त्वा निधिपतिँ हवामहे वसोममआहम्जानि गर्मधमा त्वम् जासि गर्मधम्।।

बृहस्पति अथवा संसार के स्वामि बृहस्पति , परमव्योमरूप, महाशक्ति के महान तेज से सर्वप्रथम उत्पन्न होकर सात छन्द रूप वाले और सात किरणों अथवा सात वर्ण वर्ग वाले गणपति विविध रूप धारण करके नांद के द्वारा अन्धकार अथवा अज्ञान को दूर करते है।

गणेश को एकदन्त कहा जाता है, ऋग्वेद के एक मंत्र में यह स्पष्ट है।

ऋग्वेद में उल्लेख है कि गणेश और सरस्वती की एक साथ वन्दना की जाती है।

वेद में गणपति और इन्द्र की एकता के भी वचन मिलते है।

ऋग्वेद में एक मंत्र में गणपति को महाहस्ती शब्द से विभुषित किया गया हैं। जो गणपति हाथी के आकार के मुख की सुचना देता हैं।

यजुर्वेद – में गणपति के मुख को हाथी के आकार का बताया गया है।

यजुर्वेद में प्रात: काल अन्य देवताओं के समान गणपति स्मरण शुभ कारक माना गया है, जिसे हमारा सम्पूर्ण दिन निविर्ध्न व्यतीत हो।

प्रभु के अनन्त गुण और अनन्त नाम है। इन नामों से प्रभु के गुणों का बोध होता है। अग्नि, गति, ज्ञान, प्रकाश आदि द्योतक है। इन्द्र ऐश्वर्य का मित्र स्नेह तथा मृत्यु से त्राण का वरूण सर्वश्रेष्ठता, पाप निर्वकारता तथा वरणीयता का अश्विन, सर्वव्यापकता का भंग, भजनी यतासेवनीयता का पूंषा, पोषण का,बृहस्पति ज्ञान दान सोम शान्ति एवं आर्जव का रूद्र रोगी के द्रावयिता का अर्थ देता है।

शुक्ल यजुर्वेद – संहिता में भी वाचस्पति और ब्रह्मस्पति संबंधी अनेक कण्डिकाएं मिलती हैं। तीनों की एकता भाष्यकारों ने प्रतिवादित की है। बृहस्पति या बृहस्पति समस्त देवों में श्रेष्ठ उनके पुरोहित अर्थात अग्रगण्य है।

अर्थववेद – में एक स्थान पर जात वेदस बृहस्पति से प्रार्थना की गयी है कि बच्चे के दो दांत जो माता–पिता को व्याध्र के समान मारने के लिए उद्यत हैं, आप उन्हें कल्याण कारक बना दे।

गणेश जी ज्ञान के निधान है, कवि है, कवियों में भी सर्वश्रेष्ठ कवि व विप्र है, व्यापक ज्ञान रखते है। कवि किसी एक विषय में कान्तिदर्शी हो सकता है, पर गणेश का ज्ञान विषय तक सीमित नही हैं, व्यापक हैं, विविध क्षेत्रों का ज्ञान है। इसलिए वेद भगवान ने 'विप्रथम कवि' नाम कहा है। भगवान गणपति सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों के ईश ही प्रणव स्वरूप 'ऊँ' है। प्रणव स्वरूप में 'ऊँ' में गणपति की मूर्ति सदा प्रतिष्ठित रहती है। इसी विषय में वेद के विद्धान आचार्य मुंशीराम शर्मा अपनी पुस्तक चतुर्वेद मीमांशा में लिखते है। आकाश शंकर है, उसकी शक्ति ध्वनि उमा है। दोनों से सर्वप्रथम जो अक्षर रूपी पुत्र पैदा हुआ वह 'ऊँ' है। यही गणेश है। अत: गणेश 'ऊँ' है। अर्थववेद के राजाओं को प्रजापालन के प्रति उपदेश में बृहस्पति गणपति की आयु प्रदाता के रूप में स्तुति की गयी है।

सामवेद – (सामविद्यान ब्राह्ण) गणपति देव की गायत्री मे उनके हस्तिशुण्ड और दन्त का ध्यान करना होता है। वेद विश्व का आदि वाडमय है, समस्त मंगलों के परम् विधान श्री गणपति ब्रह्मस्पति के रूप में सर्वज्ञान निधि है। और विध्न विनायक है। ये आद्य पुज्य है।

उपनिषद – उपनिषद में गणपति की स्तुति करते कहा गया है, कि गणपति गण समूह के नाम सुरेन्द्र है। व क्रान्त दर्शियों में प्रधान है, अतिशय मेघावी हैं, वे उमा महेश्वर के ज्येष्ठ पुत्र तेजस्वी एक और अद्धितीय केतु है।

तुम्ही साक्षात प्रत्यक्ष तत्व हो। तुम्ही एक मात्र हर्ता हो तुम्ही धर्ता हो और तुम्ही एक मात्र हर्ता हो। तुम भूमि, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश रूप हो। यश, वंशयन्ती, मध्यमा और नैरवारी वाणी के यह चार विभाग तुम ही हो।

* अतिथि विद्वान (इतिहास) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला–उमरिया (म.प्र.) भारत

तीनों गणों से परे हो।

वेदाल – शिक्षा, कल्प, निरूक्त, छन्द, ज्योतिष और व्याकरण ये छ: वेदाल है। ये वेदों के साथ अलाली भाव से सम्बद्ध है। वेदाल में परांगत हुए बिना श्रुति के गृढ़ रहस्य और प्रकृत अर्थ को हृदयंगम करना संभवन नही।

महाभारत में गणपति – महाकाव्य महाभारत में गणपति आशुलिपिक के रूप में दिखाई पड़ते है, वे विश्व के सर्वप्रथम तथा सर्व श्रेष्ठ आशुलिपिक है। जिनकी कृपा से महाभारत, जैसा पावन ग्रन्थ जगत को प्राप्त हो सका।

निष्कर्ष – इस प्रकार गणपति के हस्तिमुख एवं एक दन्त होने का उल्लेख वेदों में हमें प्राप्त होता है, दुष्टों का दमन के संबंध में तथा विद्या एवं बुद्धि को प्राप्त करने के लिये बृहस्पति से प्रार्थना अधिक रूप में दिखाई पड़ती है, जो कि वैदिक वाड्मय में गणपति के स्वरूप को प्रदर्शित करती है। उपर्युक्त वैदिक प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध होता है, कि गणेश जी वैदिक देवता है। सभी नाम गणेश जी के स्वरूप और महत्व को व्यक्त करते है एवं भक्तों के लिए शुभ और लाभप्रद है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऋग्वेद – 1/4/3/
2. शुक्ल यजुर्वेद 16/65
3. यजुर्वेद 3/30
4. अथर्ववेद /6/140/1/
5. समवेद 2/56
6. वेणीराम शर्मा 330

****

न्यायिक एवं कार्यकारिणी सेवाओं का पृथक्करण (ब्रिटिश कालीन न्याय व्यवस्था के सन्दर्भ में)

डॉ. पदमा सक्सेना *

प्रस्तावना – सन् 1757 के प्लासी युद्ध और सन् 1765 के बक्सर युद्ध ने भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना कर दी थी। इन युद्धों के दूरगामी महत्व को स्वीकार करते हुए यह अनुभव किया जाने लगा कि ईस्ट इण्डिया कंपनी ने जो प्रदेश जीते हैं, उन पर ब्रिटिश प्रभुसत्ता स्थापित होगी। लार्ड क्लाइव द्वारा स्थापित द्वैध शासन व्यवस्था ने न्यायिक और कार्य कारिणी क्षेत्र में अनेक समस्याऐं पैदा कर दी थीं।

सन् 1772 में वारेन हेस्टिंग्ज के भारत आगमन के समय बंगाल की न्याय व्यवस्था अत्यंत अस्त व्यस्त थी। जमींदार ही न्यायधीश थे। दीवानी और फौजदारी मुकद्दमों का निर्णय वही किया करते थे। न्याय व्यवस्था धन पर आश्रित हो गई थी। न्यायधीश न तो ईमानदार थे और न ही उनके कार्यक्षेत्र का विभाजन हुआ था। इसी अव्यवस्था को दूर करने के उद्देश्य से वारेन हेस्टिंग्ज ने न्यायिक व्यवस्था में परिवर्तन किए। इस दिशा में कदम उठाते हुए उसने तीन महत्वपूर्ण कार्य किए –

1. दीवानी न्याय प्रशासन।
2. फौजदारी न्याय प्रशासन।
3. कलकत्ता में सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना।

प्रत्येक जिले में एक दीवानी और फौजदारी अदालत स्थापित की गई। दीवानी अदालतों के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत धन, कर्ज, सूद, विवाह से संबंधित मामले रखे गए। कलेक्टर को मुख्य न्यायाधीश बनाया गया, जो कि रू. 500/– तक के मुकद्दमों का निर्णय कर सकता था।

फौजदारी अदालतों के अधिकार क्षेत्र में डकैती, चोरी, मारपीट, हत्या आदि संबंधित मामले रखे गए। इस अदालत में कलेक्टर को यह निरीक्षण करना पड़ता था कि साक्षी की गवाही ठीक से ली गई है, या नहीं। मृत्यु दण्ड देने की स्थिति में सदर निजामत अदालत से आदेश लेना अनिवार्य था। सदर दीवानी और सदर निजामत अदालत के कार्य का निरीक्षण सर्वोच्च परिषद का प्रधान व सदस्य करते थे। हेस्टिंग्ज ने कलकत्ता में सर्वोच्च न्यायालय के साथ सदर दीवानी व सदर फौजदारी अदालतें भी स्थापित की जिन पर कंपनी का पूर्ण नियंत्रण था।

इस प्रकार कंपनी ने न्याय के क्षेत्र में सर्वोच्चता तो स्थापित कर ली थी। लेकिन इसमें अभी भी काफी कमियाँ थी।

1. जिले के कलैक्टर न्याय देने व दण्ड निर्धारित करने का कार्य तो करते ही थे, साथ ही उनके पास भूमि कर विभाग भी था।
2. अगर कलेक्टर स्वयं अपराध करता है, तो उसके अपराध का निर्णय कौन करेगा?
3. न्यायाधीश स्वयं अपने अपराध का निर्णय करता तो जनता का उस निर्णय पर विश्वास असंभव होता।

यही कारण था कि लार्ड कार्नवालिस ने भारत आगमन के पश्चात् कार्नवालिस संहित लागू करके कलेक्टर को केवल भूमि कर संबंधी अधिकार दिए और उसकी न्यायिक और फौजदारी शक्तियाँ छीन ली। यहीं से न्यायपालिका और कार्यकारिणी को एक दूसरे से पृथक करने की व्यवस्था प्रारंभ हुई। 1793 में कार्नवालिस संहिता लागू करते हुए राजस्व एवं न्यायिक शक्तियों का पृथक्करण कर दिया गया।

1. न्यायालयों में कार्य करने के लिए जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति की गई। इन्हीं को फौजदारी व पुलिस के कार्य भी दिए गए।
2. दीवानी अदालतों को समस्त दीवानी मामलों की सुनवाई का अधिकार प्रदान कर दिया गया। मुंसिफ की अदालत में रू. 500/– तक के मामले, रजिस्ट्रार की अदालत में रू. 200/– तक के मामले सुने जाते थे।
3. इन दोनों की अपीलें जिला अदालतों में होती थी।
4. जिला न्यायालय से ऊपर चार प्रांतीय न्यायालय थे, जो कि क्रमश: कलकत्ता, मुर्शिदाबाद, ढाका व पटना में स्थापित किए गए थे।

कार्नवालिस संहिता की सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि इसने सरकारी अधिकारियों को भी अपने सरकारी कार्य के लिए इन्हीं न्यायालयों के सम्मुख उत्तरदायी बना दिया। जिलों में रहने वाले यूरोपियन लोग भी इन्हीं अदालतों के अधीन कर दिए गए।

5. मृत्यु दण्ड की पुष्टि सदर निजामत अदालत से आवश्यक थी।
6. क्षमा दान करने का अधिकार केवल गवर्नर जनरल को था।

इस प्रकार लार्ड कार्नवालिस ने प्रथम बार देश में लिखित कानूनों तथा नियमों पर आधारित शासन पद्धति की आधर शिला रखी। बिना किसी भेदभाव के सभी पर समान रूप से लागू होने वाली दीवानी विधि संहिता की स्थापना एक ऐसी क्रांतिकारी घटनाथी जिसने लोगों के व्यक्तिगत और सामाजिक आचार–विचार को गंभीर रूप से प्रभावित किया। संहिता में शक्ति वितरण, शक्ति पृथक्करण और नागरिक स्वतंत्रता का पूर्ण ध्यान रखा गया। पश्चिम के आधार पर भारत में न्यायालयों की स्थापना कर निष्पक्षता को आधार बनाया गया। राजस्व व न्याय व्यवस्था को अलग–अलग हाथों में देकर कानून की सर्वोच्चता स्थापित की गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विपिन चंद्र – आधुनिक भारत।
2. रार्बट्स पी.ई. – ब्रिटिश कालीन भारत का इतिहास।
3. शर्मा श्रीराम – भारत का संवैधानिक इतिहास।
4. Sarkar & Datta – An Advanced History of India.
5. Tarachand – History of Freedom Movement Vol. III
6. Loyal Alfred – Warran Hasting.
7. Dr. Ishwari Prasad – Modern Indian History.

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र) भारत

Women And Law

Dr. Jyoti Saxena*

Introduction - In recent decades scholars have taken note of the problems of women and studies. The change in the status of women in Indian society we observe a dichotomy of views among the scholars one group of scholars refer to the legal rights enjoyed by women in marriage inheritance and participation in public offices whereas the other group of scholars refer to the prevalent inequality and discrimination suffered by women due to social attitudes of men and the existing customs and traditions.

In men and women relationship the position of dominance is characterized by the society accorded position to men and women in Indian society since early times women as a category have been dominated by men folk and their status have been low in the society.

Status of Women

1. Status of women in ancient India
2. Status of women in Smriti period.
3. Status of women in Budhist period.
4. Status of women in Medieval period
5. Status of women in the British period.
6. Status of women in the post independence period.
7. Status of rights of women.
8. Rise in the status of Hindu women, consequences of women education.

1. Women in Ancient India - We observe two conflicting views regarding the status of women in ancient India. According to one view the women enjoyed equality with men whereas the other view refers to that the women were subjected to all kinds of disabilities atrocities and disrespect. Both the views derive their strength from the religious scriptures which they quote for instance to support their points.

2. Status of women in Smriti period - Manu says that women must always be honored and respected by the fathers, brothers, husbands and brother in law who desire their own welfare.

3. Status of women in Buddhist period - Buddhism emerged as a reaction of Hinduism in the light of above mentioned disabilities during the period of Brahmans and Puranas during Buddhist period the status of women empowered a little there were no radical changes.

4. Women in the Medieval period - First time in the 8th century Muslims invaded India when Sankaracharya lived. The leadership of Sankaracharya Hindu society was trying to counter the expending Buddhism by reemphasizing the supremecy of the Vedas which had given the status of equality to women.

5. Status of women in the British period - The British rule continued in India in the 18th – 19th and the first of the 20th century. The British rule brought about changes in the economic and the social structures of Indian society.

6. Status of women in the post independence period- The legal status of women in India upto 1940s had been due to illiteracy, poverty, dependence religious prohibitions, caste restrictions lack of female leadership and callous attitudes of males.

7. Rights of women - The constitution of India provides the following rights to women at par with men -

i. Right to equality
ii. Right to freedom
iii. Right against exploitation
iv. Right to freedom of religion
v. Right to property
vi. Cultural and educational rights
vii. Right to constitutional remedies.
viii. Rise in the status of Hindu women –

1. Education - In 1857 when Khursheed ji a parsi gentlemen sought the permission of the syndicate of Bombay university for her daughter to appear in matriculation examination. The syndicate categorically refused.

2. Movements of social reform - Many movements of social reform in contemporary India did a magnificent work in raising the status of women in society. By the efforts of Raja Ram Mohan Roy Pandita, Ramabia, Mrs. Rana dey much was done in the direction of restriction of child marriages permission of widow remarriage and elimination of the customs of Devadasi and Sati.

3. Political awakening - In 1930 Indian women participated in the non-cooperation moment launched by Mahatma Gandhi in 1932 they were given right to vote in provincial and central election.

4. Social legislations - After India become independent several social legislatures were enacted to improve the condition of Indian women.

Problem of Women in Employment -

Meaning - From the beginning of human society women have been confined to a certain type of work in the primitive stage of civilization men fought and hunted and women

***Assistant Professor (Sociology) Career College of Law, Bhopal (M.P.) INDIA**

performed less dangerous occupations. The basic division gave a new orientation to human society towards the division of labour between men and women become more or less fixed. Thus, "the employment of women in countries. Of industrial capitalism has thus been a development arising neither from society's requirement of women nor from women's inherent need for work but in the main from the desire of entrepreneurs to utilize cheap labour for profit making purposes." In the beginning of the 19th century outside work was considered derogatory for women but now as a result of economic pressure this except is gradually diminishing. "According to Dr. Dass" Independent living away from the native place often saves them from the tyranny of social custom which closely regulates every step of their life what is more important is that industrial centers offer larger social contact more new ideas and greater educational facilitation which are themselves a great stimulus the growth their individually. 814

Problem arising out of women's employment -11 There are certain problems which arise as a result of women's employment. In the study of laws and women's work. The I.L.O. observes. "The employment of women has certain special which can be considered as part these are the consequences in the field of labour of the physical differentiation between men and women."

1. "Women is generally less resistant to physical strain so that when she engages in manual work she is exposed to special danger which not only threat herself but also further generations."
2. Moreover the social position of women is very different from that of other workers. By custom and tradition she is responsible for the management of home.

Consequences of Women's Employment -

1. **Loss of health:** The first consequences of this is that the working women could invariably by over worked and would ruin her health if certain measure of social protection were not taken.
2. **Loss of collective interest:** In the second place her attention is some extent distracted from the coactive interest of the workers and in particular she shrinks from the extra effort involved in taking active part in the trade union movement.
3. **Loss of occupation value:** In addition "The fact of the women's time being divided between her occupational work and her numerous domestic takes after makes her economic activity unsuitable and reduces her occupational value."

Employment Situation: In spite of the above problems the volume of employment of women in industrial establishments in considerable. They are mostly employed in agriculture. Plantations, mines, social services small scale industries and factory industries. The highest aggregate of women wards is employed in plantation the legislative measures undertaken by the government imposed certain restrictions on the employment of women workers the provisions regarding maternity benefits, crèches, equal pay for equal work are some of the factors which contribute towards the fall of the employment of women workers. But in further the number of women workers is bound to increase according to V.V. Giri.

The future holds immense possibilities for the employment of women and they are not sufficiently employed. It is because we care yet to achieve the full employment level in case of men and not because any prejudice existing against their employment. In the new economy they shall not be more "marginal warders but equal partners along with me"

Chief Sectors of Employment - The chief sectors in which women workers are employed are agriculture. Plantations mines factory industries social services and white collar jobs.

Agriculture - According to the labour investigation committee the number of women workers in agriculture was 12 million in 1956-57 according to the census (1971) the total number of women warders in agriculture was 1,57,49,299 they are engaged in light work such as weeping sow ping, sowing, transplantation and threshing.

Plantations - The highest aggregate of workers is employed in plantations in 1960 women workers constituted 47.6% of the total labour force in plantations. In 1971 women workers constituted 43.0 percent.

Women Welfare - Legislative measures in order to protect the women works from exploitation, the government have undertaken various legislative measures with regard to conditions, hours of work, leave and wages.

The India Factories Act 1948 provides that in every factory where is more than fifty workers are employed there should be provided crèches for the use of children of women workers. According to the Act, no women workers shall be permitted to work in any industry during 7 p.m. and 6 a.m.

Conclusion - Along with other benefits women workers are entitled to maternity benefits such prevision lave been made under various central and state Acts. The maternity benefit from her employer at the rate of the average daily wages. Similar provisions have been made in the mines Act of 1952 the act provides that no women shall be employed in any part of a mine which is below ground besides every women employed in a mine above ground shall be allowed on intrude of not less than eleven hours between the termination of employment on any day and the commencement of the next period of employment further the act prohibits employment of women the hours of 10 p.m. and 5 p.m.

References :-

1. Sociology, U.S. Singh, Allahabad Law Agency.
2. Women & Law, Sociology for law student, Prof. T.K. Oommen, Dr. C.N. Venu Gopal, Eastern Book Company, Lukhnow.
3. An Introduction to Sociology, Pre Law Student, Mavendu Kumar Thakur, Central Law Publications, 107, Dharbanga Castle, Allahabad.

****

The Development Of Indian Society

Dr. Jyoti Saxena*

Introduction - Unity And Diversity -

1. A handful of factors have been instrumental in the diversity of India: language, religion, regionalism and parochialism, caste system, and the elites.
2. Twenty-three languages are spoken by 97 per cent of the total population. Seventy-five per cent speak Aryan language; 20 per cent, Dravidian; 1.38 per cent, Austric; and 0.85 per cent, Sino-Tibetan. All these languages have plateau; Sino-Tibetan, in the foothills of the Himalayas : Austric, in the north-east parts of Bengal, Bihar and the islands of Bengal; and the Aryan, in the Hindi belt.

Except the Sino-Tibetan and the Austric, the other two groups have much in common, as the basic sensibilities in all the language are derived from Sanskrit writings. Apart from this, the preponderance of Hindu religion and a common cultural pattern as laid down by various Dharmashastras, has given a common identity to most of the people of India. Even a link language of some sort has been in existence : Sanskrit in ancient times, Persian, Hindustani and Urdu in medieval times, and English in modern times.

This diversity of language need not lead o the breakup of Indian Society because of number of reasons :

(a) The sensibility that is expressed in each of the regional languages, except Urdu, is to a great extent the same because regional languages got enriched after the Sanskrit works were translated.
(b) Today's themes and forms of literature are almost the same all over India as the society is passing through a mighty change of transition form a traditional to a modern one.
(c) Even the value system that is being upheld in the regional literatures of today are similar because they reflect the modern values and ideas that the society is a gradually tending to accept : individualism, equality, social justice and so on.

3. Apart from Hindu religion, the other religions of importance are Islam, Christianity, Jainism, Zoroastrianism and Buddhism. Since Hinduism has neither a central scripture nor a church to enforce its doctrine, the so-called Hindu religious practices are oceanic permitting every kind of belief, including gods of one's own choice, and innumerable rituals and ceremonies. The inherent catholicity of Hindu religion has enabled all the other religions to live in peace. Apart from this, a great number of unifying factors like interaction amongst languages, cultural patterns, administrative system, and from modern times onwards, education system, legal system and the objective of the mainstream of today's life in India, have been helpful in holding the society together. No doubt, the country was partitioned on the basis of religion and communal disturbances to break out occasionally, but the underlying unity of the country is far more solid than religious differences.

Again, what is known as Hinduism is a non-descript affair since there is on universally accepted godhead, no single scripture, and no single authority to enforce the discipline of a doctrine. Such being the nature of Hinduism, Hindu society is endowed with the quality of agreeing to disagree. For number of centuries we never heard about religious antagonisms leading to violence and bloodshed. The communal tensions accompanied by mob violence came into existence only in the 20th century particularly because of the 'divide and rule' policy pursued by the leaders of British and the emergence of communal organizations often motivated by some vested interests exploited the sentiments of their respective communities professing to safeguard them.

Despite these unpleasant interludes at the grassroot level there is much give and take amongst the various religions of India. The concept of a scepticism and renunciation in Hinduism is to a great extent influenced by the Jain theology and ethics. Respect for elders was the direct contribution of Buddhism to Hinduism since there is no one Hindu scripture which clearly enjoins this precept. In the Ramayana, Lakshmana shows the respect and devotion that a younger brother has to show for the elder. But we must remember that the Ramauana in all probability came after Buddhism. It is intriguing to note that Rama refers to the Buddha as a thief.

At the level of saints, religious distinctions have on place. Both Hindus and Muslims venerate Siddhi Saibaba

***Asst. Professor (Sociology) Career College of Law, Bhopal (M.P.) INDIA**

as well as a number of Pirs in northern India. Earlier, Sikhism derived its inspiration from both Vedanta and the Sufi saints. Kabir and Eknath advocated Hindu-Muslim unity. In recent times, Gandhiji equally venerated the scriptures of all religions.

Such being the ethos of Indian civilization, there has been a good deal of interaction between Hindu and Islamic cultures. The composite matrix of India is reflected in the Kabirbani, the Taj Mahal, the Rag Darbari and the Kangra miniatures. Similarity between Qawali at Durgah and Sankirtan of the Vishnavas. The Kashmiri Muslim and the Kashmiri Hindu have more in common than a Muslim and a Hindu in Malabar. The Krishna Parijata entertainment of the south is performed by Muslim performers. Dummy horse performances are common in Kutch as well as in Tamil Nadu.

Variety is galore in India. The folk ethos is also rooted in diverse ecologies that religious ideas and values, in spite of an underlying unity, exhibit specific forms. The worship of the Mother Goddess, as for example, is in the form of Kamakhya Devi in Assam, Durga in Bengal, and Vaishno Devi at the foothills in the North-West. And every village has its own Mai, a version of the Mother Goddess.

At the popular level, each region has its own folk music and dances, but the binding factor for all of them is the spring season or the harvesting season. Most of the rural songs relate to the rhythm of the seasons, as for example, Sawani in Bhojpur and Holi of Braj. Many musical instruments are common: Dhol, Madal, Mridanga, Sahsari, Shahnai. In the sphere of classical dances also the basic principles governing them are derived from one book, that is, Bharata's Natyashastra.

4. Regarding regionalism and parochialism, we need not read much meaning into it because regional and parochial movements are often engineered by the frustrated politicians and vested interests making capital out of some genuine, and at times fabricated, grievances of the people. We can take the example of opposition to Hindi. Although the loudest noise is heard from Tamil Nadu, college boys and girls are familiar with the Hindustani film songs. In the same manner, the current agitation of Assam had been sparked off just on the eve of elections although the grievance was an old one. Assam was truncated from time to time (separation of Nagaland, Arunachal Pradesh and Meghalaya) and all the time the influx of refugees from Bangladesh continued unabated. The latter development was winked at by the Congress Party since they could always get block votes of the refugees with the promise of being granted citizenship in India. Now the Janata leaders want to see that the Congress (I) can no longer depend on the block votes of the refugees who have settled down in Assam.

Conclusion - The diversity of India is the caste system. It is sub-system in the called Jathi that makes Indian society appear to be thousands of societies. In spite of this appearance, in every village there is a large degree of interdependence and villages entities. This jathi spirit existed even in urban areas although one might not openly profess it. The Jathi and the caste system appear very prominently in the political field, more so from 1977 onwards. Since the stratification of society has been blessed by the political system, social tensions are on the increase just as the one between the forward castes and the backward castes, Harijans versus the caste Hindus, and the tribals versus the plains people. The whole thing makes Indian society look like a smashed mirror.

The last factor contributing to the diversity of India is the difference between the elites and the common people. Almost all the elites of India whether political, professional, intellectual, or economic are to some extent westernized and they know the English language. The material living as well as the value system cherished by these people is at variance with that of the common people. More than that from the mid 19th century onwards these people have gradually gained ascendancy, while the traditional elite consisting of landed magnates and the Sanskrit intellectuals have gradually lost ground.

At the moment the modern elites along with the sprinkling of the vanishing elites of traditional India are playing the dominant role. In this process the elites take for granted that the ordinary people are a mass of dumb driven cattle and they can be easily hoodwinked. Since this approach is basically faulty, the various measures that are initiated for the betterment of the country are not a complete success. Thinking that they know better than what the masses do, they unwittingly have neglected the economic development of rural India. Carried the shoe-making industry were made to suffer the most. Synthetic rubber Bata chappals are sold everywhere hitting the cobblers. Since handlooms are more expensive than mill-made cloth, the weaving industry of India is in shambles, with the concomitant evil, unemployment.

References :-

1. Principles of Sociology by Dr. B.R. Singh, Central Law Agency.
2. Social Studies by Principal Shyam Datt, M.A. Publised by Surandra Kumar, M.A. Madhya Pradesh Pustak Prakashan, Bhopal.
3. Law and Society in Modern India, K.D. Gour, Prof & head Department of Law, Former Chairman post graduate council, Utkal University, Bhubaneswar, Deep & Deep Publications, D-1/24 Rajouri Garden, New Delhi- 110027.

****

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूरों के व्यवसाय एवं निर्माण कार्य होने की जानकारी

रामावतार साकेत *

प्रस्तावना – शोधार्थी द्धारा शोध हेतु प्रस्तुत राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूरों के ''व्यवसाय एवं अध्ययन क्षेत्र में निर्माण कार्य होने की जानकारी'' सतना जिला का चयन किया गया है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम 2005 से लागू की गई है''। इस अधिनियम के अन्तर्गत प्रावधान किया गया है, कि इस कार्यक्रम के द्धारा ग्रामीण निर्धन खेतिहर-मजदूर परिवार को रोजगार उपलब्ध कराना है, जिससे वे रोजगार का सृजन कर सुदृढ़ हो सकें।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम का विषय बनाकर शोध हेतु चयन किया गया है कि इस योजना के माध्यम से ग्रामीण खेतिहर-मजदूर परिवार से जानकारी प्राप्त होगी की वे लोग इस योजना में कितना रोजगार पाए हैं एवं जिले में खेतिहर मजदूर कितने हैं तथा योजना के तहत जिले में कितने निर्माण कार्य हुए हैं तथा वे सामाजिक, आर्थिक स्थिति में प्रभावमय हुए एवं हो रहे हैं। वे इस योजना का प्रभाव इन ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूर परिवार के लोग में वास्तविक रूप से कितना प्रभावमय एवं विकास की ओर अग्रसर हुए हैं।

नरेगा योजना का मुख्य उद्देश्य है, ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के लिए रोजगार उपलब्ध कराकर प्रत्येक कुशल-अर्द्धकुशल, वयस्क ग्रामीण खेतिहर-मजदूर हितग्राहियों के प्रत्येक परिवारों को वर्ष भर में 100 दिनों का रोजगार उपलब्ध हो। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी, सार्वजनिक परिसम्पत्तियों के निर्माण को गति भी मिलेगी। साथ ही कृषि के लिए बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने एवं ग्रामीण खेतिहर-मजदूरों की सामाजिक, आर्थिक विकास में सफल सहायक सिद्ध होगी।[1]

नरेगा योजना से ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूरों की दशा को सुधारने के लिए योजना के तहत रोजगार उपलब्ध कराना है, ताकि उनकी अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक व्यवस्था सशक्त, गतिशील एवं सुधारात्मक सिद्ध हो सके। योजना से विशेषकर ग्रामीण अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति खेतिहर-मजदूर हितग्राही परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराने का वैधानिक अधिकार प्रदान करना है। बाकी इस अधिनियम के अलावा अन्य अधिनियम एवं कानून जनता के द्धारा ही जनता के लिए जनता का ही कानून है।[2]

इस योजना के तहत जल संरक्षण, सूखाग्रस्त क्षेत्रों का उद्धार, वानिकी, वृक्षारोपण, भूमि विकास, बाढ़ नियंत्रण, सरंक्षण, कुआँ, नाली निर्माण, तालाब निर्माण, एवं सड़क निर्माण इत्यादि कार्यक्रम अपनाएँ गए हैं।

नरेगा योजना में प्रत्येक राज्य सरकार को जिम्मेदारी सौंपी गई है कि प्रत्येक राज्य सरकार अपने-अपने स्तर पर इस राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम को तैयार करे ताकि प्रत्येक ग्रामीण खेतिहर-मजदूर परिवार को वर्ष में कम-से-कम 100 दिन का रोजगार उपलब्ध हो सके।

योजना में ग्रामीण क्षेत्र के वयस्क एवं कुशल-अकुशल, और अनुसूचित जाति/जनजाति के लोग शारीरिक श्रम करने को तैयार होंगे। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना में अधिनियम की अनुसूची-1, अनुसूची-2 का उल्लेख होना अनिवार्य है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना को 2005 में लागू होने के पश्चात् इसका शुभारम्भ देश के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 2 फरवरी, 2006 को देश के आन्ध्रप्रदेश राज्य के अनंतपुर जिले से किया था। जो वर्ष 2007-.08 में 130 जिलों में शुरू हुई इस प्रकार से 2007-08 में भारत के 330 जिलों में इस नरेगा योजना की शुरूआत हुई। 1 अप्रैल 2008 में नरेगा योजना अधिनियम को 34 राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों सहित सभी 614 जिलों और 6096 विकासखण्डों और 2.65 लाख ग्राम पंचायतों में विस्तारिकृत की जा चुकी है।[3]

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अन्तर्गत शुभारम्भ के समय दी जाने वाली मजदूरी की दर प्रत्येक राज्य में अलग-अलग दर रही है, जैसे :- महाराष्ट्र में 47 से 72 रूपये, उत्तरप्रदेश में 58 से 100 रूपये, बिहार में 68 से 77 रूपये, कर्नाटक में 62 से 74 रूपये, पश्चिम बंगाल में 64 से 70 रूपये, नागालैण्ड में 66 से 100 रूपये एवं यहीं मध्यप्रदेश में 58 से 68 रूपये, रही है। जो वर्तमान वर्ष 2014-15 में योजना के तहत मजदूरी दर में वृद्धि होकर 151 रूपये हो चुकी है।[4]

नरेगा अधिनियम मध्यप्रदेश के **सतना** जिला सहित, 18 जिलों यथा :- झाबुआ, मण्डला, उमरिया, षहडोल, बड़वानी, शिवपुरी, छतरपुर, सीधी, बालाघाट, टीकमगढ़, खरगोन, बैतूल, खण्डवा, श्योपुर, धार, सिवनी, सतना एवं डिण्डोरी आदि जिलों में 2 फरवरी 2006 से लागू हो गई थी। इसके बाद वर्ष 2007-08 में नरेगा योजना को मध्यप्रदेश के 13 जिलों में जैसे :- अनूपपुर, छिंदवाड़ा, बुरहानपुर, हरदा, देवास, कटनी, पन्ना, दमोह, रीवा, राजगढ़, दतिया, अशोक नगर एवं गुना आदि जिलों में लागू की गई। 1 अप्रैल 2008, से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अन्तर्गत मध्यप्रदेश सहित देश के बचे हुए, उन जिलों को छोड़कर जहाँ पर 100 प्रतिशत बाहरी जनसंख्या है लागू कर दी गई है।[5]

शोध समस्या का चयन – भारत गाँवों का एवं कृषि प्रधान देश है, यहाँ की 72 प्रतिशत जनसंख्या अभी भी गाँवों में निवासरत है। ग्राामीण क्षेत्रों का जीवन-यापन कृषि पर निर्भर होकर अपना भरण-पोषण करते हैं। ग्रामीण क्षेत्र के खासकर अनुसूचित जाति/जनजाति के लोग खेती पर ही निर्भर रहते हैं। इनका पिछड़ापन आर्थिक और सामाजिक स्थिति पर आज भी है। शोध अध्ययन से इनके पिछड़ापन के प्रभाव एवं अध्ययन क्षेत्र में हुए निर्माण कार्य के बारे में पता एवं जानकारी मिल सकेगी। इनके पिछड़ेपन में कमी

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

करना आवश्यक है, एवं ग्रामीण क्षेत्र के विकास के बिना राष्ट्र का विकास होना सम्भव नहीं है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र हेतु राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत अध्ययन के साथ **सतना** जिला में ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूरों की सामाजिक एवं व्यवसाय की पृष्ठ भूमि का अध्ययन, नरेगा योजना के तहत खेतिहर मजदूरों के व्यवसाय करने का अध्ययन, नरेगा योजना के क्रियान्वयन से निर्माण कार्य होने का अध्ययन और कार्यक्रम में मजदूरों का योजना में रोजगार के सृजन में योगदान का अध्ययन, नरेगा योजना के तहत उक्त जिले के ग्रामीण क्षेत्र में निर्माण कार्य का अध्ययन करना है कि इस योजना से उक्त जिला में उक्त योजना सम्बन्धी कितना प्रभाव हुआ है, आदि तथ्य शोध अध्ययन के उद्देश्य हैं।

शोध विधि :

शोध का अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र हेतु शोधार्थी का अध्ययन क्षेत्र **सतना** जिला मध्यप्रदेश रहा है, जो शोध का अध्ययन क्षेत्र चयन किया है। क्योंकि शोधार्थी अध्ययन क्षेत्र में बोली-भाषा, भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं से अवगत है। इसलिए उक्त जिला का शोधार्थी ने शोध का अध्ययन क्षेत्र चुना है।

शोध अध्ययन का समग्र – अध्ययन क्षेत्र के समस्त ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूर हितग्राही निवास करने वाले एवं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत जॉब कार्ड धारी हितग्राही परिवार शोध अध्ययन का समग्र की इकाई रहे हैं।

शोध की इकाई – अध्ययन क्षेत्र के एकल जॉब कार्ड धारी ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूर परिवार समग्र की इकाई रहे हैं।

निदर्शन विधि :

द्वितीयक स्त्रोत – शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र हेतु जो द्वितीयक स्त्रोत का सहारा लिया गया है। जो जिला **सतना** में योजना के तहत किसानों के आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार लाने तथा उनके स्वामित्व की भूमि की तस्वीर सवांरने राज्य सरकार द्वारा जनवरी 2014 में लागू की गई अभिनव योजना मेरा-खेत, एवं मेरी-माटी से नरेगा योजना के तहत जॉब कार्ड धारी किसानों को उक्त योजना के तहत लाभ मिलने से जिले में कृषि विभाग द्वारा अभियान चलाया जा रहा है।

सतना जिला में एक लाख 61 हजार से अधिक परिवारों को नरेगा योजना के तहत रोजगार प्राप्त हुआ है। इन परिवारों को मजदूरी के रूप में 72 करोड़ 66 लाख रूपये का भुगतान किया गया है। इसी प्रकार जिले में जॉब कार्ड धारी परिवारों द्वारा 93 लाख मानव दिवस रोजगार का सृजन किया गया है। जिला सतना में शोधार्थी के अध्ययन क्षेत्र मझगवाँ विकासखण्ड में ग्रामीण अनुसूचित जाति परिवारों की संख्या 9337, अनुसूचित जनजाति परिवारों की संख्या 9032, एवं अन्य परिवारों की संख्या 31862, तथा अध्ययन क्षेत्र में कुछ जॉब कार्ड धारी परिवारों की संख्या 50231 हैं।

जिला **सतना** में नरेगा योजना के तहत योजना के अन्तर्गत खेतों में कृषि योग्य भूमि पर भूमि समतलीकरण तथा भूमि सुधार, मेढ़ बंधान, कुआँ निर्माण, फार्म पौण्ड, बलराम तालाब, नाला बंधान निर्माण, लघु स्टाप डैम, नर्सरी, कृषि उद्यानिकी एवं कृषि वानिकी के काम लिए गए हैं।

इसी प्रकार गैर कृषि योग्य भूमि पर नाडेप निर्माण, बायोगैस वर्मी कम्पोस्ट, गाय-भैस, सुअर, मुर्गी, बकरी पालन, के शेड स्वंय सहायता समूह द्वारा बायो खाद्य निर्माण की गतिविधि ली जा रही है।

योजना के तहत नरेगा में षामिल अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अन्य गरीबी रेखा वाले परिवार के मुखिया, महिला वाले परिवार, विकलांग मुखिया परिवार, भूमि सुधार के लाभार्थी, इन्दिरा आवास के लाभार्थी, वन अधिकारों के हक प्रमाण पत्र धारक लघु एवं सीमान्त कृषक अपने स्वामित्व की भूमि एवं निवास की भूमि में कार्य करा सकेंगे। लाभार्थी के परिवार का जॉब कार्ड होना अनिवार्य होगा तथा लाभार्थी को अपने खेत खलिहान की भूमि से परियोजना पर स्वयं काम भी कराना होगा। मेरा-खेत, मेरी-माटी के कार्य सेल्फ ऑफ प्रोजेक्ट में शामिल होंगे।

नरेगा योजना के तहत **सतना** जिला में ग्रामीण अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूरों की व्यवसाय सम्बन्धी जानकारी प्रत्येक तहसीलवार अगली पंक्ति में सारणी द्वारा प्रस्तुत है।

सारणी क्रमांक-1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम का शुभारम्भ 2 फरवरी 2006 को देश के 200 जिलों में हुई। वित्त वर्ष 2007-08 में इसे 130 जिलों के ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तारित किया गया। शेष बचे हुए जिलों में 1 अप्रैल 2008 में लागू कर दिया गया। इस प्रकार से वर्ष 2008 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम (नरेगा) के अन्तर्गत पूरा भारत देश शामिल हो गया है। केवल उन जिलों को छोड़कर जहाँ पर सौ प्रतिशत शहरी जनसंख्या है। प्रस्तुत शोध पत्र के लिए नरेगा योजना के तहत **सतना** जिला का चयन किया गया, नरेगा योजना के प्रथम चरण मे **सतना** जिला को भी सम्मलित किया गया था। वर्ष 2007-08 से लेकर वर्ष 2014-15 तक योजना द्वारा जिला सतना में ग्रामीण विकास के लिए कार्य किए जा रहे हैं।

सतना जिला में नरेगा योजना के तहत वर्ष 2007-08 से 2014-15 तक ग्रामीण विकास के लिए कार्य स्वीकृति, कार्य पूर्ण एवं कार्य प्रगति पर हैं उसकी जानकारी अगले पृष्ठ में सारणी द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

सारणी क्रमांक - 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक - 2 से स्पष्ट होता है कि **सतना** जिला में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम **(नरेगा)** के माध्यम से विगत वर्षों में हजारों की संख्या में कार्य किए गए हैं। जिसमें निरन्तर प्रतिवर्ष वृद्धि होती गई।

निष्कर्ष – शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र हेतु निष्कर्षत: कहा जाता है कि राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम **(नरेगा)** द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के अनुसूचित जाति खेतिहर-मजदूरों के बेरोजगारी में कमी आई है। ग्रामीण क्षेत्र में नरेगा योजना के तहत निर्माण कार्य होकर विकास में वृद्धि हुई है। क्योंकि शोधार्थी द्वारा शोध हेतु अध्ययन क्षेत्र में भ्रमण के दौरान जानकारी प्राप्त करने से स्पष्ट होता है, कि इस योजना के पूर्व ग्रामीण खेतिहर-मजदूर परिवार के लोगों में बेरोजगारी की भरमार रही है। नरेगा योजना के तहत रोजगार में वृद्धि हुई है। जिससे कुशल-अर्द्धकुशल मजदूर रोजगार के सृजन में योगदान दिया है। उक्त मजदूरों को रोजगार उपलब्ध हुआ है। गाँवों में आवागमन के अभाव में कमी आई है। बेरोजगारी, शिक्षा, आर्थिक, गरीबी तथा सामाजिक स्थिति की दयनीयता शीघ्र मिटना संभव नहीं है, क्योंकि इस योजना को केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा ग्राम पंचायतों को जिम्मेदारी सौंपी गई। जिससे पंचायत सचिवों/सरपंचों की नैतिकता पर कायम होता है। उनकी यह आर्थिक, समाजिक एवं शिक्षा, की कमजोरी पूर्व की है तथा जनसंख्या में वृद्धि होने के कारण शीघ्र विकास संभव नहीं है। नरेगा योजना से आज वर्तमान समय में ग्रामीण खेतिहर-मजदूरों में धार्मिक, शिक्षा, राजनीतिक, आर्थिक, औद्योगिक, तकनीकी, यांत्रिक, सामाजिक

एवं आर्थिक इत्यादि क्षेत्रों में बदलाव एवं प्रभाव आया है।

सुझाव – शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र हेतु उपर्युक्त आधारित विषय सम्बन्धी प्रस्तावित एवं उद्देश्यों सम्बन्धी द्वितीयक सामग्री का सहारा लेकर प्रस्तुतीकरण किया गया है, जिससे स्पष्ट होता है कि योजना के क्रियान्वयन में आने वाली बाधाओं की कमी को दूर करना होगा। योजना के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र में विकास के लिए निर्माण कार्य कराना होगा। साथ ही क्रियान्वयन में ग्रामीण श्रमिकों को रोजगार के सृजन में योगदान के लिए अभाव होने पर उनके रूचि मुताबिक रोजगार उपलब्ध करना होगा एवं पूर्ण दिवसों का रोजगार मुहैया कराना होगा। योजना के क्रियान्यवन में कार्यस्थल पर श्रमिकों के लिए पीने का पानी, ठहरने/सुस्ताने का छाँह, छोटे बच्चों के रख-रखाव एवं उनके देख-रेख, रहने-खेलने के लिए एवं छोटी-मोटी बीमारी के लिए चिकित्सा आदि सुविधाएँ कार्यस्थल पर उपलब्ध कराने के लिए अग्रसर रहना होगा। नरेगा योजना के तहत समय से मजदूरी भुगतान कराना होगा। समय पर मजदूरी भुगतान न होने पर मुआवजा देना तथा समय पर श्रमिकों को रोजगार न मिलने पर बेरोजगार भत्ता दिया जाना होगा। साथ ही योजना के क्रियान्वयन में समिति का भी गठन कर 2 महिला सदस्य सम्मिलित करना होगा। योजना के क्रियान्यवन से ग्रामीण क्षेत्र में निर्माण कार्य कराना होगा। सही समय पर निगरानी करनी होगी तभी ग्रामीण खेतिहर-मजदूरों को पूर्ण दिवसों का रोजगार उपलब्ध होगा और उनकी सामाजिक, आर्थिक, कमजोरी में कमी आएगी, और योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्र में निर्माण कार्य सर्वश्रेष्ठ होंगे। तभी अन्य योजना बनाने में सरकार को मदद मिल सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, मध्यप्रदेश भोपाल, वर्ष 2005, पृष्ठ-1,-2,-3,-4 एवं 5,।
2. सेतिया, सुभाष, और प्रो. **जैन अलका,** एवं डॉ. अर्चना शर्मा, **''ग्रामीण विकास का आधार रोजगार''** कुरूक्षेत्र हिन्दी मासिक पत्रिका, संपादक : ललिता खुराना, प्रकाशक : ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली-110011, फरवरी 2013, पृष्ठ-9,-10,।
3. कुमारी सबिता, **''विकास कार्यक्रमों से गाँवों में आ रही खुशहाली''** कुरूक्षेत्र, हिन्दी मासिक पत्रिका, संपादक : ललिता खुराना, प्रकाशक : ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली-110011, अक्टूबर 2013, पृष्ठ-24,।
4. रोजगार और निर्माण **'मनरेगा की मजदूरी बढ़ी''** संपादक : कमल किशोर तिवारी, मुद्रक : गजराज भण्डारी, प्रकाषक : सुरेश तिवारी, मध्यप्रदेश माध्यम 40, प्रशासनिक क्षेत्र, अरेरा हिल, भोपाल-462011, 18-03-2013 से 24-03-2013, पृष्ठ-1,।
5. पाण्डेय कुमार आनन्द एवं श्रीमती अर्चना पाण्डेय, **''मध्यप्रदेश में क्रियान्वित महत्वपूर्ण योजनाएँ''** प्रकाषक : मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ, अकादमी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग, बानगंगा भोपाल मध्यप्रदेश-462003, वर्ष 2014, पृष्ठ-448,।

सारणी क्रमांक -1 : सतना जिला के ग्रामीण खेतिहर-मजदूरों के व्यवसाय सम्बन्धी जानकारी की स्थिति

जिला/तहसील/विकासखण्ड	कृषक		खेतिहर मजदूर		अन्य पारिवारिक उद्योग	
	पुरूष	महिला	पुरूष	महिला	पुरूष	महिला
जिला सतना	**264035**	**37990**	**121797**	**74508**	**18024**	**12537**
तहसील रघुराजनगर	17256	3639	15604	8216	5405	3215
तहसील मझगवाँ	139592	2665	7170	2840	561	196
तहसील रामपुर बाघेलान	11006	2952	9886	6098	709	339
तहसील नागौद	18435	3520	16257	8647	1793	1472
तहसील उचेहरा	13303	3822	13045	7731	2622	2573
तहसील अमरपाटन	14504	5875	16887	11636	1613	1215
तहसील रामनगर	8783	2580	9666	9655	1105	654
तहसील मैहर	19722	6535	15833	10215	2522	1898
तहसील बिरसिंहपुर	10687	1898	7545	3806	1025	586
तहसील कोटर	10747	4504	7904	5664	669	389

सारणी क्रमांक - 2 : सतना जिला में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत किए गए कार्यों की जानकारी

क्रं.	प्रत्येक वर्ष	स्वीकृति किए गए कार्य	कुल पूर्ण किए गए कार्य	प्रगति पर कार्य
1.	2007-08	1562839	473072	1089767
2.	2008-09	2609137	943917	166522
3.	2009-10	2389646	785065	1604581
4.	2010-11	738108	119101	619007
5.	2011-12	573276	50387	522889
6.	2012-13	13318862	1562677	118732
7.	2013-14	4785582	4338666	446933
8.	2014-15	279706	143951	135848
कुल	**2007-08 से 2014-15 तक**	**26217156**	**20207534**	**4704279**

शासकीय योजनाओं का अनुसूचित जाति, जनजाति की महिलाओं के सशक्तिकरण में योगदान

डॉ. निधि माहेश्वरी *

प्रस्तावना – भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों के रूप में पुरूषों के समान ही महिलाओं को भी सभी अधिकार प्राप्त है। जाति, धर्म, लिंग भेद तथा प्रादेशिकता से परे संविधान द्वारा स्वतंत्रता एवं समानता का अधिकार सभी को प्रदान किया गया है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोग विषेषत: महिलाएँ शोषण का शिकार हो रहे है। अत: उन्हें संविधान द्वारा खास सुरक्षा उपलब्ध कराई गई है। स्वाधीनता के पश्चात् हमारे समाज में महिलाओं के समर्थन में बनाए गए कानूनों, महिलाओं में शिक्षा के फैलाव और महिलाओं की धीरे–धीरे बढ़ती हुई आर्थिक स्वतंत्रता के बावजूद असंख्य महिलाएँ आज भी हिंसा का शिकार हो रही है। शासकीय योजनाओं की प्रभावशीलता को जानने के साथ ही निम्न शब्दों को परिभाषित करना आवष्यक है –

अनुसूचित जाति – संविधान की धारा 341 के अधीन कुछेक पिछडें वर्गो। समुदायों जो अस्पृष्यता एवं सामाजिक अयोग्यताओं के शिकार थे, को अनुसूचित घोषित किया गया।[1]

अनुसूचित जनजाति – संविधान के अनुच्छेद 342 खण्ड 1 में बताया गया है कि राष्ट्रपति सार्वजनिक सूचना द्वारा जनजातियों, जनजातिय समुदायों तथा जनजातिय समुदाय के भीतरी समूहों की घोषणा करेंगे। इस सूचना में जिन जनजातिय समुदायों तथा जनजातियों के भीतरी समूहों को सम्मिलित किया जाएगा, वे सभी अनुसूचित जनजाति कहलाएगे। इस प्रकार प्रशासनिक दृष्टि से जिन जनजातियों के नामों का उल्लेख है, वे अनुसूचित जनजाति कहलाती है।[2]

जनजाति – डॉ. मजूमदार लिखते है एक जनजाति परिवारों या परिवारों के समूहों का संकलन होता है, जिसका एक सामान्य नाम होता है, जिसके सदस्य एक निश्चित भू–भाग में रहते है, सामान्य भाषा बोलते है और विवाह, व्यवसाय या उद्योग के विषय में निश्चित निषेधात्मक नियमों का पालन करते है और पारम्परिक कर्त्तव्यों की एक सुविकसित व्यवस्था को मानते है।[3]

सशक्तिकरण – मानचन्द खण्डेला के शब्दों में – 'सशक्तिकरण का अर्थ है, महिलाएँ निर्णय ले, उसे अमल में लाए और सामाजिक स्वीकृति दिलाए। समाज के विभिन्न वर्गों तक निर्णय को पहुँचाए, संगठन को तैयार करें, जो इन विचारों, मूल्यों को लोगों तक पहुँचाएं। स्त्री के लिए यह भी जरूरी है कि जीवन पर आपका नियंत्रण हो वह पिता, पति या बेटे के नियंत्रण में नहीं है, यह भाव होना चाहिए। किसी भी काम में उसकी भागीदारी बराबर की हो। कोई घर, परिवार जिन चीजों से बनता है, जिन विचारों पर खड़ा होता है, उस पर आपका नियंत्रण होना चाहिए। यही नियंत्रण परिवेश और समुदाय पर भी लागू होना चाहिए।'[4]

अनुसूचित जाति, जनजातीय कल्याण हेतु संवैधानिक व्यवस्थाएँ एवं योजनाएँ – अनुच्छेद – 19, 46, 164, 244, 215, 330, 332, 334, 338, 342, 349 तथा संविधान की पांचवी एवं छठवी अनुसूचियाँ इस विषय पर प्रासंगिक है (संक्षिप्त विवरण)

1. बीस सूत्री कार्यक्रम।
2. जनजातीय विकास एवं कल्याण रणनीति।
3. जनजातीय विकास कार्यक्रमों की निधि व्यवस्था।
4. आठवां वित्त आयोग अवार्ड।
5. अनुसूचित जनजातीय हेतु केन्द्रीय आयोजित स्कीम।
6. छात्रावास।
7. विशेष शिक्षा एवं संवर्धण परियोजना।
8. राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्तियाँ।
9. वर्ष 1993 में भारतीय संविधान में जो 73 वां एवं 74 वां संवैधानिक संशोधन किया गया, उसके माध्यम से महिलाओं को त्रिस्तरीय पंचायतीराज संस्थाओं और शहरी निकायों में 33 प्रतिशत आरक्षण किया गया है, प्रमुख रूप से है।

आदिवासी महिला सशक्तिकरण योजना वर्ष 2002–03 इसमें अनुसूचित जनजाति की अत्यंत गरीब महिलाओं को कोई व्यवस्था प्रारंभ करने के लिए 4 प्रतिशत वार्षिक ब्याज पर 50 हजार रूपये तक का ऋण दिया जाता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से सरकार द्वारा इनकी आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और राजनीतिक स्थिति में सुधार करने और उन्हें विकास की मुख्य धारा में सम्मिलित करने के लिए कल्याणकारी योजनाओं और विकासात्मक कार्यों का संचालन किया गया है, परंतु वास्तविकता में इन अधिनियमों की प्रभावशीलता की जानकारी एवं उपभोग की स्थिति, धर्म, जाति एवं शैक्षणिक स्थिति इत्यादि के आधार पर जानकारियों को एकत्रित कर तालिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत शोध पत्र में दर्शाया गया है।

शोध विधि – शासकीय योजनाओं व नीतियों की प्रभावशीलता का अध्ययन करने हेतु बुरहानपुर जिले के महिला परामर्श केन्द्र में घरेलू हिंसा से पीडित दर्ज केसों में से 300 महिला इकाइयों का चयन कर संबंधित तथ्यों को एकत्रित कर सांख्यिकीय विवेचना कर निष्कर्ष प्राप्त किए गए है।

धर्म एवं जाति–

तालिका क्रमांक 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इस प्रकार हिन्दू धर्म से सर्वाधिक 58.30 प्रतिशत उत्तरदाता अनुसूचित जनजाति से है व सबसे कम सामान्य जाति से है। मुस्लिम धर्म से सर्वाधिक उत्तरदाता 66.70 अन्य पिछड़ा वर्ग से है।

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) सेवासदन महाविद्यालय, बुरहानपुर (म.प्र.) भारत

धर्म के आधार पर जातीय स्थिति का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि उत्तरदाताओं के साथ हुए हिंसात्मक व्यवहार पर धार्मिक स्थिति का प्रभाव तो नहीं पड़ा है, लेकिन उनकी जातीय स्थिति का प्रभाव पड़ा है। हिन्दू धर्म की सर्वाधिक उत्तरदाता अनुसूचित जनजाति से व मुस्लिम धर्म की अन्य पिछड़ा वर्ग से पाई गई एवं उनका शिक्षा का स्तर भी बहुत कम पाया गया। उनकी आर्थिक स्थिति भी इतनी अच्छी नहीं पायी गयी साथ ही दुर्व्यसन का उपयोग भी इन वर्गों के सदस्यों द्वारा अधिक पाया गया। जबकि सैद्धांतिक रूप से आदिवासी महिलाओं की स्थिति सामान्य वर्ग की तुलना में अच्छी मानी जाती है, लेकिन व्यवहारिक रूप से भिन्न परिणाम प्राप्त हुए हैं। अन्य पिछड़ा वर्ग एवं अनुसूचित जनजाति की महिलायें घर-परिवार में ही हिंसात्मक व्यवहार की शिकार हो रही है। लेकिन संचार साधनों के प्रयोग के कारण अशिक्षित होने पर भी अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग की महिलाएअब अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही है।

तालिका क्रमांक 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इस प्रकार प्राप्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि अनुसूचित जनजाति में शिक्षा का स्तर कम पाया गया एवं उनके साथ हुए हिंसात्मक व्यवहार पर शिक्षा का प्रभाव पड़ा है। यह भी निष्कर्ष प्राप्त होता है कि हिंसात्मक व्यवहार होने वाली उत्तरदाताओं में सभी धर्म एवं जाति की उत्तरदाता सम्मिलित है, लेकिन सामान्य जाति से उत्तरदाताओं का प्रतिशत कम है, इससे स्पष्ट होता है कि सामान्य जाति के लोग आज भी परम्पराओं के अनुसार जीवनयापन कर रहे हैं एवं घर-परिवार की बात को बाहर प्रदर्शित करना उचित नहीं मानते, वहीं निम्न जाति व अन्य पिछड़ा वर्ग की उत्तरदाता संचार साधनों के प्रयोग व शासकीय नीतियों के क्रियान्वयन की प्रभावशीलता के कारण अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही है।

तालिका क्रमांक 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 76.30 प्रतिशत उत्तरदाताओं को न्यायिक सुविधाओं की जानकारी नहीं है, जिन उत्तरदाताओं को जानकारी है। उनसे अनौपचारिक रूप से यह जानने का भी प्रयास किया कि इन सुविधाओं की जानकारी होने के बाद भी क्या आपने इन सुविधाओं का लाभ प्राप्त किया है? कुल 71 उत्तरदाताओं को न्यायिक सुविधाओं की जानकारी है, जिनमें 28.16 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भविष्य में अपने अधिकारों के लिए लड़ने के बारे में विचार किया है। प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि उत्तरदाताओं के शिक्षित होने के साथ ही न्यायिक सुविधाओं की जानकारी होने पर भी वे उनका लाभ नहीं लेती है, क्योंकि वे अपने परिवार को तोड़ना नहीं चाहती है।

तालिका क्रमांक 4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इस प्रकार तालिका क्रमांक 5 में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि शिक्षित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक उत्तरदाता परिवार में महिलाओं के विरूद्ध होने वाली हिंसा को रोकने में सामाजिक मान्यताओं एवं परम्पराओं को मुख्य मानती है। उनके अनुसार सामाजिक मान्यताएँ एवं परम्पराओं में परिवर्तन आवश्यक है। समाज में ऐसा वातावरण होना चाहिए कि महिलाओं को महिला न समझकर मानव समझा जाए।

निष्कर्ष एवं सुझाव – महिलाओं को विभिन्न क्षेत्रों में सशक्त करने के लिए कई शासकीय नीतियों को क्रियान्वयन किया गया है, लेकिन कुल 300 उत्तरदाताओं में से केवल 23.70 प्रतिशत लाभ नहीं लेना चाहती है। उत्तरदाताओं के अनुसार नीतियों के अधिक प्रभावी क्रियान्वयन के लिए आवश्यक है कि इन अधिनियम व नीतियों के अंतर्गत अपराधी के लिए कठोर सजा का प्रावधान होना चाहिए। 58.00 प्रतिशत उत्तरदाता रीति-रिवाज, परम्पराओं में परिवर्तन आवश्यक मानती है।

सवर्ग महिलाओं एवं अनुसूचित जाति, जनजाति की महिलाओं की स्थिति का यदि आकलन किया जाए तो उच्च एवं मध्यम जातियों की तुलना में उनका स्तर काफी अच्छा है। वे स्वयं मजदूरी, खेतों में काम करके या अन्य किसी कार्य को करके आत्मनिर्भर रहती है चाहे उन्हें वेतन कम मिलता हो पर अपनी रोजी-रोटी के लिए वे किसी पर निर्भर नहीं रहती है और उनमें आत्मसम्मान रहता है। जबकि उच्च व मध्यम जाति की महिलाओं का घर से बाहर निकलकर कार्य करना उचित नही समझा जाता। किन्तु वर्तमान समय में सभी वर्ग एवं जाति की कुछ महिलाएँ आर्थिक रूप से सभी आत्मनिर्भर हुई है साथ ही घर से बाहर कार्य करने में पारिवारिक उत्तरदायित्वों को निभाने या सामंजस्य बैठाने में थोडी मुश्किलों का सामना भी करना पडता है और यह सत्य भी है कि सभी वर्गो में शोषण महिलाओं का ही होता है।

सुझाव – यद्यपि शासकीय योजनाओं में अनुसूचित जाति,जनजाति महिलाओं के लिए विशेष सुविधा एवं आरक्षण सुरक्षित किये गये है परंतु अध्ययन में पाया गया कि शिक्षा की कमी, अधिकारों सम्बन्धी जानकारी का अभाव तथा राजनीतिक सूझबूझ की कमी आदि कारणो से महिलाएँ अपनी भूमिकाओं का निर्वहन संतोषजनक ढंग से नहीं कर पाती।

- स्त्री स्वयं कोशिश करें।
- योजनाओं का सही क्रियान्वयन।
- समन्व्यात्मक सोच।
- सामाजिक मूल्यों का बदलना।
- महिला आयोग को गॉव तक पहुँचाना।

महिलाओं के लिए कई सरकारी/गैर सरकारी प्रयास किए गए है, कई संवैधानिक प्रयास किए गए है, इन सबके बावजूद उनकी समाज में स्थिति दोयम दर्जे की है। जब तक नारी और वह भी दलित नारी अपनी अस्मित गौरव और सम्मान की रक्षा की खातिर पुलिस, सरकार व कानून के भरोसे में न रहकर अपने हाथों में हथियार नहीं उठाएंगी, आतताइयों, शोषणों, उत्पीडकों और बलात्कारियों को मुँहतोड जवाब नही देगी, उन्हें पौरूषहीन बताने का साहस नहीं दिखाएंगी, बल्कि ऐसे मानवरूपी गिद्धों को पौरूषहीन करने का उदाहरण प्रस्तुत नही करेंगी, तब तक वह इनके अत्याचार, शोषण और बलात्कारों की न थमने वाली हैवानियत भरी कोशिशों की शिकार होती रहेगी। इसमें दो राय नही है।[5] ज्ञानेन्द्र रावत जी को इस बात से में भी सहमत हूँ।

सन् 2011 में 24.206 मामले बलात्कार के, 35,365 मामले अपहरण के, 8,618 हत्याएँ दहेज के लिए, 6,619 दहेज संबंधि अपराध और 99,135 मामले पति और परिजनों द्वारा क्रूरता के, 51,503 मामले छेडछाड, यौन उत्पीडन और स्त्री की अस्मिता पर आक्रमण के।[6]

18 शोध संगठनों द्वारा देश के 29 राज्यों से जुटाए गए आँकडे न केवल दु:खी करते है, बल्कि संकेत करते है कि देश में महिलाओं के लिए बहुत कुछ करने की जरूरत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. डी.आर., सचदेव (2007) : भारत में समाज कल्याण प्रशासन, किताब महल पृ.क्र. 363
2. पूर्वोक्त।
3. D.N. Majumdar, Roces and Cultures of India, page no. 93

4. मानचन्द खण्डेला (2008) – महिला सशक्तिकरण सिद्धांत एवं व्यवहार, अविश्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स पृ.क्र. 19
5. ज्ञानेन्द्र रावत (2003) – मनु, भारतीय समाज की नियत, नारी और दलित नारी की नियति।
6. दैनिक भास्कर, 2 जनवरी 2013, मधुरिया, पृ.क्र. 8 ।

तालिका क्रमांक 1

उत्तरदाताओं के धर्म एवं जाति के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	धर्म	जाति				योग
		सामान्य	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जनजाति	अन्य पिछड़ा वर्ग	
1	हिन्दू	15(10.80)	11(7.90)	81(58.30)	32(23.00)	139(100)
2	मुस्लिम	47(33.30)	—	—	94(66.70)	141(100)
3	सिक्ख	2(100)	—	—	—	2(100)
4	ईसाई	3(100)	—	—	—	3(100)
5	अन्य	8(53.30)	—	—	7(46.70)	15(100)
	योग	**75(25.00)**	**11(3.70)**	**81(27.00)**	**133(44.30)**	**300(100)**

तालिका क्रमांक 2

उत्तरदाताओं का जाति एवं शैक्षणिक स्तर के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	शैक्षणिक स्तर	जाति				योग
		सामान्य	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जनजाति	अन्य पिछड़ा वर्ग	
1	अशिक्षित	5(8.50)	7(11.90)	28(47.40)	19(32.20)	**59(100)**
2	प्राथमिक	4(4.30)	3(3.30)	53(57.60)	32(34.80)	**92(100)**
3	हाई स्कूल	22(66.70)	1(3.0)	—	10(30.30)	**33(100)**
4	हायर सेकेण्ड्री	24(37.50)	—	—	40(62.50)	**64(100)**
5	स्नातक/ स्नातकोत्तर	20(38.50)	—	—	32(61.50)	**52(100)**
	योग	**75(25.00)**	**11(3.70)**	**81(27.00)**	**133(44.30)**	**300(100)**

तालिका क्रमांक 3

उत्तरदाता महिला को न्यायिक सुविधाओं की जानकारी

क्र.	शिक्षा	प्रतिक्रिया		योग
		हाँ	नहीं	
1	अशिक्षित	—	59(100)	**59(100)**
2	प्राथमिक	—	92(100)	**92(100)**
3	हाई स्कूल	1(3.00)	32(97.00)	**33(100)**
4	हायर सेकण्ड्री	32(50.00)	32(50.00)	**64(100)**
5	स्नातक/ स्नातकोत्तर	38(73.10)	14(26.90)	**52(100)**
	योग	**71(23.70)**	**229(76.30)**	**300(100)**

तालिका क्रमांक 4

उत्तरदाता महिला के अनुसार समाज या कानून के प्रबलता की स्थिति

क्र.	शिक्षा	प्रतिक्रिया		योग
		समाज	कानून	
1	अशिक्षित	17(28.80)	42(71.20)	**59(100)**
2	प्राथमिक	50(54.30)	42(45.70)	**92(100)**
3	हाई स्कूल	22(66.70)	11(33.30)	**33(100)**
4	हायर सेकेण्ड्री	45(70.30)	19(29.70)	**64(100)**
5	स्नातक/ स्नातकोत्तर	40(76.90)	12(23.10)	**52(100)**
	योग	**174(58.00)**	**126(42.00)**	**300(100)**

****

जनजाति बाहुल्य क्षेत्रों के विकास में सहकारी आंदोलन की भूमिका

डॉ. सुरेखा तेलकर *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश में जनजातियों का बाहुल्य हैं। जनसंख्या की दृष्टि से मध्यप्रदेश का भारत में प्रथम स्थान हैं। इन जनजातियों का कोई लिखित इतिहास नहीं है, कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में रहने एवं परिवहन की सीमित सुविधाओं के कारण जनजातियों का संपर्क देश के अन्य भागों से नहीं रहा। वे अपने वातावरण में ही आत्मनिर्भर होती रहीं है इनका बाहरी दुनिया से कोई संपर्क नहीं रहा। केवल एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को परम्परागत ज्ञान दिया जाता है। 'भारतीय संविधान के अनुच्छेद 366 (25) के अनुसार जनजाति से तात्पर्य उन जनजातीय समुदाय अथवा जनजातीय समुदायों के अंशों या समूहों से हैं, जो संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत अनुसूचित जनजातियों के रूप में माने गए है। मध्यप्रदेश की प्रमुख निवासरत जनजातीय बहुल क्षेत्र एवं उपजनजातियाँ निम्न है।' **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

जनजातीय की अवधारणा – भारत में अनेक जनजातियाँ निवास करती हैं। भारतीय समाज एवं संस्कृति के निर्माण में जनजातियों का महत्वपूर्ण योगदान है, जबकि जनजातीय समूह हमारे राष्ट्र के सबसे पिछड़े हुए वर्ग में रखे जाते हैं। विश्व में जनजातियों के भौगोलिक एवं जनसंख्यात्मक वितरण की दृष्टि से भी भारत में जनजातीय समाजों की जनसंख्या अधिक है। जनजातियों को भारतीय समाज में विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। अनेक मानवशास्त्री इन्हें 'वन्य जातियाँ' या 'वनवासी' अथवा 'आदिवासी' के नाम से पुकाराते हैं।

जनजाति का अर्थ – 'जनजाति' अंग्रेजी के 'TRIBE' शब्द का हिन्दी पर्याय है, जो भारतीय संविधान के आने के बाद विशेष रूप से प्रचलित हो चुका हैं। जनजाति ऐसे लोगों का समूह है, जो किसी निश्चित भू-भाग पर निवास करते है, जिनकी संस्कृति एक होती है तथा जो आज भी आर्थिक दृष्टि से काफी पिछड़े हुए हैं।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 खण्ड 1 में घोषित किया गया है कि- 'राष्ट्रपति सार्वजनिक सूचना द्वारा, जनजातियों, जनजाति समुदायों या जनजाति समुदाय के भीतरी समूहों की घोषणा करेंगे। इस सूचना में जो जनजातियाँ, जनजाति समुदाय या जनजातियों के भीतरी समूह परिगणित किये जायेंगे, वे सब अनुसूचित जनजाति (शेड्यूल्ड ट्राइब्स) कहलाएगे।'

शोध प्रविधि – प्राथमिक एवं द्वितियक संमको का उपयोग करके निष्कर्ष तक पहुंचाया गया ।

सहकारिता आंदोलन – आज से हजारों साल पहले भी मानव इस तथ्य को समझता था कि मानव की प्रवृत्ति शुरू से ही एक दूसरे के साथ रहकर कार्य करने की रही है। यही कारण है कि सहकारिता में 'एक सबके लिये और सब एक के लिए' की भावना निहित हैं। सहकारी आंदोलन जन आंदोलन है। सहकारिता ही एक ऐसा सर्वोत्तम माध्यम है, जिसके अंतर्गत पूँजीवाद एवं समाजवाद के दोषों को कोई स्थान प्राप्त नहीं है। सहकारिता के द्वारा ही देश की उन्नति एवं सर्वांगीण विकास हो सकता है। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी जी के इस कथन से स्पष्ट है 'मैं अन्य कोई साधन नहीं जानती हूँ, जो कि इतना शक्तिशाली और सामाजिक लक्ष्य से इतना पूर्ण हो, जितना कि सहकारिता आंदोलन है।' इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आर्थिक विकास की कुंजी सहकारिता में ही निहित है।

सहकारिता का अर्थ – 'सहकारिता' शब्द 'सह + कार' दो शब्दों से मिलकर बना है। 'सह' का आशय मिलकर तथा 'कार' का आशय कार्य से है। इस प्रकार सहकारिता का अर्थ साथ मिलकर कार्य करने से है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह एक दूसरे से सहयोग किए बिना एक भी अपना कार्य व्यवस्थित रूप से नहीं चला सकता। परस्पर सहयोग की भावना से कार्य करने की इसी पद्धति को सहकारिता के नाम से जाना जाता है। जिस प्रकार हमारे शरीर के विभिन्न अंग अपनी कार्यशक्ति के अनुसार सामंजस्य की भावना से अपना-अपना कार्य करते हैं। ठीक उसी प्रकार आम आदमी सुखमय सामाजिक जीवन जीने के लिए सहकारी व्यवस्था के अंतर्गत अपने कार्यों का संचालन करता है। सहकारिता में एक सबसे लिए और सब एक के लिए होते है। इस तरह आज मानव जीवन का मूल मंत्र सहकारिता है।

मध्यप्रदेश में सहकारिता कार्यक्रम – मध्यप्रदेश में सहकारिता कार्यक्रम निम्नलिखित समितियों के माध्यम से क्रियान्वित किए जा रहे है।

- मत्स्योद्योग सहकारी समितियाँ
- लघु वनोपज सहकारी संघ
- सहकारी आवास संघ
- सहकारी उपभोक्ता संघ
- दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियाँ

मत्स्योंद्योग सहकारी समितियाँ – मत्स्योद्योग सहकारी समितियाँ एक महत्वपूर्ण ग्रामीण स्वरोजगार के रूप में, प्रदेश में लोकप्रिय है। मत्स्य पालन अब परम्परागत तरीके के अलावा अर्धगहन एवं गहन तकनीकों से किया जाने लगा है। देश की बढ़ती आबादी, बेरोजगारी तथा पौष्टिक आहार की कमी को देखते हुए, मत्स्य पालन व्यवसाय से, जहाँ एक ओर रोजगार मिलता है वही दूसरी ओर कम श्रम तथा कम लागत से भरपूर प्रोटीनयुक्त भोज्य पदार्थ मिलता है। साथ ही मछुओं को सामाजिक एवं आर्थिक स्तर के उन्नयन का मार्ग प्रशस्त करता है।

उद्देश्य –

1. उन्नत तकनीकी से समस्त ग्रामीण एवं सिंचाई जलाषयों के जलक्षेत्रों में मत्स्यपालन।

* शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला – छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

2. प्रसार एवं ग्रामीण हितग्राहियों को रोजगार उपलब्ध कराना।
3. निजी क्षेत्र में मत्स्यबीज उत्पादन को प्रोत्साहन।
4. मत्स्यबीज उत्पादन बढ़ाने हेतु अधोसंरचना का विकास।
5. समस्त मछुआ हितग्राहियों के हित संरक्षण हेतु निशुल्क दुर्घटना बीमा।

लघु वनोपज सहकारी संघ – मध्यप्रदेश राज्य लघु वनोपज सहकारी संघ प्रदेश में लघु वनोपजों का संरक्षण, संवर्धन एवं उनकी संवहनीयता सुनिष्चित कर संग्रहण का कार्य सहकारी समितियों के माध्यम से कराकर जनजातीय एवं ग्रामीणों को उनका उचित पारिश्रामिक दिलाती है। 'संविधान के 73 वें संशोधन के फलस्वरूप लघु वनोपजों का स्वामित्व ग्रामसभाओं का सौंपा गया था। प्रदेश स्तर पर लघु वनोपज संघ, जिला स्तर पर इसकी 61 यूनियन, एवं प्राथमिक स्तर पर कुल 1066 सहकारी समितियाँ बनी हुई हैं।'

संघ की मुख्य गतिविधियाँ –

- तेंदूपत्ता, सालबीज एवं गोंद का व्यापार एवं विपणन।
- कच्चे माल का उत्पादन एवं औषधियों का परीक्षण।
- वनोपजों के लिए गोदाम की व्यवस्था करना।
- आदिवासियों के लिए कल्याणकारी गतिविधियाँ संचालित करना।
- आजीविका के अवसर उपलब्ध कराना।

मध्प्रदेश में सहकारी आवास गृह योजना – गृह निर्माण सहकारी संस्थाओं की मध्यप्रदेश की आवास समस्या के निराकरण में महत्वपूर्ण भूमिका है। प्राथमिक संस्थाओं के अलावा प्रदेश स्तर पर म.प्र. राज्य सहकारी आवास संघ मर्यादित गठित है, जो गृह निर्माण हेतु ऋण की व्यवस्था करता है। गृह निर्माण सहकारी संस्थाओं का पंजीयन मध्यप्रदेश सहकारी संस्था अधिनियम के अंतर्गत जिला कार्यालय में किया जाता है।

आवास संघ की कार्य पद्धति –

- आवास संघ अपनी सदस्य प्राथमिक गृह निर्माण सहकारी समितियों के माध्यम से सदस्यों को 2 लाख का ऋण उपलब्ध कराया जाता है।
- सदस्यों को सीधे ऋण अधिकतम रूपए 5 लाख सीमा तक उपलब्ध कराया जाता है।
- गृह निर्माण सहकारी संस्थाओं को उनकी भूमि के विकासीकरण हेतु ऋण उपलबध कराया जाता है।
- आवास संघ द्वारा प्रदेश की आवास समस्या से सहकारिता के माध्यम से सुलझाने हेतु 26000 हितग्राहियों को भवन निर्माण हेतु ऋण उपलब्ध कराया गया है। वर्तमान स्थिति में संघ के शेष ऋणी हितग्राहियों की संख्या लगभग 4000 हैं।

सहकारी उपभोक्ता संघ – मध्यप्रदेश राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ प्रदेश के विभिन्न जिलों में गठित प्राथमिक उपभोक्ता सहकारी भण्डारों तथा थोक उपभोक्ता सहकारी भण्डारों का शीर्ष स्तरीय सहकारी संघ है। वर्ष 1964 में अपने गठन के उपरान्त प्रारंभ में उपभोक्ता संघ के द्वारा शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी सदस्य सहकारी संस्थाओं के माध्यम से नियंत्रित व अनियंत्रित उपभोक्ता सामग्री वस्तुएँ प्रदाय की जाती थी, किन्तु कालान्तर में इन सदस्य सहकारी संस्थाओं की आर्थिक स्थिति कमजोर होने से संस्थाओं के माध्यम से व्यवसाय में धीरे-धीरे कमी आ रही है।

उपभोक्ता संघ द्वारा अपनी पंजीकृत उपविधियों के उद्देश्यों के अनुरूप प्रारंभ से ही अपनी शाखाओं के माध्यम से उपभोक्ता सामग्रियों का प्रदाय अपने परम्परागत व्यवसाय के अंतर्गत किया जा रहा है।

'उपभोक्ता संघ के लाभ-हानि की स्थिति वर्ष 2008-09 से 2015-16 तक नीचे तालिका में दिखाया गया है।'

संघ के लाभ-हानि की स्थिति वर्ष 2008-09 से 2015-16

वर्ष	सकल लाभ	संचित हानि	शुद्ध लाभ/हानि (राशि रूपयों लाखों में)
2008-09	123.18	1688.48	(-) 108.15
2009-10	159.22	1775.85	(-) 87.34
2010-11	160.42	1849.68	(-) 73.89
2011-12	212.77	1927.22	(-) 77.54
2012-13	301.34	1923.37	(+) 3.85
2013-14	434.61	1871.86	(+) 51.51
2014-15	615.34	1704.42	(+) 167.44
2015-16	525.48	1533.04	(+) 171.38

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि उपभोक्ता संघ को वर्ष 2008-09 से 2011-12 तक हानि का सामना करना पड़ा, किन्तु 2012-13 से उपभोक्ता संघ की स्थिति में सुधार होने लगा और 2015-16 तक उपभोक्ता संघ को 171.38 लाख रूपए का लाभ हुआ और उपभोक्ता संघ की स्थिति धीरे-धीरे मजबूत होने लगी।

दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियाँ – देश के ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुपालन और दुग्ध व्यवसाय का महत्व अधिक है। भारत में अन्य देशों की तुलना में दूध का उत्पादन बहुत कम रहा है। प्रतिव्यक्ति दूध की उपभोग की मात्रा भी हमारे देश में कम रही हैं। दूध के उत्पादन एवं उपभोग को बढ़ाने तथा अपेक्षाकृत साधनहीनों को रोजगार उपलब्ध कराने की दृष्टि से दुग्ध उद्योग के विकास की नीति शासन द्वारा सहकारिता के आधार पर अपनाई गई है। मध्यप्रदेश में अमूल दुग्ध योजना के आधार पर दुग्ध संघ वर्ष 1975 में गठित किया गया। सन् 1945 में गुजरात राज्य के खेड़ा जिले में ग्रामीण दुग्ध उत्पादकों को दुग्ध व्यवसाय से जुडे बिचौलियों तथा मध्यस्थों के शोषण से मुक्त कराने हेतु लौह पुरूष सरदार बल्लभ भाई पटेल ने सहकारिता के आधार पर दुग्ध उत्पादन में वृद्धि की जो आज विश्व भर में अमूल डेयरी उद्योग के नाम से विख्यात है।

समस्याएँ –

- जनजाति समाज में अभी भी जागरूकता एवं शिक्षा का अभाव है।
- जनजाति समाज जनजाति जीवन को शोषण व प्रताड़ना से मुक्त करवाना।
- जनजाति किसानों को अपना अनाज व वनोपजों को बेचने में कठिनाई होती है क्योंकि इसका फायदा साहूकारों व व्यापारी उठातें है।
- जनजाति समाज शासकीय योजनाओं कि कमी के कारण असंतुष्ट है।
- गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वाले आधे व्यक्तियों को सहकारी समिति का लाभ नहीं मिलता है।

सुझाव –

- सहकारिता आंदोलन के संबंध में निम्न सुझावों में ध्यान देना आवश्यक है।
- किसी भी योजना/आंदोलन को जब जनजाति समाज के संदर्भ में देखा जाए तो जनजाति समाज में अभी भी जागरूकता एवं शिक्षा का अभाव बना है। अत: सहकारिता आंदोलन की सफलता के लिए आवश्यक है कि जनजाति समाज को अधिक से अधिक शिक्षित व जागरूक बनाने हेतु विशेष प्रचार-प्रसार व प्रशिक्षण आयोजित किए जाने चाहिए। जिससे उनके विकास के लिए बनने वाली योजनाओं का

लाभ उन्हें मिल सके।

- सहकारी शिक्षा को प्रभावी व सफल बनाने के लिए आवश्यक प्रयास किए जाने चाहिए। जिससे ग्रामीणजन सहकारिता के व्यापक स्वरूप और महत्त्वपूर्ण भूमिका को समझें और अपनी आर्थिक गतिविधि से सम्बन्धित सहकारी समिति के सक्रिय सदस्य बनकर उससे अपना आर्थिक विकास करें। जब ग्राम्य अर्थव्यवस्था पूर्णत: सहकारिता पर आधारित हो जाएगी तो ग्रामीणजन न केवल शोषण से छुटकारा पा सकेंगे बल्कि गाँवों में व्याप्त बेरोजगारी एवं आर्थिक पिछड़ेपन से मुक्त हो सकेंगे।
- वर्तमान परिदृश्य में सहकारिता को नए क्षेत्रों में प्रवेश कराना होगा, विशेषकर कृषि उत्पाद, सहकारिता से सिंचाई, जल संग्रहण तथा वितरण, ऊर्जा उत्पादन एवं वितरण, नई क्रांति लाने की तकनीकी सूचना प्रौद्योगिकी एवं कुटीर उद्योग इत्यादि।

निष्कर्ष –

- भारत में जनजाति समाज अतीत काल से अमानवीय शोषण का शिकार हो रही हैं। वे अनेकानेक आर्थिक अभावों से ग्रस्त थी, विविध धार्मिक निषेधों का शिकार थी, राजनैतिक अधिकारों से पूर्णत: वंचित थी तथा सामाजिक दृष्टि से दास के रूप में अमानवीय जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य थी।
- देश के स्वतन्त्रोपरान्त से लेकर अब तक जनजातियों की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक स्थिति में सुधार तथा उनके उन्नयन हेतु अनेकानेक शासकीय एवं अशासकीय प्रयास किए गए हैं, जिसमें सहकारिता आंदोलन का महत्वपूर्ण स्थान रहा। जिसके फलस्वरूप जनजातियों के जीवन स्तर, सामाजिक स्थिति, आर्थिक स्थिति एवं उनका सांस्कृतिक जीवन प्रभावित हुआ है। जनजातियों के जीवन प्रतिमान में सहकारिता आंदोलन का विकास एवं संभावनाएँ ही प्रस्तुत शोध का उद्देश्य रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वर्मा, रूपचंद– ***'भारतीय जनजातियाँ,*** सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2003
2. वर्मा, डॉ.सवलिया बिहारी–***ग्रामीण अर्थशास्त्र एवं सहकारिता,*** विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2009

मार्गदर्शिका –

1. सहकारिता के 100 वर्ष 'मध्यप्रदेश राज्य सहकारी संघ भोपाल' ।
2. स्वर्णिम सहकारिता 'मध्यप्रदेश राज्य सहकारी संघ भोपाल' ।

जनजातीय बहुल क्षेत्र एवं उपजनजातियाँ

जनजाति	उप–जनजाति	निवास क्षेत्र
गोंड	परधान, अगरिया, ओझा, नगारची सोल–हास,कमार म.प्र. में कुल जनजाति जनसंख्या का 35 प्रतिशत है।	प्रदेश के सभी जिलों में मुख्यतया नर्मदा के दोनों किनारों पर विन्ध्य और सतपुड़ा अंचल में।
भील	बरेला, भिलाला, पटलिया (37.7 प्रतिशत)	धार, झाबुआ, पूर्वी निमाड़, अलराजपुरा
बैगा	बिझवार, नरोतिया, भरोतिया, नाहर, रेभैना, काढ़, मैना	मण्डला, बालाघाट, डिण्डोरी
कोरकू	मोवासीकमा, ववारी, बोडोया, नाहर नहाला	पूर्वी निमाड़, होषंगाबाद, बैतूल, छिन्दवाड़ा ।
भारिया	भूमिया, भूईहार, पंडो	छिन्दवाड़ा, जबलपुर।
कोल	रोहिया, रौठेल	रीवा,सतना, शहडोल व सीधी।
सहरिया	स्वयं को खुटिया पटेल कहते हैं।	गुना, शिवपुरी राजगढ, मुरैना, ग्वालियर, विदिशा, रायसेन, अशोकनगर

****

ग्राम सभा सशक्तिकरण के लिए अध्ययन – छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में

वीरेन्द्र सिंह ठाकुर *

शोध सारांश – 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के तहत ग्राम सभा को संवैधानिक मन्यता प्रदान की गई है। अनुच्छेद 243(अ) में ग्राम सभा को शक्तियॉ प्रदान करने का दायित्व राज्य सरकारों को सौंपा गया तथा संविधान की 11वीं अनुसूची में शामिल 29 विषयों के संबंध में योजना बनाने, क्रियान्वित करने तथा उनके मूल्यांकन का दायित्व तथा शक्तियां ग्राम सभाओं को सौंपा गया है। ग्राम सभा में ग्रामीणों द्वारा लिए गए विभिन्न निर्णय 'ग्रामीण स्वशासन का प्रतिबिम्ब है' इस तथ्य को स्वीकारा गया है।

राज्यपाल किसी गॉव या गॉवों के समूह को ग्राम के रूप में घोषित करता है। घोषणा पश्चात् प्रत्येक ग्राम के लिए एक मतदाता सूची तैयार की जाती है। इस सूची में दर्ज प्रत्येक व्यक्ति जीवन भर ग्राम सभा का सदस्य होता है, इस प्रकार ग्राम सभा गॉव के वयस्क लोगों की सभा है जो कभी भी भंग नहीं होती है। ग्राम सभा के जरिए महिलाओं, अनुसूचित जाति एवं जनजाति, कमजोर तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को ग्रामीण विकास में सक्रिय भागीदारी का अवसर प्राप्त होता है। ग्राम सभा के माध्यम से ग्रामीण प्रशासन में प्रत्यक्ष भागीदारी मिलने से जहॉ एक ओर ग्रामीणों का आत्मविश्वास बढ़ा है, विकास के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित हुई है तथा सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना सुदृढ़ होती है। वहीं दूसरी ओर ग्राम सभा सदस्यों को जानकारी का अभाव होने कारण उनके अधिकारों से वंचित रखा जा रहा है। इसका इस बात से अंदाजा लगाया जा सकता है कि नियमित अंतरालों में ग्राम सभा आयोजन करने का उत्तरदायित्व सरपंच का है। सरपंच द्वारा ऐसा नहीं कर पाने पर वह इस पद के लिए अयोग्य हो जाता है। इस नियम के होते हुए भी शासन द्वारा निर्धारित छ: अनिवार्य ग्राम सभाओं का आयोजन पंचायतों द्वारा नहीं किया जा रहा है। शासन, कलेक्टर, जिला एवं जनपद पंचायत से पत्र प्राप्त होने पर ही किया जा रहा है या पंचायतों द्वारा ग्राम सभा का आयोजन कर भी लिया जाता है तो ग्राम सभाओं में गणपूर्ति का अभाव सदैव बना रहता है तथा स्थगित ग्राम सभाओं में वार्षिक कार्ययोजना, हितग्राहियों का चयन, वार्षिक बजट, लेखा संपरिक्षा प्रतिवेदन, वार्षिक लेखा तथा प्रशासन की रिपोर्ट एवं पंचायत द्वारा नियुक्ति तथा उन्हे पद से पृथक करने जैसे विषयों पर गणपूर्ति न होने के बावजूद संकल्प पारित कर लिया जा रहा है। जबकि ग्राम सभा बैठक में गणपूर्ति कराने का उत्तरदायित्व उनके निर्वाचन क्षेत्र के अनुसार सरपंच और पंच का होता है। इस बात के होते हुए भी कि ' ग्राम सभा की लगातार तीन बैठक में गणपूर्ति नहीं होने पर संबंधित पंच एवं सरपंच को नोटिस देकर दो और ग्राम सभाओं में गणपूर्ति कराने का अवसर दिया जाता है, फिर भी गणपूर्ति न होने की स्थिति में संबंधित पदधारी को पद से पृथक करने का प्रावधान पंचायत राज अधिनियम में किया गया है।'

लोकतंत्र एक जीवन दर्शन है। राजनीति में इसके प्रयोग की अवधारणा में विकेन्द्रीकरण का विचार भी अन्तर्निहित है। राजनीति में लोकतंत्र के प्रयोग का तात्पर्य केवल राज्यसत्ता में लोगों की भागीदारी का प्रयास नहीं है, अपितु सरकार के दैनिक कामकाज में लोगों को सहभागी बनाना है। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण लोगों को सहभागिता प्राप्त करने का एक सशक्त माध्यम है, इसका उद्देश्य शासन के कामकाज में लोगों की सहभागिता को सुनिश्चित कर पंचायती राज संस्थाओं को स्व–शासन की प्रथम इकाई के रूप सशक्त बनाना है।

प्रस्तावना – ग्राम सभा ग्रामीण जनों को रंग, धर्म, जाति, संप्रदाय आदि भेदभाव जैसे कुरीतियों को समाप्त करके एक मंच प्रदान करती है। जिसके माध्यम से ग्रामीण जन अपनी बात प्रस्तुत कर सकते हैं, अपनी आवश्यकताओं, समस्याओं एवं चिंताओं का निराकरण कर सकते है। विकास की प्रक्रिया में ग्राम सभा सदस्यों की भागीदारी सुनिश्चित करने एवं सत्ता विकेन्द्रीकरण के दृष्टिकोंण से ग्राम सभा एक महत्वपूर्ण आयाम है एवं ग्रामीण विकास को गति प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

पंचायती राज व्यवस्था में सुधार हेतु गठित समिति एवं संविधान संशोधन–

- बलवंत राय मेहता समिति – वर्ष 1957
- अशोक मेहता समिति – वर्ष 1977
- जी.वी.के. राव समिति – वर्ष 1985
- लक्ष्मीमल सिंघवी समिति – वर्ष 1986
- पी.के.थुंगन समिति – वर्ष 1988
- वी.एन.गॉडगिल समिति – वर्ष 1989
- 64 वॉ संविधान संशोधन – वर्ष 1989
- 73 वॉ संविधान संशोधन – वर्ष 1993

ग्राम सभा की भूमिका –

- सामुदायिक एकता व कार्यो में पारदर्शिता लाना।
- लोगों की शासन में सहभागिता को बढ़ाना।
- जन केन्द्रित वितरण प्रणाली को स्थापित करना।
- आम जनता की इच्छाओं को व्यक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना।
- सामाजिक रूप से वंचितों को निर्णयन में सहभागी बनाना।

ग्राम सभा के कार्य –

* वार्डन सह संपदा अधिकारी, क्षेत्रीय पंचायत एवं ग्रामीण विकास प्रशिक्षण केन्द्र कुरूद, जिला–धमतरी (छ.ग.)भारत

- गॉव के आर्थिक विकास की योजनाओं और कार्यक्रमों को तय करना।
- ग्राम पंचायत की ऑडिट रिर्पोट देखना और उस पर विचार करना।
- गरीबी उन्मूलन की योजनाओं में पात्र लाभार्थियों का चयन करना।
- आर्थिक लाभ की योजनाओं पर नियंत्रण रखना।
- सरकारी कर्मचारियों के कार्य पर निगरानी रखना।
- आम जनता में जागरूकता लाना।
- अपने क्षेत्र के जल,जंगल व जमीन का समुचित व्यवस्था तथा देखभाल करना।
- गॉव के विकास कार्यो की देखरेख करना तथा खर्च पर निगरानी रखना।
- ग्राम पंचायत के कार्यो में पारदर्शिता लाना।
- ग्रामीण समाज में सौहार्द्र एवं एकता बनाना।
- सामुदायिक कल्याण कार्यक्रमों में सहयोग देना।
- आगामी वित्तीय वर्ष के लिए बजट पर विचार विमर्श करना।
- अधिसूचित (आदिवासी) क्षेत्र में बाजार तथा मेलों का ग्राम पंचायत के माध्यम से व्यवस्था करना।

शोध पत्र का उद्देश्य –

1. ग्राम सभा के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं के उद्देश्यों की पूर्ति करना।
2. ग्राम सभा के माध्यम से समाज के पिछड़े, कमजोर, अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के ग्रामीणों के हितों की रक्षा करना।
3. ग्राम पंचायत का ग्राम सभा के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित करना।
4. ग्राम सभा के सभी चर्चाओं एवं फैसलों में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देना।
5. ग्राम सभा में सदस्यों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
6. अनुसूचित क्षेत्रों में ग्रामीणों के रीति-रिवाज/सामाजिक दस्तुरों को बनाये रखना तथा पंचायती राज संस्थाओं में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करना।

प्रदत्तों का संकलन – प्राथमिक प्रदत्तों का संकलन क्षेत्रीय पंचायत एवं ग्रामीण विकास प्रशिक्षण केन्द्र में त्रि-स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं के विभिन्न प्रशिक्षण अवधि के दौरान उपस्थित जनप्रतिनिधियों, अधिकारी एवं कर्मचारियों से साक्षात्कार विधी/चर्चा द्वारा एकत्रित किया गया है।

द्वितीयक प्रदत्तों का संकलन प्रशासनिक प्रतिवेदन छत्तीसगढ़ शासन, पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग तथा अन्य स्त्रोतों से एकत्रित किया गया है।

तालिका- 1 व ग्राफ (देखे आगे पृष्ठ पर)

ग्राम सभा सशक्तिकरण के लिए विभिन्न माध्यम –

प्रशिक्षण के माध्यम से – ग्राम पंचायत निर्वाचन के तुरंत पश्चात् पंचायत प्रतिनिधियों को पंचायत राज अधिनियम एवं शासन की विभिन्न योजनाओं का प्रशिक्षण देना एवं पंचायत प्रतिनिधियों के माध्यम से ग्राम सभा के महत्व, कार्य एवं दायित्व के संबंध में ग्राम सभा सदस्यों को जानकारी देना।

महिला स्व-सहायता समूह के माध्यम से – महिला स्व-सहायता समूह के महिलाओं द्वारा संचालित गतिविधियों की ग्राम सभा में प्रस्तुतीकरण कराकर तथा अन्य स्व रोजगारोन्मुखी गतिविधियों की जानकारी देकर ग्रामीणों/महिलाओं में शासन की जन-कल्याणकारी योजनाओं का लाभ उठाने प्रोत्साहित कर ग्राम सभा के प्रति रूचि जागृत करना।

समन्वय के माध्यम से – समाज के पिछड़े,कमजोर,महिला तथा अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के सदस्यों को ग्राम सभा में अपनी बात रखने का अवसर देना तथा उनके साथ बेहतर समन्वय स्थापित करना।

सदस्यों के सहभागिता से – ग्राम सभा बैठक में ज्यादा से ज्यादा ग्रामीणों, युवाओं एवं महिलाओं के सहभागिता से विभिन्न विषयों में चर्चा कराकर संकल्प पारित करना।

पारदर्शिता के माध्यम से – पंचायत में चल रही समस्त गतिविधियों, जनहित कार्यों, निर्माण कार्यों एवं व्यय का व्यौरा से संबंधित जानकारी ग्राम सभा सदस्यों को देना।

जागरूकता के माध्यम से – पंचायत राज अधिनियम एवं शासन द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं की जानकारी देकर ग्राम सभा सदस्यों में जागरूकता लाना तथा रूचि जागृत करना।

करारोपण के माध्यम से – पंचायत क्षेत्र में अनिवार्य रूप से करारोपण करने से ग्रामीण जनों में पंचायत के कार्यो के प्रति जुड़ाव की भावना जागृत होगी तथा कर के रूप में पंचायत को अदा की गयी राशि के बदले मिलने वाली सुविधाओं एवं उक्त राशि से पंचायत द्वारा कराए जा रहे कार्यो के प्रति जनमानस में कार्यो की गुणवत्ता, जवाबदेहिता एवं पारदर्शिता के संबंध में जानकारी लेने के लिए ग्राम सभा में रूचि बनी रहेगी।

परामर्श के माध्यम से – पंचायतों के माध्यम से संचालित शासन की विभिन्न जन-कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी तथा पात्र लाभार्थियों के चयन से संबंधित सम्पूर्ण जानकारी ग्राम सभा बैठक शुरू होने के एक घण्टा पूर्व विषय विशेषज्ञों/पंचायत के माध्यम से परामर्श देकर सदस्यों में ग्राम सभा के प्रति रूचि जागृत करना।

पंचायत राज दिवस के माध्यम से – 24 अप्रैल सन् 1993 को राजपत्र में प्रकाशित होने के साथ ही पंचायत राज अधिनियम सम्पूर्ण भारतवर्ष में लागू हुआ। वर्तमान में 24 अप्रैल को सम्पूर्ण भारतवर्ष में पंचायत राज दिवस के रूप मनाया जाने लगा है। पंचायतों में सभी वर्ग के ग्राम वासियों के साथ पंचायत राज दिवस को ग्रामीण त्यौहार के रूप में मनाने से ग्रामीण जनों में ग्राम सभा के प्रति लगाव की भावना जागृत होगी।

महिलाओं के माध्यम से – छत्तीसगढ़ पंचायत राज अधिनियम में संशोधन कर वर्ष 2010 से त्रि-स्तरीय पंचायत राज व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने 33 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया गया है।

छत्तीसगढ़ सरकार ने एक कदम आगे बढा कर छत्तीसगढ़ के महिलाओं को घर के मुखिया का दर्जा प्रदान करने हुए सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत राशन कार्ड में मुखिया के रूप में महिलाओं का नाम दर्ज कर विश्व पटल में छत्तीसगढ़ की महिलाओं को एक पहचान दिलाने का सराहनीय कार्य छत्तीसगढ़ सरकार के मुखिया डॉ.रमन सिंह ने किया है। सरकार की भावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए महिलाओं को अनिवार्य रूप से ग्राम सभा में सहभागिता के लिए प्रोत्साहित करना।

ग्राम सभा को अधिक प्रभावी बनाने के लिए अन्य सुझाव –

- ग्राम सभा बैठक की सूचना निर्धारित समय में ग्रामीण जनों को सुगमता पूर्वक अनिवार्य रूप से देना।
- ग्राम सभा के माध्यम से समाज के पिछड़े, कमजोर, महिला, अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के पात्र हितग्राहियों को शासन के योजनाओं का लाभ प्राथमिकता क्रम में दिलाना।
- ग्रामसभा में ग्रामीण जनों की उपस्थिति सुनिश्चित करने 'जन जागरण'/हस्ताक्षर अभियान चलाना।
- ग्राम सभा की बैठक में ज्यादातर भाग लेने वाले ग्राम सभा सदस्यों

को हितग्राही मूलक कार्यो/योजनाओं में प्राथमिकता देना।

- ग्राम पंचायत से अधिक सशक्त ग्राम सभा है, इस विषय में सदस्यों को अपने कर्तव्य एवं शक्तियों की जानकारी देकर जवाबदेही सुनिश्चित करना।
- ग्राम सभा सदस्यों द्वारा ग्राम पंचायत को दिए गए आवेदन का निराकरण समय-सीमा में न करने पर सूचना के अधिकार अधिनियम-2005 के अनुरूप शास्ति के रूप में धनराशि आवेदक को देने का प्रावधान किया जावे।
- ग्राम सभा बैठक में गणपूर्ति न होने पर बैठक स्थगित कर आगामी बैठक की सूचना एक विहित रीति में देने का प्रावधान है। किन्तु स्थगित बैठक उसी दिन एक घण्टे पश्चात् या अगले दिन रख लिया जाता है जिसको की सूचना प्रसारण की तिथि से 7 दिन पश्चात् या विशेष परिस्थितियों में 3 दिन की सूचना पर ग्राम सभा आयोजित करने का प्रावधान को कड़ाई से पालन कराने का प्रावधान किया जावे।

निष्कर्ष – सही मायने में ग्राम सभा में बैठा व्यक्ति जब अपने एवं उनके विकास की बात को सर्व सम्मति से लागू करता है, तभी लोकतंत्र की अवधारणा सुनिश्चित होती है। नि:संदेह ग्राम सभा ही वह सशक्त माध्यम है, जिसके द्वारा ग्राम सभा सदस्यों की सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित करके देश की वास्तविक तस्वीर बदली जा सकती है।

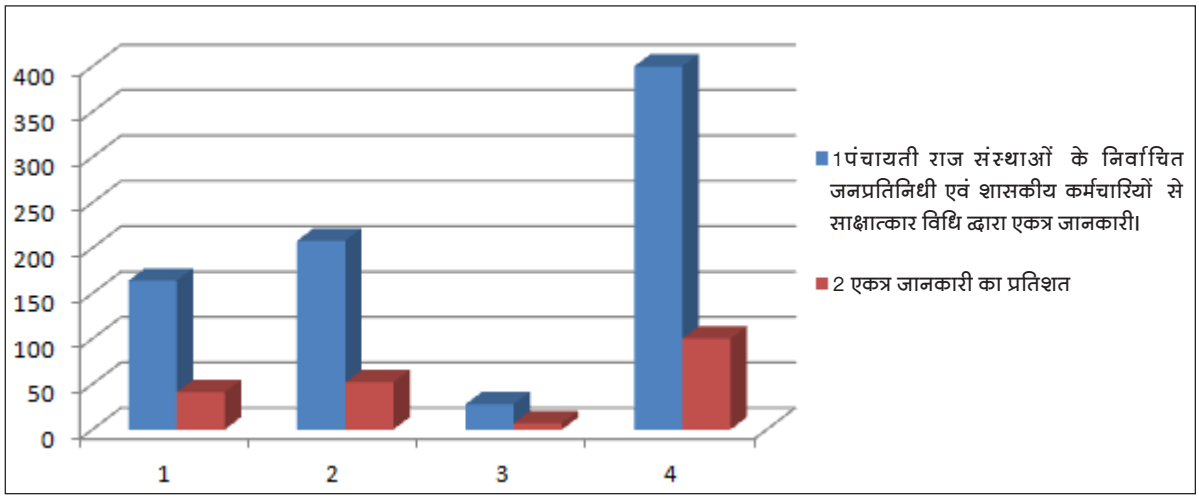
संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नारूला, आर.के., छत्तीसगढ़ राज अधिनियम 1993, इलाहाबाद लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, 2016
2. मिश्र, एच.के., छत्तीसगढ पंचायत राज अनिधियम, इंडिया पब्लिकेशन, कम्पनी रायपुर, 2016
3. द्विवेदी, राधेश्याम, छत्तीसगढ़ पंचायत राज अधिनियम, सुविधा लॉ हाउस, भोपाल, 2014
4. बंधोपाध्याय,डी., मुखर्जी, अभिताभ, गवई,मिताली सेन, पंचायतों का सशक्तिकरण प्रधान प्रशिक्षकों के लिए पुस्तिका, राजीव गांधी फाउण्डेशन, नई दिल्ली, 2003
5. वर्मा, अंजली, भारत में पंचायती राज, ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2009
6. नारूला, बी.सी., पंचायती राज व्यवस्था, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, 2011
7. सिंह, विजय करण, पंचायती राज व्यवस्था, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2005
8. देवपुरा, प्रतापमल, पंचायती राज के नये आयाम, अंकुर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012

तालिका- 1

ग्राम सभा संम्मिलन प्रक्रिया, कार्य एवं दायित्व प्रश्नोत्तरी की जानकारी

क्र.	विवरण	जानकारी है।	जानकारी नहीं है।	कुछ कुछ जानकारीहै।	कुल उत्तरदाताओं की संख्या
1	पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचित जनप्रतिनिधियों एवं शासकीय कर्मचारियों से ग्राम सभा संम्मिलन प्रक्रिया पर 35 प्रश्नों के प्राप्त उत्तरों का आंकड़ा।	164	208	28	400
2	प्राप्त आंकड़ो का प्रतिशत	41	52	7	100



****

नवाजतन योजना एवं सामाजिक चेतना से कुपोषण मुक्ति का एक अध्ययन

सुशील कुमार पाठक *

शोध सारांश – छत्तीसगढ़ राज्य में महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा संचालित बच्चों के कुपोषण को कम करने के लिए नवाजतन योजना सामाजिक चेतना से कुपोषण मुक्ति का एक अभियान है। जिसके अंतर्गत कुपोषित बच्चों का समुदाय आधारित प्रबंधन किया जाता है। राज्य में गंभीर कुपोषित बच्चों की संख्या गंभीर समस्या दिखाई देती है और इन्हीं बातों को ध्यान देते हुए नवाजतन योजना गंभीरता एवं संवेदनशीलता के साथ कार्य कर रही है। वर्ष 2011 से अब तक कुल पांच चरणों में कार्य संचालित हुआ है। जिसमें पर्यवेक्षक, आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, आंगनबाड़ी सहायिका, मुख्यमंत्री सुपोषण दूत, सुपोषण मित्र, सामुदायिक कार्यकर्ताओं, ग्राम पंचायतों, स्व. सहायता समूहों आदि को सम्मिलित किया गया है।

विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि राज्य में बच्चों में विभिन्न कारणों से होने वाली मृत्यु में लगभग 55 प्रतिशत बच्चे कुपोषण से पीड़ित होते हैं। नवाजतन योजना में प्रथम चरण से लेकर अब तक पॉच चरणों में कार्य किया जा चुका है, जिसमें प्रत्येक चरण में सुधार होता गया है एवं सभी जिला कुपोषण से सुपोषण की ओर अग्रसर हुआ है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ सर्वेक्षण II (1998) के अनुसार राज्य में 61 प्रतिशत बच्चे कुपोषित थे। कुपोषण का सबसे बड़ा बचाव जागरुकता अभियान है। हम सब जानतें हैं कि बच्चे देश के भविष्य हैं। साथ ही हमारे परिवार का भविष्य भी बच्चों के उपर निर्भर है, ऐसे में बच्चों को कुपोषण मुक्त करना बेहद जरुरी है। कुपोषण के कारण बच्चे कमजोर होते हैं एवं उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती है इस स्थिति में बच्चों में कोई भी बीमारी होती है, तो वह बढ़कर जानलेवा हो जाता है। यदि बच्चों को मृत्यु से बचाना है, तो कुपोषण के स्तर को कम करना जरुरी है साथ ही यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि गंभीर कुपोषित बच्चों में यह स्थिति अत्यंत जटिल होती है एवं अधिकांश मामलों में इसे रोक पाना संभव नहीं होता और यह जानलेवा हो जाता है। इस स्थिति से बचने के लिए लोगों में कुपोषण के प्रति जागरुकता लाना ही एक मात्र ऐसा माध्यम है। जिससे बच्चों के मृत्यु दर में कमी लायी जा सकती है।

प्रस्तावना – कुपोषित बच्चों का समुदाय आधारित प्रबंधन के साथ नवाजतन का सामाजिक चेतना से कुपोषण मुक्ति अभियान के साथ कुपोषित बच्चों का परिवार एवं समुदाय स्तर पर पोषण प्रबंधन किया जाता है। नवाजतन कार्यक्रम का यह प्रयास है कि समाज के लोग जागरुक बने, कुपोषण को समझें एवं इस गंभीर समस्या से निजात पाने में अपनी भूमिका सुनिश्चित करें।

शोध पत्र का उद्देश्य –

1. ग्रामीण जनों में कुपोषण के प्रति जागरुकता लाना।
2. ग्रामीण कुपोषित बच्चों को सुपोषित करने में समाज की भूमिका सुनिश्चित करना।
3. शासन द्वारा चलाए जा रहे कुपोषण से संबंधित योजनाओं में ग्रामीण जनों की सहभागिता सुनिश्चित करना।
4. बच्चों के मृत्यु दर में कमी लाने के लिए किए जा रहे कार्यों को बढ़ावा देना।
5. पंचायतों को सुपोषित पंचायत बनाने की दिशा प्रोत्साहित करना।

ऑकड़ों का संकलन – प्राथमिक ऑकड़ों का संकलन जशपुर जिला के दुलदुला विकास खण्ड में कार्यरत आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं /सहायिकाओं से साक्षात्कार विधी/चर्चा द्वारा एकत्रित किया गया है।

द्वितीयक ऑकड़ों का संकलन प्रशासनिक प्रतिवेदन छत्तीसगढ़ शासन, महिला एवं बाल विकास विभाग तथा अन्य स्त्रोतों से एकत्रित किया गया है।

तालिका–1 व ग्राफ (देखे आगे पृष्ठ पर)

सुपोषण की दिशा में नवाजतन की भूमिका – नवाजतन योजना के तहत प्रदेश के विभिन्न चयनित जिलों में सघन सुपोषण अभियान चलाया जा रहा है। जिसके अंतर्गत विभिन्न ग्राम पांचायतों के कुपोषित बच्चों को चिन्हांकित कर उन्हें स्वस्थ बनाने का लक्ष्य है। बच्चों के अभिभावकों व परिवारों से सत्त संपर्क कर उन्हें प्रशिक्षित किया जा रहा है तथा पर्यवेक्षक, आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, आंगनबाड़ी सहायिका, सुपोषण दूत, सुपोषण मित्र, सामुदायिक कार्यकर्ता, ग्राम पंचायतें, स्व. सहायता समूहों, स्वेछिक संस्थाओं एवं अन्य लोगों को सशक्त कर उनसे सहयोग लेते हुए समन्वय स्थापित करना एवं कुपोषण से सुपोषण की ओर अग्रसर होते हुए सुपोषित करना।

नवाजतन के कार्य –

- कुपोषित बच्चों का समुदाय आधारित प्रबंधन करना।
- सामाजिक चेतना से कुपोषण मुक्ति लाना।
- सुपोषित ग्राम पंचायत/जिला/राज्य बनाना।
- महिला एवं बाल विकास की गतिविधियों में स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को चिन्हांकित करते हुए निराकरण करना।

ऑकड़ों का विश्लेषण – शोध कार्य के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही प्रकार के ऑकड़ों का उपयोग किया गया है। प्राप्त ऑकड़ों का विश्लेषण किया गया है तथा प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर सुझाव दिया गया है।

सुपोषण के लिए विभिन्न सुझाव –

- समाज में सुपोषण के प्रति जागरुकता लाना।

* फेसीलिटेटर एवं प्रशिक्षक, बाजार डांड, जशपुर नगर, जिला–जशपुर (छ.ग.) भारत

- विवाह के लिए निर्धारित उम्र में ही लड़के लड़कियों का विवाह कराना।
- स्वच्छता एवं जागरुकता अपनाना।
- गर्भवती महिलाओं के संतुलित आहार एवं स्वास्थ का नियमित रुप से ध्यान रखना।
- गर्भवती महिलाओं का संस्थागत प्रसव कराना।
- शीघ्र एवं सत्त स्तनपान को ही अपनाना। (छः माह तक पूर्ण रुप से स्तनपान एवं उसके पश्चात् ऊपरी खान पान (संतुलित आहार)।
- बच्चों का स्वास्थ एवं पोषण(संतुलित आहार) संबंधी देख रेख करना एवं अपेक्षित सुविधा उपलब्ध कराना।
- दो बच्चों के जन्म में अन्तर रखना।
- गंभीर कुपोषित बच्चों को पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती कराना।
- पंचायतों के माध्यम से सुपोषण के लिए संचालित शासन के विभिन्न योजनाओं का लाभ दिलाना ।

निष्कर्ष – छत्तीसगढ़ में सामान्य जिलों की अपेक्षा आदिवासी जिलों में कुपोषण एक गंभीर समस्या बनी हुई है। जिसमें विशेष रुप से जशपुर जिला प्रभावित है। जिला को कुपोषण से सुपोषण की ओर ले जाने में नवाजतन योजना निश्चित ही आने वाले दिनों में मिल का पत्थर साबित होगी।

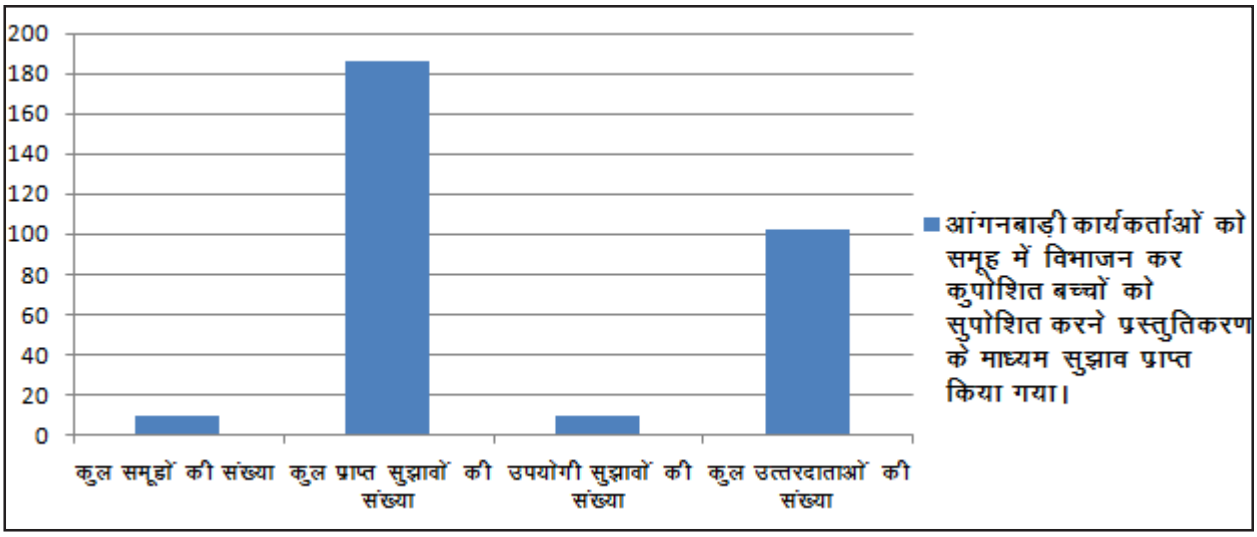
संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दास, सुजाता के., कुपोषण एक ज्वलंत समस्या, 2016
2. मिश्र, चिन्मय, कुपोषण–कुछ बुनियादी बातें, 2012
3. शर्मा, तिलकराज, कुपोषण और स्वास्थ, 2015
4. शिवकी., महिलाओं में गलत खान पान और कुपोषण, 2016
5. नवाजतन योजना, महिला एवं बाल विकास विभाग, छत्तीसगढ़ शासन का पठन साहित्य।
6. नवाजतन योजना, महिला एवं बाल विकास विभाग, छत्तीसगढ़ शासन का विभिन्न पत्र पत्रिकाये एवं सर्कुलर।
7. कार्यालय जिला कार्यक्रम अधिकारी, महिला एवं बाल विकास विभाग, जिला जशपुर को प्रेषित वि.ख.ढुलढुला का प्रगति प्रतिवेदन।

तालिका–1

आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं से समूह बनाकर लिए गए प्रस्तुतिकरण की जानकारी

क्र.	विवरण	कुल समूहों की संख्या	कुल प्राप्त सुझावों की संख्या	उपयोगी सुझावों की संख्या	कुल उत्तरदाताओं की संख्या
1	आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं को समूह में विभाजन कर कुपोषित बच्चों को सुपोषित करने प्रस्तुतिकरण के माध्यम सुझाव प्राप्त किया गया।	10	186	10	102



****

पारिवारिक विघटन बाल विकास में बाधक - एक सामाजिक विश्लेषण

डॉ. उमा लवानिया *

प्रस्तावना - परिवार मानव समाज की पूर्णत: मौलिक एवं सार्वभौमिक इकाई है। यह एक प्राथमिक एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है। परिवार, व्यक्ति और समाज के संबंधों के जोड़ने वाली एक मजबूत कड़ी हैं। स्वस्थ समाज से ही सुदृढ राष्ट्र की नींव रखी जा सकती है। इस तरह एक आदर्श राष्ट्र को बनाने में भी परिवार की विशेष भूमिका है। जिन परिवारों के सदस्यों में आत्मीयता, पारस्परिक विश्वास, स्नेहभाव होता है, साथ ही अपने उत्तरदायित्व को निभाने की क्षमता होती है, उन परिवारों में सदा सुख-शांति बनी रहती है। ऐसे परिवारों में सभी समस्याओं का समाधान सहज रूप से हो जाता है। समाज के अस्तित्व व निरन्तरता के लिए आवश्यक है कि नए सदस्य आएँ तथा वे सामाजिक गुणों से पूर्ण हो समाजिक गुणों के अभाव में व्यक्ति का व्यक्तित्व प्रभावहीन हो जाएगा, जो स्वयं के लिए और समाज के लिए घातक है क्योंकि निर्बल व्यक्ति न स्वयं कुछ करने में समर्थ रहता है और न ही समाज में कुछ करने की सामर्थ रखता है।

समाजिक व्यवस्था के अंतर्गत पुनरोत्पादन की क्रिया बंद हो जाए, यदि बच्चों का पालन-पोषण न हो और वे अपने विचारों से आने वाली पीढ़ी को संचारित करना तथा परस्पर सहयोग करना न सीखे तो समाज का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। मानव समाज में परिवार की केन्द्रीय स्थिति होती है क्योंकि यह मनुष्य की जैबिक मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा अन्य आवष्यकताओं की पूर्ति पूरे उत्तरदायित्व तथा कर्त्तव्य निष्ठा से करता है। पर आज परिवार विघटन की कगार पर खडे हैं। नव-दम्पत्तियों में स्वच्छन्द जीवन जीने की भावना बढ़ती जा रही है। दुष्परिणामों की परवाह किए बिना वे घर की चौखट लॉधकर अपनी अलग दुनिया बसाना चाहते हैं। परन्तु जब उनका परिवार बढ़ता है, बच्चों का जन्म होता है, तब उनके पालन-पोषण व व्यक्तित्व के विकास में अनेक समस्याएँ सामने खड़ी नजर आती हैं। और इन समस्याओं के समाधान के स्थान पर पति-पत्नि आपस में झगड़े, कलह करने लगते हैं तथा पारिवारिक विघटन की स्थिति को उत्पन्न कर देते हैं। जिसका सर्वाधिक दुष्प्रभाव बालकों पर पड़ता है।

परिवार से ही बालकों की शिक्षा का शुभांरभ होता है, तीन-चार वर्ष की आयु में जब बच्चा शिक्षा आरंभ करता है, तो उसमें निजी समझ का अभाव रहता है। इसी कारण वह स्वयं प्रेरित होकर शिक्षा नहीं लेता है। यदि जबरन पढ़ने हेतु उसे बिठाया भी गया तो वह उसमें रूचि नहीं लेता है। बल्कि वह इसके स्थान पर अपने सहज स्वभाववश खेल खेलना पसंद करता है क्योंकि पढ़ाई उसके लिए सर्वथा नई बात है। लेकिन धीरे-धीरे माता-पिता के परिश्रम से बच्चा पढ़ाई की ओर आकर्षित होने लगता है और यह भी तब संभव है जब परिवार सुव्यवस्थित एवं विघरित न हो।

बच्चे की पढ़ाई और अन्य क्रिया-कलाप के बीच संतुलन बनाकर रखना भी उनके भविष्य के लिए बहुत जरूरी है, जिस तरह से एक सीढ़ी से दूसरी सीढ़ी पर चढा जाता है, उसी तरह बच्चों को उत्साह दिलाते हुए उनका धैर्य और साहस बढ़ाते हुए उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना स्वयं परिवार का कर्तव्य है। अपने बच्चों को, उनकी प्रकृति को, उनकी क्षमता को, उनकी रूचि को समझे उनके प्रति सजग रहते हुए अपनी भूमिका निभाएँ।

पारिवारिक विघटन वैवाहिक जीवन, पुरानी तथा नई पीढ़ी में संघर्ष तथा सदस्यों में मतैक्य व पारस्परिक लगाव के भाव की समस्या है। अत: हमें इन मान्यताओं को पुन: सुदृढ़ करना होगा। नई पीढ़ी को यह बताना होगा कि विवाह केवल भावना व उद्धेग का ही परिणाम नहीं है अपितु यह स्थायी पारिवारिक जीवन का प्रमुख आधारशिला है। तलाक, विवाह न करना, बडे-बुजुर्गो से अलग रहना, पारिवारिक दायित्वों से बचना तथा परिवार के प्रति उदासीन होने से कुछ हल नहीं निकलेगा। यह तो यथार्थता से भागने वाली बात है।

नवीन पीढ़ी को विवाह की आवश्यकता और परिवार के स्थायित्व के महत्व को समझना होगा। पति-पत्नि को एक दूसरे को समझने का प्रयास करना चाहिए तथा जरा-जरा सी बात को बढ़ाने की अपेक्षा उत्पन्न हुए तनाव को कम करना चाहिए। विभिन्न परिस्थितियों के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुए तनाव को कम करना चाहिए क्योंकि इन तनावों से परिवार निर्धारित होते हैं और निर्धारित परिवार का सबसे ज्यादा प्रभाव बालकों के विकास पर पड़ता है पर यदि बालकों के विकास के लिए संयुक्त परिवार को महत्व दिया जाये तो संयुक्त परिवार में बच्चे को दादा-दादी, चाच-ताऊ आदि अनेक परिजनों का स्नेह मिलता है। प्रेम व आत्मीयता भरा यह वातावरण बालक के व्यक्तित्व का समुचित विकास करने में सहायक होता है। जबकि विघटित परिवार में माता-पिता ही होते हैं, परिवार के अन्य सदस्यों के स्नेह व प्रेम से बालक वंचित हो जाता है, परिणाम स्वयं उसका विकास अवरूद्ध होकर वह कुंठा का शिकार हो जाता है।

बाह्य जगत में बहुत सी चीजों को जानने की बच्चों के मन में जिज्ञासा रहती है, ऐसी स्थिति में संयुक्त परिवार बच्चे की जिज्ञासा को शांत करने में सहायक होता है क्योंकि बाल मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि यदि बच्चों की जिज्ञासा का उचित हल मिल जाता है, तो उनके मन में और नई-नई चीजों के प्रति आकर्षण बढ़ता है। नई-नई जानकारियां प्राप्त करने की लालसा उत्पन्न होती है। इस प्रकार अधिक ज्ञान प्राप्त करने के क्षेत्र में आगे बढ़ता चला जाता है। प्रखर प्रतिभाओं का उदय इसी प्रकार होता है। जितने भी अविष्कार हुए हैं या सिद्धांत बने हैं इन जिज्ञासाओं की ही देन हैं।

बच्चों को आचार-व्यवहार की शिक्षा विधटित परिवार देने में असमर्थ हैं बच्चों का विकास परिवार में जितनी सरलता से होता है विघटित परिवार में

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

नहीं हो पाता है। इसके लिए संयुक्त परिवार प्रणाली उपयोगी है क्योंकि संयुक्त परिवार में सभी बड़े लोगों के रहने से आदर और शिक्षाचार की भावना स्वाभाविक रूप से विकसित होती है। बच्चे देखकर सीखते हैं जैसा वे अपने बड़ों को करते देखते हैं, वैसा ही सीखते हैं। उनमें अनुकरण की प्रवृत्ति बहुत तीव्र होती है। अधिकतर दंपत्ति जिनमें संकीर्णता की भावना रहती है एवं मैं कीं भावना का महत्व होता है ऐसे विचार परिवार में दरार डाल देते हैं। ऐसी स्वार्थपरता के कारण जो परिवार विघटित होते हैं– उनका भी असर बच्चों पर पड़ता है। वे भी धीरे – धीरे स्वार्थ और संकीर्ण बनने लगते है एवं उनका विकास अवरूद्ध हो जाता है। उनमें अपने–तेरे की भावना उत्पन्न होने लगती है। वे एक–दूसरे की मदद करने से भी बचते हैं। उनमें ईर्ष्या–भाव उत्पन्न होने लगता है, यहां तक कि आपस में भाई–बहनों में भी प्यार का अभाव हो जाता है। परिवार की लड़कियों पर इस व्यवहार का गलत प्रभाव पड़ता है तथा उनका व्यक्तित्व का विकास गलत रास्ते पर होने लगता है वे अपने परिवार के प्रति वृद्धों के प्रति एवं अन्य सदस्यों के प्रति जिम्मेदारी का अनुभव नहीं करती है, उनमें 'मैं और मेरा पति' का भाव ही जन्म लेता है। जबकि एक सुव्यवस्थित परिवार के निर्माण में लड़कियों की भूमिका सबसे अधिक महत्वपूर्ण है लेकिन जब लड़कियों में असहयोग की भावना घर कर जाती है तो परिवार विखरने–टूटने की कगार पर आ जाता है और यह क्रम परिवारों को विघटित करने की दिशा में एक घातक और विस्फोटक स्थिति का निर्माण करता है।

बालकों के विकास के लिए संयुक्त परिवारों का गठन और संचालन, सहकारिता के आधार पर ही होता है। मिल–जुलकर काम करने और परस्पर काम बॉटने से समय व श्रम की बचत होती है। एक चूल्हा होने से धन की ही बचत नहीं होती वरन् बच्चों की देखभाल भी ठीक से हो जाती है, जो कि बालकों के व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक है। ज्ञानार्जन आचार, व्यवहार, शिक्षा तथा बालकों का समुचित विकास जितनी अच्छी तरह से संयुक्त परिवार में हो सकता है, उतना विधटित परिवार में नहीं। अत: समाज व राष्ट्र को सुगठित व सुदृढ़ बनाने के लिए परिवारों का विघटन रोकना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय समाज मुद्दे एवं समस्याऍ – डॉ. धर्मवीर महाजन, डॉ. कमलेश महाजन।
2. भारतीय समाज संस्थाएं और संस्कृति – रामनार्थ शर्मा, राजेन्द्र कुमार शर्मा।
3. भारतीय समाज – डॉ. अशोक डी पाटिल, एसॅ. एस.एस. भदौरिया।
4. भारतीय समाज – एम.एल. गुप्ता, डॉ. डी.डी. शर्मा।
5. युग निर्माण योजना – मई 2014
6. युग निर्माण योजना – दिसम्बर 2015
7. युग निर्माण योजना – जुलाई 2016

****

Spatial Pattern Of Irrigation In Bilaspur District

Dr. Kajal Moitra* **Chayan Kr. Mandal**** **Sanjit Kisku*****

Abstract - Irrigation is the method in which a controlled amount of water is supplied to plant at regular intervals for agriculture. It is used to assist in the growing of agricultural crops, maintenance of landscapes and vegetation of distributed soils in dry areas and during periods of inadequate Rainfall"

Additionally, irrigation also has a few other uses in Crop Production, which induce Protecting plants against frost. Suppressing need growth in gain fields and preventing soil consolidation. In contrast, agriculture that relics only on direct rainfall is referred to as rain-fed or dry land farming.

Key Words - Irrigation, Preventing Soil Consolidation, Rain Fall.

Introduction - Chhattisgarh has limited irrigation system, with dams and canals on some rivers. Average rainfall in the state is around 1400 mm and the entire state falls under the rice agro-climatic zone. Large variation in the rainfall directly affects the production of rice. Irrigation is the prime need of the state for its overall development and therefore the state Government has given top priority to development of irrigation.

Object of the Study -

1. Analyzed the Spatial Pattern of Irrigation in Study Area
2. Analyzed th important of irrigation in agricultural development in study area.

Methodology - The Analytical method have been use in study. The secondary data have been used in this study , which have been taken from various publish and unpublished sources.

Analysis - Cropping intensities in the state are low, since agriculture continues to be largely dependent on the monsoon and most cultivators still practice single-crop agriculture. In the irrigation sector, utilization of irrigation potential is significantly lower than the national figure.

Table - Potential and Utilization Pattern in Chhattisgarh an India (See in the last page)

Currently there are 3 major, 26 medium and 2892 minor irrigation projects in the state that are managed by the water Resources Department, Besides these, there are a number of tanks, pound, etc that are managed by the panchayats. Chhattisgarh is served by four river basins- Ganga, Mahanadi, Godawari and Narmada. The areas served by each of these is shown in the given table.

Table - Spread of River Basins in Chhattisgarh (See in the last page)

The spread of irrigation potential created in Various districts is not uniform vis-à-vis the cultivable land available in the district. Dhamtari district is way ahead of others, with potential facility (131.27 percent) far exceeding the cultivable area. On the other extreme are Dentewada, Korba and Jashpur districts, where the Potential facility created is just above 6 per cent of the cultivable land available.

Irrigation by canal is prominent is the district, 86.33% of the total irrigated land is covered by the canal system 5.85% by tube well, 3.28% by well, 2-52% by ponds/ tanks and rest 1.49 % of irrigated land is covered by other means of irrigation. The district have sufficient underground table but it is not being utilized in full potential.

Out of 453562 hectares cultivable land, 80136 hectare land is still not being used for agriculture, which is 17% of total cultivable area. Insufficient irrigation facilities, district has 373426 hectares agricultural land, out of which only 137756 hectares (36.8%) are being irrigated from all resources.

Several integrated Projects have been taken in the study area to bring more amount of land under the irrigation facility. Construction of new well also improves the scenario little bit extra.

Table - District- wise Spread of Irrigation Facilities (See in the last page)

Table - Bilaspur District : Source Wise Irrigation Area 2015-16 (See in the last page)

Bilaspur District - Source Wise Irrigation Area 2015-16 (Diagram see in the last page)

Table 1 - District Bilaspur - Irrigated Land

S.No.	Tehsils	In%
01	Bilha	51.42

*Associate Professor (Geography) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
**M. Phil (Geography) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur(C.G.) INDIA
***Research Scholar (Geography) Dr. C.V.Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

02	Kota	17.39
03	Masturi	71.95
04	Takhatpur	27.91
05	Gourela	4.88
06	Pendra	4.97
07	Marwahi	4.12
08	Bilaspur	30.25

Source - Agricultural Department Bilaspur

District Bilaspur - Irrigated Land (Diagram see in the last page)

References :-

1. Husain Majid (2010) : "Agricultural Geography." Rawat Publication. PP-188-190
2. Santra,S.C. (2001) : "Environmental Science" New central Book agency (P)Ltd., Calcultta, P.P. 944-955
3. Sharma, D.D.& Ram N. (2009) : "Environmental implication of landuse/landcover changes in solan district, Himanchal Pradesh, Geograpical Review of India, vol. 71,,no.-3 PP 287-296
4. Das. P. (1985) : "Agricultural science" Oriental book Company Pvt.Ltd. Kolkatta.
5. Gole,U. (1980) : "Agricultural Intensity and "Agricultural Efficiency, a Geographical analysis in Raipur Disttrict" Vol. 2006, P1, 9-16
6. Mandal R.b. (1985) : "Land utilization: Thesis and Practical concept publishing company, preface, Delhi.
7. Mohammad N (1992) : 'Socio-economic Dimensions of Agriculture," Concept Publishing Company, New Delhi, Vol- 3
8. Mohammad N (1992) : "Land use and Agricultural planning, concept Publishing Company, New Delhi, Vol-4
9. Mukharjee S.N. (1967) : "Agricultural land use Planning in Howrah" Geographical review of India,Vol-xxxix P.P.1
10. Usendi, N & Singh : "Chhattisgarh" Arihant publications Sweta (2009) : (India) Limited PP-140

Table 2 - Potential and Utilization Pattern in Chhattisgarh an India

	Potential		Utilization in %	
Types of irrigation	Potential Created Potential Utilized		Chhattisgarh	India
	(Lakh ha.)	(Lakh ha.)		
MajorMediumMinor	5.94 2.68 4.97	4.53 2.44 2.35	76 91 47	91 87 89
Total	13.59	9.32	89	89

Table 3 - Spread of River Basins in Chhattisgarh

Basin	Area Served (sq km)	Area s Percentage of TotalGeographical Area of Chhattisgarh
Ganga	18600	14
Mahanadi	74997	56
Godavari	39553	29
Narmada	1950	1
Total	135100	100

Table 4 - Bilaspur District - Source Wise Irrigation Area 2015-16

S.No.	Source of Irrigation	Irrigated area(ha)	Percent
1.	Canals	105824.00	55%
2	Ponds	9412.00	5%
3	Tube-Wells	73840.00	39%
4	Wells	1828.00	1%
5	Irrigated area from other source	820.00	5%
	Total	191724.00	100%

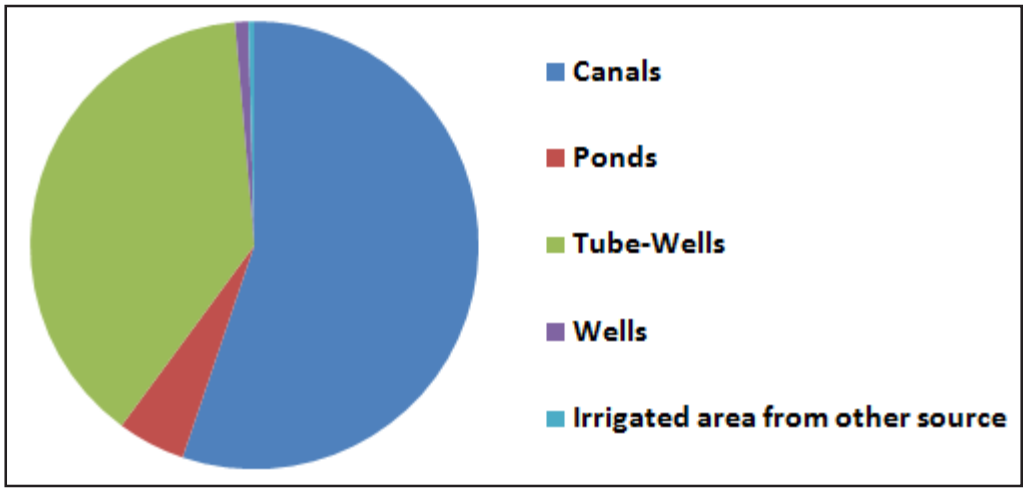
Source – Department of Agriculture, Bilaspur 2015—16

Table - District - wise Spread of Irrigation Facilities

District	Cultivable Land (Lakh he.)	Potential Created (Lakh he.)	Potential Crested as percentage of Cultivable Land
Raipur	7.06	1.43	20.25
Mahasamund	2.87	0.61	21.25
Dhamtari	2.11	2.77	131.27
Durg	7.94	1.88	23.68
Rajanandgaon	4.69	0.83	17.70
Kabirdham	2.28	0.33	14.47
Bastar	0.36	0.22	61.11
Kanker	2.33	0.35	15.02
Dantewada	3.05	0.19	6.23
Bilaspur	5.05	1.18	23.37
Janjgir-	3.05	2.22	72.79
Champa	1.46	0.10	6.85
Korba	5.58	0.52	9.32
Surguja	1.25	0.19	15.21
Korea	2.84	0.37	3.03
Raigarh	2.88	0.18	6.25
Jahspur			
	54.8	13.37	24.29

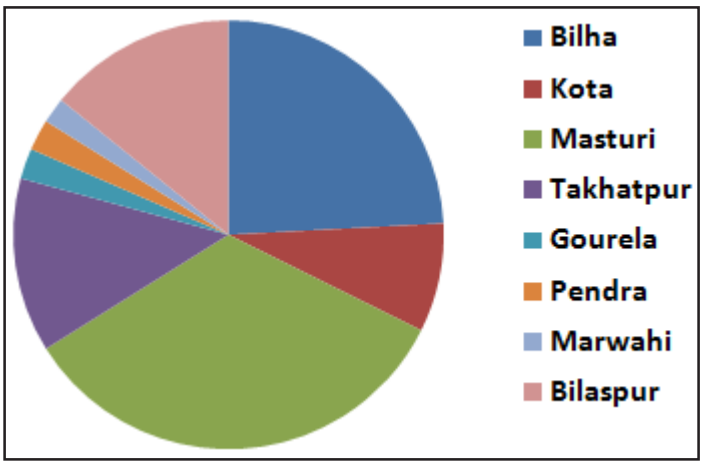
Source : Water Resource Department C.G.

Bilaspur District - Source Wise Irrigation Area 2015-16



Source – Department of Agriculture, Bilaspur 2015—16

Bilaspur District - Irrigated Land



Source – Agricultural Department Bilaspur

मानव पोषण स्तर समस्या एवं समाधान: ग्राम-पिपरिया जिला-जबलपुर का कालिक अध्ययन

डॉ. अजय तिवारी *

प्रस्तावना – मानव की तीन मूलभूत आवश्यकताएँ है, रोटी, कपड़ा और मकान प्रस्तुत शोध पत्र मानव की प्रथम आवश्यकता रोटी (भोजन) पर आधारित है। अध्ययन क्षेत्र में मानव को पर्याप्त भोज्य पदार्थ नहीं प्राप्त हो रहा है और जो भोजन प्राप्त हो रहा है, वह पोषक तत्वों की दृष्टि से बहुत कम है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध आलेख का मुख्य उद्देश्य ग्राम पिपरिया, जिला-जबलपुर, म.प्र. में प्रति व्यक्ति प्रति दिन भोज्य पदार्थो एवं पोषक तत्वों को ज्ञात करना तथा अल्पता के कारणों का पता लगाकर सुझाव देना है।

अध्ययन क्षेत्र – जबलपुर मध्य प्रदेश के हृदय स्थल पर स्थिति एक कृषि प्रधान खनिज सम्पदा एवं वनाच्छादित भू-भाग है, जबलपुर जिला 22.49' से 24.8' उत्तरी अक्षांश तथा 78.21 से 80.58' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 394 मीटर है। इसका कुल क्षेत्रफल 5011 वर्ग किलो मीटर है। जिले की उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 193. कि.मी. तथा पश्चिम से पूर्व चौड़ाई 115.81 कि.मी. है। यह जिला उत्तार में पन्ना कटनी जिले से, उत्तर-पूर्व में सतना जिले से पूर्व में उमरिया, डिण्डौरी जिले से, दक्षिण में मण्डला, सिवनी जिले से, दक्षिण पश्चिम में नरसिंहपुर जिले से तथा पश्चिम और उत्तर-पश्चिम में दमोह जिले की सीमाओं को स्पर्श करता है। अध्ययन क्षेत्र जबलपुर से 20 कि.मी. दूर बरेला के समीप पिपरिया कला ग्राम पंचायत है, जो नर्मदा नदी के बरगी बाध रोड पर स्थित है। यह ग्राम 1,50,000 मापनी पर चिन्हित क्षेत्र है। ग्राम का आवासीय क्षेत्रफल 1295 वर्ग कि.मी. है, इस गांव में कुल 121 परिवार 728 (2016) जनसंख्या है, तथा जनसंख्या का घनत्व 562 प्रति वर्ग किमी है, यहां एक दिन में 466 कि. ग्राम खाद्य पदार्थो का उपयोग किया जाता है।**(ग्राफ देखे आगे पृष्ठ पर)**

विधि तंत्र – प्रस्तुत शोध मूलत: प्राथमिक आंकड़ों पर आधारित है, और प्राथमिक आंकड़ों का संकलन क्षेत्रीय सर्वेक्षण से संकलित किए गए है। द्वितीय समंकों का उपयोग अध्ययन के परिणामों को स्पष्ट करने के लिए किया गया है। प्राप्त आकड़ों का सारणीयन और विश्लेषण कर भोज्य पदार्थो की उपलब्धता ज्ञात किया गया है।

शोध संकल्पना – शोध पत्र में शोध संकल्पना की रचना निम्न प्रकार से की गयी है।

1. कृषि उत्पादन से भोज्य पदार्थो का घनिष्ट संबंध है।
2. भोज्य पदार्थो का पोषक तत्वों का घनिष्ट संबंध है।

प्रस्तुत शोध आलेख में यह ज्ञात किया गया है, कि क्या अध्ययन-क्षेत्र में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन भोज्य पदार्थो का उपयोग भारत की अनुशंसित मानक मात्रा से कम हो रहा है, अथवा अधिक। आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति प्रति दिन खाद्य पदार्थो का उपयोग कम मात्रा में किया जा रहा है, जिसके कारण रतौंधी, स्कर्वी, ऐनीमिया, मंदबुद्धि, सूखा रोग वजन की कमी आदि पोषणीय रोगों की अधिकता पायी जाती है।

सारणी क्रमांक-01 व ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 01 से स्पष्ट है कि ग्राम पिपरिया-जबलपुर में प्रति दिन 446 कि.ग्राम भोज्य पदार्थो का उपयोग किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र की कुल जनसंख्या 728 है। अर्थात-पी/पी-1 यहां पी का अर्थ कुल भोज्य पदार्थ तथा पी-1 का अर्थ अध्ययन क्षेत्र की कुल जनसंख्या है, इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में खाद्य पदार्थो का औसत उपयोग 302.19 ग्राम दालों का, 24.42 ग्राम पत्ती वाली सब्जी का, 37.08 ग्राम आलू एवं जड़ों वाली सब्जियों का, 35.71 ग्राम तेल एवं वसा का, 20.60 ग्राम शक्कर/गुड़ का 27.47 ग्राम फलों का, 2.60 ग्राम मांस, मछली 1.37 ग्राम दूध एवं दूध से बने पदार्थो का, 142.85 ग्राम प्रति दिन प्रति व्यक्ति उपयोग किया जा रहा है। इस उपयोग की तुलना डाइट एटलस आफ भारत हैदराबाद द्वारा प्रकाशित भारत में उपयोग की अनुशंसित मानक मात्रा से की गयी तो अध्ययन क्षेत्र में यह अल्पता 67.81 ग्राम खाद्य पदार्थ की, 45.58 ग्राम दालों की, 72.92 ग्राम पत्ती वाली सब्जी की, 89.29 ग्राम आलू एवं जड़ों वाली सब्जियों की, 17.40 ग्राम तेल एवं वसा की 12.53 ग्राम शक्कर/गुड़ की फलों की 33.63 ग्राम, मांस मछली, अण्डों की 37.15 ग्राम दूध एवं दूध से बने पदार्थो की प्रति व्यक्ति प्रति दिन पायी जा रही है। कुल भोज्य पदार्थो का औसत उपयोग 612.29 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रति दिन किया जा रहा हैं जो भारत की अनुशंसित मानक मात्रा 1005 से 392.71 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रति दिन कम है। सारणी क्रमांक 01 के भोज्य पदार्थो के डाइट एटलास आफ भारत हैदराबाद की सहायता से पोषण तत्वों में परिवर्तित किया गया तो निम्न परिणाम प्राप्त हुए (सारणी क्रमांक 02)

सारणी क्रमांक-02 व ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 2 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में पोषक तत्वों का उपभोग कार्बोहाइड्रेट 222.22 ग्राम, प्रोटीन 23.51 ग्राम, वसा 25.42 ग्राम, कैल्शियम 618.02 मि.ग्राम, फासफोरस 67.70 मि.ग्राम, लोहा 11.73 मि.ग्राम, विटामिन ए 192.80 आई.यू., विटामिन बी थ्यामिन 0.34 मि.ग्राम, विटामिन बी 2 समिश्रण राइबोफेल्विन 0.38 मि.ग्राम, विटामिन बी-2 समिश्रण नाइसिड 7.82 मि.ग्राम, विटामिन सी एसकोर्विक ऐसिड 36.02 मि.ग्राम, विटामिन डी 430.62 आई.यू. कैलोरी 189.37

* (भूगोल विभाग) शा.एम.के.बी. कला एवं वाणिज्य स्वशासी महिला महाविद्यालय, जबलपुर एवं
शोधार्थी डी.लिट. विश्वविद्यालय शिक्षण विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रति व्यक्ति प्रति दिन रहा।

इन पोषक तत्वों की तुलना जब भारत में पोषक तत्वों की उपभोग की मानक मात्रा से की गयी तो 217.78 ग्राम कार्बोहाइड्रेट की, 56.49 ग्राम प्रोटीन, 49.58 ग्राम वसा, 781.98 मि.ग्राम कैल्शियम, 802.30 मि.ग्राम विटामिन बी–2 समिश्रण राइवोफ्लेविन, 23.18 मि.ग्राम विटामिन बी–2 का समिश्रण वाइसिड, 12.92 मि.ग्राम विटामिन सी एस्कोर्विक एसिड, 569.38 आई.यू. अल्पता पायी जाती है। जिसका कारण अध्ययन क्षेत्र में प्रति हेक्टेयर उत्पादन की कमी, आधुनिक तकनीक का अभाव, हरित क्रांति, सफेद क्रांति एवं नीली क्रांति का अभाव है। फलत: अध्ययन क्षेत्र में पोषणल्पीय रोगों की अधिकता पाई जा रही है।

सारणी क्रमांक 03 व ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में पोषणाल्पता रोगों में तीव्रगामी परिवर्तन हो रहे है। यहाँ कुल पुरूष पोषणाल्पीय रोगों में 19.66 प्रतिशत सूखा रोग के रोगी तथा सबसे कम एनीमिया रोग के 5.35 प्रतिशत पीड़ित है। जबकि कुल स्त्रियों के पोषणाल्पी रोगों के सर्वाधिक 20 प्रतिशत रतौंधी रोग से तथा सबसे कम 5 प्रतिशत एनीमिया रोग की पायी जाती है। क्षेत्र की सम्पूर्ण रोग प्राप्ति जनसंख्या के सर्वाधिक पोषणाल्पी रोग 16.47 प्रतिशत सूखे रोग के तथा सबसे कम 5.12 प्रतिशत एनीमिया रोग के पाये गए है। यहां सबसे अधिक मार्त्यतता 11.81 प्रति हजार डायबिटीज रोग से तथा सबसे कम मार्त्यतता 58.81 प्रति हजार वजन से कम रोगी की पायी जा रही है। यहां मार्त्यतता में विविधता तथा अल्पता का कारण भोजन में पोषण तत्वों की अल्पता है। यहां मार्त्यतता का अन्य कारण सामाजिक स्थिति, पारिवारिक पर्यावरण के प्रदूषण आदि है।

पोषण की समस्या – खाद्य पदार्थ मानव पोषण के मुख्य आधार है, खाद्य पदार्थ के रूप में ही मानव पोषक तत्व ग्रहण करता है। पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग मानव पोषण के लिए आवश्यक होता है किंतु अध्ययन क्षेत्र में कुछ सीमित खाद्य पदार्थ का उपभोग किया जा रहा है। जिससे यहां पोषणाल्पयी रोगों की अल्पता पायी जा रही है। जिसके मुख्य कारण निम्नलिखित है –

1. यहां की 75 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आधारित है। किन्तु कृषि में सिंचाई के साधनों, उन्नत बीज, खाद तथा तकनीक आदि का अभाव है, जो यहां के पोषण को प्रभावित कर रही है।
2. यहां हरित क्रान्ति, स्वेत क्रान्ति आदि का अभाव है।
3. कृषि के गुणात्मक पहलू पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है।
4. खाद्य पदार्थों का उत्पादन प्रति हेक्टेयर कम हो रहा है, जिससे भोज्य पदार्थों का उपभोग प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कम पाया जा रहा है। फलत: पोषक तत्व भी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कम मिलता है।
5. यहां के भोज्य पदार्थों में दालों, सब्जियों, फलों आदि का कम उपयोग किया जा रहा है।
6. यहां दूध देने वाली गाय और भैसों का अभाव है, अत: स्पष्ट है कि भौगोलिक कारण प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मानव पोषण को प्रभावित कर रहे है।

समाधान के उपाय – पोषण की समस्या के प्रमुख उपाय निम्नलिखित है।

1. सिंचाई के साधनों में वृद्धि।
2. दालों, सब्जियों फलों का प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ाया जाए।
3. दूध देने वाले पशुओं की संख्या में वृद्धि की जाये तथा देशी पशुओं की नस्लों में सुधार किया जाए।
4. कृषि, पशुपालन एवं मजदूरी आय के प्रमुख साधन है। इनकी वृद्धि की जाए।
5. कृषि में निम्नलिखित सुधार किए जाए।

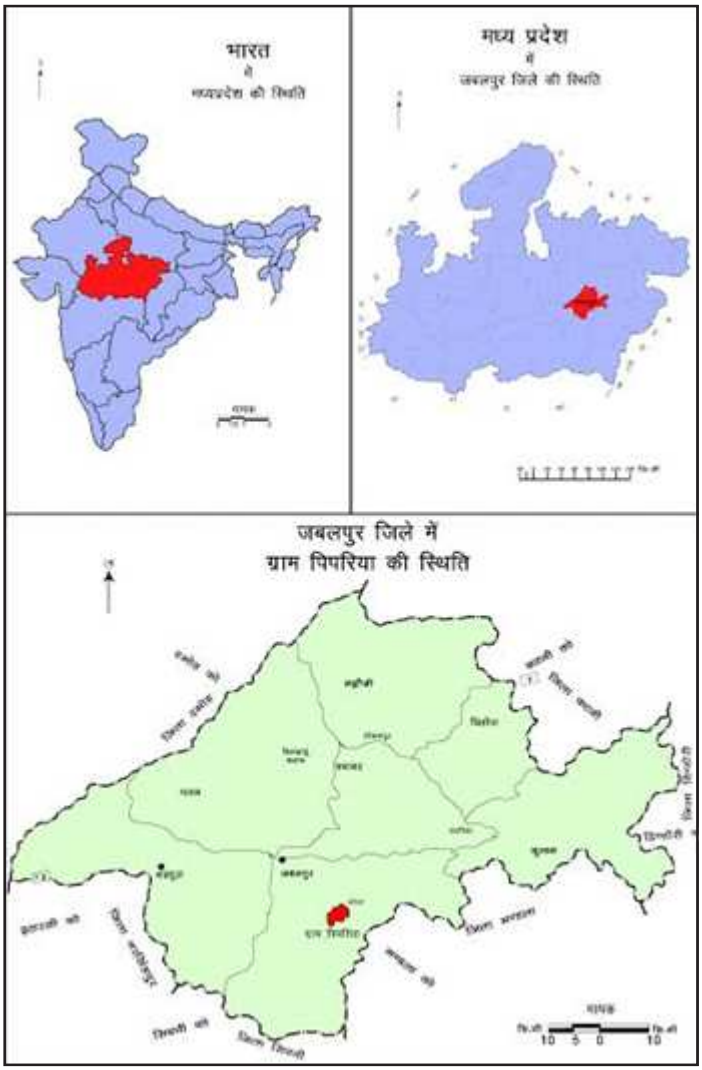
क. उच्च उत्पादन बीज, तकनीक का प्रयोग किया जाए।
ख. दो फसलीय एवं सिंचित क्षेत्र में वृद्धि की जाए।
ग. कम समय में पकने वाली एवं अधिक उत्पादन देने वाली फसलों को बोया जाए।
घ. अधिक पोषण वाली फलसें जैसे–दालें, चना, सोयाबीन, पत्ती वाली सब्जियों आदि के उत्पादन पर अधिक बल दिया जाए।
ड. कृषि पर आधारित लघु उद्योगों का विस्तार किया जाए, एवं हरित क्रांति, स्वेत क्रांति तथा ग्रीन कान्ति को लागू किया जाए।

6. चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करायी जाए।
7. खाद्य पदार्थ के उपयोग एवं आदत में सुधार किया जाए।

निष्कर्ष – उपरोक्त सुझावों को विकसित कर अध्ययन क्षेत्र में फैली हुई पोषण की समस्या को कम किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. खान जेड. अली, 1969, न्यूट्रीशन डिफीसेसी डिजीज एवं एन्वायरमेन्ट फैक्टर इन दि गंगा युमना दो आव एन आर्टीकल एफीयर्ड ज्योग्राफर 1969, अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी, अलीगढ़, पृष्ठ–70
2. सिलाधिया राजाराम, 1992, ग्वालियर संभाग में मानव पोषण के परिवर्तित प्रतिरूप एक चिकित्सा भौगोलिक अध्ययन अप्रकाशित पी.एच–डी. थीसिस जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, 1992, पृष्ठ–167
3. सिंह अमर, 1984, इकोलोजी पेचिस अलसर डिजिज इन मुरैना प्लैन इण्डिया एस्टूडी इन मेडीकल ज्योग्राफी इन आर्टीकल एप्पीअर्ड ज्योग्राफी डी ला साढ़े माउन्ट, पेलियर फ्रम, 1984 पेजन–452
4. तिवारी डी.पी., 1987–88, मध्यप्रदेश में कृषि विश्लेषणात्मक उपागम उत्तर भारत भूगोल, पत्रिका अंक 23 दिसम्बर 1987 एवं जून 1988, पृष्ठ–06



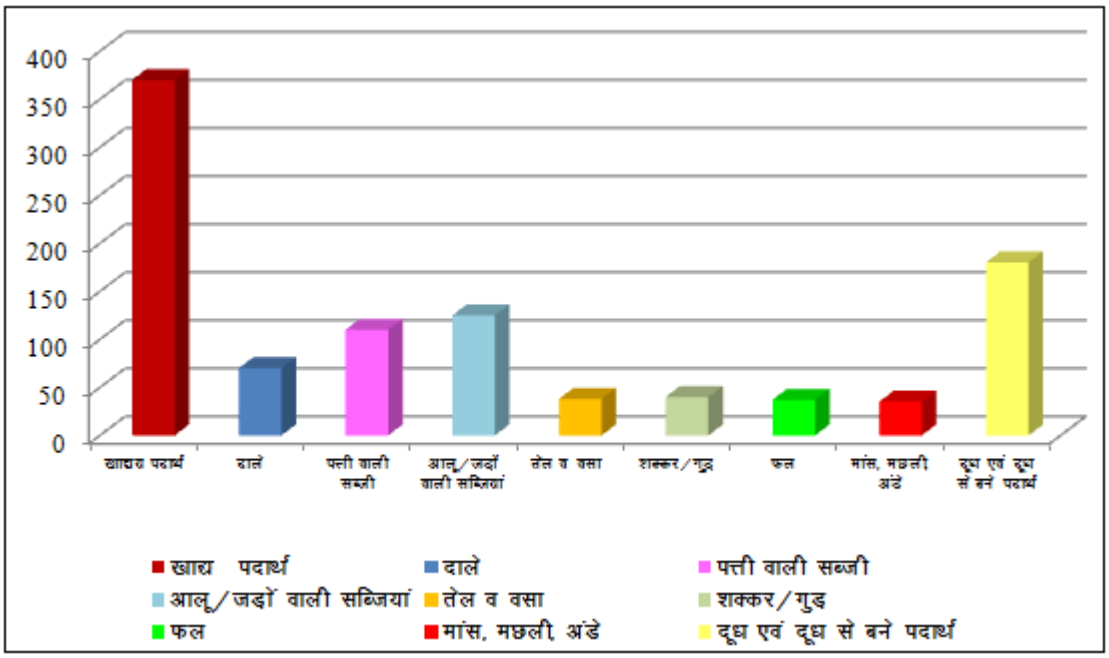
सारणी क्रमांक–01

ग्राम– पिपरिया, जिला जबलपुर में भोज्य पदार्थों का औसत उपयोग प्रति व्यक्ति प्रति दिन (दिसम्बर 2016)

भोज्य पदार्थ	**प्रतिदिन लगने वाला खाद्य पदार्थ कि. ग्राम**	**खाद्यान्न उपलब्धता प्रति व्यक्ति प्रति दिन कि.ग्राम**	**भारत में उपयोग की सामान्य मानक मात्रा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्राम**	**अल्पता**
खाद्य पदार्थ	22	302.19	370	67.81
दाले	18	24.42	70	45.58
पत्ती वाली सब्जी	27	27.08	110	72.92
आलू/जड़ों वाली सब्जियां	26	35.71	125	89.29
तेल व वसा	15	20.60	38	17.40
शक्कर/गुड़	20	27.47	40	12.53
फल	15	20.60	37	16.40
मांस, मछली, अंडे	10	1.37	35	33.63
दूध एवं दूध से बने पदार्थ	104	142.85	180	37.15
कुल योग	**446**	**613.29**	**1008**	**392.71**

स्त्रोत – व्यक्तिगत सर्वेक्षण।

ग्राम- पिपरिया, जिला जबलपुर में भोज्य पदार्थों का औसत उपयोग प्रति व्यक्ति प्रति दिन (दिसम्बर 2016)



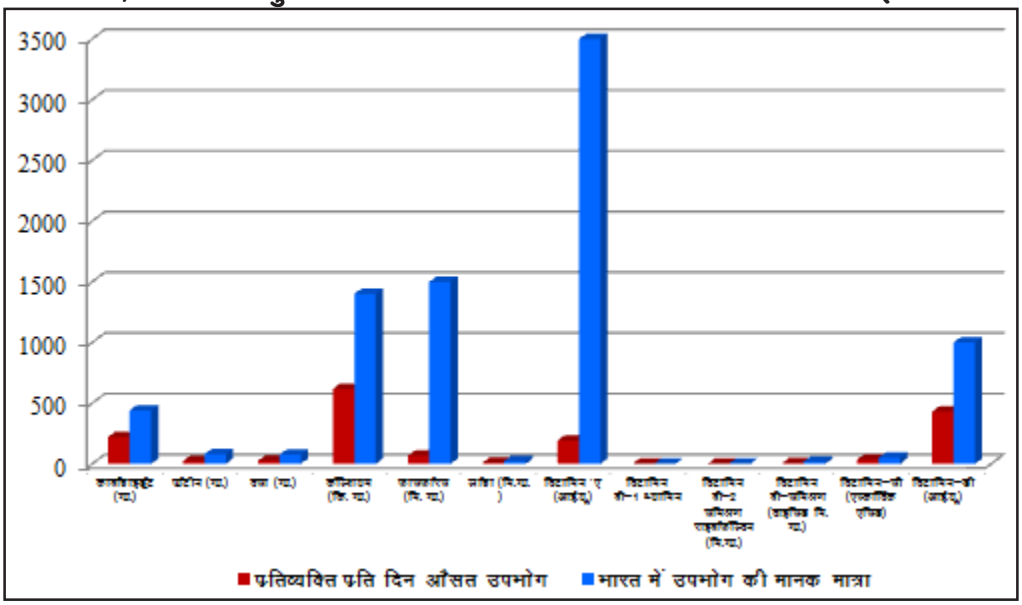
सारणी क्रमांक-02

ग्राम-पिपरिया, जिला-जबलपुर में पोषक तत्वों का औसत उपभोग प्रति व्यक्ति प्रतिदिन (दिसम्बर 2016)

पोषक तत्व	प्रतिव्यक्ति प्रति दिन औसत उपभोग	भारत में उपभोग की मानक मात्रा	पोषणात्यता
कार्बोहाइड्रेट (ग्रा.)	222.22	440	217.78
प्रोटीन (ग्रा.)	23.51	80	56.49
वसा (ग्रा.)	25.42	75	49.58
कैल्शियम (कि. ग्रा.)	618.021	400	781.98
फासफोरस (मि. ग्रा.)	67.70	1500	802.30
लोहा (मि.ग्रा.)	11.73	22.50	10.77
विटामिन ए (आई.यू.)	192.80	3500	117.20
विटामिन बी-1 थ्यामिन	0.34	1.12	00.78
विटामिन बी-2 समिश्रण राइबोफेल्विन (मि.ग्रा.)	0.38	1.46	1.08
विटामिन बी-समिश्रण (वाइसिड मि.ग्रा.)	7.82	19	23.18
विटामिन-सी (एस्कोर्विक एसिड)	36.02	50	13.92
विटामिन-डी (आई.यू.)	430.62	1000	569.38

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण।

ग्राम–पिपरिया, जिला–जबलपुर में पोषक तत्वों का औसत उपभोग प्रति व्यक्ति प्रतिदिन (दिसम्बर 2016)

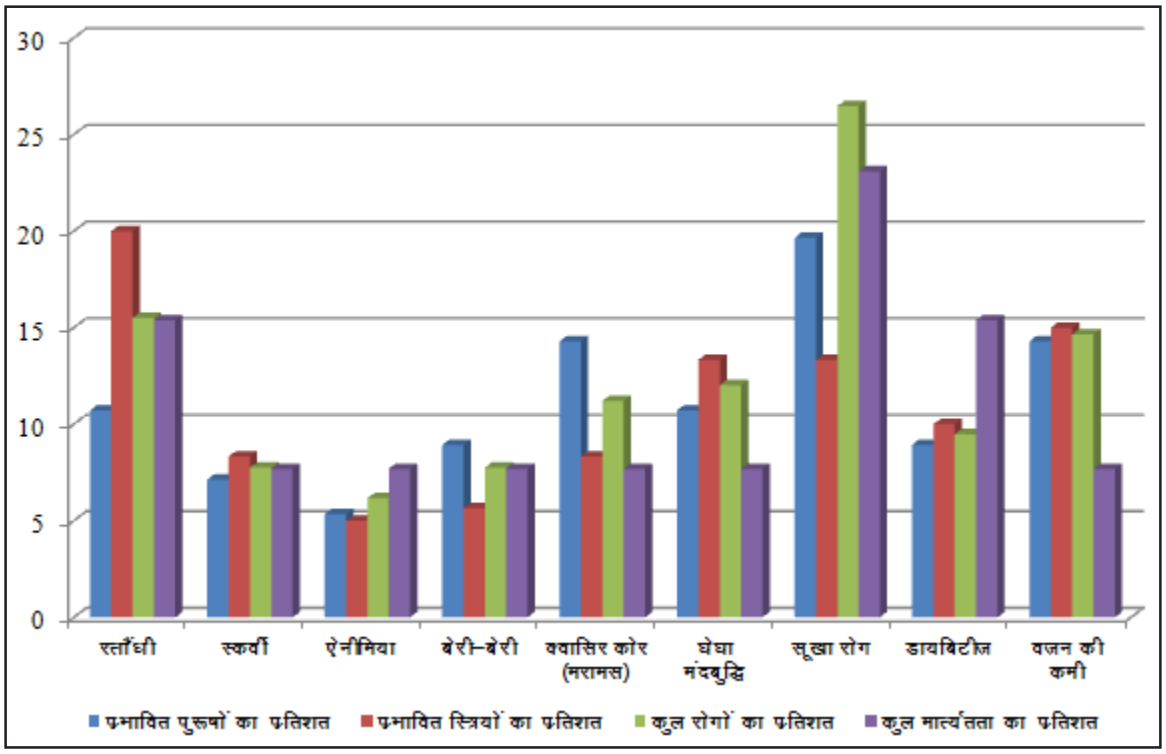


सारणी क्रमांक 03 – पोषणाल्पीय रोग (दिसम्बर 2016)

रोग का नाम	कुल रोग से प्रभावित पुरूष	प्रभावित पुरूषो का प्रतिशत	कुल रोग से प्रभावित	प्रभावित स्त्रियों का प्रतिशत स्त्रियां	कुल रोग से प्रभावित संख्या	कुल रोगों का प्रतिशत	कुल मार्त्यतता	कुल मार्त्यतता का प्रतिशत	मार्त्यतता दर प्रति हजार
रतौंधी	06	10.71	12	20.00	18	15.51	02	15.38	111.11
स्कर्वी	04	7.14	5	8.33	09	7.75	01	7.69	111.11
ऐनीमिया	03	5.35	3	5.00	06	6.17	01	7.69	166.66
बेरी–बेरी	05	8.92	4	5.66	09	7.76	01	7.69	111.11
क्वासिर कोर (मरामस)	08	14.29	5	8.33	13	11.20	01	7.69	76.92
घेघा मंदबुद्धि	06	10.72	8	13.34	14	12.02	01	7.69	71.42
सूखा रोग	11	19.65	8	13.34	19	26.47	03	23.09	157.89
डायबिटीज	05	8.93	6	10.00	11	9.48	02	15.39	181.81
वजन की कमी	08	14.29	9	15.00	17	14.65	01	7.69	58.82
कुल योग	**56**	**100.00**	**60**	**100.00**	**116**	**100.00**	**13**	**100.00**	**112.06**

स्त्रोत: व्यक्तिगत सर्वेक्षण

पोषणाल्पीय रोग (दिसम्बर 2016)



****

रायगढ़ जिले में स्त्री-पुरूष साक्षरता का स्थानिक प्रतिरूप

डॉ. काजल मोइत्रा * रिमता पण्डा **

शोध सारांश – रायगढ़ जिला छ.ग. का पूर्वी जिला है जिसकी सीमाएं पूर्व में उड़ीसा प्रान्त से, उत्तर पूर्व में झारखंड राज्य के गुमला जिले से लगी हुई है। जिले का कुल क्षेत्रफल 683635 वर्ग कि.मी. है। जलवायु की दृष्टि से रायगढ़ जिले को दो भागों में बांटा गया है, जिले का अक्षांशीय विस्तार 21^0 24' से 22^0 50' उत्तर तथा देशांतरीय विस्तार 82^0 26' से 83^0 46' पूर्व की ओर स्थित है। जिले की समुद्र तल से ऊंचाई 267मीटर है। रायगढ़ जिले का स्वतंत्र रूप से गठन 1 जनवरी 1948 को हुआ है, रायगढ़ जिले के उत्तर में जशपुर जिला, दक्षिण में महासमुंद जिला तथा उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पूर्व तक उड़ीसा राज्य 657744 वर्ग कि.मी. के दायरे में फैला हुआ है। रायगढ़ जिले का उत्तरी क्षेत्र बिहड़ जंगल पहाड़ियों से आच्छादित है। वर्तमान में जिले में कुल 9 विकास खण्ड है जिसमें 4 सामाजिक विकास खण्ड -रायगढ़, बरमकेला, पुसौर, एवं सारंगढ़ तथा 5 आदिवासी विकास खण्ड धरमजयगढ़, तमनार, खरसिया एवं घरघोड़ा शामिल है। जिले की कुल जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 1493984 है, जिसमें पुरूष जनसंख्या 750278 तथा स्त्री जनसंख्या 743706 है, साक्षरता दर 2011 की जनगणना के अनुसार 73.70 प्रतिशत है, जिसमें पुरूष साक्षरता 84.17 प्रतिशत तथा स्त्री साक्षरता 63.25 प्रतिशत है।

प्रस्तावना – साक्षरता जनसंख्या का एक ऐसा सामाजिक पक्ष है, जिसके आधार पर सामाजिक विकास का मापदण्ड निश्चित किया जाता है। जनसंख्या भूगोल विदों के लिए साक्षरता जनसंख्या का एक सामाजिक पक्ष होते हुए भी ऐसा गुणात्मक तथ्य है। जिसका क्षेत्रिय आधार परिवर्तनषील, सामाजिक, आर्थिक प्रवृत्तियों की ओर अप्रत्यक्ष रूप से संकेत करता है। वस्तुतः साक्षरता के विकास से मनुष्य सीमित परिवेश से बाहर निकल कर अपने क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रवृत्तियों से अन्योन्याश्रित संबंध स्थापित कर लेता है, जिसके एक तिहाई के रूप में मानव ही नहीं बल्कि संम्पूर्ण समाज विकास क्रम में आगे आ जाता है। आधुनिक युग में साक्षरता जो मानव विशेष का एक विशिष्ट गुण होता है निर्विवाद रूप से व्यक्ति, समाज, क्षेत्र एवं राष्ट्र सभी स्तरों पर सामाजिक एवं आर्थिक विकास का मूल आधार बन जाता है। साक्षरता समाज के विकास में सहायक ही नहीं बल्कि संम्पूर्ण का सर्वांगीण विकास होता है। साक्षरता से लोगों में प्राचीन रूढ़िगत परम्पराओं की बुराईयों को दूर करने की क्षमता तथा आधुनिक जीवन पद्धति को अपनाने में जागरूकता पैदा करती है। साक्षरता से किसी भी समाज का विकास संभव है। साक्षरता को अलग-अलग क्षेत्रों में अलग अलग प्रकार से परिभाषित किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य – शोध हेतु प्रस्तुत शीर्षक 'रायगढ़ जिले में स्त्री-पुरूष साक्षरता के स्थानिक प्रतिरूपय' के जशक्षा निम्नलिखित हैं –

1. रायगढ़ जिले में स्त्री साक्षरता के स्थानिक प्रतिरूप को प्रदर्शित करना।
2. रायगढ़ जिले में पुरूष साक्षरता के स्थानिक प्रतिरूप को प्रदर्शित करना।
3. रायगढ़ जिले में स्त्री-पुरूष साक्षरता के तुलनात्मक अध्ययन को प्रदर्शित करना।
4. साक्षरता दर को बढ़ाने का शासकीय प्रयास व सुधारों का विश्लेषण करना।

अध्ययन क्षेत्र



रायगढ़ जिले में स्त्री साक्षरता का स्थानिक प्रतिरूप – स्त्री साक्षरता को शिक्षा से अनिवार्य रूप से जोड़ने की अवधारणा है। इसका मुख्य शिक्षा में स्त्रियों को पुरूषों की तरह ही शामिल करना है। दूसरे रूप में यह स्त्रियों के लिए बनाई गई विशेष शिक्षा पद्धति को प्रदर्शित करती है। भारत में मध्य और पुनर्जागरण काल में स्त्री को पुरूष से अलग तरह की शिक्षा दी जाती थी। वर्तमान समय में यह मान्य है कि स्त्री को भी उतना ही शिक्षित होना चाहिए जितना पुरूष को। यह सिद्ध सत्य है कि यदि माता शिक्षित न हो तो देश की संतानों का कदापि कल्याण नहीं हो सकता। स्त्री परिवार की

* एसोसिएट प्रोफेसर (भूगोल) डॉ. सी.वी. रमन् विश्वविद्यालय, कारगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम. फिल.(भूगोल) डॉ. सी.वी. रमन् विश्वविद्यालय, कारगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

धूरी होती है, स्त्री शिक्षा से ही समाज का विकास संभव है। स्त्री साक्षरता की स्थिति आज भी पुरूषों की तुलना में कम है। साक्षरता के स्थानिक प्रतिरूप से तात्पर्य किसी स्थान विशेष की साक्षरता से है। विभिन्न प्रकार की दशाऐं साक्षरता के स्थानिक प्रतिरूप को निर्धारित करते हैं रायगढ़ जिले में कुल स्त्री साक्षरता 63.25 प्रतिशत है।

स्त्री साक्षरता के स्थानिक प्रतिरूप को तीन भागों में बांटा गया है –

1. उच्च साक्षरता का क्षेत्र (70 प्रतिशत से अधिक)
2. मध्यम साक्षरता का क्षेत्र (60–70 प्रतिशत)
3. निम्न साक्षरता का क्षेत्र (60 प्रतिशत से कम)

रायगढ़ जिला – स्त्री साक्षरता 2011

क्र.	साक्षरता प्रतिशत में	तहसीलों की संख्या	तहसीलों के नाम
1	70 प्रतिशत से अधिक	02	रायगढ़, पुसौर
2	60–70 प्रतिशत	03	खरसिया, तमनार, बरमकेला
3	60 प्रतिशत से कम	04	सारंगढ़, घरघोड़ा, लैलूंगा, धरमजयगढ़

स्त्रोत– जनगणना 2011

क्र.	तहसील	कुल जनसंख्या	कुल स्त्री जनसंख्या	कुल स्त्री साक्षर (प्रतिशत में)
1	धरमजयगढ़	207030	103720	51.19
2	लैलूंगा	130613	65578	53.63
3	तमनार	97975	48633	63.80
4	घरघोड़ा	79425	40095	55.64
5	खरसिया	150627	75433	66.22
6	रायगढ़	307513	149953	74.29
7	पुसौर	139799	69538	70.37
8	सारंगढ़	229603	115439	59.50
9	बरमकेला	151399	75317	65.51
	जिला	1493984	743706	63.25

स्त्रोत– जनगणना 2011/आंगनबाड़ी केन्द्र/महिला एवं बाल विकास कार्यालय रायगढ़।

रायगढ़ जिले में पुरूष साक्षरता का स्थानिक प्रतिरूप – साक्षरता किसी भी क्षेत्र के सामाजिक विकास का सूचक होता है और शिक्षा विकास की एक अनिवार्य शर्त होती है। शिक्षा के माध्यम से आधुनिकीकरण तथा विकास के वांछित परिवर्तन हुई है।

दसकीय वृद्धि दर में देखा जाए तो आज की शिक्षा और कल की शिक्षा दसकीय अंतर पाया जाता है। परंतु आज भी जिले में स्त्री साक्षरता की अपेक्षा पुरूष साक्षरता अधिक है। वर्तमान समय में शिक्षा के विकास पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है, शिक्षा के विकास के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक विकास भी हो रही है।

जिले में पुरूष साक्षरता के स्थानिक प्रतिरूप को 3 भागों में बांटा गया है –

1. उच्च साक्षरता का क्षेत्र (85 प्रतिशत से अधिक)
2. मध्यम साक्षरता का क्षेत्र (75–85 प्रतिशत)
3. निम्न साक्षरता का क्षेत्र (75 प्रतिशत से कम)

रायगढ़ जिला – पुरूष साक्षरता 2011

क्र.	साक्षरता प्रतिशत में	तहसीलों की संख्या	तहसीलों के नाम
1	85 प्रतिशत से अधिक	05	रायगढ़, तमनार, पुसौर, खरसिया, बरमकेला
2	75–85 प्रतिशत	02	सारंगढ़, घरघोड़ा,
3	75 प्रतिशत से कम	02	लैलूंगा, धरमजयगढ़

स्त्रोत– जनगणना 2011

क्र.	तहसील	कुल जनसंख्या	कुल पुरूष जनसंख्या	कुल पुरूष साक्षर (प्रतिशत में)
1	धरमजयगढ़	207030	103310	74.68
2	लैलूंगा	130613	65035	74.11
3	तमनार	97975	49342	85.42
4	घरघोड़ा	79425	39330	79.00
5	खरसिया	150627	75194	88.87
6	रायगढ़	307513	157560	90.56
7	पुसौर	139799	70261	89.16
8	सारंगढ़	229603	114164	82.97
9	बरमकेला	151399	76082	86.26
	जिला	1493984	750278	84.17

स्त्रोत– जनगणना 2011/आंगनबाड़ी केन्द्र/महिला एवं बाल विकास कार्यालय रायगढ़।

स्त्री–पुरूष साक्षरता का तुलनात्मक अध्ययन–मानवीय विकास की प्रक्रिया में शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति बाह्य तत्वों से हो जाती है लेकिन मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के नाते संस्कृति एवं सामाजिकता के विकास हेतु शिक्षा प्राप्त करना उसकी आधारभूत आवश्यकता होनी चाहिए। शिक्षा व्यवस्था में जहां एक ओर मानवीय सभ्यता की सामाजिक विरासत को एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में ले जाने की व्यवस्था होती है। वहीं दूसरी ओर आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं के अनुसार नावाचारी विचारों को सम्मिलित कर मानव के समग्र विकास की दिशा भी सुनिश्चित करना सम्मिलित होता है। शिक्षा इन दो कार्यों के मध्य समुचित संतुलन बनाने का कार्य करती है। जनगणना 2011 के अनुसार रायगढ़ जिले की कुल साक्षरता दर 73.70 प्रतिशत है जिसमें स्त्री साक्षरता 63.25 प्रतिशत तथा पुरूष साक्षरता 84.17 प्रतिशत है। जिले में अभी भी स्त्री–पुरूष साक्षरता दर में अंतर पाया जाता है।

रायगढ़ जिला – तहसीलवार स्त्री–पुरूष साक्षरता वृद्धि में अंतर 2011

क्र.	तहसील	पुरूष साक्षरता (प्रतिशत में)	स्त्री साक्षरता (प्रतिशत में)	वृद्धि में अंतर
1	धरमजयगढ़	74.68	51.19	23.49
2	लैलूंगा	74.11	53.63	20.48
3	घरघोड़ा	79.00	55.64	23.36
4	तमनार	85.42	63.80	21.62
5	रायगढ़	90.56	74.29	16.27
6	पुसौर	89.16	70.37	18.79
7	खरसिया	88.87	66.22	22.65
8	सारंगढ़	82.97	59.50	23.47
9	ब्रमकेला	86.26	65.51	20.75
	जिला	**84.17**	**63.25**	**20.92**

स्त्रोत- जनगणना 2011

संभावना एवं सुझाव – भारतीय समाज में स्त्रियों के समर्थन में बनाएं गऐं कानूनों, स्त्री शिक्षा का फैलाव या प्रचार-प्रसार तथा स्त्री शिक्षा के प्रति जागरूकता और महिलाओं को धीरे-धीरे बढ़ती हुई आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता के पश्चात् भी स्त्री-पुरूष साक्षरता में भिन्नता दिखाई देता है। आज भी पुरूषों की अपेक्षा स्त्री साक्षरता दर में कमी पाई जाती है। देश की वर्तमान शिक्षा पद्धति किसी भी तरह देश की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकती है। इस शिक्षा द्वारा जो भी लाभ होता है उससे देश का प्रमुख वर्ग वंचित रह जाता है। इसको कम करने के लिए बालक व बालिका शिक्षा की समुचित व्यवस्था करना आवश्यक है। राष्ट्र को उन्नत और सफल बनाने के लिए स्त्रियों पर उतना ही दायित्व है जितना पुरूष पर। राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का ज्ञान भी शिक्षा के द्वारा ही संभव हो पाता है। आज शिक्षा मानवीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चाहे वह सामाजिक हो, आर्थिक हो, राजनीतिक हो, या सांस्कृतिक हो, स्त्री और पुरूष समान रूप से सक्रिय होते हैं साथ ही साथ शिक्षा, परिवार और देश के आर्थिक स्थिति को सुधारने में भी सहायक होते हैं।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि रायगढ़ जिले में स्त्री साक्षरता का स्थानिक प्रतिरूप पुरूष साक्षरता से कम है। वर्तमान समय में व्यक्ति का साक्षर होना अति आवश्यक है। समाज के सभी पक्षों में तालमेल बैठाने के लिए व अपने स्वयं के उत्तरदायित्वों को ठीक तरह से निभाने के लिए शिक्षा आवश्यक होता है, जिसमें स्त्री-पुरूष दोनों प्रमुख होते हैं। जो आज है, वो कल के हमारे भविष्य कहे जाते हैं। साक्षरता से ही सामाजिक विकास का मापदण्ड निश्चित किया जाता है। साक्षरता के विकास से ही मनुष्य अपनी सीमित परिवेश से बाहर निकल कर अपना एवं अपने समाज को विकास की ओर ले जाने में सक्षम होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. एस. डी. मौर्य (2014) जनसंख्या भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. हुसैन एम.आई. (2012) जनसंख्या भूगोल, कल्याणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. अल्का सक्सेना(2002) 'महिला शिक्षा का सामाजीकरण' रजत पब्लिकेशन नई दिल्ली।
4. डॉ. एस. सिसोदिया (2012) जिला दर्शन एवं सामान्य ज्ञान, उपकार प्रकाशन आगरा।
5. कार्यालय – महिला एवं बाल विकास विभाग रायगढ़ छत्तीसगढ़।
6. कार्यालय – जिला शिक्षा अधिकारी रायगढ़।

****

A Comparative Study Of Adjustment Among Early And Later Adolescents (Male And Female)

Dr. A. R. Lohia* Jyotsana Meghwal**

Abstract - Adolescence period is the stage in which various biological, psychosocial, emotional changes occur. Adjustment is major psychological process of balancing the conflicting needs. In this stage there is a problem of self-identity, peer group, self- acceptance, societal acceptance, their roles and responsibilities. So all they need is adjustment. For this in the present research paper efforts were made to find out the comparison between adjustment in early and later adolescents and also in male and female. Sample used was 60 from early adolescent and 60 from later adolescent (30 males and 30 females) from each group. Total of 120 samples are used.Sample age ranging is of 10- 19 years early adolescents from 10 to 14 years and later adolescents from 15 to 19 years. Test administered was Adjustment Inventory of school students by A.K.P.Sinha and R.P.Singh. The results indicated that early adolescents were found to be more adjusted as compared to later adolescents.

Key words - Adolescence, Adjustment, Early and Later Adolescents.

Introduction - Human Beings change over the course of life. Changes can be like physical development, cognitive development, social and emotional development. In this whole development process adolescent is major phase and stage of human being. Adolescent is the stage in which a child is preceding to the adulthood. It is a transitional stage of physical and psychological development that occurs during puberty and goes on till legal adulthood.

Early Adolescence - It is the age which is considered in between 10 to 14 years. In this various physical changes appear or we can say a growth spurt is there in which sex organs and secondary sexual characteristics are there. There are various external and internal changes in the individual. Recent neuro-scientific researches indicated that in this stage brain undergoes a burst of electrical and physiological development. The no, of brain cells can almost double in the course of year, with a consequent impact on emotional, physical and mental ability.

Later Adolescence - It is the stage which encompasses the latter part of the teenage years which is between the ages of 15 years and 19 years. In this the physical and psychological development is still going on. In this peer group opinions matters a most. Now there is confusion between self-identity and societal identity. Risk Taking behavior is very common in this age. For example smoking and doing experiments with drugs and alcohols.

Adjustment - Adjustment refers to the behavioral process of balancing conflicting needs, or needs against obstacles in the environment. Humans and animals regularly do this, for example, when they are stimulated by their physiological state to seek food, they eat (if possible) to reduce their hunger and thus adjust to the hunger stimulus. Adolescent had to go through a period of adjustment, or changing one's behavior to reach harmony with the environment. They deal with the hormonal changes, mainly with sexual and reproductive changes. They go through emotional changes, including feeling more emotional than usual. They try doing their best to deal with everything, but sometimes it's very difficult. When adolescents do not adjust well, it can't lead to depression, anxiety and other emotional problems, so it's very important that they continue to adjust.

Review Of Literature -

Makwana & Kaji (2014) conducted a study on Adjustment of Secondary School Students in Relation to their Gender. The result shows that there is no significant difference in Home, School and Emotional adjustment of boys and girls secondary school student. But there is significant difference in Social adjustment of boys & girls secondary school students at 0.05 level. It means boys are Social adjustment better than girls.

Louis, Preeti; Emerson, Arnold (2012) identified adjustment difficulties of high school students within a city. Ten schools, comprising of children from urban, rural, coeducational and convent schools were chosen and a student database comprising of 500 adolescent children was prepared. From this source list, 101 boys and 103 girls within age groups 14-18 years were chosen randomly. Students with behavioral problems, poor academic performances and health issues were excluded to ensure homogeneity. After obtaining informed consent, a self-report inventory -The Adjustment Inventory for School Students (AISS) was administered to small student groups over a

*Associate Professor (Psychology) Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA
**Research Scholar, UCSSH, Mohanlal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA

period of 1 month to understand perceived adjustment. Scoring was done manually and descriptive statistics, Pearson correlations and the independent sample's "t" test, were used to analyze data. Findings revealed that there were problems noted across emotional, social and educational domains in both boys and girls. However, there were no significant gender differences.

Sindhu, I. S. (2005) studied various objectives like to study male and female teachers' motivation to work; to study and compare school adjustment of boys and girls; to study and compare male and female students' liking towards their teachers; to compare the achievement of boys and girls; and to examine the extent of interrelationship between the above mentioned variables. A normative testing survey method and cross-sectional approach was used to collect the data. 32 teachers and 680 Standard X students were selected from the KendriyaVidyalayas of five zones of district Saharanpur through stratified random sampling technique. The tools used were: Teachers' Motivation to Work- the Test and Scale by B. Singh; Students' Liking Scale by S.P. Malhotra and B.K. Passi and School Adjustment Inventory by N.M. Bhagia. Findings were that male and female teachers were found to possess average or above average level of motivation to work. Most students displayed average and above average adjustment with school environment. The girls displayed superior adjustment as compared to the boys. The girls were found to have more liking for their teachers than the boys. No significant difference was found in the achievement of boys and girls. Low positive correlations were found between students' liking for their teachers and school adjustment.

Objective-

- To study the effect of adolescence (early and later) on adjustment.
- To study the effect of gender (male and female) on adjustment.

Hypothesis-

- There is no effect of stages of adolescents (early and later) on adjustment.
- There is no effect of gender (male and female) on adjustment.

Methodology-

Sample - The sample consisted of total 120 adolescent students (including both males and females) in the age range of 10 to 19 years (Early Adolescents- 10-14 years, Later Adolescents- 15-19 years.

Variables-

Independent variables -

Stages of adolescents - 1) Early Adolescents
2) Later Adolescents

Gender - 1) Male
2) Female

Dependent Variables- Adjustment

Tools - Adjustment inventory of school students - A.K.P. Sinha & R. P. Singh

Research Design - 2X2 Factorial Design

	Gender		
Stages of Adolescence	Male	Female	Total
Early	30	30	60
Later	30	30	60
Total	60	60	120

Procedure - The test was administered individually upon the male and female adolescents of each group. Brief instructions were given to them.

The scores obtained were analyzed statistically. Mean, S.D. and t value were calculated to see the effect of independent variables on dependent variables.

Result And Discussion -

Table1- **(See in the next page)**

Table 2- **(See in the next page)**

The table no. 1 shows that female adolescents reported good adjustment as compared to male adolescents. Significant relationship was found between male and female category. As in our Indian culture perspective there is always a male dominancy in families and society and therefore females are always told to adjust in all the matters either it is emotional or social. Chauhan (2013) conducted a study on study on adjustment of higher secondary school students of durg district. The t-test results indicate that there is significant difference in adjustment of higher secondary school's students and female students have good adjustment level when compared to the male students.

The Table no. 2 shows that later adolescents were found to be more adjusted in nature as compared to early adolescents. There is significant relationship between early adolescence and later adolescence. As early adolescence is the age just after childhood in which various changes occurs in boys and girls. There are various transformations physically, psychologically, socially, emotionally which are very difficult to adjust with them. A growth spurt is there in this stage. Their puberty starts. Girls begin to develop breasts and their period starts which are very new to them. Both boys and girls grow pubic hair. Boys have Facial hair. They start to move from childhood into adulthood, there is the urge to be more independent from their families. So there are various factors which make them uncomfortable about themselves resulting into low adjustment compared to later adolescence as they are habitual for all this and moving to the adulthood.

Conclusion - Females were found to have better adjustment as compared to males. Early adolescents were found to have poor adjustment as compared to later adolescent.

References :-

1. Chauhan.(2013). A study on adjustment of higher secondary school students of durg district. IOSR Journal of Research & Method in Education, p-ISSN: 2320–737X Volume 1, Issue 1, PP 50-52.
2. Louis,P.& Emerson, A. (2012). Adolescent adjustment in high school students: a brief report on mid-adolescence transitioning. GESJ: Education Science & Psychology, 3(22), 15-24.

3. Makwana & Kaji.(2014). Adjustment of Secondary School Students in Relation to their Gender. The International Journal of Indian Psychology, Volume 2, Issue 1.
4. Sindhu, I.S. (2005). A Study of Teachers' Motivaton, Student Adjustment and their Academic Achievement. Ramesh Journal of Education, 2(2), 19-23.
5. www.wikiepedia.com

Result And Discussion

Table1- showing the mean, S.D. and t value of adjustment among male and female early and later adolescents.

S. No.	Category	N	Mean	SD	SEm	T value	Sig.
1.	Male	30	16.1	4.79	0.394	2.74	Significant
2.	Female	30	17.18	4.53			

Table 2- showing the mean, S.D. and t value of adjustment among early and later adolescents.

S. No.	Category	N	Mean	SD	SEm	T value	Sig.
1.	Early adolescents	30	12.85	2.66	0.30	3.6	Significant
2.	Later Adolescents	30	13.93	3.27			

****

Indian English Women Short Story Writers : An Overview

Prof. Peter Dodiyar *

Abstract - In the history of Indian English Literature among the most distinguished Indian Writers in English are women. They are not the invisible writers in a literary tradition but those whose works have been critically acclaimed and extensively used in class rooms and lecture halls. They owe their high visibility to delineate social complexities and ambiguities especially those affecting the selfhood of Indian women. Although few of the Indian women writers in English are conscious experimentalists, those like Anita Desai have attained a new level of psychological complexity in story-telling and technical innovation. It is undeniable that the emergence of the Indian women novelists, especially Kamala Markandaya, Nayantara Sahagal and Anita Desai on the Indian fictional scene has added a new dimension to Indian fiction.

Introduction - The Indian women short story writers in English show incipient or pronounced feminism in portraying women characters which is, perhaps traceable to their individual stance on man-woman relationship or reading of the psychology of human relations. In most of short stories by Indian women writers, they have portrayed self-sacrificing spirit of Indian women in general.

The present paper is an attempt to highlight the achievements and limitations of Indian English women short story writers with particular emphasis on some of the more important ones in the field.

A Brief Analysis of Shashi Deshpande's short stories - It would do well to begin with Shashi Deshpande whose creative talent and accomplishment are striking enough to have elicited more critical notice than they have done till now. She has four volumes of short stories and an equal number of novels to her credit. This is perhaps because she is by nature shy of publicity but also because of her rather conventional attitude to her themes Shashi's heroines are conscious of their predicament : they are victims of inequality they are the ones who are unfairly abused, misused and ill-used. But they believe in conformity and compromise for the sake of the retention of domestic harmony rather than revolt which might result in the disruption of familial concord. Shashi as faeeq Futehally puts it, "writes about the middle class Indian Women and their feelings not as their champion but as their articulator." *The Inner Room* narrates the tragic tale of the historical character Amba who is forced to Commit Suicide out of sheer frustration resulting from male chauvinism and hostile social code of conduct.

In *The Awakening* we have the picture of a young girl, Alka, who keeps resenting her father's poverty till she comes to know of the long hard life he has all along been leading for the family's sake. She repents her insensibility, sets aside her dreams of freeing herself from her situation, and grows into maturity. "Tears rolled down. But they were not the tears of childhood. They were the first tears of adulthood, bitter, salty and painful." Acquiescence and not revolt is the keynote struck here.

Shashi's stories are primarily woman-centred. Her thematic concerns are guilt, failure, loneliness – in brief, woman in her different roles, as wife, mother, daughter and as a human being in a society whose mores and conventions are rigidly conditioned by man. Shashi's women consciously suffer. Her fictional world are no doubt aware that they are victims of inequality but they prefer suffering to rebellion and sacrifice to revolt in the interest of familial harmony. Shashi's stories reflect social reality as it is. She does not suggest how it ought to be She gives no facile solutions.

A Brief Analysis of Dina Mehta's Short Stories - Dina Mehta is not as prolific writer as Shashi Deshpande but she is no less significant as a woman writer. The chief thematic concern of her stories is woman's sense of anguish and alienation that results from her acute consciousness of man's perfidy and her struggle to achieve emacipation from traditional constraints and orthodox morality and achieve a conscious identity for herself. In fact, Dina's vision of woman's predicament is sharper and deeper than Shashi's. Whereas Shashi's woman characters invariably believe in compromise and relapse into tame domesticity for the sake of security and comfort Dina's counterparts register their protest in varying degrees of intensity.

Absolution is an utter feminist creation. Not satisfied with his continual acts of infidelity towards his docile, chaste and devoted wife Sita, Ram celebrates his lapses with triumphant glee by presenting her with varities of flowers

*Department of English, Govt. College, Thandla (M.P.) INDIA

to mark them. When she is shocked into a recognition of her husband's perfidy, Sita retorts.

The rest of Dina Mehta's stories offer variations on the same theme of man-woman relationships. She is more pronounced in her feministic stance than Shashi Deshpande. Her style is normally simple and spontaneous. She can vary her narrative strategy according to the thematic need of the story.

A Brief Analysis of Kamala Das's Short Stories - Kamala Das's reputation rests on her poetry and autobiography. She has one volume in English- *A Doll for the child prostitute.* What is most striking about Kamala Das's stories is that they capture life in the raw with no touch of sentimentality or obscenity. In all these stories she is preoccupied with the theme of pain in one form or another. As T.N. Geetha puts it :

"Pain resulting from loveless living – aches dulled by routine,
sobs stilled by unfeeling society, life blighted by disease and death,
doodness soured into harshness by callous necessity – such are the themes of her stories which have the effect of disturbing the reader's complacency and heightening his awareness of the misery around him."

The best part of *A Doll for the Child Prostitute* is the title story which deal with juvenile prostitution in all its horror and ghastliness. It offers a series of snapshots highlighting the pitiful life of a bunch of child prostitutes in a world stinking with pain and poverty, disease and darkness, and misery and helplessness.

The inmates of the brothel – all of them ironically named after goddesses, Radha, Rukmani, Sita, Saraswati and Mira shut up in their murky hell, have poignant tales to tell. Mira for instance fails to realise that she being a prostitute cannot indulge in the luxury of love and marriage. Irresistibly drawn to Krishna a young college student who loves her equally intensely, she dreams : "Yes he is my husband. He is called Krishna..... Is it not strange that I am Mira and he is Krishna ?" Ignorant of the ways of the world as they are, they elope, but it proves to be just a short idyll. Mira is forced to return to the brothel. For girls like Mira conjugal felicity could only be a phantom and never a reality.

The story of Rukmani a mere slip of a girl, still ignorant of the horrors involved in the profession, makes painful reading. The following snatch of conversation between her and Sita a little older brothel-mate, reveals the horror of her situation poignantly :

"I cannot sleep in the day" said Rukmani. Sita laughed loudly and held on to her stomach as though it was out to burst. "You are so innocent. Do you think we can sleep at night in this house ? We shall all be so busy entertaining the visitors".

"Visitors at night?" asked Rukmani. "Who will come at night ?"

Mira said, "Men come to do things here"

"What things" asked Rukmani. She was thinking of her step father and the pain she had experienced..."

The enormity of the sexual cruelty and brutality that these little innocent girls are subjected to is evident from what Sita says cryptically :

"Men are real dogs"

Thus we find that the dominating theme of Kamala Das' stories in man-woman relationship and the various discordant notes that are struck in familial relations. Even if we take only the little story into consideration, it is evident that Kamala Das's contribution to the quality of Indian English short story is quite considerable.

A Brief Analysis of Anita Desai's Short Stories -Anita Desai stands out from the ordinary run of Indian English fictionists insofar as she has pioneered the psychological novel in which writer's overriding concern is with "the psychological convulsions and travails of consciousness" of characters rather than "the dialectic of manners and morals" Her penchant for psychological exploration seems to find more satisfying expression in her stories than in her novels.

The title story is an interesting study in child psychology. It traces the "contours and corners of a little boy's ego." The graphic picture of Raghu's initial dread of the dark and spooky hiding place giving room for his injured ego's pain resulting from the neglect he suffers at the hands of his playmates is a convincing proof of Anita Desai's ability to probe into the working of a child's mind subjected to strains and stresses.

In *Studies in the Parks* Anita Desai accomplishes the difficult feat of concretising the movement of adolescence into adulthood.

In *Pineapple Cake* we have the picture of a crude and crazily greedy woman as contrasted with that of her sensitive son. Anita Desai establishes herself as distinctly different from other Indian English writers primarily because she unlike most of them is interested in picturing what her characters think and feel rather than what they do or fail to do. In other words her concern with her characters is vertical rather than horizontal. Her style is normally simple and taut and at times run rhythmic and lyrical. She is capable of using evocative images and expressive similes. However her occasional choice of unusual words gives an uneasy feeling to her readers.

Some Other Women Short Story Writers - Sujatha Balasubramnian's *The House in the Hills* contains eighteen stories with characters drawn from villages as well as high society. Sunita Jain has produced two short collections – *A Woman is Dead* and *Eunuch of Time* Man's infidelity and the resultant pain of woman in domestic life is the major theme of Sunita's stories.

There are a number of other women short stories writers in the field – Raji Narasimhan, Lakshmi Kannan, Malathi Rao, Veera Sharma, Shailja Ganguli, Meera Subramanian and a few others. All of them are single-volume authors and that makes their assessment rather

difficult.

Conclusion - The foregoing rapid discussion suggests that Indian English women short story writer's contribution to the short story is substantial enough to deserve a full-length critical work. They have shown varying degrees of competence in handling the form of the short story and realising verbal structures to suit the portrayal of complex human relationships, especially of the man-woman variety. Not all of them may have achieved distinctive command on their medium but many of them have achieved striking economy, unity of effect and sometimes even thematic integrity in their stories. In view of this it is rather surprising that critical evaluation of the Indian English short story has not gone beyond C.V. Venugopal's perceptive survey *The Indian Short Story* in English which was published four decades ago. It is high time our critics thought of a fresh one and that should naturally include an evaluation of our women short story writers especially Shashi Deshpande, Dina Mehta, Kamala Das, and Anita Desai.

References :-

1. Laeeq, Futehally, Rev. of the legacy, by Shashi Deshpande, Indian Book Chronicle, Jan. 1982
2. Shashi Deshpande, The fegacy and other stories (Calcutta : Writers Workshop, 1978)
3. Dina Mehta, The Other Women and Other Stories (New Delhi, Vikas, 1981)
4. T.N. Geetha "Women Short Story Writers in Indian Writing in English" Diss., Gulbarga University, 1989.
5. Kamala Das, A Doll for the Child Prostitute (New Delhi : Orient Paperbooks, 1976

****

Cultural Aspect in the Plays of Girish Karnad

Twishampati De *

Abstract - Literature is considered as the mirror of cultural heritage. In Literature, We have found the reflection of culture in the form of poetry, novel and drama. Girish Karnad has fertilized the soil of Indian literary scene by his contribution to art, culture, theatre and drama. But the most important contribution which he has made to Indian English Drama is his attempt to restore the cultural and mythological rich tradition of the Indian Past. Karnad's plays deal with conflicting philosophies, historical situations and cultural attitudes. Karnad's chief aim in his plays is to return to the roots and tries to revive the local culture and tradition.

Key words - Indian Culture, folk Tale, Cultural interest, cultural symbol, folk theatre, folk lore, folk belief and cultural performance.

Introduction - Karnad fascinates us with the help of rich Indian folk and mythic lore culture. His "Nagamandala" is the best specimen of culture, comes in the second trend (the imitation of the narrative techniques and structure of Sanskrit dramaturgy).In the play "Nagamandala", Rani and Kurudava, are generic creations that stands for Indian women."Nagamandala" Shows the effect of Naga Cult of Kerala. It retains the impact of Hindu mythology. It delineats the pitiable condition of Rani, who can't be said to be representing most of the young girls, who, just after their marriage, fall victim to the ill-treatment and atrocities of their husbands . The play is considered as a social- psychological study of Indian woman. Karnad's cultural practice is also evident in the play "the Fire and The Rain". It being a successful play, Karnad borrows a story from the "Mahabharata". Regarding the best tradition of modernism, he gives contemporary meaning to an Old legend which stresses the dangers of knowledge without wisdom and power without integrity. The 'fire' in the title of the play refers to the fire of lust, anger, vengeance, envy, treachery, violence and death. On the Other hand, the 'rain' in the title is the symbol of self- sacrifice, compassion, divine grace, forgiveness, revival and life. A maxim is proved true in the play –"Kama, Krodh, Mada, Lobha- all these things are the way of hell". His famous play "Hayavadana" is a symbol of culture. Here Karnad traces heavily upon the rich resources of the native folk theatre. In this play, the folk forms and elements of supernatural serve a significant role. The dramatist uses the conventions of folk tales and motives of folk theatre as masks, curtains, narrator, dolls, horseman and the story with- in- a- story. The plot of the play is collected from Thomas Mann's story "The Transposed Heads", Karnad uses folk tale to depict the problem of human identity in a world of confused relationship, with the theme of incompleteness and man's desire for perfection. Karnad's "Hayavadana" enquires deeply into the rich heritage of the Indian folk theatre to address contemporary issues and assert philosophical riddles about the nature of identity and human beings quest for completeness. This experimental play is an example of "urban folk"drama which joins the conventions of 'yakshagana' performance (a dance drama from belonging to the coastal areas of Karnataka). Karnad's play "Yayati" was a spontaneous outcome of the pressures bearing on the young Karnad's mind which made him realize that he was not a poet he had conceived himself to be, but a dramatist at heart and failed to realize so. Karnad has collected the myth of "Yayati" from the "Adiparva" of the Mahabharata. Karnad borrows heavily from traditional theatrical techniques. The story of "Yayati" appears in the nineteenth chapter of book nine of 'Bhagavata purana'. His famous historical play "Tughlaq" not only depicts the experience of colonialism but also indicates the growth of neo- colonialism in post Colonial India. The Indian Government is terrified by corrupt, educated government bureaucrats and officials whose powers are unchecked by the higher authorities. The class as mentioned in the play is "neo- colonial" class. Aziz here occupies the neo- colonial position. Here he plays the role of an officer in the civil services by his deceit and treachery. This play is a historical play in the sense that it deals with the theme of the fall and tragedy in the life of Muhammad- bin-Tughlaq, a medieval ruler in India. The play depicts Tughlaq as a sensitive and intelligent ruler who sets out to do the best for his subjects and kingdom, but ironically enough, he is misunderstood

*M.Phil. Scholar (English) Guest Lecturer, Sukumar Sengupta Mahavidyalaya, Keshpur, Paschim Medinipur, (West Bengal) INDIA

by whom he loved and trusted. His play "Taledanda" is based on the theme –influence of larger social and intellectual milieu on individual action. His other play "The Dreams of Tipu Sultan" dramatizes the drams of a great warrior.

Karnad decorates Indian culture nicely in these plays. He wants to make aware our generation of Indian culture. It is right today we have come afar but our culture still catches our attention. Cultural and social colonialization of the native culture by the dominant foreign influence has not only resulted in unprecedented change in social and cultural ethos of India but it has also been accompanied by alteration of the economic scenario of our nation. And the worst affected are the traditional arts and crafts. It is because of this that writers like Girish Karnad make an attempt in their writings to bring about a 'cultural Renaissance' on the literary scene.

References :-

1. Corden, Maren Lockwood. *The New Feminist Movement.* London: Russel Stage Foundation, 1974. Print.
2. Dutt, Vandana. .The Dramatic Art of Mahesh Dattani.. *Commonwealth Review*, Vol. XIII, No. 2. Print.
3. Karnad, Girish. .Inroduction.. *Three Plays: Naga-Mandala, Hayavadana,Tughlaq.* New Delhi: Oxford UP, 2002. Print.
4. Preface.. *Dream of Tipu Sultan in Two Plays: Dream of Tipu Sultan, Bali: The Sacrifice*, New Delhi: Oxford UP, (4th Imp.), 2005. Print.
5. Dhanavel, P.2000. *The Indian Imagination of Girish Karnad*: *Essays on Hayavadana.*
6. New Delhi: Prestige.
7. Goel, Savita.1999. "Folk Theatre Strategies in Hayavadana", *The Plays of Girish*
8. *Karnad: Critical Perspectives*.Ed. Jaydipsinh Dodiya, New Delhi: Prestige
9. Books
10. Karnad, Girish . 1989. "Theatre in India" Deadalus . New Delhi : Ravi Dayal publisher.
11. Karnad , Girish. 1988.Three plays : Naga- Mandala, Hayavadana, Tughlaq. New Delhi:
12. Karnad , Girish. 1997.preface to Naga- Mandala. Delhi : Oxford University Press
13. Karnad, Girish.1988 Hayavadana. Delhi: Oxford university Press.
14. Maya, D "karnad's The Fire and the Rain : A Return to Indigenous Tradition" The Literary Criterion. Volume. 36 No.4 , 2001.
15. Mukherjee, Tutun. 1990 "persistence of Classical Categories in Modern Indian Drama: Girish Karnad 's Hayavadana", A Festschrift to Isaac Sequeira, ed , R.S. Sharma,et. al , Hyderabad :Cauvery publishing House
16. Ragan, U. 2006" Myth and Romance in Nagamandala or their Subversion " Girish Karnad's performance and Critical perspectives . Ed Tutun Mukherjee, Delhi: Pencraft International.
17. Girish karnad " Theatre in India " Daedalus, Fall 1989p.346
18. Karnad's "Hayavadana"- p-1
19. Aparna Bhargava Dharwadkar: collected plays Vol. 2 Page.16
20. In the Note of the Play- The Fire and the Rain

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Nicholas Spark's 'A Walk To Remember' And 'The Notebook' - An Analytical Study Of The Treatment Of Love

Dr. Digvijay Pandya * Apurva Upadhyay **

Abstract - Author Nicholas Sparks has persuasively presented his literary techniques in the novels "A Walk to Remember" and "The Notebook". Both the tales are drenched in romance, tragedy, positivity and faith. Based on the youthful thoughts and tender love, the novels develop a high emotional flow in thereaders mind throughout the story. This research paper delineates, with regard to author's ideology, the vital force among those love stories which are tragedy struck and the positive outlook which ultimately is required to cope with such situations.

Introduction - "There is hope in dreams, imagination, and in the courage, of those who wish to make those dreams a reality" - Jones Salk. It seems that this quote perfectly presents the mood of the novel "A Walk to Remember", by Nicholas Sparks. It would be safe to say that formore than a decade Sparks has been writing love stories and has been receiving a huge readership for the same. The status of romantic-fiction writer is undeniable for him. Sparks novels reach readers at a number of different levels, giving them appeal, no matter what their intellectual intent is. "A Walk to Remember" is amongst such discrete creations of Nicholas Sparks` which certainly touches hearts of readers, with its passion and fidelity towards love. The relations that the main characters share in the story named Jamie and Landonshare clearly depicts the importance of having faith and positivity in adverse conditions. The theme of the novel exhibits the inspiration which one can derive from positive attitude towards life and believing in God.

The story revolves around the peaks and valleys of the relation of Landon and Jamie and their reliance on the love they share. Landon, who is the protagonist in the story, gets frustrated with his life, afterbeing informed about the truth that his beloved Jamie had been diagnosed with Leukemia, which would soon result in her demise. He gets shattered and the confidence in love and devotion which he has for Jamieseems to get blurred. The thought to fulfillJamie's dream of getting married in a church full of people remains intact though and he tries to gather some strength in the situation. When Jamie sees Landon struggling of this fact, she gifts him a bible, which develops a ray of hope in Landon.

Despite of critical illness Jamie suffered both loved each other intensely with a positive outlook for life and this sets the theme of this story which Nicholas Sparks beautifully tells. After reading the bible Landon was more confident with a thought that a positive thing can always come out from unfavorable situations of life, if one is hopeful. He was so propitious towards their relation that despite of Jamie's critical illness he asked her for marriage. Though, for Jamie, this decision was not usual because of uncertainty on her life, but then, the sole power, 'the hope' compels her and she accepts this proposal. Their marriage ceremony is arranged by Landon in a manner which can give immense happiness to his lady love, breaking all the negativity, the confusions, and every all the other thingswhich were invaluable in front of true love and hope. As dreamt once by Jamie, both got married in a church full of people who witness this emotional event, where despite being on a wheelchair, Jamie decides to walk, and walk in a way which leaves Landon to think of it, in every possible manner as "A Walk to Remember".

"The Notebook" is another of Nicholas Sparks's novel which is based upon the theme of unconditional and everlasting love; it is a story which has been truly effective in showcasing Sparks' thoughts on tender as well as mature love. The story starts with a man (Noah) reading from a notebook to his wife (Allie) in flashback, who is suffering from Alzheimer's disease and does not recognize him. It is about the youthful days when the two main characters named Noah and Alliefall in love with one another, despite being at odds in socio-economic status. The novel depicts how the affection between the two evolves through meetings and love epistles. A time comes, as in most of the stories, when efforts are made to separate them. Allie's family, who was rich and reputed, was against this bond. Her mother started keeping letters written by Noah for Allie. This was the time when the sweetest of the relation between the two, started scattering. Unfortunately both got separated. Noah leaves for world war, fulfilling his duty to the nation. Meanwhile, Jamie also tries to move on. Years passed and

*Associate Professor (Basic Science & Humanities) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (English) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

after a long stretch of time which counted 7 years, Noah returns to the town. When Allie gets to know this, she decides to pay him a visit. Seeing each other after so long brings on a flood of memories and strong emotions in both of them. After having dinner together they start to talk about the lives of each other and the years which passed by so swiftly. Allie gets to know that Noah was writingletters constantly but it was her mom who kept them away from her.

A feeling of guilt develops within Allie to think that Noah had forgotten her. They decide to meet again the next day and moments at prepossessing sights are shared the other day. While reading this entire story from notebook the man explains that he is also ill, battling a third stage cancer, and suffering a heart disease, kidney failure, and severe arthritis in his hands. Thereafter he starts describing their life with one another, their children, their happiness, their sorrows, and the diagnose of Alzheimer's to Allie. The man stops reading'The Notebook 'at this point, and both after having dinner, embrace and talk. However after almost four hours, Allie fades; she forgets who Noah is once again. The story continues depicting a scene wherein Noah, after being hit by a stroke and recovering of that, goes to Allie's room at night to see her. She remembered who he is, despite the Alzheimer's, and she said that she had missed Noah. Suddenly she could not recognize Noah anymore and nurses had to come for handling the situation. After some days, Noah visits her again; she wakes up recognizing him and tells that she loves him. Some moments of intimacy are shared then and while the story comes to an end both are shown leading towards a peaceful demise.

These novels perfectly show the ideology of Nicholas Sparks towards the way he treats love in his novels, and the moment one finishes reading his stories, is hit by a strong emotional drive which can be felt within. He can certainly be regarded as one of the all-time bestsellingauthors in the sensitive genre of romance tragedy.

Conclusion - Nicholas Sparks' novels are the ones flooded with emotions which have an ability to bring audiences to tears, and readers intellect is often left pondering of the positive approach towards his characters possess in the situations that he creates in his stories. The conflict in the tales and solving them ultimately with the power of love is Sparks's signature style. The novels, on which this research paper is based, are also from the same league. Merry making in initial days of love, followed by a tragic event and then coping with them by a positive outlook is all what Nicholas Sparks novels depict. A critic view on his writing leads to a thought that Sparks is too predictable in his stories, but although a similar structure and repetitive themes occur throughout all of Sparks' novels, his use of different literary devices, ranging from symbolism to epistolary, imagery to flashbacks, etc. highlights him as a strong author in his genre.

References :-

1. Sparks, Nicholas. *A walk to remember*. London: Sphere, 1999. Print.
2. Sparks, Nicholas. *The notebook*.New York, Grand Central Publishing, 2012.
3. Sparks, Nicholas. *Cliffs Notes on Nicholas Sparks' A walk to remember*. Hoboken, NJ: Wiley Pub., Inc., 2009. Print.
4. Sparks, Nicholas. *Notebook*. New York: Createspace, 2015. Print.
5. (Author), Nicholas Sparks (Goodreads. "Nicholas Sparks." *Goodreads*.N.p., n.d. Web. 18 Feb 2017.
6. Miller, Erin Collazo. "Your Quickie Guide to Every Nicholas Sparks Book." *ThoughtCo*.N.p., n.d. Web. 05 March 2017.
7. "Nicholas Sparks." *Biography.com*. A&E Networks Television, 04 May 2016. Web. 15 March 2017.

Cinematic Representations based on novels -

1. Shankman, Adam, director. *A walk to remember*. 25 Jan. 2002, Accessed 17 Jan. 2017.
2. "Fraisse, Robert , director. *The Notebook*. 25 June 2004, Accessed 4 Jan. 2017.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

First Person Autobiographical Narrator In The Short Stories Of R K Narayan With Reference To 'A Breathe Of Lucifer'

Dr. Manisha Verma *

Introduction - First person autobiographical narrator is an eye catching aspect of the technique of narration employed by R K Narayan in his shorter fiction. There are a number of short stories written by Narayan that employ this narrative device with admirable perfection and success. The device of first person narrator is used very frequently in all the three phases of his short stories. A number of great pieces of fiction constitute apt testimony for the author's art of delineating the characters, situations and emotions in first person autobiographical narrative.

The first person autobiographical narrator suffers some very obvious limitations in structuring the artifice of the narrative. The point of view of the narrator suffers undeniable contraction as it endures confinement to the narrator who is also an integral part of the narrative and the narration beyond the well defined confinements of the character put forth makes the narrative questionable beyond doubts. M H Abrams rightly points out that this mode of narration 'naturally limits the point of view to what the first person narrator himself knows, experiences of infers or can find out by talking to other characters.' (Abrams 56) Percy Lubbock however takes the matter quietly differently and talks at length about the liberty enjoyed by the first person autobiographical narrator. He points out that as the writer of an autobiography 'it follows the winding course of writer's past' and the writer is not expected to guide his thought in an orderly design but to let it wonder free.' (Lubbock 245))

It is noticeable that Narayan, in his design of the first person narrator respects both the mutually paradoxical aspects of the first person narrator discussed above. His autobiographical narrators, on one hand enjoy the liberty of the writer of an autobiography and, on the other hand, he suffers confinement of the point of view to a character. It is this paradox of confinement and liberty that forms the basis of the shorter narratives of R K Narayan employing first person autobiographical narrator. It is with these points in mind we shall now proceed to discuss some of the important and landmark narratives of Narayan that employ first person autobiographical narrators.

"A Breathe of Lucifer" is knit around a rustic character with distinct ethnic identity from his master. The story employs first person autobiographical narrator to narrate the story. The stories are narrated from the point of view of the master, who can easily be indentified with the author himself. The first person autobiographical narrators is fully dramatized as the reader frequently comes across the use of first person pronouns. The views of Wayne C Booth capture our attention who commenting of the nature of a dramatized narrator says that 'even the most reticent narrator is dramatized as soon as he refers to himself as 'I'. Booth further observes that 'these narrators are often radically different from the implied narrator who creates them.' (Booth152) It is interesting to note that the narrative constructs symmetric parallels from the point of view of the technique of narration. The views of N C Soni and H C Trivedi capture our attention. They point out that "A Breathe of Lucifer" deals with 'simple, uneducated, sincere hard working, faithful' servant. They further explain that 'Sam is a Christian male nurse or attendant' having 'something fierce as well as soft' about him. (Atmaram, 191)

The author employs autobiographical narrator in narrating the story. The author appends a 'Prologue" with the story which offers a sharp and scintillating justification to the use of the first person narrator in telling the story. The "Prologue" brings into notice the origin of the story and character at precise simultaneity. The autobiographical origin of the narrative justifies the use of first person autobiographical narrator. In the "Prologue," the author gives a vivid account of his handicaps faced during his temporary blindness for quite some time when his doctor 'after a darkroom test,' diagnosed that the author was suffering from 'lentil opacity,' resulting into the state of total immobility and total black out for nearly a week with both eyes sealed up with bandage so that 'even the faintest ray of light may not pass this barrier.' (Narayan, "Prologue-A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories,* 102-103) The first person narrator, like the author, passes through the same phase of temporary blindness. It is interesting to note that the character of Sam owes its life to the experiences of temporary blindness as Sam in the opening of the story is perceived as 'only a voice' with 'a rich reverberating baritone.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 106) It is obvious that the narrator perceives the character of Sam with inevitable limitations of a sightless man. The delineation of the character takes place through the narrator's response

*Guest Faculty (English) Govt. College, Tendukheda, Distt. Narsinghpur (M.P.) INDIA

to what he has heard of him (or from him). The narrator's response to the words and views of Sam is another means of delineating the character to a perfect perception. He perceives the protagonist with unpredictable synthesis of paradoxical suggestions narrated through a sightless viewer. Sam's frequent references to army contribute to illustrate the handicaps of the narrator as the truth behind his claims, remain unconfirmed. The narrator always heard him speak of a 'Colonel who had discovered his talent and trained him as a nurse,' but the narrator remains skeptic about where it happened. On questioning about the locale, Sam says that it 'happened somewhere on the Burma border, Indo- China or somewhere when their company was cut off and their medical units completely destroyed.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 106) The narrator's reliance on dialogues is inevitable as he is sightless and is unable to go beyond verbal perception. Sam's reply to the question about his earnings is yet another master stroke that ratifies the pervasion of skepticism in the mind of the narrator. His reply is wayward. He says; 'sometimes ten rupees a day, sometimes five, two or nothing,' but consequent upon this is the elaboration of his responsibility of eight children,' his 'wife' and 'two children and a niece depending on' him and 'all of them are to be fed and clothed and sent to school and provided with books and medicines.' Paradoxical suggestions of complacency is another master stroke of irony realized through skepticism evidenced in his claim that 'God gives' him 'enough.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 107) It is thus clear that the use of irony and paradox intensifies the skepticism in the delineating the character of the protagonist. The narrator further reveals that Sam always claims to wake up at five but he had no means to verify his claim. Similarly Sam's claim that the Colonel 'whipped him once' when he came 'drunk' and Sam 'vowed not to touch it again,' falls prey to irony realized through the narrator's skepticism as on the 'eve of the memorable day,' marking the removal of the bandages from the narrator's eyes. Sam insists on 'soft drinks, orange, coca cola' as 'this also happened to be his birthday.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 109) The paradox is further intensified when the narrator smells something different and Sam explains that it was the 'spirit lamp in the next ward.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 113). The main action of the narrative further illustrates the pervasion of skepticism when Sam declares that the 'place is on fire,' and on the interrogation, Sam enjoys the opportunity to justify the title of the story. He says that he 'was Lucifer once' and when 'came on the stage with fire in my nostrils, children screamed in the auditorium and women fainted.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 114). It is another very conspicuous manifestation of irony that the title of the narrative excites entirely different emotions from what we eventually perceive after the reading the tale. Both the prominent elements of the title of the story- Breathe and Lucifer- turn out to be the victim of parody when examined in the textual context.

Sam's involvement with Marie is another profound revelation of the irony realized through skepticism which pervades the mind of the narrator and constitutes the essential fictive value to the narrative. He confides that she 'came to his room 'last night and the night before and almost every night.' On narrator's interrogation about his wife's reaction Sam bursts and blames his wife that 'the woman is no good' and 'all' his 'troubles are due to her.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 115-116)

The narrative comes into a sudden and unpredictable end marking the sudden disappearance of Sam as the narrator, after the night of the main action, does not find and instead there is a woman cleaning the room. The narrative ends in an epistolary note wishing the narrator 'speedy recovery.' Sam also furnished explanation for the previous night happenings saying that the 'rogue who bought' him 'coca cola must have dragged the drink.' The epistle ends with a request for sending Rs48/ by money order as Sam is 'charging only for six days not for the last day.' (Narayan, "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 118)

"A Breathe of Lucifer" is Narayan's experiment with the first person autobiographical narrator in which the narrator is dramatized though he is not the protagonist of the story. The main character of the story is Sam- the male nurse who is delineated through the reactions and perceptions of the narrator enduring temporary sightlessness. It is interesting that the narrator, although an important part of the narrative, ceases to be the protagonist. The whole narrative is narrator by the second major character of the story who invites easy identification with the author of the story. The use of skepticism is the chief instrument that serves to define the irony pervading the milieu and skepticism of the narrator seeks apt justification in the temporary blindness of the narrator which provides him with an opportunity to delineate the character of the protagonist in a sequence of interrelated loops of irony. The story, thus, is a complex narrative with glittering shades of thematic and technical innovativeness.

References:-

1. Abrams. M H. *A Glossary of Literary Terms*. Madras; Macmillan,1992
2. Booth, Wayne C. *The Rhetoric of Fiction*. New York, Dover Publications, 1951.
3. Forster. E M. *Aspects of the Novel*. London; Penguin, 1990.
4. Lubbock Percy. *The Craft of Fiction*. London; Jonathan Cape, 1965
5. Narayan R K. "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*. Mysore, Indian Thought, 1999.
6. Soni N C and Trivedi S C. "Short Stories of R K Narayan; An Estimate" *Perspectives on R K Narayan*. Ed. Atmaram. New Delhi, Vimal, 1961.

Metaphor

Dr. Rashmi Nagwanshi *

Introduction - A Metaphor is a figure of speech in which o word or phrase literally denoting one kind of object or idea is used place of another to suggest a likeness or analogy between them. The term is derived from Greek Meta meaning beyond and phero meaning. I carry Here the comparison between too objects are implied rather than being expressly stated. It may be called a compressed or condensed smile. A smile both the sides of five comparisons are stated in a metaphor they are only identified just like. The camel is the ship of the desert; the camel is like the ship of the desert. In we have the example of a metaphor while in we come across a smile critics maintain the metaphor is the most spontaneous of the figures of speech. It provides graphicness and pungency to the language. Here are some illustrations : swan song; lion's share; crocodile tears; a mare's nest; to play ducks and drakes classical metaphors: a flash of wit: a ray of hope; a shade of doubt; a ghost of a chance; food for thought; a lame excuse; a flight of fancy; a five of passion.

A mixed metaphor is one in which the writer mixes two metaphors at the same time, but this mixing should not become ludicrous. Here is an example of such dead metaphor are, 'the leg of table and the heart of matter.'

When human attributes are given to inanimate objects we come across the examples of personal metaphors. For example: a prattling book; an angry ocean; the thirsty ground; a thundering cloud; a frowning Monteria some examples are quoted from various works of literature including poems play, stories, and novels. "All the world's a Stage, And all the men and women merely plays; They have their exits and their entrances. And one man is his time plays many parts, His acts being seven ages- William Shakespeare Trees are poems the earth writes upon the sky" Kahlil Gibran "Books are the mirror of the soul" – Virginia Woolf. "Time rises and rises and when it reaches the level of your dyes you drown"- Margaret Atwood. All religious, arts and sciences are branches of the same trees, "Albert Einstein". Art washes away from the soul the dust of everyday life – Pablo Picasso. I am a little pencil in the hand of a writing God. Who is sending a love letter to the world – Mother Teresa" "Hope is the thing with teachers". Emil Dickinson.

Metaphor used in everyday life - Thanks for helping me you're an angel, The people in that club are just a bunch of sheep, You are such a busy bee, London is a melting pot of people and culture, I had some good ideas but my boss shot them down, My head is full a problems, its spinning, Her dress has a very loud pattern, They were good friends of first, but then things turned sour.

The function of metaphor in literature is twofold. The first, and more practical, function is to allow the reader greater understanding of the concept, object, or character being described. This is done by comparing it to an item that may be more familiar to the reader. The second function is purely artistic: to create an image that is beautiful or profound or otherwise produces the effect that the writer desires. For these reasons, writers have used the metaphor since the earliest recorded stories. The term metaphor is used broadly in this sense to describe any instance when something is figuratively compared to something else. This includes the simile, which compares things by using words such as like or as. In contrast, the metaphor in its usual meaning dispenses with such words, describing something by calling it another thing, as when Shakespeare's Romeo says, "Juliet is the sun." Other metaphorical figures of speech include metonymy using a single word to represent a complicated idea; for example, the word Hollywood is often used to describe the film industry. The metaphor in literature serves to make writing more accessible and colorful at the same time. Examples of the metaphor in literature appear in the earliest surviving literary works, including the Epic of Gilgamesh, from 1000 B.C., and Homer's Odyssey. Homer in particular was noted for his extended epic similes that would compare characters to objects or animals at considerable length. Shakespeare's metaphors, often used in dialogue in his stage plays, are praised for their beauty. This fulfilled the second function of metaphor in literature as well as the first. The Romantic poets of the 18th century developed this beauty further, such as Scottish poet Robert Burns writing, "My love is like a red red rose." In modern times, writers may put the metaphor to more complicated uses, such as the extended metaphor For example, in his play The Crucible; Arthur Miller uses the Salem Witch Trials as a metaphor for the anti-communist hysteria of 1950s America. This metaphor is not spelled out in the work itself and requires

* H.O.D. (English) Govt. College, Junnardeo, Distt. - Chhindwara (M.P.) INDIA

knowledge of history and the writer's intentions to be evident. Science fiction, in particular, provides many examples of the extended metaphor in literature. Stories in the Star Trekand X-Men series often use aliens or human mutations as metaphors for racism, sexism, and homophobia. The use of the metaphor requires some care on the part of the writer. A poorly chosen metaphor can take the reader out of the story and is a common fault of untrained writers. A mixed metaphor occurs when two unlike metaphors are applied to the same subject, as in "up the creek without a clue." Expert writers, on the other hand, can use metaphors in surprising and creative ways, as Margaret Atwood does in her short poem "You Fit into Me." The poem reads, in its entirety: "You fit into me/Like a hook into an eye/A fish hook/An open eye."

References :–

1. The Rule of Metaphor. The creation of Metaphor.
2. Philosophical Perspective on Metaphor.
3. Encyclopedia of Post modernism.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

तुलसी का वर्तमान संदर्भ

डॉ. रश्मि जैन *

प्रस्तावना – गोस्वामी तुलसीदास हिन्दी साहित्य जगत के मूर्धन्य कवि हैं। उनकी गौरवशाली काव्य परम्परा आज भी राष्ट्रीय उत्थान के लिए प्रासंगिक हैं। कोई भी साहित्य अपने युग की आधारशिला पर ही प्रतिष्ठित होता है। सामान्य साहित्य उस युग की समस्याओं को अभिव्यक्त कर आप्तकाम हो जाता है, जबकि विशिष्ट साहित्य अनागत के लिए भी दिव्य संकेत दे जाता है। गोस्वामी तुलसीदास के कालजयी साहित्य में इतने सबल संकेत हैं कि वर्तमान संदर्भ में उसकी प्रासंगिकता सिद्ध है। तुलसीदास भारत वर्ष के अमर कवि ही नहीं, मध्यकालीन भारत के प्रतिनिधि कवि हैं और हम आज भी उनसे बहुत कुछ सीख सकते हैं। महान साहित्य अपने युग के लिए ही सार्थक नहीं वरन् भविष्य के लिए भी सार्थक होता है। रामकथा के माध्यम से जिस सामाजिक और नैतिक आदर्श की स्थापना तुलसी ने की है, वह अतुलनीय है। श्रद्धा और विश्वास की गहराई के कारण ही उनका काव्य इतना स्थायी महत्व प्राप्त कर सका है। 'तुलसी की काव्य प्रतिभा बहुमुखी थी और उत्कृष्ट भी। किसी भी कवि ने कदाचित जीवन को इतने व्यापक दृष्टिकोण से नहीं देखा। आकाश की भाँति सबको व्याप्त करने की क्षमता उन्हीं में दिखाई पड़ती है। तभी तो उनका काव्य धार्मिक काव्य होते हुए भी हिन्दी भाषा भाषियों का शताब्दियों तक जीवन साथी बना रहा। उनका काव्य जीवन की प्रत्येक स्थिति, और किसी भी मनोवृत्ति में शक्ति, सांत्वना या आनंद प्रदान करता रहा । तुलसी उसी काव्य को श्रेष्ठ समझते थे, जो गंगा की भाँति सबको हितकारी हो। उनका काव्य सार्वजनीनता, स्थायित्व, रसात्मकता और भावमग्नता लिए हुए है।'[1] तुलसीदास जी ने श्री राम का चरित्र चुना। जो मर्यादा पुरूषोत्तम हैं और हर तरह से आदर्श के प्रतिरूप हैं। आदर्श पुत्र, आदर्श शिष्य, आदर्श पति, आदर्श भ्राता, आदर्श मित्र एवं आदर्श शासक आदि।'

वर्तमान संदर्भ में आधुनिक परिवेश में क्रांति और विघटन की प्रवृत्ति दिखाई दे रही है। धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, सभी मूल्यों में आज उथल-पुथल मची हुई है। व्यक्ति अपना कर्त्तव्य तो करते नहीं हैं और दूसरों के अधिकारों पर हावी होना चाहते हैं। क्षुद्र लौकिक स्वार्थ पूर्ति ही उनके लिए सब कुछ है। चारित्रिक पतन ही आज की सबसे विषम समस्या है। यह चारित्रिक पतन व्यक्ति, परिवार एवं शासन सभी में दिखाई दे रहा है। आज व्यक्ति बिगड़ रहा है, परिवार विघटित हो रहें हैं और शासन सँभाले नहीं सँभल रहा है। इन सबका कारण चारित्रिक पतन है। तुलसीदास जी ने चार सौ वर्ष पहले इस वर्तमान युग का कोना-कोना झाँक लिया था। उन्होंने न केवल इसका वर्णन ही किया अपितु इसका उचित उपचार भी अपने, ग्रंथों में बता दिया है। समसामयिक परिवेश में 'रामचरित मानस' में व्यक्त विचारों के श्रवण एवं मनन की अपरिहार्यता भी बढ़ गई है। तुलसी ने भटकती पीढ़ी को दिशाबोध किया है। समसामयिक परिस्थिति का वर्णन मानस में दृष्टव्य है –

मारग सोइ जा कहँ जो भावा, पंडित सोइ जो गाल बजावा ।।
मिथ्यारंभ दंभरत जोई, तो कहुँ सन्त कहहिं सब कोई ।।
सोइ सयान जो पर-धन-हारी, जो कर दंभ सो बड़ आचारी ।
जो कह झूठ मसखरी जाना, कलियुग सोइ गुनवन्त बखाना ।।
जे अपकारी चार, तिन्ह कर गौरव मान्य तेइ ।।
मन-क्रम-वचन लवार, तेइ वक्ता कलिकाल महँ ।।

पश्चिमी सभ्यता के अंधानुकरण पर भारत में भी आज पारिवारिक विघटन, अलगाव भाव दिखाई दे रहा है। आज की परिस्थिति में यदि रामचरित मानस के राम मंत्र के मर्म से अवगत हो जाएँ तो समग्र सृष्टि का कायाकल्प हो जाए। ईर्ष्या-विद्वेष से मूर्च्छित परिवारों में रामप्रेम- अमृत से नवजीवन प्राप्त हो सकता है, इसमें संदेह नहीं है। 'सियाराम मय सब जग जानी' तुलसी के इस राम परिवार में मानव समाज ही नहीं वरन् समग्र सृष्टि समाहित हो जाती है।

यद्यपि यह सत्य है कि तुलसीदास जी के काव्य में नारी संबंधी कटु उक्तियाँ अवश्य मिलती हैं, परन्तु तुलसी की दृष्टि में नारी सदाचार से ही परिवार का कल्याण, समाज का संवर्धन एवं राष्ट्र उत्थान संभव है। उन्होंने मर्यादाविहीन शूर्पणखा सदृश नारियों को ही भर्त्सना की है। चाहे वन प्रदेश की भीलनी शबरी हो, या राजधराने की मंदोदरी हो, ये सभी नारियाँ तुलसी की दृष्टि में पूज्या हैं। आज पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से भारतीय नारी कभी एक पुरूष को छोड़कर दूसरे की ओर और कभी तीसरे की ओर अपनी कामतृप्ति के लिए दौंड़ रही है तो समाज में हर मिनिट पर तलाक का ही घिनौना नाटक होता रहेगा। इस संबंध में तुलसी का मत है कि आज भी पुरूषों का जीवन तब तक सुखमय नहीं हो सकता जब तक समाज में सीता के समान नारियों का आचरण नहीं होगा। वे मंदोदरी, कैकेयी आदि के रूप में नारी के उस रूप को भी प्रस्तुत करते हैं जो समान स्तर पर पुरूष के साथ अपने अस्तित्व को व्यक्त करती है। वह पति के बाहरी कार्यकलापों में खुले आम हिस्सा लेती है, हस्तक्षेप करती है, उन्हें सलाह देती है, और आवश्यकता पड़ने पर विरोध भी करती है। इस तरह उन्होंने कई प्रसंगों में नारी के समान अधिकार की प्रस्तुति भी की है। कवि के शब्दों में –

सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें । हित तुम्हार संभु अज कीन्हें ।
राम चरित मानस 5/36/10
राम विरोध कंत परिहरहू । जानि मनुज जनि हठ मन धरहू । 6/14/8
कंत समुझि मन तजहु कमति ही । सोह न समर तुम्हहिं रघुपति ही । 6/36[1]
निकट काल जेहि आवत साँई । तेई भ्रम होइ तुम्हारेहि नाँई । 6/37/8

तुलसीदास मानव जीवन के संस्कारक कवि हैं। उनकी सामाजिक चेतना

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

किसी लोकनायक से कम नहीं थी। सांस्कृतिक पुनरूत्थान की चेतना उनके काव्य में अपना चरमोत्कर्ष पा सकी। धर्म, समाज, राज्य व्यवस्था आदि की तात्कालिक विविध समस्याओं को उन्होंने उनके पूरे संदर्भ में पकड़ा और सांस्कृतिक आदर्शों की नैतिक भित्ति पर उनका यथोचित समाधान उपस्थित किया।[2]

तुलसी के काव्यों में आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था संबंधी दृष्टि विद्यमान है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था के जननायक श्री राम आधुनिक प्रजातंत्र में चुने गए जनमान्य नेता है। यद्यपि श्री राम को अपने पिता राजा दशरथ के द्वारा शासन मिला था, किन्तु गंभीरता से देखा जाए तो राजा दशरथ पंचों की राय लेकर ही राम को 'राजा' बनाना चाहते थे।

जो पाँचों मत लागह नीका।
करहु हरषि हिय रामहिं टीका ।।

श्री राम का चरित्र बताता है कि कलह की नींव पर बना शासन दुर्ग कभी चिरस्थायी नहीं हो सकता है। इतना ही नहीं जो व्यक्ति त्यागने की सामर्थ्य रखता हो, जिसे गद्दी के प्रति मोह नहीं हो, वही असली जननायक हो सकता है। वर्तमान प्रजातंत्र में कितना मोह है, कुर्सी बरकरार रखने के लिए क्या-क्या कुकर्म नहीं किए जाते हैं, यह हम सभी जानते हैं, किन्तु श्री राम ने जनता के चाहने पर भी अयोध्या का विशाल राज्य ठुकरा दिया। जब कलह की विष बेल सूख गई, जब कैकेयी- मंथरा का हृदय परिवर्तन हो गया, तब उन्होंने स्वीकार किया। कवि के शब्दों में -

कुटिल रानी पछितानि अघाई।

तुलसीदास के पात्र राजा दशरथ और राम पुरानी शासन व्यवस्था के राजपुरूष भले हों, परन्तु तुलसीदास जी ने उन्हें आधुनिक प्रजातांत्रिक भावनाओं के अनुरूप ही बनाया है। श्री राम लंका से लौटकर अयोध्या के राजसिंहासन पर बैठे अवश्य किन्तु उन्होंने किसी अधिनायक की भाँति शासन में निरंकुशता नहीं की। उन्होंने अपनी प्रजा को इतनी छूट दी कि -

जो अनीति कछु भाखौ भाई। तौ मोहि बरजौ भय बिसराई ।।

यद्यपि राजा दशरथ का स्वभाव राजतंत्र में ढले हुए व्यक्ति का स्वभाव है। उन्हें अपने अधिकार के बल पर अहंकार था, किन्तु राम दशरथ सुत होते हुए भी अपने आचरण में भिन्न थे। वे प्रजातांत्रिक व्यवस्था के जननायक थे। वे मानव मात्र की समानता के पोषक हैं। चाहे भीलनी शबरी हो, वानरवंशी सुग्रीव, अंगद, हनुमान हों या राक्षसवंशी विभीषण हों, सभी के प्रति समभाव था। वे ऐसे शासक थे, जिन्होंने राज्य के लिए समाज की उपेक्षा नहीं की वरन् समाज की इच्छा पर अपने व्यक्तिगत सुखों को तिलांजलि दे सकते थे। तुलसी के राम ने समाज के छोटे से व्यक्ति के कहने पर सीता का परित्याग कर दिया था। तुलसी यहाँ शासक को निरंकुश उत्तराधिकारी नहीं वरन् जनता का प्रतिनिधि रूप में देखते है। दूसरी ओर लगभग समस्त प्रशासकीय-शासकीय कार्य व्यापार (आदर्शीकृत रूप में) प्रजा की सहमति से भी होते दिखाते हैं -

सुनह सकल पुरजन मम बानी।
कहौं न कछु समता उर आनी ।।
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई।
सुनह करहु जो तुम्हहिं सुहाई ।।

तुलसी की दृष्टि में भौतिक उपलब्धियों एवं वैज्ञानिक संसाधनों से ही मानव का कल्याण संभव नहीं है। रामचरित मानस की स्वर्णमयी लंका वैज्ञानिक उपलब्धियों का प्रतीक है। यदि वैज्ञानिक उपलब्धियों पर रावण का आधिपत्य हो जाए तो वह सज्जनों का रक्त शोषण करेगा। उस रावण का हृदय संकुचित है, वह मस्तिष्क प्रधान व्यक्ति है तो समाज में अशांति और अव्यवस्था फैलेगी। आज हजारों रावण पैदा हो गए हैं। वर्तमान संदर्भ में आंतकवादियों द्वारा किए जा रहे अत्याचार, नरसंहार इसी का प्रतीक हैं। आज तुलसी के विशाल हृदय राम की आवष्यकता है। जो स्वयं संकट सहते हैं। संकट से लोगों को उबारने के लिए कठिन राह पर चल पड़ते है। जो देश की ग्रामीण जनता की सुसुप्त शक्ति को जागृत करते हैं। तुलसीदास जी का संदेश है कि आज आवश्यकता है कि हम अपने में राम की शक्ति का आह्वान करें। जिस तरह तुलसी राम के माध्यम से शासक और शासित के बीच के भेद को राजनैतिक स्तर पर समाप्त करके आंशिक रूप से ही सही परन्तु प्रजातांत्रिक समाज का चित्र खींचने का प्रयास करते हैं। उसी तरह सीता के माध्यम से स्वामी ओर सेवक के बीच के अंतर को सामाजिक स्तर पर समाप्त करके एक समानतावादी समाज की पेशकश भी करते हैं।

'जद्यपि गृह सेवक सेवकिनीं। विपुल सदा सेवा विधि गुनीं।
निज कर गृह परिचरजा करई। रामचन्द्र आयसु अनुसरई ।।'

रामचरित मानस 7/24/5-6

तुलसी की प्रजातांत्रिक समझ का यह भी एक अंग है कि शासक को मुख से (मुख की तरह) निर्देशक के रूप में ही शासक होना चाहिए और हाथ, पैर तथा ऑखों से अर्थात् कर्म से जनता का सेवक होना चाहिए।

'सेवक पद कर नयन से, मुख से (सौं ?) साहिब होई।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि, सुकबि सराहहि सोइ ।।'

दोहावली, 523

तुलसी के रामराज्य की कल्पना तत्कालीन दुर्व्यवस्था के समानांतर सुव्यवस्था की तलाश है। दूसरी ओर वे कठोर दंड और कानून का विधान करते हैं।

भलेहु चलत पथ पोच भय नृप नियोग नयनेम।
सुतिय सुभूपति भूषिअत लौह संवारित हेम ।।

दोहावली, 506

तुलसी के अनुसार ऐसा प्रजातंत्र जिसमें सुख-समृद्धि की कामना है। क्लेश या संताप के लिए स्थान नहीं है और जीवन का प्रत्येक क्षेत्र उन्नत है। व्यक्तियों में आपस में प्रीति है। एक दूसरे को बाधा नहीं पहुँचाते हैं।

खेती बनि विद्या बनिज, सेवा सिलिप सुकाज।
तुलसी सुर तरू सरिस सब सुफल राम के राज ।।

दोहावली, 184

कोपे सोच न पोच कर, करिय निहोरन काज।
तुलसी परिमित , प्रीति की, रीति राम के राज ।।

दोहावली, 186

वे राजा प्रतापभानु के राज्य को श्रेष्ठ बताते हैं, क्योंकि वे बल पाकर भी रावण की तरह अमानवीय कार्यो में प्रवृत्त नहीं होते है। 'सोलहवीं शताब्दी के सामंती परिवेश में तुलसी का प्रजातांत्रिक रूझान उनके मानववाद के क्षितिज को युग से बहुत आगे ले आता है। आदर्श की स्थापना, सुव्यवस्था की चेष्टा, उत्तमता की हिमायत, कर्म की प्रधानता, व्यापक मानवीय धरातल पर समानता का प्रयास, श्रेष्ठ शासन, शासक और उत्तम व्यक्तियों की कल्पना, वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना आदि के कारण मानववाद की व्यापक लोकतात्विक दृष्टि सामाजिक राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में बहुत कुछ साकार हो उठी है। यहाँ तुलसी राम को मात्र मानव हितकारी स्वरूप में ही नहीं अपितु युग की मरणासन्न मानवता के रक्षक के रूप में भी सामने लाते है।'[3] 'तुलसी शासक और शासित के संबंधों में व्यावहारिक रूप देने का

प्रयास करते हैं। तुलसी का यह चिंतन उनकी प्रजातांत्रिक, सह अस्तित्वपरक, समदर्शी दृष्टि का परिचय कराता हुआ और समष्टि में मानववादी चेतना का आभास देता हुआ उन्हें उन सजग रचनाकारों की पंक्ति में ला खडा करता है, जिन्हें हम भविष्य दर्शी रचनाकार के रूप में पहचानते हैं।[4]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि तुलसीदास जी के साहित्य में आत्मकल्याण और जनकल्याण के प्राय: सभी तत्व प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त हुए है। 'रामचरित मानस' के रूप में उन्होंने पथ भ्रमित समाज को प्रकाश स्तंभ दिया है। तुलसी की अमर वाणी का संबल जीवन पथ के प्रत्येक पथिक को हितकारी है। न केवल भारत अपितु चारित्रिक कुंठाओं से ग्रस्त विश्व को तुलसी साहित्य दिशाबोध देने में समर्थ है। वर्तमान संदर्भ में तुलसीदास का साहित्य गंभीर अध्ययन की अपेक्षा रखता है। विरक्त जीवन में समाज की तुलसी जैसी हित चिंता और बलवती राष्ट्रीयता क्या अनहोनी घटना नहीं समझी जाएगी। यह भारतीय संतों का ही कार्य हो सकता है। जिसका आकलन तुलसी साहित्य में हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. (सं.) प्रो. कांतिकुमार जैन, प्रो. धनंजयवर्मा – भक्तिकालीन काव्य, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृ. 34
2. वही पृ. 34
3. अरूणप्रकाश मिश्र, तुलसी का मानववाद, अंकुर प्रकाशन 1/3017, रामनगर, मंडोली रोड, शाहदरा दिल्ली– 110032, पृ. 103
4. वही पृ. 106

सहायक ग्रंथ सूची :–

1. रामविलास शर्मा : भाषा, युगबोध और कविता, वाणी प्रकाशन 61–एफ, कमला नगर, दिल्ली–110007, प्रथम संस्करण– 1981
2. संपादक डॉ0 कृष्णचंद्र वर्मा, डॉ. गंगाप्रसाद बरसैया, डॉ0 गंगानारायण त्रिपाठी, मध्यकालीन काव्य, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रथ अकादमी, भोपाल प्रथम संस्करण 1987
3. डॉ0 शांतिस्वरूप गुप्त – साहित्यिक निबंध, अशोक प्रकाशन,नई सड़क, दिल्ली–6 नवीन संस्करण 1990
4. डॉ0 राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी एवं राकेश – हमारे कवि और लेखक, प्रकाश केन्द्र, रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ– 226020, 1991
5. डॉ0 गणपतिचन्द्र गुप्त – साहित्यिक निबंध, लोक भारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद–1, आठवां संस्करण– 1984
6. डॉ0 योगेन्द्रप्रतापसिंह – विनय पत्रिका (पाठ समीक्षा तथा विवेचन), लोक भारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद–1, तृतीय संस्करण–2003
7. डॉ0 नगेन्द्र – कालजयी कृतियाँ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23, दरियागंज, नयी दिल्ली– 110002, प्रथम संस्करण – 1980
8. डॉ. योगेन्द्रप्रतापसिंह – श्री रामचरित मानस (द्वितीय सोपान, अयोध्याकॉड), लोक भारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद–1, छठां संस्करण–2005
9. अरूण प्रकाश मिश्र – तुलसी का मानववाद , अंकुर प्रकाशन, 1/3017, रामनगर, मंडोली रोड, शाहदरा, दिल्ली– 110032, प्रथम संस्करण– 1987
10. संपादक मंडल – डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान) डॉ0 ब्रजेश्वर शर्मा श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी, डॉ0 रघुवंश – हिन्दी साहित्य कोष (भाग– 1, 2), ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी–1, पुनर्मुद्रित– 2006
11. डॉ0 रामप्रसाद मिश्र – हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास, सत्साहित्य भण्डार, 57–बी, पॉकेट– ए, फेज–2, अशोक बिहार, दिल्ली– 110052, संस्करण– 1998
12. प्रो0 कान्तिकुमार जैन, प्रो0 धनंजय वर्मा, भक्तिकालीन काव्य मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, चतुर्थ आवृत्ति– 1994
13. डॉ0 बल्देव प्रसाद मिश्र, तुलसी की राम–कथा, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल–1
14. कांतिकुमार जैन (प्रोफेसर), चन्द्रभागधर द्विवेदी (प्रोफेसर) , सात कालजयी कवि, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल प्रथम संस्करण– 1983
15. डॉ0 देवीशरण रस्तोगी, मध्यकालीन कवि और उनका काव्य, राजहंस प्रकाशन मंदिर, धर्म आलोक, रामनगर, मेरठ (उ.प्र.) संस्करण 1984
16. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोक भारती प्रकाशन,15–ए, महात्मागांधी मार्ग, इलाहाबाद–1, पन्द्रहवां संस्करण– 2001
17. डॉ0 बदरीनारायण श्रोत्रिय, सूर एवं तुलसी का सौंदर्य भावना चन्द्रलोक प्रकाशन, 128/783, वाई ब्लॉक, किदवई नगर, कानपुर– 208011, प्रथम संस्करण– 1991
18. वचनदेव कुमार, तुलसी, विविध संदर्भो में, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली–8, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, 110002, प्रथम संस्करण– 1977

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) April to June 2017, Vol. I, Issue XVIII

समकालीन हिंदी कहानी- नारी पात्रों के दोहरे दायित्व का संघर्ष

डॉ. रागनी चौहान *

प्रस्तावना – 'हम भारतीय कई तहों में जीते है। यदि हम मन की सलवटों को समझते है, तो यह जरूर स्वीकारेंगे कि औरत का 'मानवीय रूप का सहोदरा' कही जाने के बावजूद स्वीकृत नहीं है। लोग चाहते हैं कि औरत सारी भूमिकाओं को बिना किसी शिकायत के निभाए। वह पति के ड्राईंग रूम की शोभा भी बने और पलंग की मखमली बिछावन भी। स्पष्टवादिता, स्वतंत्रता, स्वाभिमान और अपने अधिकार की बात करना मानो उसका गुनाह माना जाता है। आज औरत गाय की तरह घर के दरवाजे पर रंभाती है और बछड़े के बदले घास का पुलता थनों से सजाए कातर होकर दूध देती है। बात चाहे पूरब की हो या पश्चिम की, स्थिति एक सी है। कागज के पन्नों में औरत देवी है, शक्तिरूपा है, लेकिन व्यवहार में औरत की क्या हस्ती है? शरीर के अलावा उसकी और कोई पूजा नहीं।'[1]

'कामकाजी नारी अर्थात् वह नारी जिसे काम करने की तनख्वाह मिलें।'[2] कामकाजी महिला वह है, जो किसी सरकारी, निजी कार्यालय में, खेत-खलिहान में, या किसी ठेके की मजदूर के रूप में काम करने वाली, जिसका उसे पारिश्रामिक मिले। कामकाजी नारी को घर और बाहर दोनों जगह दोहरी भूमिका निभानी पड़ती है और दोहरे संघर्ष से भी गुजरना पड़ता है। महिलाएँ अपने पारिवारिक या आर्थिक मजबूरी के कारण या अपने पैतृक व्यवसाय को बनाए रखने आदि कारणों से नौकरी या व्यवसाय करती है, लेकिन यह विवश्ता उनके लिए किसी सजा से कम नहीं है। घरेलू और बाहरी कामों में वह पिस जाती है। सुबह जल्दी उठना, घर के सब कामों को निपटाना, रेल-बसों में धक्के खाना, राह चलते मनचले लोगों द्वारा छेड़खानी की शिकार होना, लोगों के अश्लील फिकरे व तानों से मानसिक व शारीरिक घुटन को झेलना उसकी नियति बन गई है।[3]

घरेलू संघर्ष – एक महिला सबसे पहले अपने घर परिवार को प्राथमिकता देती है। यदि वह कामकाजी महिला है, तो वह अपने बाहर के काम के साथ-साथ अपने परिवार का भी ध्यान बखूबी रखती है, परंतु जब यही परिवार उसका किसी भी तरह से ध्यान न रखे, सहयोग न करके, उसकी अवहेलना करें, उसे मानसिक व शारीरिक यातनाएं दे तो वह नारी अत्यंत आहत हो जाती है। कई बार महिलाओं को (निम्न व मध्य वर्ग की) अपने परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होने के कारण मजबूरी में नौकरी करने के लिए घर से बाहर निकलना पड़ता है, और उसकी इस मजबूरी का फायदा बाहर वाले उठाने से नहीं चूकते हैं। मृणाल पांडे की कहानी 'उमेश जी' की नायिका मजबूरी में अपने परिवार के दबाव के कारण नौकरी के लिए जब इंटरव्यू देने जाती है, तब उसका बॉस (उमेश) उसे अपने घर बुलाता है और पूछता है कि वह नौकरी पाने के लिए क्या कर सकती है? लेखिका ने कहानी में संकेतात्मक रूप से बताया कि नायिका को नौकरी अपनी देह का सौदा करके मिली है।[4] मेहरून्निसा परवेज की कहानी 'विद्रोह' की नायिका नीना भी मजबूरीवश नौकरी करती है। उसके पिता सेवानिवृत्त है। परिवार का सारा भार नीना पर है। हर महीने उसे पिता के लिये दवा और माँ तथा छोटे भाई बहनें के लिए कपड़े लेने होते हैं। इन जिम्मेदारियों के चलते उसका विवाह भी नहीं हो पाता है। उसके माँ-बाप बुढ़ापे में भी बच्चे पैदा करते हैं। नीना की बढ़ती उम्र एवं बुढ़ापे में भी माँ-बाप द्वारा बच्चे पैदा करने पर जब बाहर वाले लोग नीना को ताना देते हैं तब वह इन सब बातों से अत्यंत निराश और दुखी होती है। दफ्तर से आने पर माँ का फिर से गर्भवती होने पर उल्टियां करना, बच्चों की लाईन देखकर घर के इस वातावरण से नीना को खीझ होती है। समय पर विवाह न हो पाने के कारण वह अपने कार्यालय के ही एक व्यक्ति (नायडू) के साथ विवाह करने के लिए तैयार हो जाती है। विवाह के लिए वह नौकरी छोड़ने का फैसला लेती है, तब ही उसके पिता नीना के पास आकर कहते हैं कि अगर उनकी आंखों का ऑपरेशन नहीं हुआ तो वह अंधे हो जाएगे। यह बात सुनकर नीना नौकरी छोड़ने का फैसला बदल लेती है। उसके हाथ में रखा त्याग-पत्र टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।[5]

कई बार नारी अकेली परिवार की संचालिका होने के कारण विवाह नहीं कर पाती है, तो कई बार उसके परिवार वाले ही उसका विवाह स्वार्थवश नहीं करते कि परिवार का खर्चा कौन चलाएगा। कभी-कभी अधिक उम्र हो जाने के कारण भी नारी स्वयं ही विवाह नहीं करती और कभी हो भी जाए तो कारण यह रहता है कि वह एक नौकरी पेशा है, कमाऊपूत है। चित्रा मुद्गल की कहानी 'लाक्षागृह' की नायिका मुन्नी भी परिवारिक आर्थिक संकट के कारण विवाह देरी से करती है परंतु जिससे वह विवाह करना चाहती है (सिन्हा से) वह केवल उससे इसलिए विवाह करना चाहता हैं क्योंकि वह नौकरी करती है, उसका वेतन अच्छा है, परंतु जब सुन्नी विवाह की खुशी में नौकरी से इस्तीफा देने की बात सिन्हा से करती है तब सिन्हा नाराज हो जाता है और सुन्नी को बुरा-भला कहता है- 'तुम बदशक्ल ही नहीं बे-अक्ल भी हो।' सिन्हा सुन्नी को इस्तीफा वापिस करने को कहता है। सुन्नी समझ जाती है कि उससे विवाह सिर्फ उसके रूपयों के लालच में ही किया जा रहा है। अत: सुन्नी सिन्हा से कहती है कि वह विवाह नहीं करेगी। कामकाजी नारी का वेतन उसके लिए अभिशाप भी बन जाता है। यह इस कहानी से परिलक्षित होता है।[6]

कामकाजी नारी को दोहरी जिंदगी जीनी पड़ती है। इस दोहरे जीवन से उसके हर रूप-पत्नी, बेटी, बहन यहाँ तक की मातृत्व रूप भी प्रभावित हो जाता है। चित्रा मुद्गल की कहानी 'शून्य' और मृदुला गर्ग की कहानी 'चक्कर गिन्नी' में मातृत्व के अलग-अलग रूप देख सकते है। 'शून्य' कहानी की नायिका तलाकशुदा है, वह अपना बेटा अपने पति व सौत के हाथ नहीं देना

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला-उमरिया (म.प्र.) भारत

चाहती है। वह कामकाजी है, इसलिए वह इतना हौसला रखती है कि अपने बेटे का पालन-पोषण कर सकती है। वह कानूनी रूप से अपने पुत्र को पाने के लिए सुप्रीम कोर्ट तक लड़ने के लिए भी तैयार हो जाती है। दूसरी तरफ 'चक्कर गिन्नी' की नायिका विनीता की मां कामकाजी है, हमेशा घर-बाहर के काम में व्यस्त होने के कारण मां विनीता का अच्छे से ध्यान नहीं रख पाती है, उसे कभी वक्त नहीं दे पाती है। आम मांओ की तरह उसे उतना लाड़-प्यार भी नहीं कर पाती, इससे विनीता हमेशा दुखी रहती है और जब उसका विवाह होना होता है, तब वह घरेलू पत्नी बने रहना पसंद करती है, और बनी भी रहती है, परंतु एक दिन विनीता की पुत्री माया उसे कहती है कि- 'आप सारा दिन घर पर ही क्यों बैठे रहती हो, कोई जॉब क्यों नहीं करती।' उसका पति भी उसे काम (जॉब) करने का आग्रह करता है। फिर विनीता अपनी माँ के पास जाकर कहती है कि- 'आप मुझे रिसेप्शनिस्ट रख लीजिए।'[7] कामकाजी महिला के संघर्ष एवं दर्द को तभी समझा जा सकता है कि जब कोई खुद उसकी भूमिका में जीकर देखे।

कामकाजी महिला के प्रति हमेशा यह धारणा रखी जाती है कि वह हमेशा प्रसन्नचित रहे और अपने दुख तकलीफों की शिकन अपने माथे में कभी आने न दें। यशपाल जैन की कहानी 'ब्योमबाला' में नायक को हवाई यात्रा के दौरान दो महिलाएं (दोनों एयरहोस्टेज) मिलती है। पहली महिला के व्यवहार से नायक उस पर क्रोध करता है। जब उसे दूसरी महिला (मर्सी) मिलती है, तब उसे (नायक) को पता चलता है कि या यह एहसास हो जाता है कि हमेशा काम के वक्त सुंदर दिखने वाली नारी खुश नहीं रह सकती है। मर्सी भी मजबूरी में काम करती है। इस कहानी में विमान परिचालिका एयरहोस्टेज की पीड़ा व दर्द को नायिका मर्सी के माध्यम से बताया गया है। एक कामकाजी महिला होने पर भी उसकी अपनी मेहनत की कमाई पर पूर्ण अधिकार नहीं रहता है। घर-परिवार वाले उसे किसी न किसी प्रकार से प्रताड़ित ही करते रहते हैं। यदि महिला अपने परिवार से कुछ मदद मांगे तो कभी पति, कभी सास या घर के अन्य लोग जानबूझ कर उसे नीचा दिखाने के लिए उसकी मदद नहीं करते। कई महिलाएं कामकाजी होने पर भी पति व ससुराल वालों की मार डांट खाती रहती है। वह चाह कर भी अपने ऊपर होने वाले अन्याय के प्रति आवाज नहीं उठा पाती। घर के काम के साथ-साथ उसे बाहर के भी काम करने पड़ते है। यदि वह नौकरी करना छोड़ना भी चाहे तो उसके परिवार वाले उसे नौकरी छोड़ने नहीं देते, कारण उसे पैसा कमाने की सिर्फ मशीन समझा जाता है। ममता कालिया की कहानी 'मनहूसाबी' एवं सूर्यबाला की कहानी 'गैस' में यह त्रासदी आसानी से देखने को मिलती है।[8]

कामकाजी नारी दहेज के लिए किस तरह प्रताड़ित होती है। इसे हम नमिता सिंह की कहानी 'एक बेताल कथा और' में देख सकते है। इस कहानी की नायिका कल्पना पढ़ी लिखी सुंदर है। पढ़ाई छोड़ने के कुछ साल बाद वह अपने अकेलेपन से ऊब कर चित्रकला व नृत्य सिखाने के लिए अपने ही घर में स्कूल खोलती है परंतु जब उसका विवाह हो जाता है, तब उसे अपना स्कूल बंद करना पड़ता है। शादी के समय पिता द्वारा दहेज की पूरी रकम न मिल पाने के कारण कल्पना के ससुराल वाले हर रोज उसे दहेज के लिए प्रताड़ित करते हैं, जब वह अपने मायके जाती है, तब कल्पना अपने पिता से कहती है कि वह उसे 'ससुराल न भेजे' वह मायके में बोझ बनकर नहीं रहेगी। दुबारा कोई नौकरी कर लेगी। पर वह वापिस ससुराल नहीं जाएगी परंतु विवाहित नारी का मायके में रहना समाज की नजर में अच्छा नहीं माना जाता इस कारण कल्पना के माता-पिता उसे वापिस भेज देते हैं। अंत में कल्पना की मृत्यु हो जाती है। उसके ससुराल वाले कहते हैं कि स्टोव के फट जाने से कल्पना की मौत हो गई।

हमारे समाज में न जाने ऐसे ही कितनी कल्पना आज भी स्टोव के फटने से मर जाती है। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के बावजूद भी अधिकांश महिलाएं शोषित होती रहती है।

बाहरी संघर्ष – कामकाजी महिलाओं को घरेलू संघर्ष तो सहना पड़ता है परंतु वह बाहरी संघर्ष से भी अछूती नहीं रह पाती है। स्त्रियों की विडम्बना तो देखिए कि घर परिवार का भरपूर साथ व स्नेह मिलता है, तब भी उसे बाहरी संघर्ष से दो-चार होना ही पड़ता है। महिलाए घर से बाहर जब किसी कार्यालय, खेत-खलिहान या कल-कारखानों में काम करने जाती है, तो उसे अनेक समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है, यदि कामकाजी नारी सुंदर है तो उसके काम को उसकी संदुरता से आंका जाता है, जब उसकी सुदंरता कम या खत्म होने लगती है। तब उसकी नौकरी भी खत्म हो जाती है। कुसुम अंसल की कहानी 'सन्नाटे की खीझ' की नायिका पूर्वा एक एयर होस्टेस है जो कि स्वतंत्र मिजाज की है, परंतु एक दिन उसकी मौत हो जाती है। पुलिस के अनुसार उसका बलात्कार हुआ था। एयरहोस्टेस की नियुक्ति ही सुदंरता के आधार पर होती है। जब तक सुंदरता है तब तक ही नौकरी रहती है। कहानी कि नायिका की सुंदरता उसकी मौत का कारण बन जाती है।

कई बार कार्यालय में या सहकर्मी के द्वारा नारी बलात्कार का शिकार हो जाती है। दिनेश पालीवाल की कहानी 'पतझड़ के पहले' कहानी में मुन्नी नाम की लड़की अपने कार्यालय में बलात्कार की शिकार हो जाती है। कामकाजी नारी को कभी उसके ही सहकर्मी उसे बदनाम करते हैं। यदि वह काम में अपनी मेहनत से तरक्की पाती है, तो उसे जानबूझकर इतना मानसिक प्रताड़ित किया जाता है कि वह हताश व निराश हो जाती है। कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी 'खत जो गुमनाम थे' में देखा जा सकता है कि किस तरह कामकाजी महिलाओं को किस-किस तरह से बदनाम किया जाता है, सहकर्मी के साथ नाम जोड़ा जाता है। यदि वह विद्रोह करती है, तो उन्हें सताया जाता है, मानसिक प्रताड़ित किया जाता है। उनके काम में जानबूझकर गलतियां निकाली जाती है, उनका यदि कोई कार्यालयी काम हुआ तो उसे टाल दिया जाता है। ममता कालिया की कहानी 'जांच अभी जारी है' कि नायिका जब अपने सहकर्मी के चंगुल में नहीं फंसती तब उसके सहकर्मी उसे सबक सिखाने के लिये उस पर गलत आरोप लगाते है। नायिका दिन-ब-दिन मानसिक पीड़ा सहती रहती है, परंतु वह निर्दोष है, इसका वह सबूत नहीं दे पाती। वह बेहद परेशान हो जाती है। एक कामकाजी नारी पुरूषों से अपना शोषण न करवाने के कारण मक्कार और बेईमान इंसान करार दी जाती है।

एक कामकाजी नारी को यातायात के समय कितनी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। उसका सफर कितना दुखदायी होता है। रेल-बसों के धक्के खाना, भीड़ में मनचलो के द्वारा फब्तियां को सहन करना आदि। दिनेश पालीवाल की कहानी- 'बोल मेरी मछली' की नायिका रेल्वे स्टशेन पर है, लोकल ट्रेन अचानक रद्द होने के कारण स्टेशन में भीड़ है। इस भीड़ में नायिका अन्य महिलाओं के साथ खुद भी कमर में पल्ला खोंसकर बैग कंधे में फंसा कर जगह पाने की तैयारी में लग जाती है। इस दृश्य से कामकाजी नारी की भागा-दौड़ जीवन शैली का पता चलता है। इसी तरह ही चित्रा मुद्गल की कहानी 'ताशमहल' की नायिका शुभू को भी अपने दफ्तर जाने के लिए रोज-रोज यातायात की जानलेवा यातना से गुजरना पड़ता है। उसकी कभी बस छूट जाने पर उसे रेल से जाना पड़ता है। रेल-बसों में धक्के खाना पड़ता है, जगह पाने के लिए आपाधापी मच जाती है, और कभी जगह मिले भी तो

साथ बैठे या खड़े हुए आस-पास के आदमियों की हरकतें सहन करना मुश्किल होता है।[9]

निष्कर्ष- एक कामकाजी नारी का जीवन हमेशा दोहरे संघर्षों से भरा रहता है,यह सिर्फ भारत देश में ही नहीं विश्व स्तर पर भी महिलाओं की यही स्थिति है। घर-बाहर दोनों दायित्व को पूर्णत: निभाना, यदि कुछ कमी घटी हो जाए तो उसके लिए उसे प्रताड़ित अपमानित भी होना पड़ता है। एक मध्यवर्गीय नारी को हर कदम पर जीवन से समझौता करना पड़ता है। पारिवारिक संबंध उसके लिए चुनौती तक बन जाते हैं परंतु इन दोहरे संघर्षों से गुजरने के बावजूद भी नारी आगे बढ़ रही है। अपने व्यक्तित्व का विकास कर रही है।[10]

उपरोक्त कहानियों के नारी पात्र दोहरे दायित्वों को निर्वाह करते हुए नारी जीवन के वास्तविक संघर्ष को दिखाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लैंगिक हिंसा एवं महिला सशक्तिकरण- रवि प्रकाश यादव, रागिनी दीप, पूजा राय, पृ. सं.-01 अविष्कार पब्लिशर्स (जयपुर-राजस्थान)
2. नवम दशक की कहानी में कामकाजी नारी की भूमिका- डॉ. वेदवती चौधरी उर्फ लाड़ले वी.पी., पृ. सं.-11, अन्नपूर्णा प्रकाशन (कानपुर-उ.प्र.)
3. वही-, पृ. सं. 51
4. चार दिन की जवानी तेरी (कहानी-संग्रह) मृणाल-पाण्डे, पृ. सं. 15 राधा कृष्ण प्रकाशन, प्रा.लि., जगतपुरी दिल्ली
5. मेहरून्निसा परवेज और उनका कहानी संसार- डॉ. जाहिदा जबीन, डॉ. जौहरा, अफ़जल, पृ. सं.-20 राजकमल प्रकाशन दिल्ली
6. नवम दशक की कहानी में कामकाजी नारी की भूमिका- डॉ. वेदवती चौधरी उर्फ लाड़ले वी.पी., पृ.सं.-23
7. वही, पृ.सं. -143
8. वही, पृ.सं. -99
9. वही, पृ.सं. -145
10. साठोत्तर कहानी और परिवर्तित मूल्य- श्रीमती प्रेमसिंह, पृ.सं.-20, मीनू पब्लिकेशन, दिल्ली।

****

गजानन माधव 'मुक्तिबोध' के काव्य में 'फैंटेसी' कलारूप

सोनिया राठी *

शोध सारांश – मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य के ऐसे कवि हैं, जिन्होंने छायावाद से काव्य रचनाएं आरम्भ की और प्रगतिवाद, प्रयोगवाद व नई कविता की युगधाराओं से जुड़ते हुए काव्य में ऐसी काव्य भाषा और शिल्प का प्रयोग किया जो आगामी रचनाकारों के लिए बहुत बड़ा प्रेरणा स्त्रोत बनी। आलोचनात्मक संवाद करने वाले मुक्तिबोध हिन्दी–उर्दू के पहले कवि नहीं हैं। निराला, जयशंकर प्रसाद, तुलसीदास ने ऐसा किया है। कबीर, फैज, फिराक, इकबाल, गालिब और मीर ने भी, कुछ अलग तरह से, ऐसा किया है। निराला, प्रसाद और तुलसीदास ने मुक्तिबोध की तरह ही फैंटेसी के जरिए इतिहास से मुठभेड़ करते हैं। ये सभी मुक्तिबोध के पूर्वज कवि हैं। ये तीन कवि इतिहास के साथ संवाद की प्रक्रिया में फैंटेसी का निर्माण करते हैं। ये अलग बात है कि तीनों एक ही तरह से फैंटेसी का निर्माण नहीं करते। मुक्तछन्द की सटीक व कठिन किन्तु सहजग्राह्य भाषा के प्रयोग के लिए उन्हें कबीर तथा निराला परम्परा को अग्रसर करने वाला काव्य प्रेरक माना जाता है। मुक्तिबोध काव्य की भाषा और शिल्प की पहचान उनके अनूठे प्रतीक, बिम्ब, अलंकार, प्रचुर शब्द का विविधतापूर्ण प्रयोग, मुहावरे–लोकोक्तियों के प्रयोग तथा छन्द विधान के सार्थक प्रयोग के साथ फैंटेसी के रूप में हिन्दी साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान अंकित करती है।

प्रस्तावना – गजानन माधव 'मुक्तिबोध' की रचनाओं के तीन चरण हैं। पहला 1934.35, दूसरा 1953 से 1959 और तीसरा 1959 से 1964। अगर पहले चरण की कविताओं और कहानियों को साथ–साथ देखा जाए और समान प्रश्नों की आवाजाही को रेखांकित किया जाए तो मौटे तौर पर यह प्रतीति होती है कि यथार्थ के प्रेक्षण में बाहरी रूपों का अंकन अपनी बहुलता में आता है। इसके साथ ही यथार्थ के गहरे और विशद अनुभवों के छोर पकड़ते हुए वे आंतरिक अनुभव–संसार के संवेदन–तंत्र के विषम, ऊबड़–खाबड़ मनोजगत में प्रवेश करते हैं। अंदर–बाहर की यह आवाजाही और संक्रमणशीलता उनकी कविता–कहानी को एक नई रचनाशीलता, एक विशिष्ट प्रकार की भावभंगी निर्मित करती है। मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य की स्वातंत्र्योत्तर प्रगतिशील काव्यधारा के शीर्ष व्यक्तित्व थे। हिन्दी साहित्य में सर्वाधिक चर्चा के केन्द्र में रहने वाले कहानीकार भी थे और समीक्षक भी। उन्हें प्रगतिशील कविता और नयी कविता के बीच का एक सेतु भी माना जाता है। मुक्तिबोध 'तारसप्तक' के पहले कवि थे। मनुष्य की अस्मिता, आत्मसंघर्ष और प्रखर राजनैतिक चेतना से समृद्ध उनकी कविता पहली बार 'तारसप्तक' के माध्यम से सामने आई, लेकिन उनका कोई स्वतंत्र काव्य–संग्रह उनके जीवनकाल में प्रकाशित नहीं हो पाया। मृत्यु के पहले श्रीकांत वर्मा ने उनकी केवल 'एक साहित्यिक की डायरी' प्रकाशित की थी।

मुक्तिबोध फैंटेसी के शिल्प में वह पूरी तरह से निपुण थे। शायद इसी कारण फैंटेसी का प्रयोग और मुक्तिबोध, दोनों को एक दूसरे का पर्याय मान लिया गया है। उनके फैंटेसी के शिल्प में पूंजीवादी सभ्यता की आलोचना है। उनकी फैंटेसी एक विराट सांस्कृतिक सन्दर्भ है। फैंटेसी अपने मन की इच्छाओं को पूरी करने के लिए कल्पना द्वारा रची गई दुनिया है। मुक्तिबोध की फैंटेसी में तीव्र छटपटाहट दिखाई देती है। इस छटपटाहट का कारण है मानव समाज की विसंगतिया, अवसरवाद, स्वहित, स्वकल्याण। पूंजीवाद इन विसंगतियों के मूल में है। उन्हों ने समाज की विसंगति के इस यथार्थ को गहरे पकड़ा और अपनी कविता में व्यक्त किया लेकिन यह प्रस्तुतिकरण बौद्धिक न होकर भावुकतापूर्ण रहा जिसके कारण वो अपनी रचना में हमेशा बेचैन रहे। उनके मन के असंतोष के कारण उनमें हमेशा एक द्वंद्व चलता रहता था और इस द्वंद्व की मुक्ति की इच्छा ने उनसे फैंटेसी का निर्माण कराया। उनके अन्दर की बेचैनी ही उनकी कविता का बीज और फल दोनों है। जैसे–जैसे वह जटिल यथार्थ में प्रवेश करते जाते हैं वैसे–वैसे उनकी फैंटेसी भी जटिल होती जाती है। कहीं–कहीं उनकी कविता में फैंटेसी का स्पर्श मात्र है, जैसे 'सूरज के वंशधर, 'जिन्दगी का रास्ता', बारह बजे रात' तथा कहीं उनकी कविता फैंटेसी व यथार्थ के मेल से तैयार हुई है 'मेरे सहचर मित्र' ऐसी ही कविता है। कभी–कभी फैंटेसी में रूपक व प्रतीक होते हैं– 'सूखे कठोर नंगे पहाड', 'ओ काव्यात्मन फणिधर', 'दिमागी गुहांधकार का ओरांगउटांग', 'ब्रह्मराछस'। कुछ कविताएं ऐसी भी हैं जो पूरी–पूरी फैंटेसी हैं– 'भविष्यधारा', 'अन्धेरे में', 'चम्बल की घाटी में' ऐसी ही कविताएं हैं। मुक्तिबोध की महत्वपूर्ण कविता है 'चाँद का मुहं टेढ़ा है।' यह सन् 1942 के बाद लिखी गई जिसमें 42 की घटना को फैंटेसी के माध्यम से कवि ने दिखाया है। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' इस एक पंक्ति में ही उन्होंने जिस फैंटेसी का निर्माण किया है वह अद्भुत है, चाँद क्या है? यह प्रतीक है, पूंजीवादी व्यवस्था का, शोषण तंत्र का जो भारत के सर्वहारा वर्ग के जागने से अपनी वैभवशाली स्थिति में अब नहीं रहा है। उसका सिंहासन डोल रहा है। वह अपनी कविता में फैंटेसी रचकर सरकार व मिल मालिकों की कलई खोलते हैं तथा मजदूरों का समर्थन करते हैं। कविता में आए पेंटर और कारीगर मजदूरों के पक्ष में हैं और हड़ताल से सम्बंधित पोस्टर चिपका रहे हैं। लेकिन पूंजीवादी सभ्यता की खूंखार प्रतीक जंगली बिल्ली जिसके नाखून से हमेशा मजदूरों का खून बहता रहता है

'खून टपकाते हुए नाखून
देखती है माजरा
चिपकाता कौन है
मकानों की पीठ पर
अहातों के भीतर'

'भूल–गलती' मुक्तिबोध की बहुत सारी कविताओं की तरह एक फैंटेसी है। कामायनी के संदर्भ में फैंटेसी पर विचार करते हुए मुक्तिबोध ने दिखाया है कि किसी गहन 'जीवन–समस्या' से प्रेरित 'दीर्घकालीन क्रिया–प्रतिक्रियाओं' से निर्मित जीवन की एक ऐसी पुनर्रचना है, जिसमें 'जीवन–आलोचनात्मक व्याख्यान के सूत्र' समाए होते हैं। 'भूल–गलती' की फैंटेसी में मध्ययुग का वातावरण है। इस कविता में अरबी–फारसी शब्दों का बाहुल्य है, जैसा उनकी किसी कविता में नहीं मिलता।

* शोधार्थी, जैन विश्वविद्यालय, बैंगलोर (कर्नाटक) भारत

औपनिवेशिक आधुनिकता के दमनकारी, तानाशाह, एकांगी, यथार्थवादी, तर्कप्रधान, मशीनी एवं तकनीकी सत्य को चुनौती देने के लिए मुक्तिबोध ने फैंटेसी प्रविधि का प्रयोग किया। लेकिन उत्तर आधुनिकता से उपजी समस्या के दौर में फैंटेसी का महत्त्व और बढ़ गया है। उत्तर आधुनिकता ने यथार्थ को छवियों में बदल दिया है तथा समय को वर्तमान क्षणों में खंडित कर दिया है। उनके द्धारा अर्जित फैंटेसी प्रविधि आज उत्तर आधुनिक वायवीय एवं भ्रममूलक स्वप्न छवियों तथा समय के खंडित क्षणों को साहित्य की दुनिया में चुनौती देने में सर्वाधिक सक्षम कलारूप है। 'अंधेरे में' कविता की समकालीनता इस कसौटी पर और बढ़ गई है। संभवत: फैंटेसी शिल्प के कारण 'अंधेरे में' का काव्य नायक मध्यवर्गीय मिथ्या चेतना से मुक्त होकर वर्ण चेतना से संपन्न होता है। इस कविता के काव्य नायक की सर्वहारा के स्वप्न नायक से एकता का प्रश्न कविता में चेतना और अस्तित्व दोनों स्तरों पर है। इस तरह एक मरते हुए मूल्य का अग्रगामी मूल्य में गुणात्मक रूपांतरण होता है। अंधेरे में की फैंटेसी का अंत व्यक्तित्वांतरित काव्य नायक के इस संकल्प के साथ होता है

'खोजता हूँ पठार...पहाड़...समुन्दर
जहाँ मिल सके मुझे
मेरी वह खोयी हुई
परम अभिव्यक्ति अनिवार
आत्म-सम्भवा।'

'अंधेरे में' फैंटेसी में निर्मित कविता है। स्वाधीनता के छियासठ और भूमंडलीकरण के बाईस वर्षो बाद भारतीय समय, समाज, सत्ता और राष्ट्र का अंधेरा फैंटेसीमय हो गया है। मध्यवर्ग का चरित्र ज्यादा पतित हो गया है। आम जनता से उसका लगभग संबंध विच्छेद हो गया है। सत्ता के साथ वह ज्यादा नाभिनालबद्ध है। बौद्धिक वर्ग पूर्णतरू रक्तपाई वर्ग का क्रीतदास हो गया है। राष्ट्रवाद, वर्गचेतना, सर्वहारा, जनक्रांति आदि शब्द मध्यवर्ग के शब्दकोश से गायब हो गए हैं। मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य के ऐसे कवि हैं, जिन्होंने छायावाद से काव्य रचनाएं आरम्भ की और प्रगतिवाद, प्रयोगवाद व नई कविता की युगधाराओं से जुड़ते हुए काव्य में ऐसी काव्य भाषा और शिल्प का प्रयोग किया जो आगामी रचनाकारों के लिए बहुत बड़ा प्रेरणा स्रोत बनी। मुक्तछन्द की सटीक व कठिन किन्तु सहजग्राह्य भाषा के प्रयोग के लिए उन्हें कबीर तथा निराला परम्परा को अग्रसर करने वाला काव्य प्रेरक माना जाता है। मुक्तिबोध काव्य की भाषा और शिल्प की पहचान उनके अनूठे प्रतीक, बिम्ब, अलंकार, प्रचुर शब्द का विविधतापूर्ण प्रयोग, मुहावरे-लोकोक्तियों के प्रयोग तथा छन्द विधान के सार्थक प्रयोग के साथ फैंटेसी के रूप में हिन्दी साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान अंकित करती है। मुक्तिबोध की सृजनात्मकता इस जटिल यथार्थ की विडंबनाओं को अभिव्यक्त करने की दृष्टि से सर्वथा नई कथनभंगी में करवट बदलती है। अब उन्हें श्रमशील जनगण का चेहरा दिखाई देता है-

'धुंधल में खोये इस
रास्ते पर आते-जाते दीखते हैं
लठधारी बूढ़े से पटेल बाबा
ऊँचे से किसानदादा
वे दाढ़ीधारी देहाती मुसलमान चाचा और
बोझा उठाये हुए
मांएं, बहनें, बेटियाँ
सबको ही सलाम करने की इच्छा होती है।'

मुक्तिबोध की यह महत्वपूर्ण विशेषता रही है की उन्होंने ज्ञानात्मक संवेदना और संवेदनात्मक ज्ञान को कविता में एक साथ रखने पर बल दिया है, न केवल संवेदना से कुछ हो सकता है और न ही ज्ञान से, दोनों ही जरूरी हैं। एक साहित्यिक की डायरी में वह लिखतें हैं- 'फैंटेसी में संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदना रहती है।' इसी के साथ वे यह भी मानते हैं कि व्यक्तित्वांतरण के लिए चिंतन और कर्म, दोनों आवश्यक हैं। आचार रहित विचार का कोई मतलब नहीं है। अगर सिर्फ चिंतन किया जाए, कर्म नहीं तो स्थिति 'ब्रम्हराक्षस' जैसी होगी-

'बावड़ी में वह स्वयं
पागल वृतिकों में निरंतर कह रहा
वह कोठरी में किस तरह
अपना गणित करता रहा
औ मर गया .....'

काल के तीन आयामों में इतिहास के साथ आलोचनात्मक संवाद करने वाले मुक्तिबोध हिन्दी-उर्दू के पहले कवि नहीं हैं। निराला, जयशंकर प्रसाद, तुलसीदास ने ऐसा किया है। कबीर, फैज, फिराक, इकबाल, गालिब और मीर ने भी, कुछ अलग तरह से, ऐसा किया है। निराला, प्रसाद और तुलसीदास ने मुक्तिबोध की तरह ही फैंटेसी के जरिये इतिहास से मुठभेड़ करते हैं। ये सभी मुक्तिबोध के पूर्वज कवि हैं। कविता का उत्तराधिकार भाषा और शैली तक सीमित नहीं होता। भाषा और शैली की समानताएं प्रभाव दिखाती हैं, उत्तराधिकार नहीं। उत्तराधिकार रचना-प्रक्रिया का मामला है। ये तीन कवि इतिहास के साथ संवाद की प्रक्रिया में फैंटेसी का निर्माण करते हैं। ये अलग बात है कि तीनों एक ही तरह से फैंटेसी का निर्माण नहीं करते।

उपसहांर - मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य के ऐसे कवि हैं जिन्होंने छायावाद से काव्य रचनाएं आरम्भ की और प्रगतिवाद, प्रयोगवाद व नई कविता की युगधाराओं से जुड़ते हुए काव्य में ऐसी काव्य भाषा और शिल्प का प्रयोग किया जो आगामी रचनाकारों के लिए बहुत बड़ा प्रेरणा स्रोत बनी। फैंटेसी का सीधा संबंध कल्पना से है , वह हमारी अतृप्त इच्छाओं की तृप्ति का साधन हैं, वह समस्त विधि-विधानों से मुक्त मनुष्य की कल्पना तरंग है, जो देश कालातीत होती है। फैंटेसी का ताना बाना कल्पना बिम्बों में प्रकट होने वाली विविध क्रिया-प्रतिक्रियाओं से बना हुआ होता है। फैंटेसी के शिल्प में मुक्तिबोध पूरी तरह से निपुण थे। शायद इसी कारण फैंटेसी का प्रयोग और मुक्तिबोध, दोनों को एक दूसरे का पर्याय मान लिया गया है। मुक्तिबोध ने समाज की विसंगति के इस यथार्थ को गहरे पकड़ा और अपनी कविता में व्यक्त किया लेकिन यह प्रस्तुतिकरण बौद्धिक न होकर भावुकतापूर्ण रहा जिसके कारण वो अपनी रचना में हमेशा बेचैन रहे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. नेमिचन्द जैन, मुक्तिबोध रचनावली-4,राजकमल प्रकाशन, 1980
2. रामविलास शर्मा भाषा और समाज राजकमल प्रकाशन, 1968
3. गगां प्रसाद विमल मुक्तिबोध का रचना संसार सुषमा पुस्तकालय, दिल्ली 1986
4. गजानन माधव मुक्तिबोधय नयी कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबन्धय राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1971
5. नेमिचन्द जैन, मुक्तिबोध रचनावली भाग-1, राजकमल प्रकाशन, 1980
6. महेश भटनागर मुक्तिबोध का जीवन और काव्य राजेश प्रकाशन, दिल्ली, 1976
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1972
8. गजानन माधव मुक्तिबोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, ज्ञानपीठ प्रकाशन,दई दिल्ली, 1981
9. नरेश मिश्रय अलंकार दर्पण निर्मल पबिलकेशन, दिल्ली, 2001

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) April to June 2017, Vol. I, Issue XVIII

समय और समाज के परिप्रेक्ष्य में साहित्य

डॉ. अमित शुक्ला *

शोध सारांश – समय के साथ समाज में स्थापित मूल्यों में परिवर्तन अत्यावश्यक है। परंतु पुराने के स्थान पर नये स्थापना की प्रक्रिया के बीच एक संक्रमण काल भी आता है, जिसमें पुराने मूल्यों की प्रासांगिकता तो समाप्त हो जाती है, परंतु नए मूल्यों का निर्माण नहीं हो पाता, नि: संदेह आज का दौर कुछ ऐसा ही है। भारतीय, सामाजिक एवं साहित्यिक ढांचे में अत्यधिक परिवर्तन तीव्रगति से हुए हैं, परिवर्तन समय की मांग है। समय के साथ समाज में स्थापित मूल्यों में परिवर्तन अत्यावश्यक है। परंतु पुराने के स्थान पर नये स्थापना की प्रक्रिया के बीच एक संक्रमण काल भी आता है, जिसमें पुराने मूल्यों की प्रासांगिकता तो समाप्त हो जाती है, परंतु नए मूल्यों का निर्माण नहीं हो पाता, नि: संदेह आज का दौर कुछ ऐसा ही है। वैश्वीकरण के आघात से सबसे अधिक आहत भारतीय संस्कृति हुई है। आम आदमी अत्यधिक संकटग्रस्त होता जा रहा है। उसके सामने रोजगार और मूलभूत आवश्यकताओं की समस्या बनी हुई है। षोषण, अत्याचार, घोटाले, हिंसा, और अव्यवस्था की परिस्थितियां सर्वत्र देखी जा सकती हैं। ऐसे समय में साहित्य के हस्तक्षेप की आवश्यकता है। समाज में साहित्य की भूमिका का विश्लेषण करना आवश्यक **साहित्य** समाज की आन्तरिक दशा का दिव्य दर्पण है, तथा सभ्यता और **संस्कृति** का संरक्षक। किसी भी समाज में संजीवनी शक्ति भरने वाला साहित्य ही है यह कहा जा सकता है कि समाज की समूची ज्ञान राशि का संचित कोश ही साहित्य है।

शब्द कुंजी – समय ,समाज साहित्य, परिवर्तन, मूल्य, संस्कृति संरक्षक, दायित्व ।

प्रस्तावना – साहित्य मनुष्य में व्यक्तिगत कलागत मूल्यों का विकास करता है एवं मानव मन को बहुत गहराई में जाकर छूता है। साहित्य की ये शक्ति जिस प्रकार पिछली सदियों में थी उसी रूप में आज की सदी में भी बरकरार है। विश्व इतिहास में जब- जब बड़े आन्दोलन क्रांतियां हुईं साहित्य सदैव समाज के हित-साधक के रूप में कंधा मिलाकर खड़ा रहा है। साहित्य काल और परिस्थिति के अनुसार जब हस्तक्षेप करता है, तब व्यक्ति, समाज और देश में परिवर्तन आता है। **साहित्य** समाज की आन्तरिक दशा का दिव्य दर्पण है, तथा सभ्यता और **संस्कृति** का संरक्षक। किसी भी समाज में संजीवनी शक्ति भरने वाला साहित्य ही है, यह कहा जा सकता है कि समाज की समूची ज्ञान राशि का संचित कोश ही साहित्य है।[1] साहित्य का सामाजिक सरोकार होने के कारण एक सात्यिकार के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने परिवेश और वातावरण के प्रति जागरूक रहे वह अपने आस-पास की सामाजिक समस्याओं को देखे और उन संवेदनाओं को अपने साहित्य में उतारने का प्रयास करे। **सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जी का यह कथन महत्वपूर्ण है** कि यदि तुम्हारे घर के एक कमरे में आग लगी हो तो क्या तुम दूसरे कमरे में सो सकते हो? यदि तुम्हारे घर के एक कमरे में लाश सड़ रही हो तो क्या तुम दूसरे कमरे में प्रार्थना कर सकते हो। यदि हाँ तो कुछ नहीं कहना है। साहित्य भी युग सापेक्ष होता है, युग निरपेक्ष नहीं। साहित्यकार की साहित्यिक प्रतिक्रियाएँ परिवेश और वातावरण जन्य होती हैं। कवि, कहानीकार, उपन्यासकार सभी सामाजिक हैं, और हर युग के साहित्यकार ने विश्व कल्याण के स्पष्ट उद्देश्य को सामने रखकर भले न लिखा हो पर उसके साहित्य में लोक संग्रह स्वयं प्रभूत रहता **है।**[2] **अलेक्जेंडर सोल्जे नित्सिन की यह मान्यता है कि वह** साहित्य जो हमारे समकालीन समाज की धड़कन नहीं है जो समाज की यातना और भय को अभिव्यक्ति नहीं देता जो समय रहते इसे सामाजिक और नैतिक खतरों के प्रति सावधान नहीं करता ऐसा साहित्य, साहित्य कहलाने योग्य नहीं है। वैश्वीकरण के इस दौर में साहित्यकारों का दायित्व और भी बढ़ जाता है। गरीबी, बेरोज़गारी, नौकरशाही, नेतागीरी, अर्थवाद, जातिवाद, प्रांतवाद, भाई-भतीजावाद, भूमंण्डलीकरण, उदारीकरण अश्लीलता, संयुक्त परिवार, विवाह, व्यवस्था आदि से सामाजिक अनुशासन क्षीण हो रहा है। तलाक बढ़ रहे हैं, जनसंख्या वृद्धि अनियंत्रित भीड़ के रूप में परिवर्तित होती जा रही है। आज का मनुष्य संवेदनहीन हो गया है, उसे किसी के दर्द से वास्ता नहीं पर साहित्य इस संवेदनशीलता को जाग्रत करने में और उसके अनुसार समाज और व्यक्ति को सक्रिय बनाने में प्रेरित कर सकता है। यह कहा जा सकता है कि साहित्य समाज के प्रति रचनात्मक सोच और सर्जनात्मक ऊर्जा प्रदान करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, बल्कि वह निभा भी रहा है।[3] देखा जाए तो समाज के संदर्भ में साहित्य की भूमिका हमेशा अमूमन रही है कि यह लोकमानस के स्तर पर परम्पराओं मूल्य मान्यताओं और मान मर्यादाओं की एक निष्पक्ष, संवेदनशील और विवेकयुक्त जाँच करता है और शाश्वत मानवीय मूल्यों और सरोकारों की पैरवी भी। इसी प्रक्रिया में लेखकीय प्रतिभा के अनुरूप अविस्मरणीय चरित्रों का जन्म होता है और उत्कृष्ट साहित्य का भी।[4]

देखा जाए तो साहित्य को जन जीवन, लोक जीवन और समाज से अलग नहीं किया जा सकता किन्तु साहित्य का सम्बन्ध स्पष्ट रूप से भाव और शब्द से है। शब्द का संबंध कर्म से और भाषा का संबंध समाज से है। साहित्य, समाज और मानवीय कर्म की संरचना है। उसमें उसकी अनुभूति की संरचना का प्रयोग होता है। वह समाज के सांस्कृतिक बदलाव का हथियार बन जाता है। यही हथियार लोक जीवन एवं लोक संस्कृति की रक्षा का

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय,रीवा (म.प्र.) भारत

आधार बनता है। लोक चेतना ही वह व्यापक आधार है, जो लोक जीवन को झंकृत करता है और संवेदनशील साहित्यकार को अपने देश की संस्कृति के प्रति आकृष्ट और जागरूक करता है। साहित्य का विस्तार लोक जीवन, लोक साहित्य, लोक चेतना एवं लोक संस्कृति के माध्यम से ही संभव है। अत: लोक चेतना, साहित्य की सर्जनात्मक कल्पना है। ऐसे साहित्य में मनोवैज्ञानिकता एवं मानवीय अनुभूतियॉ परिलक्षित होती है। नगरों, गाँवों, महानगरों में जो सभ्यता पनपी है, वह सतत विकासशील मानवीय चेष्टा की परिणति है और यही चेष्टा संस्कृति एवं लोक संस्कृति को अपने में समाविष्ट रखती है। लोक जीवन की कोख से उत्पन्न साहित्य, केवल लोक साहित्य ही नहीं है, शिष्ट साहित्य भी है। राहुल सांकृत्यायन का कहना सही है कि –लोक जीवन से उत्पन्न लोक साहित्य एवं शिष्ट साहित्य सभी देशों और प्रदेशों में अपना अद्‌भुत सौन्दर्य और माधुर्य रखता है। इसके पीछे लम्बी और अविच्छिन्न परम्परा है। दीर्घजीवी साहित्य के सृजन के लिए हमें लोक जीवन तथा लोक सांस्कृति की विरासत को महत्त्व देना होगा। जो लोग लोक जीवन की परम्परा से कटकर प्रतिबद्ध साहित्य का सृजन कर रहे हैं वे न तो अपना, न अपने समाज का और न अपने देश का भला कर रहे हैं। मानवता के लिए अदम्य प्रेम तथा लोक जीवन को समग्र रूप से देखने के कारण ही साहित्य स्थायी या कालजयी बन सकता है। लोक जीवन निरंतरता का नाम है, यही निरंतरता परम्परा बनती है। यह परंपरा सदा जीवन्त और जागृत नहीं रहती। यदि कोई लेखक उसी जागृत क्षण को पकड़कर साहित्य का सृजन करता है तो वही उसके लेखन का सर्वोत्तम समय है।[5]

लोक **जीवन** और लोक **संस्कृति** में सामूहिक सामाजिकता की चेतना काम करती है, जो पारस्परिक सहानुभूति या प्रेम के आधार पर सबको जोड़ती है। किसी भी तरह के भेदभाव से मुक्त होने के कारण उसकी पाचनशक्ति बहुत तेज है। उसमें आर्य, द्रविड़, कोलकिरात, निषाद और अनेक जनजातीय संस्कृतियों के तत्त्वों का संघटन मिलता है। तथ्य तो यह है कि लोक जीवन के लिए जो भी उपयोगी हुआ वह लोक संस्कृति और उसका साहित्य बन गया। सच यह है कि लोक जीवन में व्याप्त लोक संस्कृति, परम्परा और साहित्य ही भारतीय संस्कृति, परम्परा और साहित्य की जड़ में है। उसके रस से भारतीयता का पौधा हरा भरा रहता है। अगर गहराई से सोचें तो यह पाएंगे कि लोक जीवन और लोक संस्कृति ही भारतीयता की रक्षा करते है। समाज बिखरता है, तो लोक संस्कृति के उत्सव उसे एक करते है। देश यदि प्रदेशों, भूगोलों और भाषा में बँटता है, तो लोक जीवन के गीत ही उसे समेटते है। वे जुड़ाव की संजीवनी है। जहाँ कहीं लोक जीवन, परम्परा और साहित्य की बात होती है, आज का व्यक्ति जो भौतिकता की होड़ और जीवन की यांत्रिकता से पूरी तरह घिर गया है, तत्काल संकीर्णता, पक्षधरता और आंचलिकता का आरोप लगा देता है। लोक संस्कृति और साहित्य ही, वह माध्यम है, जो आज भी देश में और साहित्य में मन की उत्फुल्लता, आशा और आस्था के आवेग को बनाए रखता है। परम्परा और लोक जीवन के साहित्य में व्यक्त संस्कार, उत्सव, रीति रिवाज, लोक मूल्य आदि भी व्यक्ति से बाँधते हैं। जब तक लोक जीवन और परम्परा से उपजीव्य बनाकर साहित्य जीवित है तब तक भारतीय जनजीवन, उसकी एकता और उसकी संस्कृति मर नहीं सकती।[6]

निष्कर्ष यह है कि वैश्वीकरण ने भारतीय गौरवशाली संस्कृति के मूलमंत्र सादा जीवन उच्च विचार, सत्यमेव जयते, वसुधैव कुटुम्बक को अत्यधिक प्रभावित किया है। व्यक्तिवादी विचारधारा प्रबल हुई है। पारिवारिक संबधों में बिखराव, भाईचारे का अंत और गलाकाट स्पर्द्धा ने नैतिक मूल्यों में परिवर्तन कर दिया है। इन परिस्थितियों को देखते हुए आवश्यक है कि उपभोक्ता संस्कृति को बढ़ावा न दें। इसके लिए लोगों में जागरूकता लाना आवश्यक है। यह काम साहित्य कर सकता है। क्योंकि उपभोक्ता संस्कृति, शिक्षा, धर्म, मानवीय संबंध सभी को व्यावसायिक बना रही है, इसलिए इसका विवके तथा ज्ञान से कोई संबंध नही रह गया है। सभी का वस्तुकरण हो गया है। मनोरंजन के साधन जो दिखाते हैं, उसके बाद मनुष्य में करूणा, दुख:, संवेदना के स्थान पर सनसनी के भाव उभरते हैं, जिससे धीरे– धीरे मनुष्य के अंदर संवेदनशीलता, विवेकशीलता और कल्पनाशीलता कम होती जा रही है। साहित्य को संवेदना के उच्च स्तर को जीवंत रखते हुए समकालीन समाज के विभिन्न अन्तर्विरोधों को अपने आप में समेटकर देखना चाहिए एवं साहित्यकार के सत्य और समाज के सत्य को मानवीय संवेदना की गहराई से भी जोड़ने का प्रयास करना चाहिए। आज ऐसे साहित्यकार की आवश्यकता है जो सभी प्रकार से स्वायत्त हो उनके चिन्तन में प्रखरता, स्वाभिमान, और अस्मिता के तत्व प्रबल रूप से सक्रिय हो जब वे किसी भी प्रकार के दबाव से अपने को मुक्त कर लेने की क्षमता अर्जित कर सके तभी वह समाज को एक अच्छा साहित्य दे सकता है। आज के वर्तमान समय का समाज सांस्कृतिक मानवीय मूल्यों के संकट के दौर से गुजर रहा है। चरित्र समाज से गायब होता जा रहा है। ऐसे में साहित्यकार ही साहित्य के माध्यम से समाज में अपना सार्थक प्रभाव डाल सकता है, पर वर्तमान की अनेक समस्याओं के साथ एक सबसे बड़ी समस्या यह है कि आज का व्यक्ति साहित्य से लगातार दूर होता जा रहा है। पाठकों की संख्या घटती चली जा रही है। वैश्वीकरण के इस दौर में ज्ञान और विवेक के बीच जो खाई बन गई है, उस खाई को भरने का प्रयास किया जाना चाहिए।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सूर्य प्रसाद दीक्षित, विदेशों में व्याप्त रूमानी हिन्दी, अक्षरा साहित्य की द्विमासकी म0प्र0 राष्ट्रभाषा प्रचार समिति हिन्दी भवन भोपाल अंक 105 पृष्ठ 32
2. पांचाल परमान्द हिन्दी के प्रति बढ़ती उदारसीनता अक्षरा साहित्य की द्विमासकी म0प्र0 राष्ट्रभाषा प्रचार समिति हिन्दी भवन भोपाल अंक 105 पृष्ठ 29,
3. साहित्य अमृत मासिक पत्रिका आशफ अली रोड नई दिल्ली अक्टूबर 2010 पृष्ठ 25
4. छत्तीसगढ़ विवके, सितम्बर, 2012, भिलाई, पृ. 40,
5. राष्ट्रवाणी, फरवरी, 2012, अंक 5, पुणे, पृ. 27,
6. संवाद और हस्तक्षेप, खंड–09, विजय कुमार देव, आशा शुक्ला
7. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष।

****

हिन्दी कथा साहित्य में दलित चेतना और प्रेमचन्द की जीवंत दृष्टि

डॉ. छविनम श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – आधुनिक युग में जब स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ी जा रही थी। तभी दलित आंदोलन का भी जोर था। एक ओर जहां महात्मा गांधी जैसे समाज सुधारक देश में संगठन के बल पर संघर्ष करना चाह रहे थे, वहीं दूसरी ओर अम्बेडकर जैसे दलित मुक्ति आंदोलन की विस्फोटक विद्रोही चेतना लेकर भारत के राजनीतिक फलक पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने आ पहुँचे थे। वे केवल भारत की आजादी ही नहीं बल्कि अछूतों की हिन्दू धर्म से मुक्ति भी चाहते थे। अछूतोद्धार की भावना को मन में रखते हुए गांधीजी ने अछूतोद्धार कार्यक्रम प्रारम्भ कर दिए। जिसका प्रभाव हिन्दी साहित्य के कथाकारों पर भी पड़ा। हिन्दी के प्रारम्भिक युग के कथाकारों में सर्वप्रथम सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और यशपाल की कहानियों में दलितों के प्रति गहन सहानुभूति दिखाई पड़ती है। निराला की दो लंबी कहानियों 'चतुरी चमार' और 'बिल्लेसुरे' बकरिहा को लिया जा सकता है।

हिन्दी साहित्य में मुंशी प्रेमचन्द ने दलितों के शोषण और उसमें उत्पन्न होती दलित चेतना की अभिव्यक्ति अपने कथा–साहित्य में बड़ी कुशलता से की हैं। उन्होंने किसान के रूप में दलितों को व्यक्त किया हैं। कही–कहीं पर इन्होंने इस शोषण से उबरने के सुझाव भी दिए हैं। शताब्दियों से चली आ रहीं दलित शोषण की परम्परा के विरूद्ध विद्रोह की चिंगारी को इन्होंने पुन: सुलगाने का प्रयास किया हैं। मध्य युगीन संतों ने अपने आक्रोश एवं विद्रोह के जो बीज थे, वह काव्य के रूप में सुप्त अवस्थ में थे और आधुनिक युग में कथा साहित्य के रूप प्रस्फुटित हो उठे। इस विस्फोट से सारा दलित समाज जाग उठा। गांधी और अम्बेडकर के विचार को लेकर नये नये साहित्यकार प्रकाश में आए जिन्होंने मार्क्सवादी दृष्टि अपनाते हुए शोषण एवं अत्याचार का विरोध करते हुए अपनी विद्रोहात्मक अभिव्यक्ति दी हैं।

प्रेमचन्द कहानी के क्षेत्र में आदर्शोन्मुख यथार्थवादी परम्परा के प्रतिस्थापक कहे जाते हैं। प्रेमचन्द ने उपन्यास और कहानी विधा को पहली बार जनजीवन से संपृक्त कर मानवतावाद और उपयोगितावाद को दृष्टि में रखते हुए अपने साहित्य का सृजन किया। प्रेमचन्द दलितों के लेखक थे। 'गोदान' कर्मभूमि रंगभूमि, निर्मला आदि उपन्यासो में इन्होंने किसान अथवा शोषित पीड़ित व्यक्ति के शोषण को प्रस्तुत किया है। 'गोदान में प्रेमचन्द ने ग्रामीण जीवन का सर्वतोन्मुखी चित्रण किया है और किसान की विवशता पूर्ण स्थिति दिखाई है, प्रेमचन्द ने भारतीय किसान को उपन्यास का नायक होरी से सारी बाधाओं और संकेतो के रहते हुए आदर्शवादी बताया है।'

प्रेमचन्द के हृदय में भारतीय कृषकों जो दीन हीन है के प्रति गहन संवेदना और सहानुभूति दिखाई देती है। इन्होंने नारी को भी दलित रूप में प्रस्तुत किया है। नारी जीवन और उसकी सामाजिक पराधीनता के फलस्वरूप तथा सामाजिक अन्याय से मुक्ति को प्रमुखता दी है। इन्होंने स्त्री को पुरूष से श्रेष्ठ बताया है उतना जितना प्रकाश अंधकार से।

'गोदान' भारतीय .कृ षक की महागाथा है। इसमें किसान अपनी मेहनत और पसीने कमाई से अमीरों का उदर पोषण करता है। प्रेमचन्द अपने साहित्य के उद्देश्य से व्यक्ति और समाज दोनों को प्रेरणा देना चाहते थे। वे दलितों में चेतना जागृत कर शोषण से बाहर निकालना चाहते थे। प्रेमचन्द ने सामाजिक व दलित चेतना जागृत करने के लिए आर्य समाज के सुधारवाद, गांधी जी का आत्मपड़न और अहिंसावाद, लियोतालस्ताय के आदर्शवाद, मार्क्स के प्रगतिवाद से प्रभावित होकर इन चारों तत्वों के मेल से बहुमुखी भावना का विकास किया। उन्होंने संभावित सामाजिकता को प्रस्तुत किया है। वे किसान के रूप में होरी के शोषण को सारे दलित समुदाय अथवा ग्रामीण समुदाय, के शोषण की बात कहते है, गोदान के अतंर्गत शोषण और पाखंड का व्यापक रूप में चित्रण हुआ है।

प्रेमचन्द ने केवल जीवन दुर्बल पक्षों तक ही अपने आप को सीमित नहीं रखा बल्कि सर्वत्र यथार्थ बुराईयों का चित्रण करके भी भलाई की प्रेरणा दी हैं। इन्होंने समाज की पाखंडता के यथार्थ चित्रण में काई दुराव छिपाव की नीति नहीं अपनाई। जौहरी का प्रसंग, मालती–खन्ना का रोमांस, धर्म का पाखंड अनेक प्रकार का शोषण तथा समाज की सभ विसंगातियों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया अभिव्यक्ति की हैं।

प्रेमचन्द के कथा साहित्य में दलित, शोषित मानव के प्रति मार्क्स प्रभावित यथार्थ दृष्टि मिलती हैं। इनके साहित्य में क्रांति और वर्ग संघर्ष का रूप प्रस्तुत किया गया हैं–

'समाज को बदल डालो' यह भी कि हमें मिल मालिक खन्ना का समाज भी नहीं चाहिए जहाँ मेहता ओर मालती जैसे बुद्धिजीवी असत्य बना देने का बौद्धिक विकास करते है और जहां ओकार जैसे पत्रकार को भ्रष्टाचार का सहारा लेना पड़ता है जहाँ झीगुरी/नोखेराम/पटेश्वरी/साहूकार परंपरागत स्वार्थ शोषण उल्लू सीधा करते हैं। ऐसे समाज को बदलना होगा।

प्रेमचन्द एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जो संत–काव्य–परम्परा में कल्पित किया गया था जहाँ समभाव की दृष्टि हो। मानववादी समाज जिसमें प्रत्येक मनुष्य समान समझा जाए।

हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचन्द का पदार्पणा एवं अभूतपूर्व घटना थी। पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है कि 'प्रेमचन्द अपने समय के एकमात्र ऐसे साहित्यकार थे, जिनके कारण हिन्दी साहित्य देश की सीमाए लांघकर विदेशों तक जा पहुँचा और सच यह है कि प्रेमचन्द साहित्य का अनुवाद दुनिया की हर भाषा में हो चुका हैं। हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचन्द ही ऐसे कथाकार है जिन्होंने पहली बार भारतीय (हिन्दू) समाज में नरक भोगते दलित को अपनी कहानियों का विषय बनाया, उसकी सम्पूर्ण यातनाओं के

* शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

साथ।'

प्रेमचन्द की यह कहानी हिन्दू समाज दलित जीवन के अन्त: संबधों तथा अंतर्विरोधी को बड़ी सहजता से अभिव्यंजित करती हैं। आज गैर दलित साहित्यकारों के लिए प्रेमचन्द दलित संवेदना के प्रतीक बन गए हैं। प्रेमचन्द के साहित्य में आर्य समाज गांधीवाद और अंतत: मार्क्सवाद का प्रभा दिखाई देता हैं। किन्तु 1930-33 में भारतीय राजनीति एवं समाज पर अंबेडकर का प्रभाव सर्वत्र दृष्टिगोचर होता हैं। प्रेमचन्द की कुछ कहानियों जैसे 'ठाकुर का कुआँ' 'सदगति' और दूध का दाम' जैसी रचनाओं में दलित संवेदना अभिव्यक्त हुई हैं।

इस वक्तव्य में प्रेमचन्द ने दलित हीनता का बोध कराया है उस दौर में जब लोग दलितों का घृणा का पात्र समझते थे और उन पर सवर्ण लगातार अत्याचार कर रहे थे। उन्होंने दलित उत्पीड़न पर कलम चलाकर दलितों के प्रति जो संवेदना और सहानुभूति का उद्गार व्यक्त किया उसका खामियाजा उन्हें 'घृणा का प्रचारक' उपाधि के रूप में भुगताना पड़ा यह बहुत महत्वपूर्ण बात हैं।

प्रेमचन्द ने अछूत भावना की मुख्यत: तीन रूढ़िवादी मान्यताओं के प्रति विद्रोह किया हैं, जिसमें मुख्य है, खाना पान संबंधी नियम शादी का संबंध तथा धार्मिक उत्सव। जिसका प्रमाण 'ठाकुर का कुआँ 'घासवाली' 'सद्गति' दूध का दाम' 'मंदिर', 'मंत्र' तथा 'बाबा का भोग' आदि कहानियां है। इन्होंने हरिजन पात्रों एवं उनकी समस्याओं को समाजिक और आर्थिक स्तर पर प्रस्तुत किया हैं। उन्होंने समाजिक स्तर पर छुआछूत, मंदिर प्रवेश निषेध, वेद पाठ निषेध की समस्याओं को आधार बनाया तथा आर्थिक स्तर पर खेत और मजदूरों किसानों की समस्याओं को उठाया। इन्होंने इन दोनों पहलुओं को उजागर ही नहीं किया बल्कि उस पर शब्द बाणों से तीव्र प्रहार भी किया हैं।

प्रेमचन्द के पश्चात् हिन्दी कथा साहित्य में दलित चेतना की अभिव्यक्ति आठवें दशक में दृष्टिगोचर होती हैं। श्री रमेश कुमार ने अपने एक लेख 'आधुनिक हिन्दी कहानियों में दलित चेतना' में लिखा है कि 'आठवें दशक के समामान्तर आंदोलन के माध्यम से समाज के कमजोर वर्ग की समस्याओं को कहानी का केन्द्र बनाया गया स्वतन्त्रता के पचास वर्ष बाद भी निम्न दलित वर्ग का जीवन बद से बदतर होता चला गया है, ऐसी स्थिति में दलित उन्नायका ने अपनी कहानियों के माध्यम से इस वर्ग के जीवन का यथार्थ निरूपण किया है। इन कहानियों में दलित मानव की वेदना निरन्तर संघर्ष करते रहने की अनिवार्यता सुविधा भोगी लोगों के प्रति उनकी विरोध मुद्रा, प्रतिकूल नारकीय स्थिति में जीने की विवशता और अपने मानवीय अधिकारों के प्राप्ति हेतु आत्मसजगता जागृत हुई हैं।'

इस आत्मसजगता का कारण वस्तुत: सवर्णो का शूद्रो के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार हैं। दलित चेतना को जागृत करने में बहुत समय लगा जिसका कारण था शिक्षा और संगठन का अभाव। अम्बेडकर ने दलितों के प्रति आत्मविश्वास और आत्मसम्मान का भाव जागृत करने के लिए बहुत यातनायें सही तथा संघर्ष करते हुए दलित मुक्ति आंदोलन के रूप में दलित चेतना जागृत की। इन्होंने राजनीतिक शक्ति द्वारा दलितों के लिए संविधान में आरक्षण की व्यवस्था कर सर्वप्रथम उनके अस्तित्व को स्थायित्व देने के प्रयास किया। जिसका प्रभाव समाज, राजनीति एवं साहित्य पर पड़ा अस्मिता के लिए सबसे सषक्त संघर्ष साहित्यिक स्तर पर हुआ। क्योंकि जिस शूद्र के लिए शिक्षा प्राप्त करने का निषेध था, उसके लिए साहित्य में प्रवेश कठिन था। किन्तु स्वतन्त्रता के बाद पढलिख कर साहित्य में आए दलितों ने भी कलम पकड़ी जिसका प्रारम्भ कविता में हुआ। फिर धीरे धीरे कहानी, आत्मकथा, उपन्यास संस्मण सभी विधाओं पर लेखनी तीव्र गति से चली। गैर दलित लेखकों में दलित चेतना को जागृत करने में सर्वाधिक योगदान 'निराला', प्रेमचन्द, शिपप्रसाद सिंह आदि का था। जिन्होंने कथाओं के रूप में एक पृष्ठभूमि प्रदान की और उस पर जिन दलित कथाकारों ने दलित कथा का सृजन किया उनमें सर्वश्री ओमप्रकाश बाल्मिकि, पुरूषोत्तम सत्यप्रमी, मोहनदास नैमिष्राय, रघुनाथ प्यासा दयानन्द बटोही, शिवचन्द्र, कालीचरण स्नेही, सी एल. नैय्यर आदि उल्लेखनीय हैं। इस सभी कथाकारों ने परम्परा से संघर्ष विद्रोह और उसे नकार का स्वर प्रदान किया।

इसके अलावा आधुनिक हिन्दी साहित्य में गैर दलित साहित्यकारों की एक लंबी श्रृंखला है, जिन्होंने दलितों की पीड़ा दर्द, यातना के संत्रास को संवेदनात्मक धरातल पर अभिव्यक्त किया हैं। अमृतलाल नागर का उपन्यास 'नाच्यों बहुत गोपाल' को भी दलित उपन्यास माना जा रहा हैं। किन्तु आठवें, नवें दशक में हिन्दी के दलित कवियों की एक पूरी पीढ़ी साहित्य सृजन में तत्पर हैं। हिन्दी में दलित कहानियों का विकास साहित्य जगत में समृद्ध कर रहा हैं। उनमें कुछ कहानीकार इस प्रकार है, जिन्होंने दलित चेतना और दलित यातना के चित्र अपनी कहानियों में प्रस्तुत किए। उनमें ओंमप्रकाश बाल्मीकि, पुन्नी सिंह, गोपाल आवटे, रघुनाथ प्यासा, डा, दयानन्द 'बटोही', मोहनदास नैमिषराय, डॉ, पुरूषोत्तम सत्यप्रेमी, डॉ, कालीचरण 'स्नेही' सूरजपाल चौहान, भगीरथ मेघवाल तथा श्रीमति कावेरी के नाम महत्वपूर्ण हैं। आधुनिक युग में दलित साहित्य पहचान के संकट से बाहर निकलकर अपनी सच्चाई के स्थायित्व में काफी सफल हुआ हैं।

मध्ययुगीन निर्गण संत कवियों में जिसमें दलित जातियों की बड़ी संख्या थी, साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में समान रूप से उनकी सहभागिता थी। अपनी पहचान उन्होंने स्वयं बनायी थी। उनके पीछे संस्कृति कर्म से जुड़े लोगों की जमात थी। जिसके कारण वे बलौस ढंग से अपनी बातें करते थे। विरूप स्थितियों पर चोट करते थे। स्वतन्त्रता के पश्चात् हिन्दी में दलित साहित्य को एक प्रखर जीवन दृष्टि मिली। बाबा साहब अम्बेडकर ने शिक्षा संगठन और संघर्ष का जो दीप प्रज्ज्वलित किया था, उसने हिन्दी में दलित साहित्य को नयी दिशा दी। हिन्दी में दलित कविता विरोध और नकार की ही कविता नहीं वह मनुष्य की अस्मिता की कविता बनी। दलित साहित्य जीवन की विद्रूपताओं में जूझने का हौसला देता हैं।

हिन्दी साहित्य के दलित अथवा गैर दलित लेखकों जैसे, नागार्जुन, अमृतलाल नागर, शैलेश मटियानी, गोपाल उपाध्याय, जगदीशचन्द्र, मन्नू भण्डारी, गिरिराज किशोर द्वारा लिखित साहित्य भी दलित जाति की पीड़ा को व्यक्त करती हैं। किन्तु दलित साहित्यकारों जैसा आक्रोश या विद्रोह की प्रतिकियात्मक ज्वाला इन गैर दलित लेखकों में नहीं हैं। प्रेमचन्द एक ऐसे लेखक है, जिन पर ज्योतिबाफुले तथा अम्बेडकर के जीवन दर्शन का प्रभाव दृष्टिगोचार होता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक साहित्य - नंद दुलारे वाजपेयी।
2. मेरा दलित चिंतन - डॉ. एन.सिंह पृष्ठ 78
3. मेरा दलित चिंतन - डॉ. एन.सिंह पृष्ठ 79
4. चिंतन की परम्परा और दलित साहित्य - डॉ. श्यौराज सिंह पृष्ठ 135
5. मेरा दलित चिंतन - डॉ. एन.सिंह पृष्ठ 80

कबीर पर आधारित जीवनीपरक उपन्यास 'लोई का ताना' – एक अनुशीलन

डॉ. माधुरी उपाध्याय *

प्रस्तावना – 'लोई का ताना' जीवनीपरक उपन्यास कबीर के जीवन पर आधारित हैं। रांगेय राघव ने कबीर के जीवन का सम्पूर्ण चित्र 'लोई का ताना' जीवनीपरक उपन्यास में किया हैं। जीवनीपरक उपन्यास में किसी व्यक्ति विशेष का सम्पूर्ण चित्रण किया जाता हैं तथा उन परिस्थितियों का भी चित्रण किया जाता है कि वह कैसे एक सामान्य मनुष्य से महामानव बना।

'लोई का ताना' जीवनीपरक उपन्यास रांगेय राघव द्वारा कबीरदास के जीवन को आधार बनाकर लिखा गया हैं। अनाथ बालक कबीर का पालन–पोषण नि: संतान नीरू और नीमा जुलाहा ने किया। कबीर की पत्नी का नाम लोई व पुत्र का नाम कमाल था।

'लोई का ताना' में उपसंहार से पहले, सूर्यास्त हो गया, पिता का बना, लोई का ताना, मरजीवे को तो देखो शीर्षकों के माध्यम से कथानक के विकास के साथ–साथ, पात्र की स्थिति, घटनाओं के क्रम द्वारा, पाठक को सोचने का आधार मिलता हैं। इस उपन्यास के कथानक को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सही रूप में विभक्त किया हैं।

राघवजी ने कबीर के व्यक्तित्व के साथ ही उस समय की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक परिस्थितियों का भी चित्रण किया हैं। उस समय समाज विरोधाभास के कारण टूट रहा था। वर्णभेद बहुत ज्यादा व्याप्त था। उच्चवर्ण के लोग निम्नवर्ण के लोगों के साथ पशु के समान व्यवहार करते थे। छूआछूत बहुत ज्यादा व्याप्त था। इन पंक्तियों से यह बात स्पष्ट होती है[1] 'यही कि जिनकी जात नीच है, उनके लिये ये ब्राह्मण और ये मुल्ला, दोनो समान है, वे हिन्दु समाज के जात–पात के भेद को देखकर फूट डालकर अपने फायदे के लिए लोगों को मुसलमान बनाकर उनका इस्तेमाल करते है और इस तरह संस्कृति और धर्म की रक्षा के नाम पर नीचों को ऊपर उठने के अहंकार के नाम पर हिंसा पलती है, घृणा बढ़ती हैं। वह मनुष्य को फिर जातियों में बाँटती है और छुआछूत बढ़ती हैं।'[1]

'लोई का ताना' उपन्यास में दो पात्र है – कबीर और लोई। दोनों एक दूसरे के पूरक है। कबीर निम्नवर्णी जुलाहा जाति का था, जिसमें रह कर बचपन से उच्च वर्ण का तिरस्कार और ताड़ना सही थी। कबीर के विद्रोह को अधिक व्यापक बनाने में लोई का बड़ा हाथ था। सम्पूर्ण उपन्यास में लोई का चरित्र कबीर के व्यक्तित्व को निखारता हैं।

'कबीर जिसने कभी कागद मसि हाथ से नहीं छुआ था जो देखता था, महसूस करता था..... फौरन कह डालता था। उसकी संवेदनशीलता इतनी मर्मस्पर्शी थी कि हर अभिव्यक्ति काव्य बन जाती थी। अपने युग की जनता को आवाज देने वाले कबीर का विद्रोही रूप उसके चरित्र का एक पक्ष था । उसके दूसरे पक्ष की पूरक थी .....लोई ।'[2]

उस समय की स्त्री जैसे लोई, नारी होने के साथ ही अपने कार्य क्षेत्र का दायित्व बाँटकर कहती है। 'तू कमा के गेहूँ, चना, जौ ला। मैं पीस के रोटी करूंगी। तू खा और मुझे खिला। अपना काम तू कर अपना काम मैं करूँगी।'[3] इस प्रकार उस समय स्त्री स्वयं भी और अपने जीवन साथी को भी दायित्व का बोध कराने वाली हैं।

लोई का चरित्र सशक्त रूप में उपन्यास में दिखाई देता हैं। कबीर के व्यक्तित्व को निखारने में लोई का महत्वपूर्ण योगदान हैं। लोई, कबीर की साथी बनकर, व्यक्तिगत हित की जगह व्यापक हित को महत्व देती हैं।

कबीर का मुख्य संदेश प्रेम का हैं। कबीर ने भारत के सांस्कृतिक जन–जागरण की नींव डाली। भाषा में कबीर ने क्रांति की व जनभाषा का प्रयोग रचनाओं में किया। कबीर नि:संदेह तत्कालीन जीवन में क्रांति का बीज था। रांगेय राघव ने इस उपन्यास के माध्यम से तत्कालीन समय की राजनैतिक एवं सामाजिक परिस्थिति का चित्रण किया हैं। उस समय मुगल शासक सिंकदर लोदी का शासन था। वर्ण व्यवस्था के कारण उच्चवर्ण और निम्नवर्ण बँटे हुए थे। प्रचलित जनश्रुतियों के आधार पर रांगेय राघव ने कबीर का जीवन चरित्र लिखा। कबीर ने हिन्दु और मुसलमान दोनों ही सम्प्रदाय के लोगो के अंधविश्वास पर कटाक्ष किया। रांगेय राघव ने कबीरदासजी के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि संसार में गृहस्थ में रहकर भी ईश्वर भक्ति की जा सकती हैं। उन्होंने माँगने वाले साधु–संन्यासियों पर कटाक्ष करते हुए कहा है कि जब तक जीवित है अपना कर्म करते रहो। कबीर ने तत्कालीन समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, कुरीतियों, कुप्रथाओं पर अपने दोहो के द्वारा जोरदार प्रहार किया हैं।

उनकी रचनाओं में हिन्दु, मुसलमान दोनों के ऊपर कटाक्ष किया हैं। कबीर पढ़े–लिखे नहीं थे। वे तो फौरन सुनाने वालो में थे। धर्म के नाम पर हिंसा करने वालो के घोर विरोधी थे।

'लोई का ताना' नाम से ही पता चलता है कि लोई के शाश्वत् प्रेम के ताने बाने ने ही कबीर को कालजयी बना दिया।

'लोई का ताना' की भाषा शैली उस युग के अनुकूल हैं। उपन्यासकार ने उस युग में प्रचलित शब्दों का प्रयोग करके वातावरण का जीवंत चित्रण किया है, उपन्यास में सरल भाषा का प्रयोग है, साथ ही भाषा के द्वारा पात्रों के मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति एवं मन की गहराइयों का सूक्ष्म चित्रण है।

'लोई का ताना' उपन्यास में बहुत सारे गीत मिलते हैं। लेकिन गीत ऐसे स्थान पर लिए गए जिसमें कि पात्र की मनोभावनाओं की जानकारी भी मिलती हैं और पाठक को भी उस स्थान पर गीत की आवश्यकता महसूस होती हैं। यह गीत सहज व स्वाभाविक इसलिए भी लगते है कि कबीर ने कागज को स्पर्श भी नहीं किया था। वो फौरन सुनाने वालों में से थे। कबीर

* 4/71, नर्मदा एप्रोच रोड़, मण्डलेश्वर, जिला–खरगोन, (म.प्र.) भारत

की अधिकतर रचनाएँ लोक भाषा में है, इसलिए सीधे पाठकों के हृदय को छूती हैं। कबीर लोगो के कहने पर तथा कभी-कभी परिस्थिति के आधार पर सहज, स्वाभाविक गीत गाने लगते हैं जैसे -

'महाराज। कल तो उसने गजब कर दिया। कुछ सिपाही जुलाहों को मार रहे थे। कुम्हार चाक चला रहा था। कबीर आगे बढ़ आया और ललकारकर बोला-माटी कहै कुम्हार से तू का रूँदे मोहि, इक दिन ऐसा होयगा हौं रोदोंगी तोहि।'[4]

निष्कर्ष - 'लोई का ताना' एक सफल जीवनीपरक उपन्यास हैं। रांगेय राघव ने सबसे पहले कबीर के जीवन को औपन्यासिक रूप में प्रस्तुत किया हैं। यह इस रचना की प्रमुख विशेषता हैं। साथ ही राघवजी का उद्देश्य कबीर को एक महान पुरूष एवं जननायक के रूप में प्रस्तुत करना हैं। साथ ही जीवन संघर्षो के बीच समाज के लिए कबीर ने जो योगदान दिया है, उसका भी, चित्रण किया हैं। 'लोई का ताना' उपन्यास में कबीर की कथा कमाल द्धारा सुनाई जाती हैं। इस प्रकार कथा को उपन्यासकार ने विस्तृत आयाम दे दिया हैं। कबीर के जीवन की विभिन्न घटनाओं का वर्णन उपन्यास में होने से पूरी रोचकता भी बनी रहती हैं। इसमें लेखक ने आधुनिक शिल्प का भी प्रयोग किया हैं।

उपन्यासकार ने 'लोई का ताना उपन्यास में कबीर को लोकनायक के रूप में चित्रित किया हैं। कबीर व लोई दो प्रमुख पात्र उपन्यास में हैं।

उपन्यास में कबीर को साहसी, निर्भीक, अदम्य उत्साह से भरा हुआ तथा मानवतावादी के रूप में प्रस्तुत किया हैं। कबीर ने समस्त जनता को मानवता के कल्याण का रास्ता दिखाया। कबीर जो देखते थे, महसूस करते थे, उसे फौरन कह डालते थे। वे भारतीय संस्कृति के नाम पर भेदभाव वाले ब्राह्मणवाद को नहीं मानते थें।

कबीर ने जीवनभर रूढ़ियों, अंधविश्वासों का विरोध किया। कबीर ने तो भारत के सांस्कृतिक जन-जागरण की नीव डाली थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोई का ताना - रांगेय राघव - पृ.क्र. 12
2. हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यास - एक अध्ययन - डॉ संगीता सहजवानी- पृ.क्र.732 - अमन प्रकाशन संस्करण 2009
3. लोई का ताना-रांगेय राघव - पृ.क्र.74
4. लोई का ताना - रांगेय राघव - पृ.क्र. 45 - राजपाल एण्ड सन्स संस्करण 2007

****

वैष्णव पुराणों में नीतिपरक वचन

डॉ. संगीता मेहता * मुकेश बर्मन **

प्रस्तावना – पुराण साहित्य भारतीय सभ्यता और संस्कृति के मूलाधार हैं। पुराणों की संख्या 18 हैं, जिन्हें वर्ण्य–विषय वैशिष्टय के आधार पर वैष्णव पुराण, शैव पुराण और शाक्त पुराण प्रभृति रूप में विभक्त किया हैं। वैष्णव पुराण में भागवत पुराण, विष्णु पुराण, नारद पुराण, और गरूड़ पुराण आते हैं। ये पुराण आधुनिक युग में भारतीय संस्कृति के ज्ञान और कर्म परक नीति युक्त वचनों के स्रोत हैं। नीति युक्त वचनों ने पूर्वकाल से ही समग्र समाज को प्रभावित किया हैं, नीति युक्त वचन का समावेष पुराणों की सार्वजनिक व सार्वकालिक उपयोगिता के द्योतक हैं। नीति युक्त वचन ग्रन्थ के महत्व को स्वंय ही सिद्ध करने में परम सक्षम होते हैं। नीति युक्त वचनों के साथ–साथ पुराणों में इतिहास व भूगोल के प्रमाणिक प्रसंग उपलब्ध हैं। नीति युक्त वचनों में ज्ञान विज्ञान लोकव्यवहार एवं समाज को उन्नत करने वाले भाव निहित हैं। नीति – स्त्री (स.–नी+क्तिन्)(वि. नैतिक) उचित राह पर चलने की क्रिया या भाव। ऐसा भाव आचार या अनुकरणीय व्यवहार जो सबकी दृष्टि में सर्व हितैशी हो **(मानक हिन्दी कोष, पेज नं. 313)**। पुराकाल से ही संस्कृत साहित्य समाज के उन्नयन का कारक रहा हैं। वैष्णव पुराणों में वर्णित नीति निर्देश सिद्धान्तों का प्रतिपादन प्रशंसनीय हैं। सामान्यत: जनप्रवाद हैं कि पुराण साहित्य भक्ति व ईश्वर की उपासना का उत्कृष्ट स्रोत हैं, परंतु यह नीति युक्त वचनों का भी अथाह सागर हैं।

कर्म, शुभाशुभ कर्म फल, आचार,विचार शुद्धी, कर्तव्य–अकर्तव्य बोध, सदाचार सत्संगति, विद्धानों से वार्ता, सभी से मित्रता, लोक व्यवहार आदि विषयों से सम्बद्ध अनेक सूक्तियाँ हैं। इनमें कतिपय सूक्तियाँ उदाहरण स्वरूप यहाँ प्रस्तुत हैं– राजा पृथु भरी सभा में सज्जनों का अभिवादन कर नीति वचन करते हैं–

कर्तु: शास्तुरनुज्ञातुस्तुल्यं यत्प्रेत्य तत्फलम्।।

(भागवत पुराण 4–21–26)

अर्थात् कोई भी कर्म हो मरने के अनन्तर उसके कर्त्ता, उपदेष्टा और समर्थक को उसका समान फल मिलता हैं। शाश्वत सन्देश देने वाली यह सूक्ति समस्त मनुष्य जाति के लिए एक महान सीख हैं, किसी दुष्ट का साथ दे या समर्थन भी करे तो उस कर्म का दुष्परिणाम उसके सहयोगी को आवष्य भोगना पड़ता हैं। द्रोपदी की दुर्दशा की साक्षी पूरी राज्य सभा होती हैं उनमें सभी को समान रूप से दण्ड मिला चाहे वह गुरू द्रोण हो या पितामाह भीष्म। कर्मो का नाश होता हैं या नहीं?

नारद की जिज्ञासा की पूर्ति हेतु सनकजी नीति युक्त वचन कहते हैं–

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ।।

नारद पुराण पूर्वभाग 31–70

अर्थात् किए गए शुभ–अषुभ कर्मो का फल अवश्य ही भोगना पड़ता हैं। सुखद हो या दु:खद हो उसके कर्त्ता को उसके समस्त फल का भोग करना ही पड़ता हैं, यह नष्ट नहीं होता हैं इसका प्रभाव अनेक जन्मों तक विद्यमान रहता हैं।

श्रीकृष्ण भी कर्म फलों के विषय में गरुड़ से कहते हैं –

वाचैव यत्कृतं कृतंचैव तु कायिकम्
मानसं च तथा कर्म कृतं भुङ्क्ते शुभाषुभम्।।

गरुड़ पुराण प्रेतखण्ड 18–03

अर्थात् शुभ हो या अशुभ वाणी, शरीर और मन से जो भी कर्म या चिन्तन किया गया हैं, मनुष्य को उस कर्म का फल भोगना पड़ता हैं। सनक जी मार्कण्डेय मुनि के चरित्र का वर्णन करते हुए नारद को कर्मभ्रष्ट पुरुष के विषय में कहते हैं –

य: स्वाचारपरिभ्रष्ट: सांगवेदन्तगोऽपिवा
स एव पतितो ज्ञेयो यत: कर्मबहिष्कृत:।।

नारद पुराण पूर्वभाग 4–23

जो मनुष्य छहो अंगो सहित वेदों और उपनिषदों का ज्ञाता होकर भी अपने आचार से हीन है उसे पतित ही समझना चाहिए क्योंकि वह कर्मभ्रष्ट हैं। नीति से ही आचार–विचार शुद्ध व परिष्कृत होते हैं। नीति परक वचन मनुष्य को कर्म अकर्म के भेद से अवगत कराते हैं। यह सर्वविदित हैं कि इस संसार में कोई अत्यन्त सुखी हैं तो कोई अत्यन्त दु:खी उसकी इस अवस्था का कारण उसके ही पूर्वकृत् कर्मो का प्रतिफल हैं, क्योंकि

जुगुप्सितं कर्म विगर्हयन्ति।।

भागवत पुराण 1–7–14

नीच कर्म की सभी निन्दा करते हैं। जब तक मनुष्य सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल व्यवहार करते हैं, तब तक उनकी मान–प्रतिष्ठा यथावत् बनी रहती हैं। यदि जीव निन्दित कार्यो में प्रवृत्त रहता हैं, तो वह सर्वत्र निन्दा का पात्र बनता हैं, उक्त कथन से यही परिणीत होता हैं, कि निन्दित कार्य सदैव दु:ख को ही प्राप्त करते हैं।

महर्षि और्व नीति उपदेश के अन्तर्गत विद्धान पुरुष के विषय में राजा सगर को कहते

विरोधं नोत्तामैर्गच्छेन्नाधमैश्च सदा बुध:।।

अर्थात् बुद्धिमान् पुरुष उत्तम अथवा अधम व्यक्तियों से विरोध न करें। सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने हेतु सज्जनों को नीति युक्त विचारों का मन्थन करना परम आवष्यक हैं। और्वजी सज्जनों के विषय में कहते हैं –

नारभेत कलिं प्राज्ञष्छुष्कवैरं च वर्जयेत्

* प्रध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (संस्कृत) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (संस्कृत) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अप्यल्पहानिस्सोढव्या वैरेणार्थागमँ त्यजेत्।।

विष्णु पुराण 3-12-23

प्राज्ञ पुरुष विवादों से दूर रहे और वैर को वर्जित करें, अल्प हानि वहन करके भी वैर से प्राप्त अर्थ का त्याग करें। उक्त व्यवहार मनुष्य को परम शांति व हर्षदायक हैं। मनुष्य सामाजिक व्यवस्था का अंग हैं, अत: उसके द्वारा किए गए प्रत्येक कार्य का समाज पर प्रभाव पड़ता हैं। इसलिए इसके विषय में सूतजी का कथन हैं कि मनुष्य को निम्न कार्यो का सम्पादन करते समय लज्जा नहीं करनी चाहिए-

धनप्रयोगकार्येषु तथा विद्यागमेषु च
आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्ज: सदा भवेत्।।

गरुड़ पुराण 1-110-25

धन प्रयोग के कार्यो में विद्या के आगमन में और भोजन के व्यवहार में मनुष्य को सर्वदा लज्जा त्याग देना चाहिए। यदि इन कार्यो में मनुष्य लज्जावश कृपणता दर्शाता है, तो वह धन का उचित उपयोग नहीं कर पाता और अल्प विद्या से उपहास का पात्र बनता हैं।

मनुष्य जब तक मौन रहता हैं, तब तक उसके गुण-दोष प्रकट नहीं होते परंतु उसके बोलने से उसमें उपस्थित गुण-दोष व स्वभाव स्वंय ही उजागर हो जाते हैं। महर्षि और्व राजा सगर को वाणी की विशेषता के विषय में कहते हैं कि -

सत्यं यत्परदु:खाय तदा मौनपरो भवेत्।।

विष्णु पुराण 3-12-43

अर्थात् यदि सत्य बोलने से दुसरों को दु:ख हो तो तब मौन रहना चाहिए। सत्य किसी की पीड़ा कारण बने तो ऐसे क्षण ज्ञानवान् पुरुष अपने विवेकशीलता का परिचय मौन रहकर दे, यही नीति हैं।

मनुष्य कोप्रत्येक क्षण सदाचार का पालन करना चाहिए। श्री पाराषरजी सद्व्यवहार के विषय में मैत्रेयजी से कहते हैं -

समुल्लङ्ध्यसदाचारंकश्चिन्नप्रोतिशोभनम्।।

विष्णुपुराण 3-17-2

सदाचार का उल्लघंन करके कोई भी शोभा नहीं पाता। सदाचार ही मनुष्य का आत्मीय अंलकरण हैं, जो दिव्य रूप प्रदान करता हैं। सूर्यवंशीय राजा वृक का पुत्र राजा बाहु सहपत्नी वन गमन करते हैं, तब उनकी प्रजा राजा के अपयश के विषय में कहती हैं -

नास्त्यकीर्तिसमो मृत्युर्नास्ति क्रोधसमो रिपु:
नास्ति निन्दासमं पापं नास्ति मोहसमासव:
नास्त्यसूया कीर्तिर्नास्ति कामसमोऽनल:
नास्ति रागसम: पाषो नास्ति संग-समं विषम्।।

नारद पुराण 1-7-41,42

सनक जी भावशुद्धि के विषय में नारद से कहते हैं -

भावशुद्धि विहीनानां समस्तं कर्म निष्फलम्।
तस्माद्रगादिकं सर्वं परित्यज्य सुखी भवेत्।।

नारद पुराण 1-33-102

भावशुद्धि बिना समस्त कर्म निष्फल होते हैं, इसलिए रागादि समस्त विकारों का त्याग कर सुखी होना चाहिए। सर्वविदित हैं कि मनुष्य का जैसा खान-पान और वातावरण होगा, उसका चित्त भी उसके समान संयमी या उद्वेलक होगा। छन्दोग्योपनिषद में भी अन्त:करण शुद्धि के विषय में कहा गया हैं -

आहारशुद्धो सत्त्वशुद्धि: सत्त्वशुद्धौ चित्त शुद्धि:।
ध्रुवा स्मृति: स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्ष:।।

छन्दोग्योपनिषद 7-26-2

अर्थात् आहार शुद्धि होने पर अन्त:करण की शुद्धि होती हैं। अन्त:करण की शुद्धि होने पर निश्चय स्मृति होती हैं। स्मृति लाभ होने पर सम्पूर्ण ग्रन्थियों की निवृत्ति होती हैं।

नीतिपरक वचनों के अन्तर्गत सूतजी कार्यो की सार्थकता के विषय में कहते हैं -

तन्मंगलं यत्र मन: प्रसन्नं तज्जीवनं यन्न परस्य सेवा।
तदर्जितं यत्स्वजनेन भुक्तं तद्गर्जितं यत्समरेरिपूणाम्।।

गरुड़ पुराण 1-115-54

मंगल वही हैं, जिसमें मन प्रसन्न हो जीवन वही हैं, जिससे दुसरों की सेवा हो, अर्जित धन वही जिसका स्वजन उपभोग करे और गर्जना भी वही हैं जो शत्रु को घात करें। इस क्षणभंगुर संसार में मनुष्य सुख की प्राप्ति हेतु अनेक वस्तुओं का संग्रह करता हैं, परंतु सुख तो उसके आचरण पर निर्भर रहता हैं। जीवन में कभी अवसाद न हो इसके विषय में सूतजी का कथन हैं -

उत्तमै: सह साङ्त्यं पण्डितै: सह सत्कथाम्
अलुब्धै: सह मित्रत्वं कुर्वाणो नावसीदति।।

गरुड़ पुराण 1-108-12

उत्तम जनों का संग, विद्धानों से वार्ता और अन्यजनों से मित्रत्व का भाव रखने वाले को अवसाद नहीं होता। अत: मनुष्य को चाहिए कि -

त्यज दुर्जनसंसर्ग भज साधुसमागमम्।।

गरुड़ पुराण 1-108-26

बुद्धिमान गहन विचार करके ही अपने कार्य का शुभारम्भ करे। सूतजी का कथन हैं-

चलेत्येकेन पादेन तिष्ठत्येकेनं बुद्धिमान्
न परीक्ष्य परं स्थानं पूर्वमायतनं त्यजेत्।।

गरुड़ पुराण 1-109-4

श्री भगवान यममार्ग का निरुपण करते हुए गरुड़ से गर्व के विषय में कहते हैं -

को गर्व: क्रिते तार्क्ष्य क्षणविध्वंसिभिर्नरै:।।

गरुड़ पुराण प्रेरक खण्ड 15-25

क्षण भर में विध्वंस को प्राप्त होने वाले मनुष्यों का गर्व करना व्यर्थ हैं। वामन देव अर्थ संग्रह के विषय में राजा बलि से कहते हैं-

वित्तं यावत्प्रयोजनम्।।

भागवत पुराण 8-19-27

बालक ध्रुव को पीड़ा से मुक्त करने हेतु देवी सुनीति सम्पत्ति के विषय में कहती हैं -

सुशीलो भव धर्मात्मा मैत्र: प्राणिहिते रत:
निम्नं यथाव: प्रवणा: पात्रमायान्ति सम्पद:।।

विष्णुपराण 1-11-24

अर्थात् सुशील, धर्मात्मा सब के मित्र और प्राणियों का हित करने में तत्पर बनों क्योंकि नीचि भूमि की ओर ढलकते जल की भाँति सम्पत्ति भी सत्पात्र की ओर आती हैं। अत: नीतियुक्त कार्यो का सम्पादन करने वाला पुरुष ही सत्पात्र हैं, जो समस्त सम्पत्तियों का अधिपति बनता हैं।

नीतियुक्त कथनों से अलंकृत हितोपदेश में नारायण पण्डित ने कहा हैं -

नये च शौर्यं च वसन्ति सम्पद:।।

नारायण पण्डित हितोपदेश 3-116

अर्थात् नीति और पराक्रम में ही सम्पत्तियों का वास होता हैं। धन उतना ही संग्रह करे जितने की अवश्यकता हो। प्रयोजन से अधिक धन का संग्रह मनुष्य में तमोगुण की वृद्धि करता हैं। अर्थ के वृक्ष पर बैठा पुरुष काम व लोभ के फलों का ही आस्वादन करता हैं।

सूतजी कुटिलता के विषय में शौनक से कहते हैं–

स्त्रीणां नैव तु विश्वासं दुष्टानां कारयेद्बुध:
विश्वासे य: स्थितो मूढ: स दु:खै: परिभूयते।।

भागवत पुराण महा. 5–14

बुद्धिमान पुरुष को दुष्टा स्त्रियों पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए, जो मूर्ख इनका विश्वास करता हैं, उसे दु:खी होना पड़ता हैं। बुधजन सर्वदा अपने विवेक से अन्य व्यक्तियों के व्यवहार की परख कर और गहन विचार करके ही विश्वास करते हैं। आत्मदेव व धुन्धली का पुत्र धुन्धुकारी काम व भोग के वशीभूत होकर अत्यन्त क्रूर कर्म करने लगा, जिनके लिए वह धूर्त बनकर भोग की सामग्री एकत्रित कर रहा था उन्हीं कुलटा स्त्रियों ने मिलकर उसका वध कर दिया व लोगों के पुछने पर कह देती थी कि हमारे प्रियतम धन की लालसा में अबकी बार कहीं दूर चले गए। उक्त वृत्तान्त धूर्त और कामी पुरुषों के लिए प्रेरणास्रोत हैं।

मनुष्य के उत्तम निवास के विषय में सूतजी कहते हैं–

स बन्धुर्यो हिते युक्त: स पिता यस्तु पोषक:
तन्मित्रं यत्र विश्वास: स देशो यत्र जीव्यते।।

गरुड़ पुराण 1–108–15

वैष्णव पुराणों में अनगिनत नीतिवचन समाहित हैं। जितने भी प्रसंग उपलब्ध होते हैं, उनमें नीति अथवा लोकव्यवहार का उत्कृष्ट वर्णन हैं। इन नीति युक्त प्रसंगों से इनका एक विशेष रूप प्रतिबिम्बित हुआ हैं, जो पाठक को सहज ही प्राप्त होता हैं। इन वचनों का पालन व आत्मसात जीवन को सार्थकता प्रदान कर अवसाद से मुक्त करता हैं।

वर्तमान परिप्रक्ष्य में मनुष्य विलासिता व भव्यता की ओर अधिक आकृष्ट हो रहा हैं। अपने मूल स्वरूप को विस्मृत कर क्षणिक सुखों का अनुयायी बनता चला जा रहा हैं। इस विचारणीय स्थिति से उबरने का सही उपाय स्वाध्याय हैं। भारतवर्ष में जन्म लेना ही सौभाग्य हैं, क्योंकि भारत देश की सभ्यता व संस्कृति का पोषण करने वाली संस्कृत भाषा हैं। जो विश्व बन्धुत्व पोषण की भावना लिए आदिकाल से विद्यमान हैं। अत: शास्त्रों का अध्ययन कर उनके अमृत समान विचारों से विशाद रूपी आवरण से मुक्त हों ऐसी अपेक्षा हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. श्रीमद्भागवत पुराण – सावित्री ठाकुर प्रकाशन, वराणसी।
2. विष्णु पुराण – गीताप्रेस, गोरखपुर।
3. नारद पुराण – हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
4. गरुड़ पुराण – नाग प्रकाशन, दिल्ली।
5. भर्तृहरी शतक – न्यू साधना पॉकेट बुक्स, दिल्ली।

****

संगीत की उत्पत्ति - दृष्टिकोण

प्रो. विन्ध्या मरावी *

प्रस्तावना - 'संगीत के ऐतिहासिक दृष्टिकोण को दृष्टिगत करें, तो संगीत की उत्पत्ति के सम्बंध में कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता, क्योंकि संगीत प्राचीन काल से ही प्रकृति के गोद में पले मानव के प्रयत्नों से ही पनपा है और सदा से ही मनुष्य के हृदय को झंकृत और मन को आनंदित करता आया है।'

संगीत की उत्पत्ति के सम्बंध में अलग-अलग धारणाएँ ग्रंथों में मिलती है, इनमें से कुछ धार्मिक आधार कुछ प्राकृतिक व मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से संगीत की उत्पत्ति मानते हैं। संगीत अनादि है, ऐसा भी कहा गया है कि मनुष्य के साथ-साथ ही संगीत का जन्म पृथ्वी पर हुआ। सत्य यही है कि संगीत सप्त स्वरों से निकली लहरें हैं जो जल की धारा की तरह सदैव प्रवाहित होती रहती है।

संगीत के जन्म सम्बंधी प्राकृतिक दृष्टिकोण - संगीत का उद्‌भव स्थल प्राकृतिक ध्वनियों का अनुकरण है। प्रकृति और संगीत का सीधा सम्बंध जोड़ते हुए अनेक विद्धानों ने संगीत को प्रकृति की आत्मा कहा है। अरब के सुप्रसिद्ध इतिहासकार ओलासीनिज्म ने अपनी पुस्तक 'विश्व का संगीत' में संगीत का जन्म बुलबुल नामक चिड़िया से माना है। उस चिड़िया की ध्वनि से प्रभावित होकर आदिमानव उसकी चहक की नकल करके ही स्वर निकालते व आनंदित होते थे। संगीत के जन्म के सम्बंध में बहुत सी कथाएँ प्रचलित है। हिन्दी साहित्य में भी यह माना गया है कि सातों स्वर विभिन्न पशु-पक्षियों की ध्वनि से प्राप्त हुए हैं। दामोदर पंडित के अनुसार 'संगीत के सात स्वर सात विभिन्न पशु-पक्षियों की ध्वनि की देन है। मोर से षडज, चातक से ऋषभ, बकरा से गंधार, क्रौंच से मध्यम, कोयल से पंचम, मेंढक से धैवत और हाथी से निषाद स्वर की उत्पत्ति मानी गई है।' इस प्रकार अनेक पाश्चत्य एवं भारतीय विद्धानों ने इस विषय में अपने विचारों को प्रकट किया तथा किसी ने बुलबुल को किसी ने अतिषजन को तथा किसी ने जलध्वनि को, किसी ने पशु-पक्षियों को आधार मानकर संगीत की कल्पना की। मनुष्य ने प्रकृति में समाहित ध्वनि को समझा व उसे अपने दिमाग में धारण करके उसी तरह की ध्वनि निकालने का प्रयास किया होगा और इसी ध्वनि व गति ने आगे चलकर संगीत से स्वर व लय का संचार किया।

संगीत की उत्पत्ति का धार्मिक आधार - संगीत के जन्म के सम्बंध में अनेक विद्धानों ने अपनी-अपनी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार विभिन्न विचार व्यक्त किए हैं। संगीत की उत्पत्ति सर्वप्रथम वेदों के निर्माता ब्रह्मा द्धारा हुई। ब्रह्मा ने यह कला शिव को दी। शिव द्धारा सरस्वती को प्राप्त हुई। सरस्वती ने यह कला नारद को प्रदान दी। पं. अहोबल के अनुसार 'ब्रह्मा ने भरत को संगीत की शिक्षा दी तथा पं. दामोदर ने भी संगीत का आरम्भ ब्रह्मा को ही माना है।'

एक ग्रंथकार के अनुसार - 'पार्वती की शयन मुद्रा को देखकर शिव ने अनेक अंग-प्रत्यंगों के आधार पर रूद्रवीणा बनाई और अपने पांच मुखों से पांच रागों की उत्पत्ति की, तत्पश्चात् छठा राग पार्वती के मुख द्धारा उत्पन्न हुआ। शिव के पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण और आकाशोन्मुख होने से क्रमश: भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक और श्रीराग प्रकट हुए तथा पार्वती द्धारा कौशिक राग की उत्पत्ति हुई।'

कुछ विद्धान संगीत का उद्‌भव 'ओऽम' शब्द से मानते हैं, यह एकाक्षर ओऽम अपने अंदर तीन शक्तिओं को समाहित किए हुए है, अ उ म। तीनों ही शक्ति का प्रतीक है। अत: ओऽम वेदों का बीज मंत्र है, इसी बीज मंत्र से सृष्टि की उत्पत्ति मानी गई है और इसी से नाद की उत्पत्ति हुई है।

अध्यात्मिक विद्धानों के मत से जिस प्रकार ब्रह्मा जी के बिना सृष्टि की कल्पना नहीं की जा सकती। उसी प्रकार वैज्ञानिकों के मतानुसार नाद के बिना सृष्टि की कल्पना करना असंभव है।

संगीत की उत्पत्ति का मनोवैज्ञानिक आधार - संगीत के जन्म के सम्बंध में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले विद्धानों में मुख्य रूप से यूरोप के विचारकों के मत अधिक दृष्टिगोचर होते हैं।

जेम्स लॉग के अनुसार 'पहले मनुष्य ने चलना, बोलना आदि क्रियाएँ सीखी तत्पश्चात् उसमें भाव जागृत हुए फिर उन भावों की अभिव्यक्ति के लिए संगीत की उत्पत्ति हुई।'

कुछ विद्धानों ने यह भी माना है कि मनुष्य ने विभिन्न ध्वनियों के माध्यम से अपने भावों को व्यक्त किया होगा तथा समय परिवर्तनानुसार यही संगीत बन गया। संगीत मनुष्य की ध्वनियों को अनुकरण करना ही होता है, जिसके द्धारा भावों का स्वस्थ स्पष्टीकरण होता है। इस विषय में कर्टसच ने भावाभिव्यक्ति की सहायता से संगीत के जन्म को माना है। वस्तुत: संगीत का उद्‌भव मानव जीवन के पृथ्वी पर आगमन के साथ ही हो गया था। परिवर्तन सृष्टि का नियम है और इसी परिवर्तन के साथ-साथ संगीत में भी अनेक परिवर्तन आए।

अत: मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो मनुष्य ने अपने हृदय के उद्धारों को प्रकट करने की आवश्यकता महसूस की होगी और फिर उसने ध्वनि का सहारा लिया होगा और इसी भावाभिव्यक्ति की आवश्यकता ने संगीत के उद्‌भव की प्रथम प्रक्रिया का आरम्भ किया होगा ऐसा माना जा सकता है।

संगीतोपत्ति के मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को सुप्रसिद्ध विद्धान हललेरिश आइबो ने 'द हिस्ट्री ऑफ म्यूजिक' में व्यक्त करते हुए कि 'सृष्टि के सृजन के साथ पुरूष और नारी मिलन अभिसार पर जो स्वर मुखरित हुए, वही संगीत बन गया। वह स्वर इतने मधुर व आकर्षण पूर्ण थे कि जिसको सुनकर कोई

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) शासकीय एम.एल.बी. स्वशासी महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

भी प्राणी आत्मविभोर हो सकता था। इन्हीं स्वरों का आगे चलकर संगीत के रूप में विकास हुआ।'

संगीत की उत्पत्ति का वैज्ञानिक आधार – वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संगीत की उत्पत्ति ध्वनि आंदोलनों के परिणाम स्वरूप होती है। दो वस्तुओं की आपसी रगड़ आस–पास की वायु को आंदोलित करती है एवं जल तरंगों की तरह वायु वातावरण में भी तरंगे उत्पन्न होती है और यही कंपन हमारे कर्णेन्द्रिय को स्पंदित करता है। जिससे हमारी चेतना को ध्वनि का अनुभव होता है। संगीत मात्र सामान्य ध्वनि ही नहीं अपितु यह तो सूक्ष्म अंतर्वृत्तियों के उद्घाटन का सबल साधन भी है।

जैसा कि कहा भी जा चुका है कि संगीत का आधार नाद है, जिसे ईश्वर के समान अनंत बनाया गया है। इसे नाद ब्रह्मा भी कहा जाता है।

संगीत की उत्पत्ति का ऐतिहासिक आधार – भारत का प्राचीन इतिहास 3500 ई. पूर्व के लगभग का आरम्भ काल माना जाता है। ऐसा अनुमान है कि इससे पहले भी सभ्यता एवं संस्कृति आवश्यक रही होगी लेकिन उसका कोई प्रभाव नहीं मिलता है, इसी कारण इतिहासकारों ने उसे अंधकार युग कहा है। इस अंधकार युग के जो पाषाण चिन्ह तथा जो मूर्तियाँ मिलती है, उन्हीं के आधार पर अंधकार युग को चार भागों में विभाजित किया गया है –

- पूर्व पाषाणकाल
- ताम्रकाल
- पाषाणकाल
- लौह काल

प्रगैतिहासिक काल में मनुष्य जंगली अवस्था में रहते थे। अत: संगीत कोई विकसित रूप नहीं मिलता, किन्तु ये लोकसंगीत कला से पूर्ण परिचित थे। नृत्य का ज्ञान इस युग के मनुष्यों को नहीं था।

उत्तर पाषाणकाल में संगीत कला कुछ विकसित अवस्था में पहुँची। इस युग में सामूहिक संगीत का जन्म हुआ तथा इस युग में काम करते समय स्त्री, पुरूष दोनों स्वर आलाप द्वारा संगीत का आनंद लेते थे। जिससे उन्हें अपने काम में नवीन चेतना एवं स्फूर्ति मिलती थी। ताम्रयुग का संगीत पूर्व कालों से श्रेष्ठ था। ऐसा माना जाता है कि वर्तमान संगीत की नींव ताम्रयुग के संगीत पर ही रखी गई होगी।

सिन्धु सभ्यता में उपलब्ध संस्कृतियों व मूर्तियों से यह स्पष्ट होता है कि उनमें धर्म साधना, मूर्ति पूजा व वृक्ष जैसे जड़ वस्तुओं की आराधना सम्मिलित थी। लौकिक एवं धार्मिक सभाओं में गीत, वाद्य, नृत्य का पर्याप्त प्रचलन था। संगीत के लिए ढोल व दुन्दुभी जैसे वाद्यों का प्रचार था।

निष्कर्ष – यह कहा जा सकता है कि संगीत के जन्म के सम्बंध में जितने भी अभिमत प्राप्त हुए हैं, वे प्राय: धार्मिक एवं मनोवैज्ञानिक अभिमत से प्राप्त तथ्य हैं, जिसका पूर्ण रूप से प्रभाव उपलब्ध नहीं है। यही सांकेतिक प्रतीकात्मक ध्वनियाँ संगीतिक स्वरों के प्रारंभिक रूप हैं। आदिमानव ने पशु–पक्षियों की बोलियों की नकल, दो वस्तुओं के टकराव से उत्पन्न ध्वनि इत्यादि आवाजों से प्रेरणा प्राप्त कर विभिन्न प्रकार की आवाज निकालने का प्रयास किया होगा और धीरे–धीरे इसी प्रकार के किए गए प्रयत्नों के परिणामों से ही संगीत के प्रारंभिक रूप का विकास हुआ होगा।

पाश्चात्य विद्धान फ्रायड के अनुसार 'संगीत की उत्पत्ति एक शिशु के समान है। जिस प्रकार बालक अपनी सभी क्रियाएँ जैसे – रोना, चिल्लाना आदि अपनी आवश्यकतानुसार सीख लेता है। उसी प्रकार संगीत का प्रादुर्भाव मानव में स्वयं हुआ।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) April to June 2017, Vol. I, Issue XVIII

The Decorative Patterns in Indian Art and Architecture

Kingshuk Mukherjee* Prof. Himadri Ghosh**

Abstract - Decoration nourishes and energizes us, providing mental and aesthetic stimulation in an impactful manner. Very few countries and civilizations have so consistently celebrated and practiced the decorative arts, and the embellishment and ornamentation of the surface, as India, ranging from Neolithic cave paintings, to the magnificent architectural decorations across almost all parts of the Indian subcontinent, to modern day exuberant designs found across a varied platforms associated with our lifestyles such as on textiles, and as home decorations, just to name a few. The list is, indeed, endless. This study is an attempt to explore the manifestation of the decorative patterns present in Indian art and architecture over ages and to reinforce its impact. It is an exploration to gain further insight into the influence and impact of Indian art and architecture in the Indian lifestyle. It is apparent that history has its impact on today's lifestyle in various forms. But the extent of this impact and influence can be explored to a greater depth.
Key words - Decoration,Decorative Art, Architecture, Patterns, Ornamentation, Paintings.

Introduction - A sophisticated and ornamental Iconography has connected this vast subcontinent and formed a bond between its linguistically and ethnically diverse peoples. Spreading along the trade and pilgrimage routes, it has acted as an essential unifying factor in such a diverse land (Wilson, 2011). Indian decorative art have witnessed a lot transformations across ages. Starting from the early Indus valley Civilizations, then the Epic period, then to the cave paintings of Ajanta, it went through a lot of transformation. It gradually grew into a more detailed and fine-tuned version. Indian decorative art have also witnessed a lot of influences from the various dynasties and change of guards. Each ruler tried to enforce and incorporate his own styles and identity to the Indian art and ornamentation.

With the arrival of the Mughals and their exceptional patronage of the arts, combined with their expansionist policies, there was a further development of the subject matter, taste and style. The elements of nature have played the most essential role to the evolution of this ornamentation (Wilson, 2011).

Moved by the charm of nature around him, man has always expressed his appreciation of it in works of art produced by him (Sivaramamurti, 1970). In the early periods, aspects of nature were associated with the mystical qualities because of their seemingly arbitrary and capricious character. These manifestations were celebrated through pictorial representation, and nowhere has this been more evident than in the decoration of architecture, as artisans created a vast canon of patterns and motifs inspired by nature. Few physical forms exhibit the vital diversity of the inheritance as fully as architecture. There have been abundant examples of reproducing natural motifs in the decoration of the forts and palaces. A focused approach towards the visual exploration of India's decorative artcan be on architecture-forts, palaces, havelis or mansions, tombs, temples and mosques. Most parts of India has exceptionally rich seam of ornamented architecture. We can find ample examples in stone, wood, plaster and glass.

Methodology - The present study is a review a substantial number of secondary data sources available pertaining to the topic. This was validatedand supported byvisit to several architectural monuments.

For this paper, three such places of historical significance have been selected, namely, The tomb of the emperor Akbar at Sikandra, The tomb of Itimad-ud-Daula, Agra, and The Mughal red fort of Agra. The information has been collected through visual analysis of each place.

Decorative Art of India - The decorative art of Indian subcontinent is so rich that it is extremely difficult not to encounter decoration in one form or the other even on a day to day basis. The most easily found decorative art can be found in textiles and other textile based products such as garments and home textile products including curtains, bed sheets, carpets and rugs, just to name a few. **(See in the last page)**

Decorative art is also the most important aspect of items of self-adornment such as precious and semi-precious jewelry as well as other wearable accessories.

***Asst. Professor, Banasthali Institute of Design, Banasthali Vidyapith (Raj.) INDIA**
****Dean, Banasthali Institute of Design, Banasthali Vidyapith (Raj.) INDIA**

Moreover, decorative art is embodied in all forms of decorative as well as utilitarian items such as flower vases, wall hangings, furniture and other furnishings and decorative products used in living spaces. **(See in the last page)**

In the Indian subcontinent, decoration is an integral part of festive celebrations and other forms of celebrations as well. Rangoli is a great example of such decorative art form. Morever, the application of *mehendi* on hands and other body parts is a very vivid representation of decoration at its best. It is an integral component in all sorts of rituals and religious gatherings as well. To summarize, in this art centric Indian subcontinent, it is difficult to find even the small sized commodities such as utensils, pots and vessels without some decorative element in it. **(See in the last page)**

Decorative Art in some form or the other cannot be missed in everyday life even in the remotest corners of villages. Indian subcontinent is celebrated for the vibrant exterior decorations on the means of public transport such as trucks, auto-rickshaws, trains, and even on airplanes. In short, no life is untouched by the celebratory grandeur of decorative art in India.

A snapshot into the origin of decoration as an art form - The instinct of beauty was inborn in humans. The historical perspective of the patterns used in decoration can be attributed to what the man saw around him. They created objects such as pottery and pitchers with images of animal, birds and humans.

Nature served as the only and most comprehensive form of inspiration to the early man. The earliest paintings of the prehistoric age in the caves all over the world give us magnificent examples of the observant eye and the trained hand even in man's savage state. The wall of these cave temples were entirely covered with paintings. This rich legacy of decorative practices was carried forward throughout the ages and carrying along the ever enhanced fullness and diversities.

The decorative practices took a few major leaps along the glorious path in terms of their richness and detailing. One such notable leap was the Historic age of Ajanta cave paintings. On the walls of Ajanta, the heroes and heroines of various Jataka (Buddhist) stories appear. They were so skillfully painted that they seem to be living, breathing and acting. These paintings show remarkable breadth of vision. These painters created figures through imagination (Khandalavala, 1974).

The Indian decorative practices moved in a steady and at times erratic manner, in the times to come. A notable development came along with the arrival of Mughal Rulers in India. These Mughal rulers brought along with them their passion for decorative art practices and also brought many foreign elements to the prevalent art scene. They left behind a series of exuberant architectural structures and many magnificent book portfolios rich with decoration.

Patterns in Decorative Art - A pattern is usually a repeated decorative design. Patterns can be repeated in borders or bands or in the overall space depending on the aesthetic requirements of the design. Border repeat patterns can be easily found across varied forms of art such as in textile materials, paintings, architectural structures, home furnishing materials. **(See in the last page)**

The most obvious things which occupy our minds when we talk about borders is a "saree". Sarees are characterized by exuberant border designs. Another popular product category flanked by borders is "bed spreads". Bed spreads come in a plethora of border design patterns ranging from organic to geometric designs. Indian paintings are renowned for the striking details found in the page borders which flank the paintings.

The practice of Decorative art during the Mughal Dynasty -

The Mughal Dynasty

I. Babur: 1526-1530
II. Humayun: 1530-1539; 1555-1556
III. Akbar: 1556-1605
IV. Jehangir: 1605-1628
V. Shah Jehan: 1628-1658
VI. Aurangzeb: 1658-1707
VII. Bahadur Shah I: 1707-1712
VIII. Muhammad Shah: 1719-48 (Shirodkar, 2010).

Manuscripts - The love of pattern and ornament in India is strongly evident even in major pre-Mughal manuscripts such as the Jain VasantaVilasa scroll and the Iranian Haft Awrang, just to name a few. The adjacent scroll of VasantaVilasa is in a thoroughly Indian style that descends from the great cave paintings made at least 7 centuries earlier at Ajanta and Ellora. **(See in the last page)**

While the horizontal illustrations and the texts are arranged in the vertically oriented scroll format that was popular with Indigenous traditions (Beach, 2012).For centuries, books have been treasured as precious objects worthy of royal admiration. This was especially true in Muslim India, where generations of Mughal emperors-from Babur to Humayun to Akbar, Jehangir and Shah Jehan-commissioned and collected volumes of richly illustrated manuscripts and folios.

They assembled workshops of leading artists and calligraphers to produce the books that filled their extensive libraries. Today, those works remain a vibrant part of India's cultural and artistic history in the 16th and 17th centuries. Emperor Akbar was instrumental in the development of the Mughal style decorative art both in painting and architecture. The desire to confront traditional Islamic attitudes (whether artistic, religious or political) with innovative and challenging concepts from other cultural traditions was the starting point to the development of this delightful decorative art which is cherished today by not just Indian but also foreign art enthusiasts. Akbar was ever intrigued by European prints and paintings, which his artists studied and copied.

The developments in the art scene showed glimpses of western influences with the reign of the Mughal rulers after Akbar. Imported objects from Europe had long been

circulated throughout the Mughal Empire with the ever increasing trade relations between Mughal occupied India and the West (Beach, 2012).

Decorative art always complemented the elaborate Paintings and the Calligraphic panels in form of margins or borders. The marginal designs were often decorative for the illustrations (vegetal or floral and bird motifs) and figurative for calligraphic panels. Copies and adaptations of European prints were abundantly found among the border figures. During the reign of Jahangir, paintings and decorations portrayed the life of extreme opulence. Artists opulently decorated the rooms in which the emperor lived. During the reign of Shah Jahan, decorative styles in manuscripts became more formal in their structure and were technically flawless. All borders are completely different in its approach from the impetuous, spirited borders in Jahangir's albums. They are instead, Jewel like, exquisite, and very formal. As before, there was ever increasing traces of European prints in the border designs in the manuscripts. The abundant floral designs can be attributed to the inspiration of European herbals.

Evoking the idea of paradise as a garden, this became the basis for a comprehensive decorative program that dominated textiles, decorative objects, and architecture as well. A major contribution of these richly illustrated Mughal Manuscripts is the great exhibition of the practice of decorative art in architecture, textiles (on their costumes as well as on carpets and floorings), and other objects of decoration during those periods.This above figure from the late 16th – early 17th century Mughal Manuscript illustratesa scene from Ramayana. In this scene, the elaborately painted pillars of the ceremonial hall are interesting evidence for the contemporary palace decoration-little of which has survived.**(See in the last page)**

Let us take a look at a few notable Mughal Albums that showcase the wonderful art of decoration at their best.

a) Salim Album - The Album borders consist of symmetrically placed cartouches with simple vegetal forms or rosettes.

b) Jahangir Album - Jahangir's refined and eclectic taste is best revealed in the Gulshan Album. Persian paintings and drawings are found alongside European prints. Elaborate borders were made. The calligraphies, often enhanced by floral or bird motifs, were arranged on facial pages and alternated with paired paintings, prints, or drawings.**(See in the last page)**

These above mentioned figures are reveal the magnificently Illustrated and decorated book-covers of the Gulshan Album (Mughal, ca. 1595-1632). This was named "A Royal Hunt". It would be hard to imagine a more elegant enclosure for Jahangir's great album. Highly traditional in format-the immediate precedents being the Safavid Iran-these are the finest lacquer covers known from Mughal India.

A superb but slightly later set of covers, made for a Shahnama dating to 1616 and now in the British library, shows even more decoratively elaborated designs of animals in the landscape, all rendered in gold. There the artist drew from the often-dense gold marginal designs that evolved within the Gulshan Album to create a particularly splendid effect. The term used here for garden is gulshan, which became the name of the album.

These covers introduced a trait that came to be as much a characteristic of Mughal manuscripts as it was of architecture, namely, both were constantly subject to reconfiguration and renovation.

c) Shah Jahan Album - This album cover (Mughal, ca.1650) named as "Shamsa" &"Unwan" respectively, provided a customary and celebratory opening to an album with elaborate illumination surrounding an appropriate central text.The majestic architecture, with its European details, must have been derived from a European engraving. **(See in the last page)**

d) Nasiruddin Shah Album - One group of album folios entered the collection of Nasirunddin Shah, who ruled Iran in the 2nd half of the 19th century. Named for him, the album consists of images and calligraphies placed within the superb floral borders that became standard for the albums assembled during Shah Jahan's reign.

e) Hastings Album - Born in 1732, Warren Hastings joined the British East India Company in 1750. The pictures in the album either are copies or adaptations of early imperial works or are fully in the styles practiced in the eastern territories of Awadh or at Murshidabad in Bengal, areas with which Hastings had long been associated. Several are alternate versions of images found in other albums formed during the late 18th century, the period of painted lacquer covers on this volume. The margins on the pages are decorated with repetitive stenciled animal and floral forms.**(See in the last page)**

Architecture - Like manuscripts, architectural structures have been one of the most obvious showcases for depicting the magnificence and impact of decorative art and especially decorative patterns. If not less, but it has been more influential than manuscripts or in fact any other form for the expression of decorative art.Mughals have left behind a rich treasure of architectural wonders that have become a sort of identity for us and a medium of expression of the richness in Indian traditions. India is notable across the world for its illustrious history of architectural wonders.

Let us take a look at a few notable Mughal Architectural structures that has elevated India's position in the world art scene.

a) The tomb of the emperor Akbar at Sikandra, near Agra - It is one of the most ambitious tomb and garden projects ever undertaken by the Mughals-is noted for its remarkably exuberant facades, with bold geometric patterns given drama by the use of contrasting colored stones.Two details of the façade of the main gate of Akbar's tomb at Sikandra, of red sandstone inlaid with white marble and colored stone, illustrating the variety of mathematically based abstract patterns which the Mughals, and Islam in

general, are so noted for. Engaged columns at the sides are given a chevron motif, a classic Mughal design which some suggest symbolizes water.**(See in the last page)**

b) The Mughal Red Fort at Agra - It is known as the 'Red Fort' because it displays the Mughals' beloved red sandstone. **(See in the last page)**

A complex geometric pattern based on circles, on the Red Fort at Agra. These interlink optically-but not all the circles are complete. The full circles have an inner ring of lozenges like the spokes of a wheel, and the outer ring of asymmetrical hexagons.

Another complex design on the Red Fort at Agra is based on staggered squares. As so often with geometric patterns, it plays games, depending on which elements the eye focuses on: it can also be seen as slipping diagonally upwards or downwards, and also as a set of zigzagging tramlines.

c) The tomb of Itimad-ud-Daula, Agra - It was the white marble tomb of Itimad-ud-Daula and his wife-the parents of NurJahan, the powerful wife of Emperor Jahangir.

Completed in Agra in 1628, with its intricate colored stone inlay it is one of the most remarkable buildings of the Mughal period. The entire surface is worked in 'Pietra Dura'-colored stones inlaid in white marble. The tomb is seen here from a gate, demonstrating the effect that led the art historian Percy Brown to say that 'it is like a jewel in its own casket'.

The tomb of Itimad-ud-Daula at Agra is covered with patterns in pietradura. In the dado, the liner structure with stars and hexagons is enriched by two types of flowers, and colors including pale yellow sandstone and an unusual porphyry.

Conclusion - In totality, we may infer that decoration has continued to instill aesthetic stimulation in every aspect of our life. Throughout ages and civilizations, society has explored every possible way to enhance the visual impact of any object of utility or any kind of space. Man has left no stone unturned in the field of decorative magnificence. Moreover, with each passing day, new spaces for decoration and new forms and techniques are being defined and the old decorative practices are being re-defined.

References:-

1. Brown, P. (1953). Indian Paintings: 6th Edition. Calcutta: Y.M.C.A. Publishing House.
2. Sivaramamurti, C. (1970). Indian Painting.New Delhi: National Book Trust.
3. Nardi, I. (2006). The Theory of Citrasutras in Indian Painting: A critical re-evaluation of their uses and interpretations. London:Routledge.
4. Cleveland Beach, M. (2012). The Imperial Image: Paintings for the Mughal Court. Ahmedabad:Mapin Publication.
5. Wilson, H. (2011). Pattern & Ornament in the art of India. London: Thames & Hudson.
6. Khandalavala, K. J. (1974). The development of style in Indian painting. Delhi: Macmillan India,
7. Shirodkar, S. (2010).Captured in Miniature: Mughal Lives through Mughal Art. U.S.A.: Mapin Publishing Pvt. Ltd.

Decorative Art of India



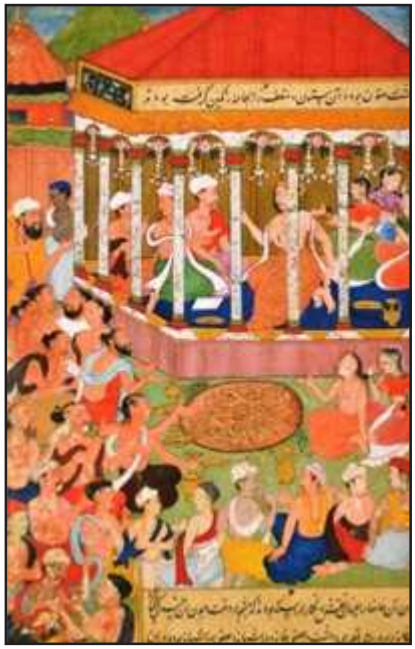


Patterns in Decorative Art



Manuscripts





Jahangir Album



Hastings Album



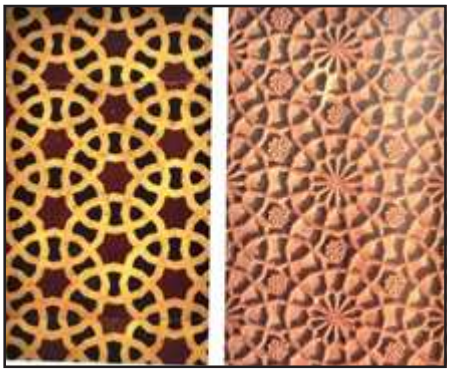
Shah Jahan Album



The tomb of the emperor Akbar at Sikandra, near Agra



The Mughal Red Fort at Agra





The tomb of Itimad-ud-Daula, Agra



****

Paradigm Of Indian Ornamentation With Reference To Ajanta Murals

Dushyant Dave *

Introduction - The concept of ornamentation has been residing in Indian creative mindsets since ages; its evidenced visibility can be witnessed in various sources such as architecture, literature, art, miniature painting, murals, sculpture, crafts, textiles and ornamental arts, etc. it's remarkable detection is in every classical art form such as ritual, non ritual art, interiors and exteriors of major temples, etc. The glimpse of ornamentation is fascinating. The concept of ornamentation is not only to please the eyes of the beholder but also to add grace to the auspicious traditional occasions. Thus, the notion to adorn finds its root with every occasion of life with narrative symbols, designs and figures to attain good fortune and protection from evil. Term ornament term is being referred and quoted since generation by Indian aestheticians. This term is basically symbolizes Alankar, which is broadly acknowledge in all areas in fine arts such as poetry, drama, music, philosophy and the visual arts. The origin of graced ornamentation can be witnessed since Vedic period where its denotation ranges from ornamentation, enhancement of grace or beauty, adornment, beautification, to invigorate or make fit for a purpose. The perfect extension of such remarkable thinking can be witnessed in the murals of Ajanta Caves.

Ajanta caves - The Ajanta Caves are situated at a distance of 107 km north of Aurangabad, Maharashtra. The caves attained the name from a nearby village named Ajanta located about 12 km (Map 1 a, b, c). The caves are famous for its murals, are the finest surviving examples of Indian art, particularly painting. These art forms are dated to 2nd century; continue right through to the 6th century. They are a collection of contemporary style and an unparalleled documentation of design, facilitation a study of the evolution of forms and fashions. The painting clearly demonstrate that the predilection for very heavy and elaborate ornaments of the early periods gave way to the delicate stylish elegance of the western Chalukyan and the later Gupta idioms. The murals illustrate scenes from the life of Buddha and stories from the Jatakas and depicted jewellery forms in colours, providing an unprecedented glimpse of metals and gems used. The range and variety of neck ornaments at Ajanta are unprecedented. A stylistic evolution of necklaces from the earlier periods to the later phases is clearly discernible while the early phase are characterized by single and multi-string necklaces of beads and pearls interspersed with spacers of various forms, in the later painting, necklace are lavishly bejeweled with lace- like filigree setting and open trellis work designs with festoons of pearls; strings of pearls are fashioned into a great variety of design by twisting several strands, incorporating spacers, plaques and gem-embellished pendants. Pearls are used in incredible quantities. In fact, few jewels are featured without pearls. Even today, the glimpse can be seen in the forms and traditional motifs which are the basic sources of inspiration from ornamentation style in Ajanta mural painting. These conceptual art references of Ajanta are a storehouse of information about the civilization of the period and tell us about the technical aspects of their art, such as the preparation of the ground, their sense of perspective, line, space division, colour-overlay etc. The division of the art activity with reference to embellishment of body, into graceful and decorated designs narration is mesmeric.

Ornamentation in Ajanta Murals Paintings - The cave painting of Ajanta documented the panorama of life over a span of several centuries. These painting dated to the 2nd century; continue right through to the 6th century. They are a collection of contemporary style and an unparalleled documentation of design, facilitation a study of the evolution of forms and fashions. The painting clearly demonstrate that the predilection for very heavy and elaborate ornaments of the early periods gave way to the delicate stylish elegance of the western Chalukyan and the later Gupta idioms. The murals illustrate scenes from the life of Buddha and stories from the Jatakas and depicted jewellery forms in colours, providing an unprecedented glimpse of metals and gems used.

The fashion of head ornaments composed of rows of beads and jewels, with gem- set pendants worn along the parting line of the hair continues from the earlier times. Crested tiaras and elaborated crown (Image 1, 2) – like ornaments in a variety of designs are evident. Earrings of gold with embellished surfaces in a variety of sizes are preferred, sometimes enhanced by the addition of clusters of pearls, fringes and tassels of pearls and beads, or suspended with gem- studded pendant drops. The ancient disc and crescent forms continue, sometimes plain but often

* Research Scholar (Visual Art) Banasthali University (Raj.) INDIA

decorated with designs in relief and accentuated with gems set in floral pattern. The cylindrical ear ornaments of Ajanta have their origin in the custom of wearing palm- leaf scrolls to elongate the ear- lobes, and it is likely that splendid six-sided cut Coloured stone prisms were polished in their original shape and worn by ladies as cylindrical shape in their ears in this period. Coloured stone were used in much of the encrusted jewellery including Buddhist relic caskets. The range and variety of neck ornaments at Ajanta are unprecedented. A stylistic evolution of necklaces from the earlier periods to the later phases is clearly discernible while the early phase are characterized by single and multi- strand necklaces of beads and pearls interspersed with spacers of various forms (Image 3), in the later painting, necklace are lavishly bejeweled with lace- like filigree setting and open trellis work designs with festoons of pearls; strings of pearls are fashioned into a great variety of design by twisting several strands, incorporating spacers, plaques and gem-embellished pendants. Pearls are used in incredible quantities. In fact, few jewels are featured without pearls. Armlets and bangles range from simple coiled bands to elaborate repousse worked Gem- set (Image 4) examples, with fringes of pearls Girdles of sheet of gold with gem- set plaques and multiple strands of beads and pearls with elaborate clasps encircle the waist of most women and are worn by kings and princes as well. Tubular anklets with jewels- set terminals and simple toe rings complete the collection of Ajanta Ornaments.

Phases and Style in Ajanta - The caves of Ajanta were excavated in two phases. The caves of the earlier phase at Ajanta date from around the second century BC, and were made during the rule of the Satavahana dynasty. The Buddha was no longer represented by only symbols; murals were now made depicting him posing in various Mudras (Bodhisattva Padmapani and Bodhisattva Vajrapani) (Image1 and 2). The traces can be evident in cave 1. Ajanta paintings were done over a period of eight centuries, from the 2nd century BC to the 6th century AD. During this period there were many changes – in taste, manner, and style on the one hand, and attitude towards life and beyond, and religious lore on the other. The history of these changes was reflected in art too. Sometimes simplicity is emphasized. At other times profuse and lavish ornamentation is in fashion. During one period, painters prefer studied dignity. During others they like rich decoration so much that every inch of a given wall is filled with endless and delicate ornamentation. The categorization of these phases can be identified in different stages such as:-

I. Pre-Classical Period (2nd-1st Centuries BC)
II. Classical Period (4th-5th Centuries AD
III. Period of Mannerism (End 5th Century AD)
IV. Decorative Period (Mid 6th Century AD)

These murals depict colorful Buddhist legends and divinities with an enthusiasm and vitality that is unsurpassed in Indian art. These art works are renowned worldwide for their exquisite beauty, the various Bodhisattvas depicted in Cave 1 include Vajrapani (protector and guide, a symbol of Buddha's power), Avalokitesvara as Padmapani (symbol of Buddha's compassion), Mahajanaka Jatakas (Image 5, 6). The body adornment is elaborated and consists of decorative patterns, geometrical as well as floral designs, which gives a further extension to the today's gems and jewellery.

Indian Jewellery Inspired from Ajanta Mural Painting - Indian love of jewellery is really a love for its fine-looking and the aesthetic; it's an example of man's aspirations to reach perfection in form, design and colour, repetition, symmetry and orderly progression in design which are inspirations from Ajanta paintings. Ornaments such as Sarpech, Kadas, bajuband, Oddiyanam, Pearl necklaces and Chandrahaar (Image 7 a, b, c, d, e, f) are some examples which are the result of our ancestor's art.

a) **Sarpech from Rajasthan , Image 7 (a) -** The Sarpech is a Rajasthani ornament embedded with uncut diamonds and emerald drops. The design inspiration is from paisley with Kundan craft in front and Jaipur Meenakari at reverse side of the ornament.
b) **Kadas from Varanasi, Image 7 (b) -** Bangles and kadas from Varanasi are ornaments worn on the wrist. It is also termed as pahunchi, bangdi, kangan, kada, churi, etc in various regions of India.
c) **Vanki or Armlet, Image 7 (c) -** Vanki or Armlet also termed as Bazuband are worn in different parts of India.
d) **Pearl necklaces from South India, Image 7 (d) -** South Indian pearls Ornaments and pearl necklaces are famous at global forum. The styles and pattern of these elaborated pendants finds its existence from Ajanta mural.
e) **Oddiyanam or waist ornament from South India, Image 7 (e) -** The Oddiyanam or waist ornament from South India is a symbol of prosperity on auspicious occasions. Its design is conceptualized with flora, fauna, geometric etc that are intermingle in fusion.
f) **Chandrahaar from Bengal, Image 7 (f) -** The chandrahaar (garland of moons), is a series of chains with minute gold balls held in criss - cross wire, with an extension of an elaborated pendant with floral motif.

Conclusion - A chronological survey of ancient Indian History, addressing that period that have made major contributions to the study of Indian jewellery, indication is although from one period to another the forms repeat themselves with minor variations. Simplicity gives way to elaboration and in turn to elegance and then again to excessive ornamentation. The pendulum swings back and forth, defying precise documentation of period- specific styles. Stereotypical forms recur in an unbroken continuity, and therefore there is a sense of familiarity in Indian ornaments. Nothing comes as a surprise. Every imaginable design and artistic creation seems to have been expressed before the representation of real jewellery of today.

Key Words -

1. Jatakas - Stories tells about Buddha's previous Life in

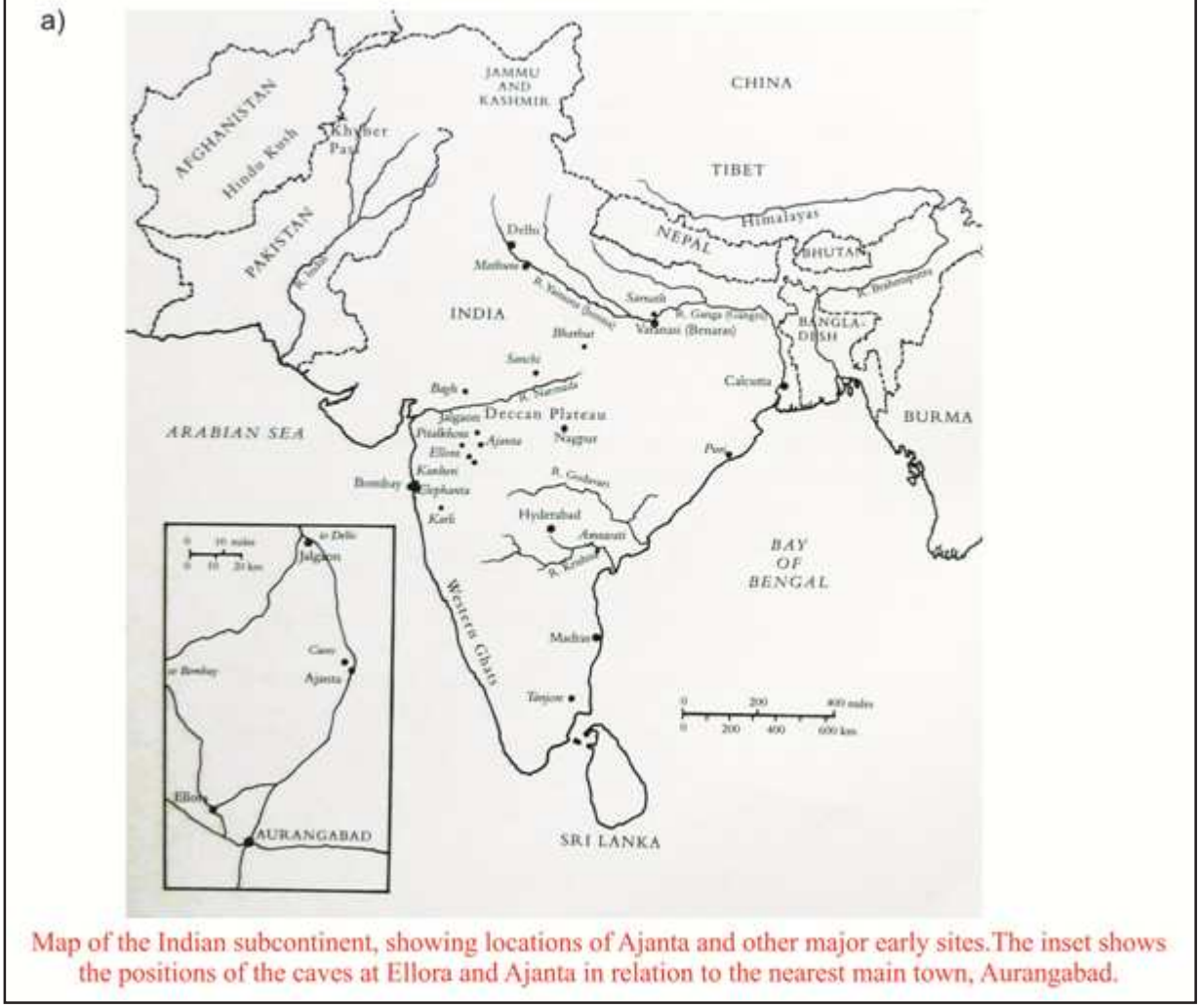
human and animal Form.

2. Mahajanaka - King
3. Shivali- Queen
4. Hinayana - Oldest form of Buddhism
5. Mahayana - Creative phase of Buddhism
6. Bodhisattva - A bodhisattva is anyone who, motivated By Great compassion.

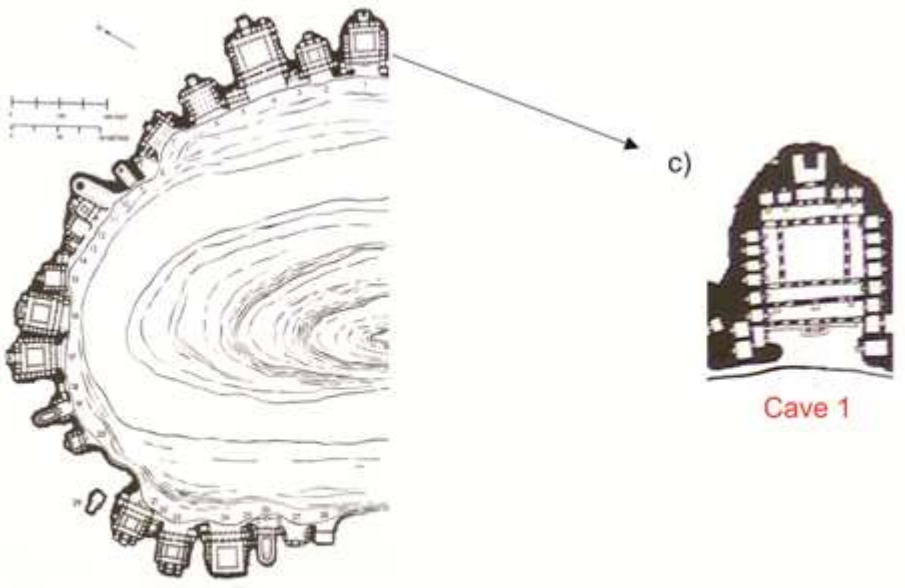
References :-

1. Benoy K. Bhel, the Ajanta Caves, Thames and Hudson Ltd., U.K. 1998.
2. Jones Owen, The Grammar of Ornament, Day and Son, 1856, printed in colours by Day and Son, London.
3. Krishnan R Bala Usha, Dance of peacock: Jewellery Tradition of Kumar Meera Sushil India, Indian Book House Pvt. Ltd. 2010.
4. Fred. W. Burgess, Antique Jewellery and Trinkets, George Routledge & Sons, Ltd. 1919.
5. Hamlin A. D. F., History of Ornament ancient and medieval, A.M professor of the history of architecture in Columbia university, October, 1916.
6. Speltz Alexander, Styles of Ornament, Grosset & Dunlap, New York, 1906.
7. Nagar Shanti Lal, Jatakas in Indian Art. Parimal Publications, Delhi, 1993.

Map 1
Location of Ajanta caves (Cave 1)



Map of the Indian subcontinent, showing locations of Ajanta and other major early sites.The inset shows the positions of the caves at Ellora and Ajanta in relation to the nearest main town, Aurangabad.



Site Plan showing the numbered sequence of caves around the horseshoe- shaped gorge of the Waghora River

Ajanta Mural Painting: Cave 1



a)



Crown tiara with colour stone and motifs in repousse art

b)



Necklace with colourstone

Image 1 Bodhisattva Avalokiteshvara as Padmapani, India, Ajanta, Cave 1, late 5th century, mineral and vegetable colors on stone



a)



Crown tiara with colour stone and motifs in repousse art

b)



Necklace with colour stone and spaceres

c)



Armlet with colourstone

Image 2 Cave 1 : Consort of Bodhisattva, Mahayana phase

Ajanta Mural Painting: Cave 1



a)



Crown tiara with colour stone and motifs in repousse art

b)



Earring

c)



Pearl string with spacers

Image 3 Bodhisattva Vajrapani, India, Ajanta, Cave 1, late 5th century, mineral and vegetable colors on stone



a)



Crown tiara with blue colour stone and pearl strings attached

b)



Earring with blue colour stone and pearl

c)



Armlet with gold motifs and strings

Image 4 Cave 1: Attendant of Bodhisattva Vajrapani, Mahayana phase

Ajanta Mural Painting: Cave 1



a)



Crown tiara with colour stone and motifs in repousse art

b)



Crown tiara (feather design)

c)



Pearl string with spacers

Image 5 Cave 1: Mahajanaka with Sivali, Mahajanaka jataka, Mahayana phase



a)



Earring with blue colour stone

b)



Pearl necklace with colourstone

Image 6 Cave 1: Scene from Mahajanaka jataka, Mahayana phase

Jewellery designs inspired from Ajanta Paintings



a) Sarpech



b) Vanki, or armlet



c)Necklace with Pearl Strings



d) Karas or bracelets



e) Oddiyanam or waist ornament



f) Chandrahaar

Image 7 (a, b, c, d, e, f)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Video Art A New Medium; Special Reference To Indian Artist

Ritesh Kumar* Prof. Himadri Ghosh**

Abstract - Artists have originated in diverse places: from cave to Multiplex through stone to digital chips.
India has a very versatile landscape of art as well as culture. Therefore, Indian artists have delivered their philosophy through different media and techniques. Through different periods of time, they have experimented with a variety of mediums. Video art is one such emerging medium. Indian video art is developing into an important and vital facet of diverse culture.

As digital technology becomes easy to get, the elements of moving image have been easily introduced to a new age group of visual artists. Upcoming art students and artists are adapting their creative thought process as well as skills, to use video as the medium of choice, in order to implement in their projects. This has produced some of the most persuasive art of this decade.

This paper will provide an overview on video art and their artist, special reference to Indian Artist.

Introduction - In the beginning of the 20th century, the moving image was invented and immediately became accessible to the larger public. Very soon, 'cinema' began to involve and has been touted as "the art form of the 20th century". Those of us, who are familiar with cinema or visual art, very likely are also familiar with the concept of experimental films. But video as art is an entirely different genre altogether - for video art is neither cinematic nor broadcast oriented. In the world of video art, the artist creates moving images, blended via a hybrid display technology that attempts to convey an aesthetic experience to the spectator's mind.

The first instance of video art came into light in 1960s when video technology was introduced to society in form of televisions. The first portable equipment was developed by the US army for inspection or to keep eye on Vietnam War. But when Brand Sony introduced his Portapaks for sale purpose in mid 1960s, artists positively cultivated video as a new creative medium. Artist experiments with this new medium to explore their and medium it self's aesthetic possibilities. Which started questioning the politics of that time and commercial interest of mass media? They took up video art in the swell of highly politicized avant-garde.

Nam June Paik can claim the distinction of being one of the first artists to get own hands on a Sony portable recorder and camera. Paik's historic purchase coincided with Pop Paul VI's visit to New York. Armed with his new Portapak, Paik followed the papal procession in a taxi and simultaneously he recorded everything what he saw there in real time. That time he has no facility for editing and the camera's recording limit was one hour, Paik decided to left the camera rolling. The work ended when he ran out of tape. That evening, at the Café a Go Go, Paik screened the unedited black and white video on a monitor, next to the televise version of the same event.

Paik's video recording was in 'real time' with no editing, where the televise version of coverage was profoundly arbitrated by television broadcast patterns for example it involved editing, dramatization, voice-overs, studio discussions, flashbacks and commercial breaks. Neither was there any attempt to disguise the technological process that was creating this video verity record of the procession. This all event marked the beginning of video art.

Paik and his reputation as an avant-garde artist were important elements in the work.

Nam June Paik had predicted in 1965 that the cathode ray tube (this stands for technology) will replace the canvas. However there is rumor that Andy Warhol had screened underground video art footage before Paik's screening in Greenwich Village. Several American independent filmmakers, including Stan Vanderbeek and Scott Barlett developed a new kind of imagery using video process. Others, such as Steina and Woody Vasulka, transformed television camera images on video tape. Works of artists like Bill Viola exhibit a ultra-slow motion video which had painterly quality, stimulates viewer to go down into the image to get connection with their own thought and get meaning out of it based on their own perception. Many like him attempt to deal with big themes of anthropology and rely on computer technology.

*Asst. Professor (Design) Banasthali University (Raj.) INDIA
**Director (Design) Banasthali University (Raj.) INDIA

In the 90s the digital video revolution gave artists access to state-of-the-art editing and control technology. Since then there has been a flood of interactive installations based on video. In India the art boom of the early 2000s accelerated the production of video art as galleries put in place infrastructure to showcase such works.

In one interview with Varta magazine Bani Abidi said that *"Over the years, video art's practitioner, influences and mediums have changed. The video medium is no longer of essence. Some artists use 16mm film and elaborate production methods to make short films, others fix their cameras on tripods and shoot an experimental documentary on the streets and yet another lot might just use archival television footage as material."*

Today we have a number of artists who have taken video art to new heights of creativity like Nalini Malani(India), Abir Karmakar (india), Ranbir Kaleka (India), Sheba Chhachhi (India), Maurya Subhedar (India), Darshana Vora(India), Shilpa Gupta (india), Jaret Vadera (India) and many more.

Nalini Malani - Born in Karachi when it was a part of India in 1946 and J.J. School of Art alumni, is senior most multimedia artist who extended the conventional art form from drawing and painting into projected moving images including video art, film, shadow play, multi projection works, theater and animation that constantly interlace new combination of art. Her feelings to speak beyond her paintings lead to new medium where she found combination of installation, performance and video in cinematic expression. With this short videos Malani stated her perspective and motive and at the same time she showcased her thought in form of video throughout the world.

For these video films, Malani often translates the technology in aesthetical language. She started using video as a new medium in 1991. Being a refugee her work is mostly influenced by partition of India. Her video art works are Meda video (1994), Memory: Record/Erase (1996), Remembering Toba Tek Singh (1998), Hamletmachine(1999/2000), Stains(2000), Transgressions (2001), Unity in Diversity (2003), gamepieces (2003), Mother India (2005), Remembering mad meg (2007)

Abir Karmakar - Abir Karmakar is an artist who uses video as a medium to express his art. After his masters from MS University with fine art, Karmakar began exploring narrative in his photorealistic painting, which creates an atmosphere full of pleasantly erotic and superficially exciting, genderless self-portraits. Same genderless male figure can be found in Karmakar's video installation, 'A Long Whisper' (a 3 min 45 sec loop projected on a curtain draped from a temporary cut-out wall), With no audio element, this work emphasizes the power of movement in silence, using

In his another video art, 'Shadows of Distressing Dreams' 90 min, Karmakar works with a complex pattern of superimposition, using all the editing techniques like fade away, dissolve and super impose on sequence of images layered one over the other. His approach remains typically a painterly one with aesthetic values.

As with all video art, time & technology is the true medium. In viewing it, we become aware how time and technology plays a vital role in projection of artist effort towards his moving images.

Ranbir kaleka - Ranbir Kaleka's art generally describe as spectral and shimmery. Kaleka's video –paintings attempt to describe precise definition of their meaning.

In work titled Cul-de-sac in Taxila, a seated man raises a hammer to strike an invisible object, or perhaps just air, making a gong like sound, at which point a magnificent white horse materialize in front of him, only to vanish gradually into the white background. The only other object in the frame is a shallow vessel into which drops of water fall, with a resonant splash. This work is named after the ancient city of Takshashila in the Punjab which is being connected by the ancient hindu epic Mahabarata and successfully performed ritual of Ashwamedha yagya. The connection between title and horse seems promising, but fails to account for the seated, hammer-wielding man. Could another run through the video loop enable the construction of a Ashwamedha angle.

Sheba Chachhi - Sheba Chachhi is New Delhi based an Artist and NID alumni cum activist who worked with different medium like photography, film, writing and installation. She has exhibited her works widely in India and internationally. Most of her work represents women and impact of urban transformations. After her several exhibition she reinvented her medium expression based on installations using photographs, text, sound and lights. These multimedia installations explore the feminine experience, personal and collective memory with help of visual narratives.

Her photo installation, "when the gun is raised, Dialogue stops" based on voice of women of Kashmir. Later her multimedia installation work using soundtrack, sculptures, light box work "winged Pilgrims: A chronicle" exhibited in New York in 2007 talks about globalization.

Based on this work Chhachhi developed a new cinematic expression with the use of series of still and moving layers of photographic images in video installations like "The Water Diviner" (2008), "Black Waters will Burn" (2011).

Mayura Subhedar- After her MFA from JJ School of Arts, Mumbai Mayura Subhdear attended the video tape program at the Open Studio Media School, Amsterdam in 2004-05. Her work deals with fragility of the human body, eroticism and death. Performances and video is her tool to express in poetic language. Her expression using video installation, projections hits into lateral realities and personal memories in pursuit of defining time. Her selected exhibitions include: Home Curated , Travancore Gallery, Delhi, 2009; Video installation, projections at the play "Verboden Vruchten", Parmaribo, Suriname, 2008; Screening of Video works at StreetLab Festival, Istanbul, 2008; Hand Caresses and Variation 2 , Video installation, Amazing-RPG Show, Mumbai, India, 2008; Van Huis Uit , Imagine IC, Amsterdam,

2007; Mayura lives and works in Amsterdam, The Netherlands.

Shilpa Gupta - A new generation of Indian artist graduated from JJ School of art in 1990. Shilpa has Investigate thoroughly the ambiguities of globalization through her work. Practicing in a wide variety of media, Shilpa taps upon subject such as mass migration, the disempowering of minority groups, surveillance, border and territorial disputes. Over the years, Gupta has dealt with photography, sculpture, performance, text and even anthropological experiment and video projection a new media. In an untitled 2001 work, she took a blank canvas on pilgrimages across India; she asked priests, ascetics, gurus and silent idols of all types to bless a canvas such that it will bring peace and happiness wherever it stands. In a gallery space, the canvases, with their bold black lettering, hang against wall. At their center, a small television plays footage of Gupta's blessing-seeking escapades, with roughly edited like wedding video.

Jaret Vadera - Jaret Vadera is an interdisciplinary artist who uses painting, photography, video installation, and new media in same spaces. Through his work he explores different sociological, technological, and cultural space. Vadera deconstructs images commonly associated with proof, and then reconfigures them in new ways. Infographics, x-rays, and world maps are often re-depicted as unconventional attempt to imagine a new spaces altogether.

Vadera's videos and installations have been exhibited and screened at: the Queens Museum in New York; the Museum of Modern Art in New York; Bhau Daji Lad Museum in Mumbai; A Space Gallery in Toronto; Paved Art + New Media in Saskatoon; Aljira, a Center for Contemporary Art in Newark; and the Maraya Art Centre in Sharjah.

Conclusion - Indian Art and artist has been keep on acquiring new heights in term of philosophical, cultural, aesthetical and technologically. The art boom in 2000 have introduced the new medium to artist in India and they have keep on giving new way of seeing in the time of globalization of art. Through these Indian artists have made a new identity using video as a new media and new cinematic approaches and unconventional way of telling own stories using video, sound, lights and random objects and technology to create a new space that nudges and stimulates the forgotten unsung stories of spectators mind and still looking for new thought process and their way of execution using projection and other digital equipments in different exhibition around the globe.

References :-

1. New media in Art: by Michael Rush – Pub. Thames and Hudson
2. New media in late 20th century Art
3. New media Art – Taschen Basic Art series
4. Video art : a guided tour – by Catherine Elwes
5. Illuminating Video: An Essential guide to video Art – Doug Hall and Sally Je Fifer
6. The Language of New Media – by Lev Manovich

Weblinks -

1. http://naturemorte.com/artists/shebachhachhi/
2. http://shilpagupta.com/about/bibio/2017/as.htm
3. www.varta.in

****

Gladstone Solomon Pioneer of Indian Revival art in Bombay School

Douglas M. John *

Introduction - The revival of Indian art was a highly influential phenomenon and is a significant epoch in the culture of our nation. As Governor Llyod himself has said, "Indianisation has not taken the form of a return to a hide bond convention but is acquiring a real sense of form and colour, and at the same time developing decorative instinct, which is so strongly in national character."[1]

The revival of art in Bombay was achieved by organizing training in a systematic manner with well thought out curriculum in a graded manner. The roots of Bombay Revival School can be traced to the Revivalist Art of Bengal. Talking of Bombay Province, it did not have any art tradition like the Rajput or the Mogul or Pahadi miniature paintings. The students were trained by Englishmen and they were supposed to acquire proficiency in what was shown in the classroom. Naturally, they were greatly influenced by the Western technique, to which they got exposed for the first time. They learnt using transparent water colours, oils and painted not on paper but on the canvases standing in an upright position.

Initially the landscapes were influenced by the British tradition of perfect depiction, realism and tender use of layers of transparent water colours. Another approach that was incorporated was the gouache technique of using opaque colours.

Once the landscape painters started mastering their art, they began using bold strokes instead of soft layers of colours. It was the time of this very transition that the able Principal Captain Gladstone Solomon began the 'Bombay Revivalist School' movement. This was devoted to revive and preserve the traditional Indian arts. The movement progressed in two directions. One trend was of the miniature school, primarily availing opaque colours to portray various subjects. The other trend was the synthesis of the drawing skills in western style technique of multiple layers of water colour washes and a lyrical rendering of the Eastern art.
The students, till then, were taught to copy the western style, draw and paint by copying their instructors and there was no Indianness in their works. It is in the realisation that without the support of Indian artists who were masters in Indian style but also good teachers his efforts would not bear fruits that he organized two classes, one taught by Ahiwasi and the other by Nagarkar.

Thus the revival of art gave impetus to the concept of design or composition of a painting was the result of the western influence and prior to that we had traditional paintings which were in the form of studies. It is for this reason that we have a fairly large number of artists who painted processions as this subject offered a wide scope of composition, elaboration of the subject.

It was year 1919 Mr.Gladstone Solomon took a charge of the J.J. School of art as a principal and it was a beginning of Mr. Havel's dream to revive the Indian art come true. Mr. Solomon was not only an expert artist but also a great student, thinker and a sensitive person. He was tolerant, and full of vigour. He never looked at the Indian art with a prejudice mind; on the other hand he had very much concern about the Indian art. He studied the revival movement in Calcutta carefully and also tried to understand the thinking of Mr. Havel,Mr. Arvind Ghosh and Mr. Kumar Swami. He went to Ajanta, Verul and Gharapuri to learn the core of the paintings and sculptures. He also arranged visits the art students and teachers at many historical and beautiful places in India so that they would be able to study the actual sculptures and art present there.

He started the Indian Designing Class and Mural painting class in the J.J. School and made an arrangement of Indian style of seating to encourage the students to sit and paint like the traditional Indian artists. The traditional Indian artists would sit on the mattress and would paint on the drawing board kept in front of them. He also trained the students in the cartoon drawing. Gradually the J.J. School of art also reached to the revival stage.

Another major offering of the students of JJ School of Arts was the 'Indian Room', for which students worked painstakingly with passion for over nine months to decorate and construct it. All departments of the school sent recruits; modellers, painters, designers, potters, enamellers, carpet weavers, iron-workers and carpenters. The paintings and statuettes were entirely the work of students. The exhibition aesthetically heralded the culture of the country conveying a message that words would fail to express. It garnered great reviews at Wembley.

Solomon was determined to inject a new energy into

*Research Scholar, Lecturer (Dept-Drawing&painting) Sir J.J.School of Art, Dr.D.N.Road, Fort, Mumbai (Maharashtra) INDIA

the moribund art school and provide a persuasive 'indigenous' alternative to Abanindranath's orientalism, the favored recipient of imperial largesse: Abanindranath's pupils, for instance, ran premier art institutions in Jaipur, Lucknow, Madras and Lahore, to name only the major ones. But such favours paled into insignificance with the announcement of the government's ambitious mural project.

Solomon resolved to rest as large a slice of the imperial cake for his students as possible. This he did in well-planned stages that involved making mural painting the cornerstone of art teaching, in order to bid successfully for the New Delhi Murals. Soloman enjoyed an advantage. The ground had already been prepared by Soloman's predecessors at the school, Lockwood Kipling and John Griffiths, who had secured commissions for their students to decorate public buildings.[2]

Solomon himself had the advantage of training at the Royal Academy in marouflage a mural technique consisting of attaching large painted canvases on to the walls as Part of decoration instead of painting directly on to the wall.[3]

A veteran of World War First, Captain Solomon's war experience had prepared him for planning the school's future with military efficiency, each measure a step towards making it the leading art institution in India. However, in order to carry out any Reform at all he needed a free hand within the school.[4]

Fresh from this strategic victory, Solomon divested the school of the Foundational South Kensington curriculum with decorative arts as its Cornerstone. This is unsurprising since Solomon had been nurtured at the rival institution, the Royal Academy, with its fine art bias. In December 1919 he made the revolutionary change in the Bombay Revival of Art.

He introduced drawing from the Nude as a sine qua non for large-scale, many-figured mural compositions. The occasional employment of undraped models was not previously unknown, and indeed under his predecessor Cecil Burns's students had turned out life-size Figures for mural decoration, but the systematic use of nude models was new.[5]

Solomon was a studious person. He was not only a great artist. He realized soon after his appointment the impact of the Bengal School of revival and the momentum it had gathered. To initiate such revival at the J.J. he encouraged his students to visit historical and other important places from the art point of view and study the sculptures, temple architecture and Ajanta murals. This really prompted Soloman who succeeded to promote Indian art andled him to start Indian Design Class. Not only this, a mural painting class was started where students were taught to do large paintings and the Bombay Art Revival was initiated.

If we compare the art creation in J.J. School of art and Calcutta school of art, we will find that at that time the art creation in J.J. School of art was more elegant and technically more sound.(Unfortunately we do find a collection of the master pieces of the J.J. School of art made, during that period.)No articles were written on the then artists or about their paintings styles. On the other hand, we find many writings are available on Mr.Abanindranath Tagore, Mr.Nandalal Bose, Mr.Asit Kumar Haldar, Mr.Vinodvihari Mukharji, Ms Jamini Roy etc. The paintings of the Bombay artists, Mr.Nagarkar, Mr.Ahiwasi and Mr.Chimulkar would steal the heart of any art lover, but not much written information is available about them.

Solomon had enough knowledge of the History and his thoughts were well directed. His writings were informative and thoughtful but had an emotional touch too. Along with his ambitious projects, he continued to write on art. His book named, "Bombay Revival of Indian Art, in which the comparative study of the revival art is made is worth studying. Another most important book written by him is named, "Mural Paintings of the Bombay School",in which he has explained the various aspects of the Indian drawing and has also expressed his thoughts about Indian Murals. Considering the art history, the important part of the book is that it contains illustrations about the Murals done by the students and the teachers in the Imperial Secretariat, at Delhi.In addition to that,some of his books named,"The women of Ajanta, "Jotting at Ajanta,"The art of Elephanta etc. have also been published.[6]

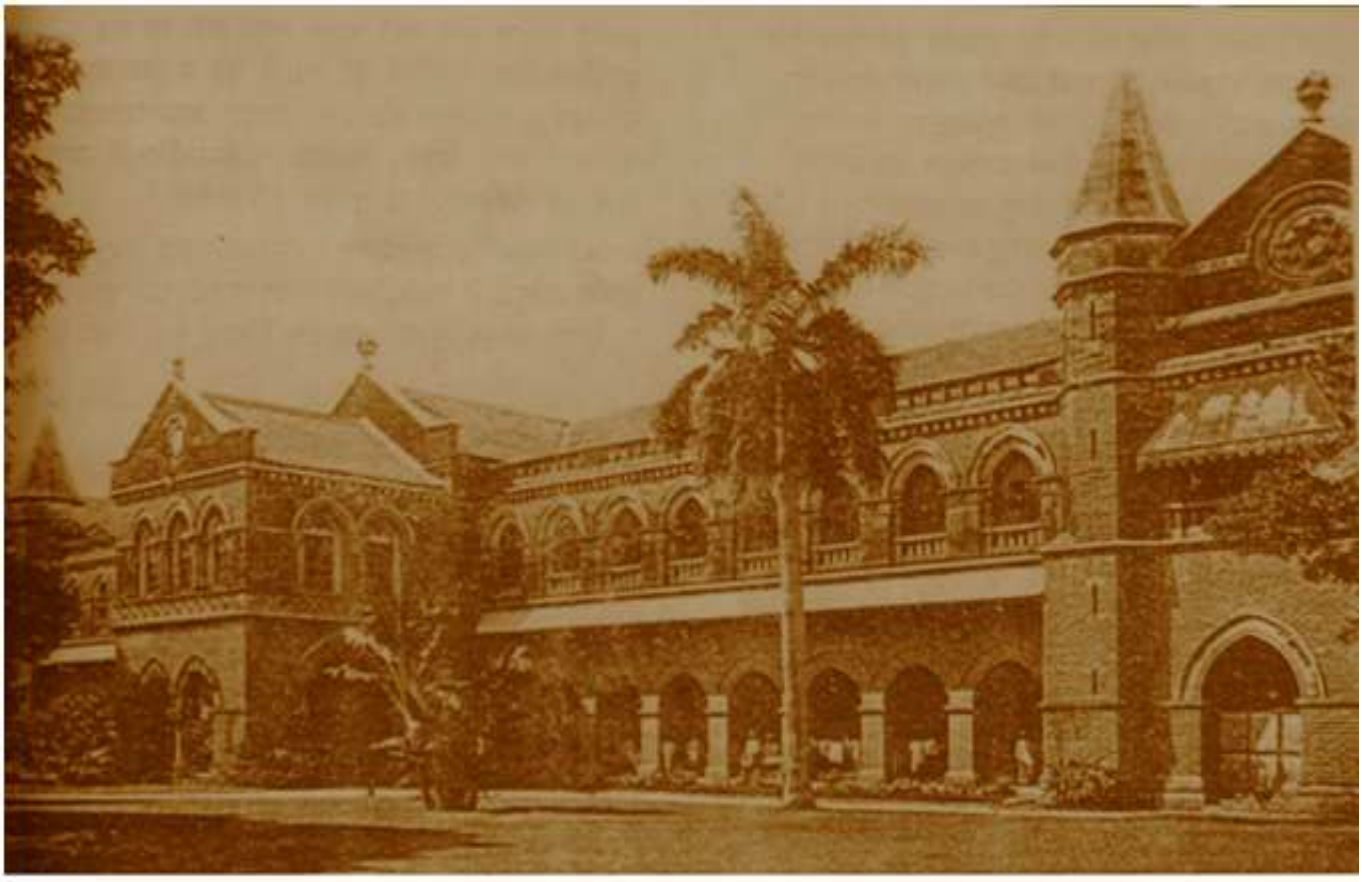
In the year 1935,Mr.Soloman got retired and went back to his own country and that led to an end of the glorious era and within the next 15 years the new art style which was inspired by him suffered a setback. After the retirement of Mr.Soloman, Mr.Charls Gerrard was appointed as the principal .However he was not at all interested in the Indian art but was fascinated by the modern Painting style existed from the Impressionism in Europe. He motivated his students to study the same new style. However many students who were taught by teachers like Mr.Ahiwasi and Mr.Nagarkar were inspired by Mr. Soloman's style and continued to make drawings and paintings in the Indian style. After the retirement of Mr.Nagarkar in 1950, and Mr. Ahiwasi in 1957, nobody could take their place, and the Indian designing class got closed and the Bombay Revival of Art movement came to an end.[7]

References:-

1. Salomon Gladstone W.E, The Bombay Revival of Indian Art, Sir JJ School of Art, Bombay, 1935, Page No.78
2. MitterPartha, Art and Nationalsm in Colonial India 1850-1922, Cambridge University Press 1994.Page No.61
3. Ibid., 182
4. Ibid., 183
5. Ibid.
6. SadwelkarBaburao,Vartamanchitrasutra,Mehta Publication House Pune, 1996, PageNo151
7. Ibid, 152



Captain WILLIAM EWART GLADSTONE SOLOMON
Principal Sir J.J. School of Art 1919 - 1937



1920 J.J.School of Art called Bombay School

****

चित्रकार कन्हाई के-कृष्ण रूप

मोहम्मद वसीम *

प्रस्तावना – श्रीकृष्ण भारत भाव रूप हैं। वे भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं और एक अमूल्य निधि भी। उनका प्रत्येक स्वरूप यहाँ के सामान्य जन-जीवन को अनुप्राणित करता है। बालक, विद्यार्थी, मित्र, प्रेमी, योद्धा, शासक, राजदूत, तत्वदर्शी, सिद्धपुरूष, योगेश्वर तथा ईश्वर के पूर्णावतार आदि समस्त ही रूपों में उनके जीवन की अद्धितीय महानता दृष्टिगोचर होती है। [1] उनके लीलामय स्वरूप से लेकर योगीराज तक अनेकानेक रूपों में भक्तों को, कवियों और कलाकारों को सदैव विमुग्ध किया है। ब्रज में पहुँचकर जैसे साधारण भक्त स्वयं को धन्य मानता है, वैसे ही कवि- कृष्ण-राधा की लीलाओं का गान करके, चित्रकार- 'कृष्ण' के चित्र बनाकर, शिल्पकार- मूतियों को निर्मित करके स्वयं को कृतित्व मानते हैं। जितना अधिक दार्शनिक, साहित्यिक एवं कलात्मक सृजन 'कृष्ण' को लेकर हुआ है, उतना अन्य किसी विषय पर नहीं हुआ।[2] भारतीय संस्कृति कृष्णमय हो गयी, इसी कृष्णमय संस्कृति का एक अतिमनोहारी अंग है- चित्रकार कन्हाई के कृष्ण रूप।

कन्हाई का कथन था कि 'कृष्ण मेरे सामने बैठे रहें और मैं उनका चित्र बनाता रहूँ।' इन्हीं शब्दों को वह जीवन भर साकार करते रहे। उनका जीवन और कला का एक मात्र उद्देश्य था- कृष्णमय होना।[3] लग-भग छ: दशक पूर्व में कन्हा की छवि बसाए मुम्बई की चमक-दमक वाली फिल्म नगरी छोड़ कन्हाई ने कृष्ण की क्रीड़ास्थली वृन्दावन में कदम रखा था और फिर वहीं के होकर रह गए। मंदिरों की इस प्राचीन नगरी में अपनी कला-साधना प्रारम्भ की, फिर एक के बाद एक अपनी तूलिका से कान्हा के रूपों को कैनवास पर उतारने लगे। कृष्ण को अपने कितने रूपों से मानस को रिझा सकतें हैं, यह उनके द्धारा बनाए गए चित्रों में देखा जा सकता है। कृष्ण की विविध लीलाओं को अपने चित्रों में चित्रित करने वाले कृष्ण-भक्त चित्रकार कन्हाई अपनी कला-साधना को 'कृष्ण और राधा' के पावन चरणों में अर्पण कर दिया।

कन्हाई द्धारा बनायी गयी कलाकृतियाँ केवल कला का ही आकर्षक उदाहरण नहीं, उनमें एक विशिष्ट आध्यात्मिक शक्ति भी है। भगवान कृष्ण के रूप में जो लावण्य है और लीलाओं में जो सौन्दर्य है, वह अत्यन्त दुर्लभ है। आराध्य देव होने के कारण भगवान कृष्ण के चित्रों के प्रति जो आसक्ति उनके भीतर पैदा हुई थी वही उनकी पहचान बन गयी। उनका कहना था कि 'कला की साधना ही ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ साधना है, सर्व कलाओं में चित्रकला श्रेष्ठ है और चित्रकला में वही श्रेष्ठ है, जिसमें रस हो और रसमय कला में भी वही कृति श्रेष्ठतम् है, जिसमें प्रभुकृपा का स्पर्श हो' इसी भावना से प्रेरित होकर उन्होंने कृष्ण को अपनी कला का विषय बनाया था। कन्हाई की चित्रकला में कृष्ण के अनेक मनमोहक रूप देखने को मिलते हैं, कभी वे बांसुरी बजाते नजर आते हैं, तो कभी वे गाय चराते हुए, कभी माखन चोरी करते दिखते हैं, तो कभी गोपिकाओं से रास रचाते, कभी वे राधा के साथ क्रीड़ा कर रहे होते हैं, तो कभी मीरा के प्रभु बनकर उनके पीछे खड़े दिखाई देते हैं। 'कृष्ण एक रूप अनेक' यही उनके चित्रों की विशेषता है।[4] उनके चित्रों में कृष्ण की एकल मोहक अदायें और राधा-कृष्ण के अगाध प्रेम का जो चित्रण हुआ है, वह श्रीमद्भागवत गीता, गीतगोविन्द, सूरदास, मीरा और ब्रज के अनेक कवियों के पदों पर आधारित हैं।[5] उन्होंने राजस्थान की पारम्परिक बूंदी चित्रशैली व ब्रज की मिश्रित चित्र शैली में अपने आराध्य कृष्ण[6] के विविध रूपों का संसार इतना मोहक व सजीव बना दिया कि दर्शक वृन्दावन की वादियों में खो जाते हैं।

चित्रों की सजीवता देखकर लगता है कि कन्हाई के कृष्ण अब वंशी बजाने ही वाले है। इस सम्बन्ध में पद्मश्री कन्हाई कहते थे- 'कला स्वयं में एक साधना है और जब इस साधना में खुद भगवान को आराध्य बना लिया जाता है, तो उस कला में ईश्वरीय चेतना का संचार हो जाता है, फिर मेरे लिए कृष्ण ही सब कुछ हैं। मैं अपनी भावनाओं में निरन्तर उनका दर्शन करता हूँ। वे मेरी भावनाओं में कभी रूठते हैं, कभी मान जाते हैं। वे अपना जैसा भाव व रूप मुझे दिखाते हैं, मै उसे वैसा ही कैनवास पर चित्रित कर देता हूँ।'[7]

वृन्दावन आने के पश्चात चित्रकार कन्हाई ने जो सबसे पहला चित्र बनाया था- वह श्रीबाँकेबिहारीजी का चित्र था। यह चित्र उन्होंने महीनों बिहारीजी के मन्दिर में सारे-सारे दिन उनके विग्रह को निहार कर बनाया था, क्योंकि बिहारीजी का छायाचित्र खींचना वर्जित है। आज बाजार में बिहारीजी के जितने भी मुद्रित चित्र हैं, वे सब कन्हाई द्धारा बनाए गए बिहारीजी के चित्र की ही प्रतिलिपियाँ हैं।[8] इसके अतिरिक्त माखन चोर कान्हा, प्रणय में लीन कान्हा, कृष्ण का वंशीवादन, माखन मटकी फोड़ते कृष्ण, माखन खाते बालकृष्ण, एक प्राण एक रूप, श्रीनाथजी इत्यादि कृष्ण रूपों में कन्हाई के श्रेष्ठ चित्र हैं। यद्यपि उन्होंने अन्य देवी-देवताओं को भी चित्रित किया था, किन्तु कृष्ण के विविध रूप वाले, जिनकी भाव-भंगिमायें सभी को आकर्षित करती हैं, उनके ऐसे चित्र हजारों की संख्या में हैं। ये कलाकृतियाँ कला-जगत में अपना एक उच्च स्थान रखती हैं।

कन्हाई की कलाकृतियाँ प्राचीन स्वर्ण-रत्न जड़ित चित्रकला की अनोखी विशेषताओं को अपने आँचल में समेटे हुए है। कलाकार कन्हाई कोमल रेखाओं एवं आकर्षक तैल रंगों से चित्र बनाने के बाद उन्हें शुद्ध सोने के वर्क एवं आस्ट्रेलिया व चैकोस्लोवाकिया के मशीन कट नगों से जड़ते थे। जिससे उनके चित्रों का सौन्दर्य कई गुना बढ़ गया।

भारत में कृष्ण को विषय बनाकर चित्र बनाने की परम्परा पन्दहवीं या सोलहवीं शताब्दी में विशेष रूप से देखी जा सकती है, परन्तु अंग्रेजों के

* शोधार्थी (चित्रकला) जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

शासनकाल में स्वर्ण से सजी, रत्नों से जड़ित इस चित्रकला की परम्परा का ह्रास प्रारम्भ हो गया, और धीरे-धीरे इसका लोप सा हो गया। किन्तु कन्हाई चित्रकार ने इस कला को पुनर्जीवित किया, और तैल चित्रों में सोने के वर्को एवं नगों से काम करने वाले आधुनिक भारत के वह सबसे पहले चित्रकार माने गये हैं।[9] इस अनोखे प्रयोग से उन्होंने अपनी चित्रकला को एक नया आयाम दिया, यही उनकी चित्रण शैली 'कन्हाई शैली' के नाम से विख्यात हुई। आज इस शैली को उनके पुत्र कृष्ण कन्हाई और गाविन्द कन्हाई ने इसे उच्च शिखर तक पहुँचाकर इस शैली को विश्वविख्यात बना दिया है।

कृष्ण लीलाओं के अद्भुत चितेरे पद्मश्री कन्हाई की भक्ति-भावना व अन्त: प्रेरणा ने ही उनकी तूलिका को समृद्ध बनाया। समय-समय पर देश-विदेश में अनेक स्थानों पर उनके चित्रों की प्रदर्शनियाँ आयोजित की गयी। कन्हाई को अनेक सम्मान व पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। सन् 2000 में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ0 के0आर0 नारायणन् के द्वारा 'पद्मश्री' की उपाधि से सम्मानित किया गया।

78 वर्ष की आयु में महान चित्रकार ने 14 आगस्त सन् 2013 को अपनी कर्मस्थली वृन्दावन की पतितपावन धरा से विदा ले ली। उनके निधन से भारतीय कला-कोष में जो खालीपन आया, उसकी पूर्ति अत्यन्त कठिन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वृन्दावन की स्मारिका, सन् 1995, पृष्ठ सं0 50
2. शोध प्रबन्ध (ब्रज के चित्रकार श्री कन्हाईजी- एक व्यक्तित्व एवं कृतित्व), संगीता गुप्ता, पृष्ठ सं0 84-85
3. जनसत्ता, 28 फरवरी, सन् 1999
4. अज्ञात, पूजा वराड पाण्डे द्वारा लिखे एक लेख से
5. पंजाब केसरी, दिल्ली, 14 सितम्बर, सन् 2004, पृष्ठ सं0 12
6. हिन्दुस्तान, 17 अगस्त, सन् 1997, पृष्ठ सं0 4
7. मेरी संगिनी, अगस्त, सन् 2005, पृष्ठ सं0 75
8. हिन्दुस्तान, 17 अगस्त, सन् 1997, पृष्ठ सं0 4
9. हिन्दुस्तान, 17 अगस्त, सन् 1997, पृष्ठ सं0 4









****

Environment And Human Rights - In Indian Context

Hemant Kumar *

Introduction - Due to rapid acceleration of science and technology. Human race have acquired the power to transform our environment in countless and on an unprecedented scale. Humanity's capacity to transform its surroundings, if used wisely and with respect to the ways of nature, can bring to all communities. The opportunity to enhance the quality of life. There are many growing evidence of human caused harm in different region of earth in the form of destruction and depeletion of irreplaceable life forms and natural resources. To large number of humanity largely depends upon the natural resources for their needs and sustenance.

In the growing cities of the industrializing world have faced gross deficiencies, harmful to physical and mental and social health of residents people. All over the world people are experiencing the effects of ecosystem decline, from water shortage to fish kills to landslides on deforested slopes. The victims of environmental degradation tend to belong to more vulnerable sectors of society- racial and minorities.

Life, livelihoods, culture and society, are fundamental aspects of human existence- hence fundamental human right. Human rights are those rights, guaranteed in the constitution to each individual in his capacity as a member of the society. These are related to life, freedom, equality and dignity of individual. The Indian Constitution protects most of the human rights as fundamental rights. One of the essential functions of the National Human Rights Commission (NHRC) is to spread a "Human Rights Culture, and to aid the empowerment of people for the better protection of human rights in the Country. This group helps in maintaining law and human rights in society.

Development Vs Environment - Environmental problems in India arise from a number of different causes. The growing human and animal populations are making increasing demands on natural resources resulting in the exploitation of resources in an unsustainable manner. The policies and programmers of the Central and State governments have not incorporated environmental principles with the result that many development projects have been conceived for short term gains without considering their long term ecological and social impacts.

The development model of India has Central on large scale industrial expansion, commercial agricultural production and increasing the consumption of goods and services through exploiting natural resources with scant regard for sustainability.

-**Industrialization and Toxic Development -** In India industrialization has reached a stage when even catastrophic accidents can be expected Industries, which are known to produce potentially toxic and hazardous wastes are pesticides dyes, organic chemicals, non-ferrous metals and fertilizers. Chemical industries, including the pesticides industries produce highly toxic wastes. Exposure to toxic chemicals occurs in different ways; exposure to everyday household and food products; exposure arising from employment in particular sectors such as the agricultural sector; exposure to chemical in the disposal phase, such as electronic products and exposure as a result of an accident, one of the most extreme example being the case of a catastrophic gas leak from a pesticide plant in Bhopal. Toxic chemicals may constitute serious threats to human rights, the most serious being right to life of 47,000 persons estimated by WHO to die every year as a result of poising from chemicals like pesticides.

Nuclearisation - Nuclear industry have generated the highly toxic radioactive wastes by nuclear power plants. It is widely reported that workers at the various atomic power stations in India are regularly subjected to radiation exposure much in excess of the permissible levels. Ionizing radiation results producing cancer and irreversible genetic deformities in local people. Evoking public interest as a reason for obtaining information regarding there sectors, simply does not work as the relevant laws in India (the Atomic Energy Act 1962 and The Official Secrets Act 1923) provide almost complete immunity to the nuclear establishment. Denial of access to information is widely considered a serious violation of human rights.

Dams - India is going for a rapid expansion of water mega projects. By far the most direct impact on people by dams is displacement of indigenous people from the areas being submerged or being taken over for canals construction colonies or other dam infrastructure.

Environment Protection and Public Health - Ever since the people have lived on Earth, they have used the natural resource like plants animals and minerals to fulfill their

*Lecturer (Law) Govt. Law College, Alwar (Raj.) INDIA

needs.

- Air quality and rights : The emissions of hazardous air pollutants from toxic dumpsites including municipal incienerator have brought attention of policy makers to make laws and their enforcement in regards to provide clean air for human being and other life forms.
- Water resources and rights : water is ubiquitous and an essential resource for all life on the earth. If water is polluted the entire life stands threatened in right of public health.
- Climate change is brought about by global warming is already causing changes in weather patterns, threatening to submerge vast tracts of low- lying costal areas and islands and beginning to cause havoc to agricultural systems.

Erosion of Customary rights and Management System - Regimes over forests, pastures and common lands and water bodies, which were attuned to ecosystem specific natural resource starting in the colonial period and extending to beyond independence, common property rights administered by customary resource management were replaced by state owned rights, or state administered individual rights. In Indian society- peasants, adivasis, city dwellers have heavy dependence on the products of the forest. The exploitation of India's forest, pastures and wetlands, indigenous people have no rights, only privileges. Simultaneously sophisticated and often effective systems of common property rights management by villages, were replaced by a single centralized bureaucracy, leading to a break down in these common property rights systems. With the take over of forests by the state, the traditional or customary rights of forest dwellers were gradually converted into privileges and even further into concessions.

Human Rights - United Nation Conference on the Human Environment Stockholm 1972, considered the need for a common principle to inspire and guide the peoples of the world in the preservation and enhancement of the human environment. "Human have the fundamental right to freedom, equality and adequate conditions of life, in an environment of a quality that permits a life of dignity and well being and a solemn responsibility to protect and improve the environment for present and future generations."

India has a large body of legislative measure relating to environmental issues. The backbone of these are relevant legal provisions in India's constitution.

Part IV – Directive principles of state policy (Article 48 A):- the state shall endeavor to protect and improve the environment and to safeguard the forests and wildlife of the country.

Part IV – A - Fundamental Duties (Article 51-A) : It Shall be the duty of every citizen of India to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wild life and to have compassion for living creatures.

Article 21 of the Constitution dealing with rights of life has certain remarkable judicial pronouncements in recent years. Some examples are as follows –

- In Shanti Star Builders Vs Narayan Totame – 1990 (1) SSC 520, the SC held that right to life is guaranteed in a civilized society would take within its sweep the right to food, the right to decent environment and a reasonable accommodation to live in.
- In Indian Council of Enviro-legal Action Vs Union of India, 1996 3SSC212, following the decision in the oleum gas leak case (Bichhri Pollution case) and on the polluter pay principle, the polluting industries were directed to compensate for the harm caused by them to the villagers in the affected areas, specially to the soil and to the ground water.

However a number of have also pointed out that the constitution is deficient in that it does not explicitly provide for the citizen's right to a clean and safe environment.

Environmental Laws and Policies in India - In India attention has been paid right from the ancient times of the present age in the field of environmental protection and improvement. Environmental law seeks to protect both nature for itself and for the benefit of human kind on a local and global scale. Several legal instruments relevant environment protection are as follows –

- The Indian Forest Act, 1927
- The Prevention of Cruelty of Animals Act, 1960
- The Water(Prevention and Control of Pollution) Act, 1974 amended 1988
- Forest(Conservation) Act,1980 amended 1988
- The Air (Prevention and Control of Pollution) Act 1981, amended 1987
- The Environment (Protection) Act 1986, amended 1991
- The Forest Policy 1988
- The Public Liability Insurance Act 1991, amended 1992
- National Conservation Strategy and Policy Statement on Environment and Development 1992
- The National Environment Tribunal Act 1995
- The National Environment Appellate Authority Act 1997
- The Wild life (Protection) Amendment Act 2002
- The Biological Diversity Act 2002

International Environment Instruments - There are several international convention relevant to environment.

- Convention on wetlands of International importance especially as water flow Habital (Ramsar) 1971
- Convention on International Trade in Endangered Species (CITES) 1972.
- Vienna Convention for the Protection of the Ozone Layer(1985) and Montreal Protocol (1987)
- United Nation Framework Convention on climate change 1992
- Convention on Biological Diversity 1992
- United Nations Convention on the Law of the Sea (UNCLOS)1994.
- Stockholm Convention on Persistent Organic Pollutants (2001)

International Human Rights Instruments - On 10 December 1948 the UNO adopted the well known

Declaration of Human Rights. That declaration ensure to everyone in the world his birthright to lead a life with healthy natural conditions. Recently the international community is recognizing that a clean environment is necessary to fulfill human rights.

- International Covenant on Civil and Political Rights (ICCPR) 1976
- International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights (ICESCR)1976
- Universal Declaration of Human Rights 1948
- UN Comprehensive Human Rights Guidelines on Development. Based displacement 1997.
- Draft UN Declaration on Indigenous Rights 1994.

Environment, Sustainable Development and Human Rights - Mahatma Gandhi referred to a satisfactory society long before we ever perceined the present meaning of environment by saying that "earth can provide for all the needs of humans, but not for their greed."

Sustainable development became popular after the world communication on Environment and Development also known as Brundtland Commission which was formed by the United Nations in 1983 and reported in 1987. Some main key Principle are as follows –

Fundamental Human Right - All human being have the fundamental right to an environment adequate for their health and well being.

Conservation and Sustainable - Use State shall maintain ecosystem ecological processes essential for the functioning of the biosphere, shall preserve biological diversity, and shall observe the principle of optimum sustainable yield in the use of living natural resources and ecosystems.

- **Sustainable Development and Assistance -** States shall ensure that conversation is treated as an integral part of the planning and implementation of development activities and provide assistance to other states, especially to developing countries in support of environmental protection and sustainable development.
- **Environmental -** States shall establish adequate environmental protection standards and monitor changes in and publish relevant date on environmental quality and resource use.
- **Prior Environmental Assessments -** States shall make or require environmental assessments of proposed activities which may significantly affect the environment or use of a natural resource.

Conclusion - Today the right to environment is enshrined in many domestic legal order and the importance of the relationship between environment and human right is unquestionably high in laws. The environmental consideration within a human right framework have been devised in an attempt to protect the environment on a factual level , it has already become apparent that preservation, conservation and restoration of the environment are necessary and integral part of enjoyment inter alia the rights to health and to life including a decent quality of life and according to national law theory, all human right represent universal claims necessary to grant, every human being a decent life that are part of core moral codes common to all societies.

References :-

1. Ahmed AKarirm, Environmental Protection , Public Health and Human Rights an Integrated Assessment 2003- National Council for science and the Environment, Washington D.C.
2. Sachs Wolfgang, Environment and Human Rights, 2003
3. Agarwal A., D Monte, and Samarth U, " The Fight for Survival-1994, Centre for Science and Environment. New Delhi
4. Singh Gurdip, " Environmental Law in India- 2005.
5. Singh R.B., Mishra Suresh, Environmental Law in India : Issues and Response . 1996

****

Trafficking Of Women And Children - A Curse To Human Society And It's Sociological And Legal Aspect

Dr. Jainendra Kumar Patel * Sudeep Agrawal **

Abstract - Since time immemorial, human trafficking formed part and parcel of the society, but in the recent times the effect of this evil has increased due to rapid urbanization and industrialization. The trafficking of women and children are most rampant as they form the vulnerable section of the society and thereby being affected the most. The present study tries to bring out logical conclusions/ameliorative measures to eradicate this evil at its threshold.
Keywords – Trafficking, Judiciary, Rehabiliatation, Labour, Crime and Recommendations.

Introduction - Trafficking is a complex and multidimensional phenomenon which requires a multidisciplinary approach and strategy for its study and its impact in the society. Any analysis of the root causes of trafficking must take into account factors that are specific and germane to India, its socio-economic conditions especially the poverty level and other inbuilt factors which are necessary for its survival. Women and child trafficking are violation of human rights and any strategy to eliminate trafficking should be framed within a human-rights perspective by placing the victim at the epicentre. It should also lay emphasis on prosecution of traffickers in order to reach to a logical conclusion. The key feature of the present research lies in its study not only of the affected women but also of the Courts, investigating agencies and complaints regarding trafficking related crimes. Women and Children are discriminated the most and there apathetic attitude of society fueled by a mindset which views women as mere chattels, hence this topic has been taken by me to eradicate the grievances of women and children. Since the trafficked victim who gets further victimized, violated and more often than not re-trafficked. Therefore a need was felt for demystification of the term and understanding the trends and dimensions from a human rights paradigm.

Acute poverty at different levels combined with the low social status of women often results in the handing over by parents of their children to strangers for what they believed was employment or marriage or for sake/lust of money/ material gains. In several cases families and other community members close to the trafficked person also benefit financially from this process, further limiting the probability of the trafficked person taking action to escape or bring about the severe consequences of prosecution.

Significance - The significance of the study is to bring out the emerging factors which has aggravated the problems relating to trafficking of human, especially women and children who form the vulnerable sections of the society. This study tries to reveal the socio- legal aspect on trafficking of women and children and aims to rehabilitate them as well as bring them into the main stream whereby they can became part and parcel of the society and serve as productive human beings. The research aims to tackle multi-dimensional nature of the problem, defects/lacuna in the law, inadequate law enforcement, involvement of organized mafia and the deep agonies of the victims. Since, especially women and children trafficking are one of the of the most despicable forms of violation of human rights, therefore my study aims at resolving this issue and projects for a benevolent study to tackle the menace of women and children.

Objectives - The various objectives of the study are:-

1. Role played by Indian judiciary especially Hon'ble Supreme Court of
2. India and different High Courts.
3. To examine the causes and factors, both traditional/ orthodox and modern which contributes for women and child trafficking.
4. To highlight the incidence of various types of women and child trafficking and their modus operandi.

Methodology - The present research studies:

1. Difficulties/Hindrances caused to victims while approaching the legal enforcement agencies.
2. What efforts are made to combat trafficking of persons through prosecution and enforcement against traffickers; and
3. Rehabilitative measures provided to the victims of human trafficking.

The Problem - Trafficking of women is a complex sociological problem, related to different fields and arena. It can be seen as a human rights violation or possibly a

* Asso. Professor & H.O.D. (Law) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (Law) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

labour problem, or a problem of organized crime.

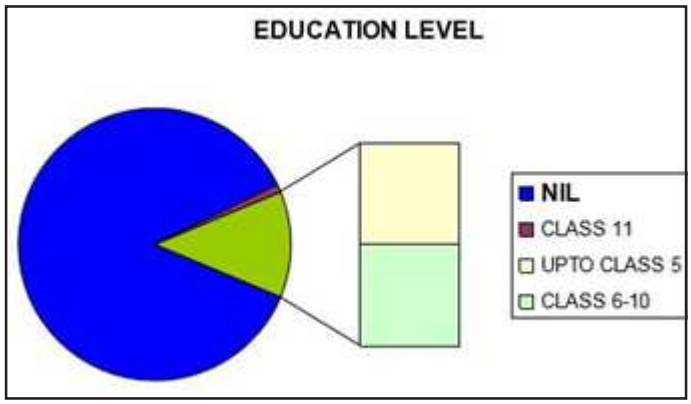
As a Gender Issue - Gender equality is embedded in the Indian Constitution in its Preamble, Fundamental Rights and Duties and Directive Principles of state policy. The Constitution not only guarantees equality to women, but also empowers the State to adopt measures of positive discrimination in favour of women, especially in terms of employment and exploitation.

India has also ratified various International Conventions and Human Rights instruments committing to secure and protect equal rights of women, key among them is the ratification of the Convention on Elimination of All Forms of Discrimination Against Women (CEDAW) in 1993. Despite several benevolent legislations, gender inequality still exists in various forms and manifestations and women constitute the disadvantaged group. These groups include women in acute poverty, destitute women, women in conflict situations, women affected by natural calamities, single women in difficult circumstances, women supporting the entire household, women who are victims of marital violence, deserted women. Women of these classes are more prone and susceptible to trafficking.

Gender discrimination and the status of women results in them having fewer options or means available to them to counter the deceptions of traffickers and as a result women are more vulnerable to threats of violence than men.

As per reports of NHRC, New Delhi; The percentage of women who married before attaining the age of 18 years was as high as 71 per cent in Bihar, followed by Rajasthan (68 per cent), Madhya Pradesh (64 per cent), Andhra Pradesh (62 per cent), UP (47 per cent), Maharashtra (46 per cent), Karnataka (45 per cent) and West Bengal (41 per cent) (National Family Health Survey).

Education- an important yardstick



Lack of education and inequitable property and inheritance rights can also dis-empower women, increase their vulnerability to being trafficked and limit their access to health care and economic opportunities.

As a labour problem - Various sectors do not recognize as productive workers and do not incorporate the value of their labour into calculations of a country's gross domestic product, instead there is a tendency to treat the women as deviants. Laws relating to labour are often ignored or not implemented in its totto; thereby aggravating the evil of women and child trafficking.

As a problem of organized crime - Trafficking denotes the requirement, transportation, transfer etc. of human beings for the purpose of exploitation which may be sexual exploitation, slavery, involuntary servitude or even removal of organs. Child trafficking, according to UNICEF is defined as "any person under 18 who is recruited, transported, transferred, harbored or received for the purpose of exploitation, either within or outside a country". Trafficking in human beings, especially in women, and children has become a matter of serious national and international concern. Women and children – boys and girls – have been exposed to unprecedented vulnerabilities commercial exploitation of these vulnerabilities have become a massive organized crime and multimillion dollar business.

The Immoral Traffic (Prevention) Act ITPA (renamed as such by drastic amendments to the suppression of Immoral Traffic in Women and Girls Act, 1956, deals exclusively with trafficking; and its objective is to inhibit/ abolish traffic in women and girls for the purpose of prostitution as an organized means of living; offences specified are:

1. Procuring , including or taking persons for prostitution;
2. Detaining a person in premises where prostitution is carried on;
3. Prostitution is or visibility of public places;
4. Seducing or soliciting for prostitution;
5. Living on the earnings of prostitution;
6. Seduction of a person in custody; and
7. Keeping a brothel or allowing premises to be used as a brothel.

Buying and selling of minors for the purposes of prostitution ie. trafficking, is a grave offence, under the Indian Penal Code (IPC), sections 372 & 373 and merits maximum punishment of 10 years. The same quantum of punishment is awarded under Section 366 which deals with kidnapping a woman to compel her to marry or is forced to illicit intercourse. Sections 342, 352, 360, 362, 365 368 and 506 deal with punishment for wrongful confinement, punishment for assault or criminal force otherwise than on grave provocation, kidnapping from India, kidnapping from lawful guardianship, abduction, kidnapping or abducting with intent secretly and wrongfully to confine person, wrongfully concealing or keeping in confinement, kidnapped or abducted person and punishment for criminal intimidation respectively. Though it has been often suggested that trafficking networks are widespread and highly organized, operating underground out of reach of the legal system.

Conclusion/ Recommendation - Incorporated in these recommendations are the silenced and burried voices of these downtrodden, disadvantaged and disempowered women which need to be addressed, demythologizing public perceptions and further ensuring that they are rehabilitated, whereby becoming part of the mainstream of the society. Therefore the goal are two folds:

1. Firstly, empowerment of women.
2. Secondly, to punish the law offenders.

In the hope of improving the access to the justice system and helping ameliorate the prevalence of maltreatment / violence against them perpetrated by police and other existing machineries, the following legislative, administrative and human rights approaches are suggested:

1. Greater assistance of NHRC and state level commissions need to be strengthen to curb the evil of human trafficking and thereby enabling them by providing more effective powers of control and supervision to NHRC
2. During rescue operations the presence of Special Police Officers, Social Workers or reputed persons of integrity from the community should be legalized through the enactment of law.
3. The Act should make more enabling provisions for the regularization, deeper control and supervision of the activities of the corrective institutions and protective homes, and aim for providing rehabilitative measures.
4. A State Level Board should be established in each State to review and assess the steps taken to curb trafficking and the progress in the matter of rescue and rehabilitation of the trafficked persons , especially women and children who are required to be rescued and rehabilitated, within time bound period.
5. In addition Public Awareness Campaigns should be initiated, especially in poverty driven states of India where due to poverty and other socio-economic conditions girls/women are most vulnerable to being trafficked. The public awareness campaign should also highlight the penalties and punishment imposed for trafficking. This will serve a dual purpose, firstly by creating awareness of the problem among the vulnerable target group, and the same time would act as deterrent by creating fear in the minds of the perpetuators of the crime specially the families of the vulnerable girls/women.
6. In border areas the BSF and other para-military forces should be made alert to trafficking from Nepal/ Bangladesh and should investigate the people crossing the border. Certain small roads, by pass roads/ unconnected roads used by traffickers need to be closely monitored, so that the curse of trafficking in its every form is curbed effectively and efficiently.
7. Court of law should be made more accessible and procedures to be made more simple and realistic. There is emergent need to establish Special Courts with summary procedures to deal with the problem within the stipulated time interval.

References:-

1. Human Trafficking– Maggy Lee
2. Social Problems In India- Sukanta Sarkar
3. National Human Rights Commission Reports.
4. Human Trafficking: Dimensions, Challenges & Responses by P.M. Nair.
5. This Immoral Trade: Slavery in the 21st Century by Baroness Cox.

****

Surrogacy Law In Indian Perspective - An Overview

Dr. Neelesh Sharma *

Abstract - Children are the most precious and beautiful gift of God to parents. But sometimes some people are deprived from this valuable gift. It is very difficult to understand to pain, stigma of the couple who are not blessed with their own children after marriage. As living in the science and technology age 21st century, there is now a solution to deal with the problem of infertility. Surrogacy has emerged out as a supreme savior high to infertile couple. Surrogacy is a method of assisted reproduction whereby a woman agrees to become pregnant for the purpose of gestating and giving birth to a child for others to raise. In some jurisdictions the possibility of surrogacy has been allowed and the intended parents may be recognized as the legal parents from birth. Commercial surrogacy, or "Womb for rent", is a growing business in India. In our rapidly globalizing world, the growth of reproductive tourism is a fairly recent phenomenon. Surrogacy business is exploiting poor women in country like India already having with an alarmingly high maternal death rate. This paper talks about paternity issues and women's right to health in context of surrogacy .Government must seriously consider enacting a law to regulate surrogacy in India in order to protect and guide couples going in for such an option. Without a foolproof legal framework, patients will invariably be misled and the surrogates exploited..

Introduction - Making the decision to have a child- it's momentious. It is to decide forever to have your heart go walking around outside your body…….. **Elizabeth stone**. The human body is a wonderful machine, understanding of which is still an enigma. The future of child birth in the form of test tube babies, surrogate motherhood through newer technologies have introduced undreamt of possibilities in the sexual arena. Because any reproductive technique that replaces the conjugal act is violation of the dignity of procreation when human procreation is disconnected from sexual relation, the spouses can quickly become objects for sex. It becomes difficult to recognize dignity in each other, especially the pre born child.Though, science and technology have made enormous contributions to the society. However, the fact is that it is not ethically right rather controversial.

Types Of Surrogacy -

Traditional or Partial surrogacy - in this case the surrogate mother will be artificially inseminated with the sperm of the intended father or the sperm from the donor when the sperm count is low. **Gestational Surrogacy** – in this case, the eggs are extracted from the intended mother or egg donor and mixed with sperm from the intended father or sperm donor in the vitro,but in case of total Surrogacy an embryo created by the process of in-vitro fertilization is implanted into the surrogate's uterus. **Commercial or Professional Surrogacy** – in this type, Surrogate mother is paid not only for the medical and the other expenses to deliver the child, but in addition to that a hefty amount is also paid to carry the child to maturity in the womb by going through an agreement. **Altruistic or Emotional Surrogacy** – it is known as non-commercial surrogacy.

Laws On Surrogacy In International Perspective - laws differ widely from one country to another. In England, commercial surrogacy arrangements are not legal and are prohibited by the surrogacy arrangement act 1985. A surrogate mother still maintains the legal right for the child, even if they are genetically unrelated. Unless a parental order or adoption order is made the surrogate mother remains the legal mother of the child.

Status of surrogacy in USA - In USA, the surrogacy and its attendant's legal issues fall under state jurisdiction and it differs from state to state. Some states facilitate surrogacy and surrogacy contracts, others simply refuse to enforce them and some penalize commercial surrogacy. In Canada, the Assisted Human Reproduction Act permits only altruistic surrogacy; surrogate mothers may be reimbursed for approved expenses, but payment of any other consideration or fee is illegal.

Status of surrogacy in Australia - In Australia, all states (except Tasmania, which bans all surrogacy under the surrogacy Contracts Act 1993) altruistic surrogacy has been recognized as legal. However, in all states arranging commercial surrogacy is a criminal offense.

Status of surrogacy in South Africa - The South Africa Children's Act of 2005 enabled the "commissioning parents" and the surrogate to have their surrogacy agreement validated by the High Court even before fertilization. This allows the commissioning parents to be recognized as legal parents from the outset of the process and helps prevent uncertainty.

Status of surrogacy in Asian Countries - In Japan, the

*Asst. Professor (Law) Career College of Law, BHEL, Bhopal (M.P.) INDIA

Science Council of Japan proposed a ban on surrogacy and doctors, agents and clients will be punished for commercial surrogacy arrangements. In Saudi, Arabia religious authorities do not allow the use of surrogate mothers.

In China, Ministry of Health banned surrogacy in 2001. Despite this regulation it is reported that illegal surrogacy "black market" is still flourishing in China. Anxious about such situation strict legislation has been suggested by the political parties.

Surrogacy In Indian Perspective - Establishing paternity may be easy enough with one quick genetic test, but the issue is not simple and easy for the courts. What will happen if a non-custodial father has been the "father" to a child for 15 years only to learn that he is not the biological father? Does he get a refund on the child support he is paid? Or if a surrogate mother breaks her contract, can she go after the husband and wife clients for monetary support for the resulting child? These are tough legal questions for judges and policymakers.

The Indian system only recognizes the birth mother. There is no concept of DNA testing for establishing paternity as far as the Indian legal system is concerned, i.e., the name on the child's birth certificate has to be that of the birth mother and her husband. In 2008 the Supreme Court of India in the Manji's case (Japanese Baby) has held that commercial surrogacy is permitted in India and it has again increased the international confidence in going for surrogacy in India.

The law commission of India has submitted the 228 th Report on "Need for Legislation to Regulate Assisted Reproductive Technology Clinics as well as Rights and Obligation of Parties to an surrogacy." The main observations had been made by the law commission are as: Surrogacy arrangements will continue to be governed by contracts amongst parties, but such an arrangement should not be for commercial purposes. A surrogacy arrangement should provide for the financial support for surrogate child in the event of death of the commissioning couple or individual before delivery of the child. A surrogacy contract should necessarily take care of life insurance cover for surrogate mother. Legislation itself should recognize surrogate child to be legitimate child. The birth certificate of the surrogate child should contain the name(s) of the commissioning parent(s) only. Right to privacy of donor as well as surrogate mother should be protected. Sex selective surrogacy should be prohibited. Cases of abortion should be governed by Medical Termination of Pregnancy act 1971 only.

According to Kimbrell (1988) most women who get involved as surrogates do so because they are in need of money. The surrogate mothers are often unaware of their legal rights and due to their financial situation they cannot afford the services of lawyers.

Horsburgh (1993) believes surrogates are physically exploited once they have signed contracts agreeing to give birth to babies for clients. To make matters worse, if the pregnancy is indeed aborted, the surrogates often receive just a fraction of the original payment. The contracts can also place liability on the mother for risks including pregnancy-induced diseases, death and post-partum complications.

Foster (1987) states that many surrogate mothers face emotional problems after having to relinquish the child. However, a study by Jadva et al. (2003) showed that surrogate mothers do not appear to experience psychological problems as a result of the surrogacy arrangements. Although it is acknowledged that some women experience emotional problems in handing over the baby or as a result of the reactions around them, these feelings appeared to lessen during the weeks following the birth.

Estimated Surrogacy Package In India - Rates depends on the demands of particular type of donor as follows :

Donor type	Remuneration
Sperm	300/- to 5000 Rupees.
Eggs	15000 to 35000 Rs.
Womb on Rent	3 lakh to 5 lakh Rs.

Conclusion And Suggestions - In India, surrogacy is purely a contractual understanding between the parties so care has to be taken while drafting agreement so that it does not violate any of the laws like, e.g., points to be taken into consideration why does the intended parents In India, surrogacy is purely a contractual understanding between the parties so care has to be taken while drafting opt for surrogacy, particulars of the surrogate, type of surrogacy, mentioning about paternity in the agreement, the creation of registry for biological father of children in an adoption cases, rules set forth on how and when genetic testing can be done to determine paternity, compensation clause, unexpected mishappening to the surrogate mother, child's custody, regarding the jurisdiction for the disputes arising out of agreement. Indian government has drafted legislation in 2008 and finally framed an ART regulation draft bill 2010. The bill is still pending and not presented in the parliament. The proposed law needs proper discussion and debate in the context of legal, social and medical aspects. We conclude that the government must seriously consider enacting a law to regulate surrogacy in India in order to protect and guide couples seeking such options. Without a foolproof legal framework implementation couples will invariably be misled and the surrogates exploited.

References :-

1. Review Article, year 2013 vol.57, Issue 2, - surrogacy and womens right to health in India, by annu and pawan k. et.al.
2. Article on surrogacy in Law Z , may 2012 vol. 2 , by smith Chandra.
3. Article on Surrogacy in Law Z , Dec. 2012, vol.2, by Harpreet Kaur.
4. 228, law commission Report, India.
5. Medical Termination of Pregnancy Act 1971.
6. Indian Contract Act.1872.
7. Constitution of India, By D.D. Basu.

Socio-Legal Dimention Of Acid Attack In India - An Overview

Dr. Neelesh Sharma *

Abstract - Acid attacks is a violence when acid is intentionally thrown on to the victim to disfigure or to blind her. Many of these attacks are the acts of revenge, because a women spurns sexual advances or reject a marriage proposal. These attacks can be attributed to various contributing factors such as the social weakness of women in a male dominated society; lack of support, the general neglect of law the law makers on this particular field etc. The easy availability of acid in inexpensive manner makes the perpetrators to use this as an ideal weapon against the women. This article is an attempt to reflect the most burning issue prevailing in India i.e, an attack with acid. It is much more intentional act and graver than even rape and murder. This ghastly crime footprints the victim miserable living conditions, most of the women restricts themselves to their homes to avoid public appearance. In such situations it is very pertinent to discuss the present laws that covering this crime in India. The author has also discussed various draft law and commission reports and govt. initiatives to combat acid attacks.

Introduction - There is a wide spread violence against women around the world. Acid more formally known as **vitriolage,** is an act of intimate terrorism that involves the premeditated throwing of sulfuric, nitric, or hydrochloric acid onto another with the main intention of disfigurement4. These acids are mainly used as they are cheaply and readily attack,available. This sadistic, cruel and heinous crime is on rise now-a-days and innocent girls/women are becoming victims of acid attack. The reported cases of acid attack is committed on women, particularly young women/girls for rejecting the proposals of their suitors, for rejecting proposals/offer of marriage, for denying/disputes of dowry, domestic fights, disputes over property, etc. The reason behind this is that, the attacker cannot bear his rejection, loss of honour and shame, insecurity, jealousy, patriarchery, aggression and frustration; his so-called male ego comes in between all this, and as a result he takes revenge by destroying the body, specially the face of the women who dared to refuse him. Acids have been thrown usually by the medium of moving motor cycles or on public roads, as it provides the easiest medium of escape even in broad day light. Due to increasing cases on acid attack, the Government of India decided to amend the old legislation and bring in some new ones. Even the Indian Supreme Court strongly criticized the Government for failing to formulate a policy to reduce acid attack on women.

Hence, this gave way to the formation of the **Criminal Amendment Act,** which was brought in force on the **3rd of August 2013 and has been gazette on 2nd April, 2013**, which has some specific provisions on acid attack. The Law Commission, headed by Justice A.R Lakshmanan, proposed that a new Section **326A** and Section **326B** is to be added to the IPC. **Section 114B** has also been added in the Indian Evidence Act, 1872. The researcher will discuss about this in the proceeding pages.

Meaning of Acid and Acid Attack - Acid throwing is called an acid attack. Defined as the act of throwing acid or a similarly corrosive substance on to the body of another within the intention to disfigure, maim, torture, or kill. Perpetrators of these attacks throw acid at their victims, usually at their faces, burning them, and damaging skin tissue,often exposing and sometimes dissolving the bones. The most common types of acid used in these attacks are sulfuric, nitric, or hydrochloric acid. The long term consequences of these attacks may include blindness, as well as permanent scarring of the face and body, along with far-reaching social,psychological, and economic difficulties (www.wikipedia-acid attack).

Reasons/Causes of Acid Attacks -

a. Revenge for any past incidence occurs between victim and offender, the refusal of an offer of marriage proposal.
b. The refusing to have a sex or relationship.
c. Failure of a girl to bring a dowry to her husband.
d. Business disputes.
e. Domestic fights.
f. Disputes over the property.
g. For committing Robbery,Hate or Jealousness.
h. Extra affairs.
i. Political Rivalries etc.

Effects & Impact of Acid Attacks - The most notable effects of an acid attack are the lifelong bodily disfigurement.

*Asst. Professor (Law) Career College of Law, BHEL, Bhopal (M.P.) INDIA

These far-reaching effects on their lives impact their psychological, social and economic viability in communities. These are as under -

Medical - The medical effects of acid attacks are extensive. As a majority of acid attacks are aimed at the face.Severity of the damage depends on the concentration of the acid and the period of time before the acid is thoroughly washed off with water or neutralizing agent. The acid can rapidly eat away skin, the layer of fat beneath the skin, and in some cases even the underlying bone. Eyelids and lips may be completely destroyed, the nose and ears severely damaged. Acid attack victims also face the possibility of septicemia,renal failure, skin depigmentation, and even death .

Psychological - Acid assault survivors face many mental health issues upon recovery. Acid attack victims reported higher levels of anxiety, depression, due to their appearance. Additionally, the women reported lowered selfesteem.

Social - Many social implications exist for acid survivors, especially women. Such attacks usually leave victims handicapped in some way, rendering them dependent on either their spouse or family for everyday activities, such as eating and running errands. These dependencies are increased by the fact that many acid survivors are not able to find suitable work, due to impaired vision and physical handicapped. As a result, divorce, abandonment by husbands is common in the society. Moreover, acid survivors who are single when attacked almost certainly become ostracized from society, effectively ruining marriage prospects.

International perspective on Acid Attack - Acid Survivors Trust International - Acid Survivors Trust International (ASTI) is the only organization whose sole purpose is to work towards the end of acid violence across the world.

Acid Violence In Other Asian Countries -

Bangladesh - Acid attack in Bangladesh is a growing phenomenon and takes a drastic scene at times. Hence, to combat the acid attack, Bangladesh Government has enacted specific legislation in the year 2002. They are the **Acid Crime Control Act (ACCA)** and the **Acid Control Act (ACA)**. The ACCA highlights the provisions regarding to penalty and also creates special court procedures for acid attack cases. They are: the ACA allows courts to impose the death penalty for acid attacks.

Pakistan - Acid attacks are also at a high in Pakistan, "**Acid throwing and burn Crime Bill, 2012,** was introduced in the Parliament in Pakistan.

Cambodia - According to the data collected by the Canadian Acid Survivors Charity (CASC) on people treated in hospital for acid attack, there have been 271 acid violence victims between 1985 to 2010 in Cambodia.

Steps to be taken by Indian Legislature to Combat Acid Attacks in India -

Legislation in India -

1. Grievous hurt, Section 320 in Indian Penal Code, 1860.In Indian Penal Code, permanentdisfiguration of the head or face comes under grievous hurt (http// :indiankanoon.org).
2. The National Commission for Women (NCW) came up with a draft of the Prevention of Offences(by Acids) Act, 2008.
3. The draft Bill proposed by the NCW suggested that a national acid attack victims' assistance board be set up to recommend to the government strategies for regulating and controlling the production, hoarding, import, sale and distribution of acids

Amendment in the old Act - The **Criminal Amendment Act, 2013** which was passed on the recommendations of the **Verma Committee Report** which brought into light the seriousness to deal to this acid attack offence. It inserted two new sections i.e. Sections 326A and Section 326B in the Indian Penal Code. Therefore, the new amendment is a welcoming step towards reining in this crime. For the purpose of rehabilitation, victims may also be given compensation as under Section 357A of the Criminal Procedure Code, 1973. Another laudable step which has been brought by the Criminal Amendment Act, 2013 was the inclusion of Section 357C to the Code of Criminal Procedure. It states that all hospitals, public or private, whether run by the Central Government, the State Government, local bodies, shall immediately provide first-aid or medical treatment, free of cost to the victims of any offence covered under Sections 326A, 376, 376A, 376B, 376C, 376D or 376E of the Indian Penal Code, and shall also inform the police immediately. One thing is very clear that **mens rea** is easily proved in acid attack, which is sometimes difficult to prove in murder also. Throwing acid at a person s face is a deliberate act. It requires the attacker to procure the acid first and this proves that the crime is premeditated. Therefore, the attacker throws acid into the victim s face, fully being conscious of the consequences of his act. This shows that the attacker s actions are completely willful. This can be a strong point while thinking of some stricter punishment in acid attack.

4. The Central Govt. proposed a Bill which includes a Acid Attack Victims should get reservation similar to physically handicapped persons in Jobs.

Supreme Court on Acid Attack –Cases with guidelines - Laxmi Agarwal filed a PIL in the Supreme Court, the Court also laid down some important guidelines, which are listed below -

- Counter sale of acid is completely prohibited, until and unless the seller maintains a register which contains the name of the buyer.
- No acids should be sold to a person who is below 18 years of age. Proper ID card should be shown by the buyer at the time of purchasing the acid.
- All the stock of acids should be declared by the seller with the concerned Sub-Divisional Magistrate within a period of 15 days. If it is not declared, then the goods

will be confiscated by the Sub-Divisional Magistrate and a fine of Rs. 50000 will be inposed on him.

- The acid victim should be given a compensation of atleast 3 lakhs from the concerned State/Central Government as the after care and rehabilitation cost. Of this amount, a sum of Rs 1 lakh shall be paid to the victim within 15 days of occurrence of such incident to facilitate immediate medical attention and the rest 2 lakhs must be given within two month as early as possible.

The role of judges is also immense. He should see that the cases are expediously settled down and proper relief is given to the victims. Indian judiciary has come a long way to tackle acid attacks but the problem still persists. Only time will change the mindset of the people.

Conclusion - The researcher has established the gravity of acid attack in this paper, focusing extensively on the physical, psychological and economic effects that have on the victims. A discussion has also been carried out on the lacunae in the Indian Law and how essential it is to have a specific law in this regard. This crime appears to be a premeditated one which requires a tremendous ill-will on the part of the perpetrator, and therefore, should be punished severely. In addition to this, a sound compensation for the victim is a vital provision for enforcing justice. Another important aspect which requires immediate consideration is the formation of new rehabilitation schemes. Better job opportunities, training etc, should be imparted to the victims of such crimes, enabling them to at least meet their day to day livelihood needs. There are some measures which can be taken to curb acid attack. Women should come forward to improve conditions of the acid attack victims. Another effective measure could be greater awareness and more sensitive and mature handling of these cases by the media. A value-base education is the need of the hour, enactment of new laws, creating institutions and lip service to provide reservation will not take care of this horrendous evil. The fourth estate can be instrumental in raising public and national sentiment against this crime and its perpetrators, which in turn could influence the authorities to take a firmer stand against acid attacks. This crime deserves to get the stringent of punishment as it is more heinous than rape and even murder. In murder, the murderer destroys the physical frame of the victim; and in rape, a rapist degrades and defiles the soul of a helpless female. But in the crime of acid attack, there is destruction of both – the body and the soul. It is our sincere hope that the dismal condition of the legal apparatus with regard to acid attacks can be improved; so that the victims problems can be assuaged and the Indian society becomes a safer place for women. It is time to seriously ponder over these above questions.

Recommendations -

- To eradicate acid attack the govt. must address its root causes: gender inequality and discrimination, the availability of acid and govt. will.
- State should not only enact legislation for the same but should also ensure proper implementation of the laws.
- Rehabilitation of Victims.
- Monetary compensation.
- Govt. should provide adequate healthcare.
  Counter sale of acid is completely prohibited.
- No acids should be sold to a person who is below 18 years of age. Proper ID card should be shown by the buyer at the time of purchasing the acid.

References :-

1. Articles of Ms. Nargis yasmin " Acid attack in the back drop of India and Criminal amendment Act,2013journal., ijhssi, jan.2015.
2. Article of Mamta Patel, ´A desire to disfigure : Acid attack in India", Journals. Ijcs.
3. Article of Dr. Ambika Nair, ´acid attack – violence against women", JIRAS.
4. Acid Survivor Foundation Bangladesh. Annual Report 2009 at 15(2009) available at http:// www.acidsurvivor.org/AR- 2009 pdf
5. Article of harpreet lakhanpal on Acid Attack, published in law Z magazine 2013.
6. Afroza Anwary, Acid Violence and Medical Care in Bangladesh: Women s Activism as Care work, Gender and Society 17, 305, (2003)
7. Jane Welsh, It was like burning in hell – A Comparative Exploration of Acid Attack Violence, Carolina Papers on International Health 1-115, (2009)
8. Article of H.Nanda on "Acid attack and women in India", GJRA.

****

Judicial Contribution To Sustainable Development In India- A Study

Lok Narayan Mishra *

"Sustainable development is a development that must the need of the present without compromising the ability of future generation to meet their own need" -

Brundtland report

Introduction- Is more than a commodity for the benefit of humans. We share the earth with many other life-forms that have their own intrinsic value. They warrant our respect, whether or not they are of immediate benefit to us. It is through people's direct experience with nature that they understand its value and gain a better appreciation of the importance of healthy habitats and ecosystems. This connection provides them with an appreciation of the need to manage our interaction with the nature empathetically. Just as humans have the ability to alter the habitats and even to extinguish other species, we can also protect and restore biodiversity. Therefore, we have a responsibility to act as custodians for nature. Long term economic and social security's are prerequisites for beneficial change and are dependent upon environmentally sound, sustainable development.

The sustainable word comes to us from the forester of the 18th and 19th century in Europe. At the time much of Europe was being deforested, and the foresters become increasingly concerned since wood was one of the driving forces in the European economy. Wood heated homes, built homes and factories, become furniture and other articles of manufacture, and the forests that provided the wood were central to romantic literature and ideas.

Today the fundamental question therefore is whether we can allow the destruction of the environment leading to the destruction of all living creatures including humans being on this planet. The answer is obviously no. Despite our brutal exploitation of our forests and indiscriminate mining, pollution of rivers and other water resources, rapid increase of air and noise pollution, it is still possible to protect the deteriorating environment through proper policies and management, good and effective legislation and by a strong and Eco-friendly judiciary.

Judicial Approach -The Indian judiciary to fulfill its constitutional obligation was and is always prepared to issue suitable order, writ and directions against state and those persons who cause environmental pollution and ecological imbalance. This is evidence **from a plethora is classes decided by starting from Ratlam municipal case**[1]. This case proved the consciousness of the Indian judiciary to a problem which had not attracted much attention earlier. The Supreme Court responded with equal anxiety and raise the issue to come within the mandate of the constitution.

Supreme court in **Rural Litigation and Entitlement Kendra vs. state of UP**[2] ordered the closure of certain limestone quarries causing large scale pollution and adversely affecting the safety and health of the people living in the affected area. Likewise, **in M.C. Mehta vs. Union of India**[3], the apex court directed an industry manufacturing hazardous and lethal chemicals and other gases to poising danger to health and life of workman and people living in its neighborhood, to take all necessary safety measures before stabilized any establishment.

Moreover in **S.Jagannath vs. Union of India**[4] the apex court of India has held that setting up of shrimp culture farms within the prohibited areas and in ecologically fragile coastal area has an adverse effect on the environment, coastal ecosystems and economics and hence, they cannot be permitted to operate. In the case of **Subhas Kumar vs. state of Bihar**[5], the court declared that the the right to life under article 21 includes the right to clean water resources and air. In the same case, the rule of locus standi was enlarged so that the court could take cognizance of environmental pollution and regulate the prevention of the same in an effective manner. Another milestone judgment in Indian council for Enviro-Legal Action vs. Union of India a case concerned serious damage by certain industries producting toxic chemicals to the environment of **bichhri district** [6]in Rajasthan. Directions for the closure of the industry were given and the decision in the **Oleum gas Leak Case** regarding absolute liability for pollution by Hazardous industries. Moreover the polluter pays principle was explicitly applied for the first time in the Bichhri case. A foundation for the application of the precautionary principle, the polluter pays principle and sustainable development, having laid down the three principle were applied together for the first time in by the apex court in **Vellore Citizens Welfare Forum vs. Union of India**[7] a case concerning pollution being cause due to the discharge of untreated effluent from tanneries in the state of Tamil nadu. The court referring to the precautionary principle, **polluter pay**

*Research Scholar (Law) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

principle and the new concept of onus of proof , supported with the constitutional provision of articles 21, 47, 48A and 51A(g) declared that these doctrines have become part of the environment law of the country. The Public trust doctrine, involved in **M. C. Mehta vs. Kamal nath** [8] states that certain common properties such a Rivers, forests, seashore and the air were held by government in trust ship for the free and unimpeded use of the general public. Granting lease to a motel located at the bank of the River Bea's would interface with the natural flow of the water and that the state Government had breached the public trust doctrine.

Case study _ M.C. Mehta vs. Union of India [9]

Recently honorable supreme court has been decide about to be sold or registered on or after 1st April, 2017 would constitute a health hazard to millions of our country men and women by adding to the air pollution levels in the country (which are already quite alarming). It is her submission that the manufacturers of such vehicles were fully aware, way back in 2010, that all vehicles would have to convert to BS-IV fuel on and from 1st April, 2017 and Therefore, keeping the larger public interest in mind and the potential health hazard to millions of our country men and women due to increased air pollution, there is no justification for any of the manufacturers not shifting to the manufacture of BS-IV compliant vehicles well before 1st April, 2017. It has been brought to our notice that on 5th January, 2016 the learned Solicitor General on behalf of the Government of India had submitted before this Court that requisite quality fuel for BS-IV compliant vehicles would be available (all over the country) with effect from 1st April, 2017.

This was confirmed and reiterated by the learned Solicitor General during the course of hearing and he stated that now from 1st April, 2017 requisite quality fuel for BS-IV compliant vehicles would be available all over the country. He also pointed out that the refineries of the Government of India had incurred an expenditure of about Rs.30,000 crores for producing requisite fuel for BS-IV compliant vehicles.

On balance, in our opinion, the submission of the learned Amicus deserves to be accepted keeping in mind the potential health hazard of such vehicles being introduced on the road affecting millions of our people in the country. The number of such vehicles may be small compared to the overall number of vehicles in the country but the health of the people is far, far more important than the commercial interests of the manufacturers Or the loss that they are likely to suffer in respect of the so-called small number of such vehicles. The manufacturers of such vehicles were fully aware that eventually from 1st April, 2017 they would be required to manufacture only BS-IV compliant vehicles but for reasons that are not clear, they chose to sit back and declined to take sufficient pro-active steps.

Accordingly, for detailed reasons that will follow, we direct that -

(a) On and from 1st April, 2017 such vehicles that are not BS-IV compliant shall not be sold in India by any manufacturer or dealer, that is to say that such vehicles whether two wheeler, three wheeler, four wheeler or commercial vehicles will not be sold in India by any manufacturer or dealer on and from 1st April, 2017.

(b) All the vehicle registering authorities under the Motor Vehicles Act, 1988 are prohibited for registering such vehicles on and from 1st April 2017 that do not meet BS-IV emission standards, except on proof that such a vehicle has already been sold on or before 31st March, 2017.

As mentioned above, detailed reasons for the above Judicial guidline will be given in due course.

Suggestions - Thus, after the analysis of above cases, we find that, the Supreme Court is, at the present time, stretching the different legal provisions for environmental protection. In this way, the judiciary tries to fill in the gaps where there is laciness of the legislation. These new innovations and developments in India by the judicial activism open the numerous approaches to help the country. In India, the courts are extremely cognizant and cautious about the special nature of environmental rights, considering that the loss of natural resources can't be renewed. There are some recommendations which need to be considered.

1. **Public Awareness -** In India, media is the fourth pillar of the popular government. It plays an exceptionally essential and compelling part in the general improvement of the country. The effect of media can be seen in the different trials directed by it just by publishing them in their media. Accordingly, the issue of environmental pollution can be checked by making mindfulness in the general population, in which media's part is extremely critical. The compelling agency of correspondence not just influences the mind of the individuals but is also capable of developing thoughts and desirable attitudes of the people for protecting environment.

2. Regular Inspection - There is a requirement for a standard review apparatus, which can inspect and examine periodically every one of those exercises which are threatening the environment. This would be a successful step towards environment protection, since prevention is better than cure.

3. Environmental Education - There is no means for any law, unless it's an effective and successful implementation, and for effective implementation, public awareness is a crucial condition. Therefore, it is essential that there ought to be proper awareness. This contention is additionally maintained by the Apex Court in the instance of M.C. Mehta v. Union of India. In this case, Court directed the Union Government was obliged to issue directions to all the State governments and the union territories to enforce through authorities as a condition for license on all cinema halls, to obligatory display free of expense no less than two slides/messages on environment amid each show. Moreover, Law Commission of India in its 186th report made

a proposal for the constitution of the environment court. Hence, there is an urgent need to strengthen the hands of judiciary by making separate environmental courts, with a professional judge to manage the environment cases/ criminal acts, so that the judiciary can perform its part more viably.

Conclusion - The article has provided an overview of all the contribution of judiciary in developing countries to the promotion substance and enforcement of the concept of sustainable development. It has been that despite the suspicion of developing countries, like developed countries, are including the right to environment. Sustainable development in Indian constitution more importantly, it has been seen that judiciary in developing countries have made significant contribution to the sustaince and Implementation of the concept of sustainable development, through various decisions which they have activity Enforced, relevant constitutional provisions , which otherwise may not effective.

Perhaps more significantly, this article shown that despite their present contribution to the promotion and implementation of the concept of sustainable development as seen above , judicial contribution in developing countries are prepared to make further contribution in the near future, as demonstrated by their recent commitment with various principle.

References :-

1. 1980 AIR 1622, 1981 SCR (1) 97.
2. 1985 AIR 652, 1985 SCR (3) 169.
3. Writ Petition (civil) 4677 of 1985
4. AIR 1997 SC 811 = 1997
5. (1991) 1 SCC 598,
6. 1996 AIR 1446, 1996 SCC (3) 212.
7. Writ Petition (C) No. 914 of 1991
8. (1997)1 SCC 388,
9. (Writ Petition (Civil) No.13029/1985)

****

Juvenile Justice System In India

Aprajita Bhargava *

Abstract - A child is born with innocence and if nurtured with tender care and attention, then they grow in positive way. Physical, mental, moral and spiritual development of the children makes them capable of realizing their fullest potential. On the opposite side, harmful surroundings, negligence of basic needs, wrong company and other abuses may turn a child to a delinquent i.e. a juvenile delinquent. 'A child is an uncut diamond 'it depends on the society how to shape an uncut diamond. Juvenile delinquency means transmission of an innocent child in to a juvenile offender. Deliquency is because of broken families ,adolescent, instability, labeling, gang culture, hunger, poverty, malnutrition and unemployment, lack of recreation, uncongenial homes etc. Observation homes, Shelter homes have been started by the government for the sake of such offenders then also the rate is continuously increasing day by day. For delinquent juvenile it is said that Prevention is better than cure juveniles should be protected from going to the wrong path.
Keywords - Rights of the Child, Parents Patria, Natural Justice, Rehabilitation.

Introduction - Juvenile Justice System is most progressive and enlightened system adopted by the world citizenry with all round growth of children. The prime focus is to reform the deviants and provide care to the unprotected child. As far as practicable, a child to be rehabilitated and restored to the family. The special court to adopt the doctrine of parents patria while adjudicating the matter of child in conflict with the law. Understanding the present state of the Juvenile Justice System (JJS) in India requires recourse to the history. The JJS in India originated during British rule. Before British regime in India, Juveniles were treated by the family and society in general. The institutional treatment of Juvenile was not visibly witnessed. Therefore, JJS and correctional measure was the direct consequence of western philosophy and development of prison reforms. The culture of crimes by youthful offender is as old as the society.

Owing to DOLI IN CAPEX and adventurous attitude, the youth often come in conflict with law and indulged in crimes. Gone are those stormy days when the problems of Juvenile were not considered as a separate system. It can be witnessed from the past that, the children were thrown into prison without trial. They were locked in the jail along with hardened criminals. In the nineteenth century penologists prescribed equal punishment for both adult and Juveniles. History reveals that, juveniles were hanged, transported and imprisoned like adult criminals. The records reveal that, in 1833, death sentence was passed on nine years of child for stealing goods worth two pence. Hanging, whipping and torture of the pillory were common practices for petty offences. The punishments were commonly made before public as a method of deterrence.

Gradually the problem of youth offender was given separate treatment. Some leading penologists have suggested for correctional measure in place of penal measures. India got independence in 1947. It becomes the signatory to UDHR 1948. Being a signatory to the UNO, India has adopted measures as per the international standard. The constitution makers of India provided separate treatment for the children and women. The assumption that reported in social milieu is under taken to make a strong JJS in India. In this article an attempt is made to analyze the special treatment adopted by India for Juveniles in the light of its constitutional philosophy and the international conventions.

Meaning And Concept - Juvenile Justice System is a system coming within the area of criminal law administration of justice. This is a system adopted for the young person not old enough to be held responsible for criminal acts. It is adopted as correctional measures for Juvenile delinquency. The etymological term 'Juvenile' means young person or any young person's retaining the nature and characteristics of a child. The term 'Delinquency' connotes 'failure to observe norms of society or omission of duty, involving with crime or doing any wrong. The term 'Justice' means 'concern for justice, fairness, equitableness' or a concern for peace and genuine respect for people. It is a principle of moral rightness in the pursuits of fair treatment against unfair behaviour. The meaning of the syntax 'juvenile delinquency' is doing of some act against society by young persons. The terms 'Juvenile Justice' means what is just, fair and equitable to the child or young persons in shaping their personality in the society. 'Juvenile Justice System' means a process to deal with the problem concerned with children and society. The main purpose of JJS is to insulate children by resorting to appropriate treatment and create an environment to develop a positive human personality.

* Faculty, R.D.Public School,Betul (M.P.) INDIA

JJS is socio-legal measure to create an atmosphere for the treatment of delinquent juveniles. All most all countries of the civilized world have adopted Juvenile Justice Law to treat the young offender in the most equitable manner, so that they can lead a peaceful moral and democratic life. JJS applicable to the persons; those are under 18 years of age. Juvenile Justice is administered through Juvenile court, a court which is child friendly in nature. The main goal of this System is to adopt rehabilitative measure rather than punitive measures. If a child is commits or any wrong young person turns delinquent, the Juvenile court takes measures for foster care and soft treatment through special institutions. So that Juvenile offender can find a path to lead a decent life.

Aftermath Of Nirbhaya Case - Today (After Nirbhaya case) many people are aware that a separate Justice System exists for Juveniles. Many people are not yet aware how JJS works. After the incidence of Nirbhaya people turned sentimental and expressed their hostile attitude towards the decision of court. They demanded death sentence for the child involved in Nirbhaya case. There was up roaring in parliament and the new law (Juvenile Justice Care and protection of children 2015) came into existence in India. It is a comprehensive provision for children alleged and found to be in conflict with the law. It also deals with children in need of care and protection. This law is enacted taking into consideration of conventions of Rights of the child and other related international instruments. The government of India acceded the convention of Rights of the Child (CRC) on 11 Dec.1992. The constitution of India empowers and cast duty on the state to ensure that their minimum requirements are met and their basic human rights are fully protected. The state intended to upkeep the principle adopted in the constitution. According to the international treaties and constitutional parameters, it is responsibility of the state to treat the children with all softness and for the best interest of the child. However, there is a strong public demand for harsher punishment for youths who commit adult crime i.e. serious crimes like murder, rape, robbery, dacoit etc. Such youths should be punished like adults. Of course, there is inflammatory rhetoric about youth crimes and there is increased public cynicism about the present JJS. Since the adoption our constitution a lot of efforts were made to understand the philosophy of the JJS and accordingly various laws were enacted. But all the efforts are half-hearted and need serious consideration. The stakeholders of Juvenile Justice Administration must take note of the serious conditions that prevail in our JJS. Intellectuals criticize about the poorly conceived policies and squandering of huge precious resources. The main criticism is the poorly treatment process and poor infrastrueture. It need viable response from all quarters.

Development Of JJS - The Juvenile Justice System developed throughout the world with a conception that, children are not mature like adult. They failed to understand the nature and consequence of their acts. This idea is based on the legal 'principle of DOLI INCAPAX' i.e. child do not have capacity to form criminal intention. Therefore, a child cannot be made liable for acts which are illegal. An adult is commonly understood to mean a person who has reached maturity of mind. In the psychological perception, a person is mature 'who possesses certain skills that are the product of both cognitive development and the nature of the person's interactions with his or her environment. According to Jean Piaget – 'the ability to understand and interpret his or her world proceeds in a series of stages, beginning with sensimotor period, which lasts roughly from birth until age 2 and ending with the formal operations period, which lasts from roughly age 11 through adulthood. During this period, the child is able to understand and interpret the world differently because of his or her ability to engage in more abstract thought.

In addition, the development of the child's cognitive abilities is, to some extent, influenced by the in child's environment. Legislative authorities adopted this principles different Acts. It is to be noted that there is no general consensus about the definition of youth and child. Different statute have different mandate in the matter of age or attaining adulthood. There is policy shift in the new Juvenile Justice legislation. It is very progressive Act, designed to adopt the philosophy of parents' patria and prescribe institutionalized care/protection. The only shift witnessed is to punishing delinquents involved in case serious offence. JJS is adopting policy for the reformation and socialization of the young person and punishment is an exception. JJS is essentially different from ordinary criminal courts, adopting informal hearing.

Principles Of Juvenile Justice Act, 2015 - JJ Act 2000 is replaced by JJ Act 2015, with a view to update JJS in accordance with the International conventions and present social development. The new Act under lying following basic principles:-

1. Presumption of innocence.
2. Principles of dignity and worth.
3. Principles of participation with due regard to maturity.
4. Principles of best interest of the child.
5. Principles of family responsibility to take care.
6. Principles of ensuring safety without my abuse of the child.
7. Positive measures for wellbeing and development of child.
8. Principles of non-accusatory or non-stigmatizing semantics.
9. Principles of non-waiver of rights.
10. Principles of equality and non-discrimination.
11. Principles of right to privacy and confidentiality
12. Principles of institutionalization should be last resort.
13. Principles of Repatriation and restoration.
14. Principles of fresh start-erasing of past records.
15. Principles of diversion (without resorting to Judicial proceedings)
16. Principles of natural justice.

Conclusion - All the stake holders to be guided by the principles, while discharging function concerning children. In India, social legislations are always proved abortive due to improper infrastructure and co-ordination. Different homes prescribed, does not have an environment of home. These clogs of JJS need to be resorted to. Juvenile Justice System is based on the principle of social welfare and rights of the child. The prime focus of the JJS is reformation and rehabilitation. It is to create opportunity to the child to develop his personality. The goal after all, is to proceed ahead to create an egalitarian society of high order. Children are the future resources of the country. They must be transformed from negative to positive personality. However, looking to the past experience, we have to bridge the wide gap between theory and practice. In this process, we have to build a good infrastructure and efficient Juvenile Justice Administration. The new legislation carry the dreams, we need to make the dream reality.

References :-

1. Dr. B.K. Das – Juvenile Justice in India – 1st Ed. 2011
2. Nirbhaya Case – https://en.wikipadia.org/wiki/2012 Delhi gang rape retrieved on 14.4.16
3. Beijing Rules 1985, United Nations Rules for the protection of Juveniles Deprived of their liberty 1990 etc.
4. The objective and reasons of JJ Act 2015. 5. Art. 14, 21-A, 15(3), 39, 45,47 and 51 (A) of the constitution of India 1950
5. Kohlberg, L – Child psychology and child Education: A cognitive development view, 1987, New York

****

कृषकों के मानवाधिकार संरक्षण में विधियों की उपादेयता

डॉ. जे. के. पटेल * विजय यादव **

शोध सारांश – भारतीय संदर्भ में कृषि एवं कृषक अर्थव्यवस्था के आधार स्तंभ है। भारत की जनसंख्या का 70% भाग गांवों में निवास करती है। जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि कार्य करना या कृषि कार्य में संलग्न रहना है। स्पष्ट होता है कि पूर्व प्रधानमंत्री स्व. श्री लालबहादूर शास्त्रीजी का नारा जय जवान जय किसान देश के लिए अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु वर्तमान परिदृश्य में किसानों की जो हालत है, वह दयनीय हो चुकी है, किसान आज सूखे बाढ़ एवं प्राकृतिक आपदा का शिकार है, जिससें वह आत्महत्या करने को मजबूर है, बैंकों के ऋण अदा करने में असमर्थ है। कृषि भूमि व्यवर्तित होकर औद्योगिक क्षेत्र या रहवासी क्षेत्र बनते जा रहे है। यह समस्या अत्यंत जटिल होते जा रही है। जब कोई भी सामाजिक समस्या उत्पन्न होती है, तो उसे दूर करने के लिए विधियों का निर्माण किया जाता है, व्यक्तियों को विशेष अधिकार एवं उन्मूक्तियाँ प्रदाय की जाती है, जिससे उनका विकास हो सके। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अन्य क्षेत्रों जैसे औद्योगिक क्षेत्रों में कार्य करने वालों, सेवा क्षेत्रों में कार्य करने वाले व्यक्ति एवं संस्थाओं को विशेष अधिकार प्रदान किये गये जिससे उनका त्वरित विकास हो सके। जिसका सकारात्मक परिणाम आज विश्वपटल पर दिखाई दे रहा है। परन्तु कृषकों के मानव अधिकारों को संरक्षित करने के विभिन्न विधियाँ एवं संस्थाएं किस सीमा तक कारगार हुई हैं इस शोध पत्र में विवेचित किया जायेगा।

शब्द कुंजी – कृषक, मानव अधिकार, विधि ।

प्रस्तावना – शोध का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य कृषकों के मानव अधिकारों को संरक्षित करने के लिए किए गए विभिन्न विधिक उपायों का अध्ययन करना है जिससे इनके अधिकारों को संरक्षित किया जा सके।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र के अध्ययन कि विधि सैद्धांतिक है। इस विधि में द्वितीयक आंकड़ों से सूचना एकत्र किया गया।

विवेचना – भारतीय संविधान में सभी नागरिकों को सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की बात प्रमुखता से कही गई है और देश के प्रत्येक नागरिकों को अपना सर्वांगीण विकास का बुनियादी हक प्रदाय कर राज्य के नीतियों में भी इस बात को दुहराया गया है कि समाज के कमजोर वर्गों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ना है।

भारत कृषि प्रधान देश है एवं यहां कि अधिकांश जनसंख्या कृषि कार्यों में संलग्न है। इस प्रकार इन वर्गों के अधिकारों के संरक्षण के लिए सामान्य नागरिक के अधिकारों के अतिरिक्त निम्नलिखित विशिष्ट एवं संवैधानिक एवं वैधानिक प्रावधान किए गए हैं।

संविधान का अनुच्छेद 48 – यह उपबंधित करता है कि अनुच्छेद 48 राज्य को निर्देश देता है कि कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों पर संगठित करने का प्रयास करेगा तथा विशेषतया गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक ढ़ोरों की नस्ल परिक्षण और सुधारने के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए कदम उठायेगा। स्पष्ट होता है कि कृषकों के अधिकार संरक्षण हेतु भाग 4 राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में समाहित किया गया है।

इसके अतिरिक्त सातवीं अनुसूची के राज्य सूची में कृषकों के अधिकारों के संरक्षण हेतु विधि बनाने का विषय समाहित किया गया है। इसी संदर्भ में अविभाजित म.प्र. में कृषकों के अधिकार संरक्षण के लिए मध्यप्रदेश भू राजस्व संहिता 1959 अधिनियम किया गया। जिसमें कृषकों के बेहतर अधिकार संरक्षण हो सके।

रावनिहालकरण बनाम रामगोपाल के वाद में यह निश्चित किया गया कि यह संहिता मध्यस्थों हटाने और खेत जोतने वाले कृषकों को राज्य से प्रत्यक्षत: जोड़ना है। इस प्रकार कहा जा सकता हैं कि यह विधिक प्रयास निर्धन कृषकों के मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मध्यप्रदेश राज्य ही नहीं अपितु भारत के लगभग प्रत्येक राज्यों में जमीदारी प्रथा को समाप्त करने के लिए विधियां बनाई गई। जिससे उन लोगों को भूमि प्राप्त हो सके जो वास्तव में कृषि कार्य में संलग्न तो थे परन्तु मालिकाना हक और लाभ उन्हें प्राप्त नहीं हो पा रहा था।

इस संदर्भ में मध्यप्रदेश कृषि जोत उच्चतम सीमा अधिनियम 1960 पारित किया गया, जो किसानों के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु मध्यप्रदेश राज्य का द्वितीय कदम था। भारत शासन ने सन् 1966 ई. में बीज अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम कि धारा 4 में केन्द्रीय बीज प्रयोगशाला और राज्य बीज प्रयोगशाला की स्थापना करने एवं धारा 5 में बीजों की किस्मों या उपकिस्मों को अधिसूचित करने की शक्ति प्रदान किया गया।

धारा 6 में किसानों की प्रमुख समस्या अच्छे बीजों का अंकुरण न होने वाले बीजों के विनियमन करने की शक्ति प्रदाय कर बीज उत्पादकों को न्यूनतम सीमाएं अधिरोपित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त धारा 7 में अधिसूचित किस्मों या उपकिस्मों के बीजों के विक्रय का विनियमन इत्यादि

* समआचार्य एवं विभागाध्यक्ष (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी (एम. फिल. विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

की शक्ति प्रदान की गई है।

सन् 2001 में केन्द्र सरकार द्वारा पौध किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के माध्यम से फसलों की विभिन्न प्रजातियों का संग्रहण, कृषक प्रजातियों का संग्रहण, कृषकों को उनके अधिकार दिलाना आदि प्रमुख कार्य किए जाते हैं। यह अधिनियम पूरे विश्व का पहला ऐसा अधिनियम है, जिसमें उनके द्वारा विकसित प्रजाति एवं अन्य अधिकार दिलाने (बौद्धिक सम्पदा अधिकार) के लिए बनाया गया है। अत: कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने तथा कृषकों को नयी पहचान दिलाने के लिए महत्वपूर्ण अधिनियम है।

सन् 2002 में जैव विविधता अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के माध्यम से जैव विविधता संरक्षण में स्थानीय निवासियों के पारम्परिक ज्ञान व्यवहार और नई खोज को महत्व दिया गया है। इसके अतिरिक्त इस अधिनियम के अनुसार स्थानीय निवासियों के ज्ञान व्यवहार और नये प्रयत्न खोजों से जो भी लाभ होगा, उनके योगदान के अनुपात में न्यायोचित रूप से बांटे जाने का प्रावधान सुनिश्चित किया गया है।

जैव विविधता संरक्षण से केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें, स्थानीय पंचायते, उद्योग, स्वंयसेवी संस्थाएं, ग्रामीण इत्यादि सभी संबंधित हैं एवं इस कार्य में प्रत्येक की महती भूमिका स्थापित की गई है।

मौसमी कृषक बेरोजगारों के आर्थिक एवं सामाजिक समस्या के उन्मूलन हेतु सन् 2005 में महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम भारत में विकास के साथ-साथ बेरोजगारी को दूर करने के लिए अधिनियमित किया गया जिसमें जाब कार्ड धारक को 100 दिन की रोजगार मुहैया कराने की गारंटी प्रदाय की गई है और यदि 100 दिनों का रोजगार नही प्रदाय करने की दिशा में बेरोजगारी भत्ता देने की व्यवस्था है। स्पष्ट है कि महात्मा गांधी रोजगार गारंटी अधिनियम द्वारा कृषकों के मूल मानवाधिकारों के संरक्षण को सम्बल मिला है।

जन साधारण के गरिमामय जीवन व्यतीत करने के लिए सस्ती कीमतों पर पर्याप्त मात्रा में खाद्य की सुलभता को सुनिश्चित करके मानव जीवन चक्र के मार्ग में खाद्य और पोषण सम्बंधी सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013 अधिनियमित किया गया है। इस अधिनियम के अध्याय 2 में खाद्य सुरक्षा के लिए उपबंध किया गया है तथा गर्भवती स्त्रियों और स्तनपान कराने वाली माताओं को पोशाहार सहायता इत्यादि का प्रावधान किया गया। इस अधिनियम में बालकों को पोषणीय सहायता तथा बाल कुपोषण को समाप्त करने के प्रावधान के साथ-साथ कतिपय मामलों में खाद्य सुरक्षा भत्ता प्राप्त करने का भी अधिकार प्रदाय किया गया है।

इस प्रकार कृषकों के मानव अधिकारों को संरक्षित करने के लिए संविधान से लेकर विभिन्न केन्द्रीय एवं राज्य अधिनियम अधिनियमित किए गए हैं। जिसमे इस वर्ग का विकास हो सके।

उपसंहार – कृषकों के मानवाधिकार संरक्षण स्वंतत्रता प्राप्ति के पश्चात् से ही प्रारंभ हुई है। जो वर्तमान तक चलती आ रही है। परन्तु कृषकों की प्रमुख समस्याएं प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यह विभिन्न रिपोर्ट एवं समाचार पत्रों के माध्यम से प्राप्त होता रहता है किन्तु शासकीय प्रयास भी तेजी से हो रहे हैं। जहां तक कानून बनाकर कृषक अधिकारों के संरक्षण की एक लम्बी श्रृंखला है। भारत के प्रत्येक राज्य कृषक विकास एवं कृषि विकास के लिए कटिबद्ध दिखाई देते है। वास्तविकता कुछ और है आज भारत का सेवा क्षेत्र, औद्योगिक क्षेत्र सभी क्षेत्र अपने विकसित अवस्था को प्राप्त करने के समीप पहुंच चुका है। किन्तु भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि अपने अस्तीत्व की लड़ाई लड़ रही है कृषक आत्महत्या करने को मजबूर है। कारण स्पष्ट है कृषि नीतियों के क्रियान्वयन में प्रशासनिक उदासीनता। फिर भी भारत में पंजाब, हरियाणा, म.प्र., छत्तीसगढ़ इत्यादि राज्य कृषि एवं कृषकों की स्थिति सुदृढ़ है। परंतु म.प्र. एवं छत्तीसगढ़ में विधियाँ पर्याप्त है किन्तु कृषि मानसून का जुआ है यह नारा आज भी स्थापित है कारण है कि कृषि क्षेत्र में शासकीय उदासीनता।

भारतीय परिपेक्ष्य में यदि देखा जाए तो कृषक अधिकारों को संरक्षित करने के लिए पर्याप्त विधिक सुरक्षोपायों का क्रियान्वयन एक समस्या है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल डॉ. एच. ओ. मानवाधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि- सेंट्रल लॉ पब्लि. इलाहाबाद 2011
2. पाण्डेय डॉ. जे. एन भारत का संविधान - सेंट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद 2011
3. निगम डॉ. कनिष्क कुमार म.प्र. भू-राजस्व संहिता सेंट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद 2010
4. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013
5. बीज अधिनियम 1966
6. जैव विविधता अधिनियम 2002
7. पौध किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम 2001

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) April to June 2017, Vol. I, Issue XVIII

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं को प्राप्त अधिकार - एक अध्ययन

अरविंद कुमार मित्तल * आर. पी. चौधरी ** डॉ. जे. के. पटेल ***

शोध सारांश - विश्व में महिलाओं के मानव अधिकारों का संरक्षण महत्वपूर्ण विषय रहा है।19वीं शताब्दी में महिलाओं के मानव अधिकारों की स्थिति उतनी अच्छी नहीं थी, जितना की वर्तमान समय में है। विश्व के अनेक राष्ट्रों में महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं थी। यह सही है कि भारत जैसे देशों में नारी को देवी के समान पूज्य माना जाता है किन्तु भारत में भी नारी के साथ भेद-भाव पूर्ण व्यवहार होता रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 28 फरवरी सन् 1909 का दिन महिलाओं के अधिकारों के लिए महत्वपूर्ण रहा क्योंकि अमेरिका द्वारा पहला राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया गया था।

बीसवीं शताब्दी में विश्व के अधिकांश देश गुलामी से मुक्त होते गए और अपने देश में महिलाओं को समान रूप से अधिकार प्रदान करते गए। किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यह अनुभव किया जाता रहा कि महिलाओं के अधिकारों का बेहतर संरक्षण की आवश्यकता है। सन् 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ के स्थापना के पश्चात् मूल मानव अधिकारों को सम्मान देने कि प्रक्रिया प्रारंभ हुई। प्रस्तुत शोध पत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं को प्राप्त अधिकारों का मूल्यांकन किया गया है।

शब्द कुंजी - अतंर्राष्ट्रीय महिला, मानव अधिकार ।

प्रस्तावना - शोध का उद्देश्य - इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं को प्राप्त अधिकारों का अध्ययन करना है, जिससे यह ज्ञात किया जा सके कि महिलाओं को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कौन कौन से अधिकरों की परिगणना किया गया ।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध पत्र पूर्णत: सैद्धांतिक विधिक शोध पद्धति पर आधारित है। इस शोध पत्र की सम्पूर्ण संमक द्वितीयक है जिसमें सर्वमान्य ग्रन्थों एवं विधि के पुस्तकों को आधार माना गया है।

विवेचना- अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के मानव अधिकारों को संरक्षित करने हेतु निम्नलिखित प्रयास किये गये है।

1. संयुक्त राष्ट्र चार्टर में महिलाओं के अधिकारों को अनुच्छेद 1(3) में समाहित किया गया है, जिसमें यह कहा गया है कि मानव अधिकारों के लिए किसी प्रकार के जाति, लिंग, भाषा या धर्म पर आधारित भेद-भाव नहीं किया जायेगा। अनुच्छेद 8 में कहा गया है। कि संयुक्त राष्ट्र संघ के विभिन्न अभिकर्णों में पुरूष एवं महिलाएं समान रूप से भाग ले सकेगें। इसी प्रकार अनुच्छेद 13 में भी महिलाओं को अधिकार प्रदान किया गया है।
2. मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा पत्र 10 दिसम्बर 1948 अंगीकार किया गया- इस घोषणा पत्र का अनुच्छेद-2 में कहा गया है कि लिंग के विभेद के बिना ये मानव अधिकार स्त्री एवं पुरूष दोनों को प्राप्त है। अनुच्छेद-16 में यह कहा गया है कि वयस्क स्त्री एवं पुरूष को विवाह एवं कुटूम्ब स्थापित करने का पूरा अधिकार है। इसके अतिरिक्त घोषणा पत्र के सम्पूर्ण अधिकार महिलाओं और पुरूषों को समान रूप से अभिप्राप्त है।
3. सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों की प्रसंविदा में अनुच्छेद-3 में कहा गया है कि समस्त अधिकार बिना भेद-भाव के महिला एवं पुरूषों को प्राप्त है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद-4(1), 23(2) 26 में महिलाओं को विशेष अधिकार प्रदाय किए गए है।
4. आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की प्रसंविदा के अनुच्छेद 7(क) के अंतर्गत काम की न्यायोचित एवं अनुकुल दशाओं का तथा कर्मकार महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ करने का उपबंध किया गया है। अनुच्छेद-10 के अंतर्गत विवाह के इच्छुक पक्षकारों को स्वतंत्र सहमती से विवाह का अधिकार प्राप्त है और बच्चे के जन्म से पूर्व तथा जन्म के बाद माता को युक्ति युक्त समय के दौरान विशेष संरक्षण देने का उपबंध है।
5. महासभा ने महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रथा के भेदभाव की समाप्ति पर 7 नवम्बर 1967 को घोषणा अंगीकृत किया गया। इनमें महिलाओं को निम्न अधिकार घोषित किए गए भेदभाव कि पूर्व समाप्ति, भेदभाव परक वर्तमान विधियों, प्रथाओं एवं रीतियों का उन्मूलन, अधिकारो के समानता के सिद्धांत को अंगीकृत करने को बाध्य किया गया, सभी निर्वाचन में खड़ा होने तथा मतदान करने का अधिकार इत्यादि।
6. महासभा द्वारा 7 नवम्बर 1967 को महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव की समाप्ति की घोषणा में प्रस्तावित सिद्धांतों के क्रियान्वयन के लिए की समाप्ति पर अभिसमय 18 दिसम्बर 1979 को अंगीकार किया गया। इस अभिसमय में महिलाओं के समान अधिकारों की प्राप्ति के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत सिद्धांतों तथा उपायों को पक्षकार राज्यों पर बाध्यकारी बनाया गया है। इस अभिसमय के अनुच्छेद-2 के

* शोधार्थी (एम. फिल. विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** समआचार्य (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
*** समआचार्य एवं विभागाध्यक्ष (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

अनुसार पक्षकार राज्य की महिलाओं के समान प्रास्थिति देने के लिए उपबंध अपने राष्ट्र के संविधान में करेगें। अनुच्छेद –3 के अनुसार पक्षकार राज्य महिलाओं की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में उन्नति और विकास के लिए मानवाधिकारों और मूल स्वतंत्रताओं को पुरूषों के समान ही प्रदत्त करने के लिए विधान में उपयुक्त उपाय करेगें। इस प्रकार कहा जा सकता है कि इस अभिसमय में समग्र रूप से महिलाओं के न्यूनतम अधिकारों को पक्षकार राज्यों पर बाध्यकारी बना दिया गया।

इस अभिसमय के अतिरिक्त 7 अक्टूबर 1999 को महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति के लिए ऐच्छिक नयाचार को अभिसमय में अंगीकार किया गया। इसमें लैगिंक भेदभाव यौन शोषण एवं अन्य दुरूपयोग से पीड़ित महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव की समाप्ति के लिए राज्य पक्षकारों के विरूद्ध सक्षम बनायेगा।

7. महिलाओं को पुरूषों के समान राष्ट्रीयता प्रदान करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र ने महिलाओं के लिए राष्ट्रीयता अभिसमय 29 जनवरी 1957 पारित किया। इस अभिसमय के पक्षकार राज्य विवाहित महिलाओं की राष्ट्रीयता के संबंध में पुरूषों के समान ही उपबंध बनाने के लिए संकल्पित है। यह अधिकार महिलाओं को ठीक उसी प्रकार प्राप्त है, जिस प्रकार पुरूषों को स्वेच्छापूर्वक राष्ट्रीयता प्राप्त करने का अधिकार है।
8. संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा 20 दिसम्बर 1952 को महिलाओं के राजनैतिक अधिकार अभिसमय अंगीकार किया – इस अभिसमय में महिलाओं को मत देने राजनैतिक पद के लिए चुनाव लड़ने और लोक पद धारण करने का अधिकार पुरूषों के समान किया गया।
9. महिलाओं के मानवाधिकार संरक्षण में घोषणा पत्रों, अभिसमयों के अतिरिक्त विभिन्न सम्मेलनों का भी आयोजन किया गया है।

प्रथम अतंर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन – (मैक्सिको 1975)
द्वितीय अतंर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन – (कोपेन हेगन 1980)
तृतीय अतंर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन – (नौरोबी 1985)
चतुर्थ अतंर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन – (बीजिंग 1995)
कमीशन आन दि स्टेटस ऑफ वीमेन का 49वां सम्मेलन (न्यूयार्क–2005)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अतंर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण की एक लम्बी श्रृंखला है जो संयुक्त राष्ट्र संघ के स्थापना से सुदृढ़ होते जा रही है।

उपसंहार – महिलाओं के मानव अधिकारो के संरक्षण में विश्व समुदाय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा महिलाओं के मूल मानव अधिकारों को संरक्षित करने और सदस्य राष्ट्रों द्वारा पालन करवाए जाने हेतु जो कदम उठाए गए है वे सराहनीय है। परन्तु आज भी विश्व के विभिन्न देशो में महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन यह दर्शाता है कि विश्व स्तर पर परिगणित मानव अधिकारों को समुचित सम्मान प्राप्त नहीं हो पा रहा है।वर्तमान परिपेक्ष्य को यदि देखा जाए तो भारत में महिलाओं के अधिकारों का हनन स्पष्ट करता है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर के इन परिगणित अधिकारों के क्रियान्वयन में कुछ कमियां है।

विश्व के अनेक राष्ट्रो में भी महिलाओं के मूल मानव अधिकारों के संरक्षण में कमियॉ है। यहाँ तक की विश्व के विकसित राष्ट्रो अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, कनाडा, रूस में भी महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन दृष्टिगोचर होता है।यह सत्य है कि फूल के साथ कॉटे भी होते है लेकिन भी यह सत्य है कि विश्व स्तर पर महिलाओं के मानव अधिकारों के संरक्षण में बेहतर कार्य हुए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. अग्रवाल डॉ.एच.ओ., मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
2. कपूर डॉ.एस.के., मानव अधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद।
3. शर्मा डॉ. शिवदत्त, मानव अधिकार, विधि साहित्य प्रकाशन विधि और न्याय मंत्रालय भारत सरकार।
4. अवस्थी डॉ. शैलेन्द्र कुमार, मानव अधिकार, ओरिएन्ट पब्लिशिंग कंपनी।
5. शर्मा ब्रजकिशोर, मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा और भारत की विधी।
6. शर्मा सुभाष, भारत में मानवाधिकार नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया।
7. पाण्डेय डॉ. जयनारायण, भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) April to June 2017, Vol. I, Issue XVIII

वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति विद्यार्थियो के दृष्टिकोण का अध्ययन

प्रांजल शेखर * डॉ. अंजली कुमार मिश्र **

प्रस्तावना – प्राचीनकाल से ही समाज में अपने भावी नागरिकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक तथा अन्य सभी प्रकार के विकास करने का कार्य शिक्षकों को सौंपने की परम्परा रही है। शिक्षक शिक्षा प्राचीनकाल से लेकर मध्यकाल तक उपेक्षित ही रही। परन्तु ब्रिटिश काल में शिक्षक शिक्षा का महत्तव बढ़ा।

प्राचीन काल में शिक्षा व्यवहारिक रूप से व्यक्तिगत थी, किंतु जब से शिक्षा समूहों में दी जाने लगी तब से वैयक्तिक विभिन्नता के कारण प्रत्येक अध्यापक को शिक्षण की मनोवैज्ञानिक पद्धतियों का ज्ञान रखना भी आवश्यक हो गया। शिक्षण को कला एवं विज्ञान मानते हुए यह कथन उद्धृत किया जा सकता है कि 'उत्तम से उत्तम शिक्षा प्रणाली योग्य शिक्षकों के अभाव में व्यर्थ सिद्ध हो जाती है। शिक्षण एक कला के साथ-साथ विज्ञान भी है। इसके अभाव में किसी भी शिक्षक को सफलता मिल ही नहीं सकती।' शिक्षण में वैज्ञानिकता लाने के लिए तथा अच्छा अध्यापन करने के लिए शिक्षाविदों ने शिक्षक-प्रशिक्षण का प्रावधान किया। आज शिक्षक प्रशिक्षण का जो स्वरूप हमारे सामने है, उसके अतीत पर ध्यान देना आवश्यक एवं अध्ययन की दृष्टि से उपयोगी है, भारत में शिक्षक प्रशिक्षण व उसका स्वरूप बहुत पुराना है। यह प्रक्रिया मानीटर प्रणाली से प्रारम्भ होती है। इस प्रणाली में वरिष्ठ छात्र अध्यापन का कार्य करता है किंतु कक्षाध्यापक की इसकी देखरेख करता रहता है। यह स्वरूप बहुत दिनों तक चलता रहा और आज भी प्राय: छोटी कक्षाओं में देखने को मिलता है। यही प्रक्रिया आगे चलकर क्रमश: छात्राध्यापक प्रणाली हो गई और पुन: इसका स्वरूप बदलकर अध्यापक प्रशिक्षण बन गया। वर्तमान समय में हम इसे अध्यापक शिक्षा के नाम से जानने लगे है।

शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम का विद्यालयी स्वरूप 1793 ई0 से प्रारम्भ होता है। शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारम्भिक विद्यालय के अध्यापकों से प्रारम्भ हुआ और यह माध्यमिक विद्यालयों तक पहुँचा अब यह कार्यक्रम महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालय के शिक्षकों के लिए भी आवश्यक समझा जाने लगा है।

सन् 1882 में हन्टर आयोग ने शिक्षक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये, जिनके फलस्वरूप 19वीं शताब्दी के अन्तिम वर्षो में अनेक प्रशिक्षण विद्यालय तथा महाविद्यालय खुले। सन् 1904 में लार्ड कर्जन ने अपने प्रस्ताव में शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या में वृद्धि करने प्रशिक्षण की गुणवत्ता को बढ़ाने, स्नातक से कम योग्यता वाले प्रशिक्षणार्थियों के लिए दो वर्षीय तथा स्नातकों के लिए एक वर्षीय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने प्रशिक्षण महाविद्यालयों से अभ्यासात्मक विद्यालय सम्बन्धित करने तथा प्रशिक्षण के दौरान सैद्धान्तिक व व्यवहारिक दोनों पक्षों का ज्ञान देने जैसे सुझाव भी रखें। इन सुझावों का शिक्षक प्रशिक्षण के विकास पर व्यापक प्रभाव पड़ा तथा शिक्षक प्रशिक्षण के आन्दोलनों को नवीन शक्ति मिली। 20वीं शताब्दी के प्रथम कुछ दशकों में प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई। इसके बाद सन् 1929 में हर्टोग समिति ने प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण पर अधिक बल देने, प्रशिक्षण की अवधि बढ़ाने, शिक्षकों के लिए अभिनव पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने तथा शिक्षकों की सेवा शर्ते सुधारने जैसे सुझाव दिए। सन् 1937ई0 में बम्बई विश्वविद्यालय ने एम0एड0 पाठ्यक्रम प्रारम्भ कर दिया। सन् 1937 में वुड एक्ट प्रतिवेदन तथा सन् 1944 में सार्जेन्ट रिपोर्ट में भी शिक्षक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में अनेक सुझाव दिए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् 1948 में गठित राधाकृष्ण आयोग ने सैद्धान्तिक व पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर अध्यापन अभ्यास पर अधिक बल देने का सुझाव दिया। सन् 1952 में गठित मुदालियर आयोग ने माध्यमिक शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को दो वर्षीय तथा स्नातकों को एकवर्षीय प्रशिक्षण देने तथा सेवारत शिक्षकों को प्रशिक्षण के लिए सवेतन अवकाश व नि:शुल्क प्रशिक्षण देने की सिफारिश की तथा सन् 1961 में भारत सरकार ने शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद का गठन किया।

सन् 1963-64 में विभिन्न राज्यों में राज्य शिक्षा संस्थान की स्थापना की गई, जो सेवाकालीन प्रशिक्षण, प्रशिक्षण सामग्री व पाठ्य पुस्तकों में सुधार तथा शिक्षा के विकास के लिए परामर्श देने का कार्य करते है। सन् 1964-66 में कोठारी आयोग ने राज्यों में शिक्षक शिक्षा परिषद् गठित करने की संकल्पना की है। सन् 1982 में 5 सितम्बर अर्थात् शिक्षक दिवस पर भारत सरकार ने शिक्षक व्यवसाय के उद्देश्यों, शिक्षकों की भूमिका, शिक्षकों के प्रशिक्षण, शिक्षक कल्याण, शिक्षकों के लिए आचार संहिता शिक्षकों की स्थिति के सम्बन्ध में अध्ययन करने तथा परामर्श देने के लिए दो आयोगों - शिक्षकों के लिए राष्ट्रीय आयोग प्रथम व द्वितीय का गठन किया। भारत के शैक्षिक इतिहास से यह पहला अवसर था जब पूर्णरूप से शिक्षकों के लिए समर्पित किसी आयोग का गठन किया गया हो। शिक्षा विभाग के आदेशानुसार प्रत्येक विद्यालय में प्रशिक्षित शिक्षक ही नियुक्त किए जाते हैं। सरकार ने अपने व्यक्तिगत प्रयासों से शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं का विकास किया है ओर आगे भी प्रयासरत है।

वर्तमान में एन.सी.टी.ई. के नये आदेशानुसार बी0एड्0 एवं एम0एड्0 का द्विवर्षीय पाठ्यक्रम पूरे देश में लागू है। अत: इस नये पाठ्यक्रम के प्रति विद्यार्थियों के दृष्टिकोण का अध्ययन नवीन विषय है एवं अपने आप में

* शोधार्थी, राजा हरपाल सिंह पी0जी0 कॉलेज, जौनपुर (उ.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, राजा हरपाल सिंह पी0जी0 कॉलेज, जौनपुर (उ.प्र.) भारत

महत्तव रखता है। इसके माध्यम से वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक–प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति विद्यार्थियों के दृष्टिकोण को समझा जा सकता है एवं अपेक्षित सुधार सुझाए जा सकते है।

समस्या कथन –'वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति विद्यार्थियों के दृष्टिकोण का अध्ययन।'

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण।

- **शिक्षक–प्रशिक्षण पाठ्यक्रम –** शिक्षक प्रशिक्षण वह शैक्षिक आयोजन है जिसमें विभिन्न स्तरीय एवं वर्गीय शिक्षकों को इस तरह से शिक्षित करने के लिए प्रयत्न किया जाता है कि आने वाली पीढ़ी को मान एवं मूल्यों के हस्तांतरण के साथ ही उनके समस्त शैक्षिक एवं विकासात्मक दायित्व को ग्रहण व वहन करने में वे सक्षम हो सके तथा उनमें तकनीकी, कुशलता, वैज्ञानिक चेतना, संसाधन सम्पन्नता, सांस्कृतिक चेतना, मानवता बोध का समन्वयात्मक विकास हो सके।

एन0सी0टी0ई0 द्वारा PDSE, D.El.Ed., B.El.Ed., B.Ed., M.Ed., D.P.Ed., M.P.Ed., Diploma in Arts Education (Visual Arts), Four Year B.A. B.Ed./B.Sc.Ed, Three Year (Part Time) B.Ed. Degree, Three Year B.Ed. M.Ed. (Integrated) Degree आदि शिक्षक–प्रशिक्षण पाठ्यक्रम संचालित किए जा रहे है।

शिक्षक–प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की व्यापकता एवं शोध हेतु समय तथा खर्च को ध्यान में रखते हुए समग्र पाठ्यक्रमों पर शोध कर पाना दुरूह कार्य है। अत: शिक्षक–प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के अन्तर्गत वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालयों में संचालित हो रहे एम0एड्0 पाठ्यक्रम को लिया गया है।

दृष्टिकोण –

रैमर्स, गेज तथा रूमेल के शब्दों में –

'अभिवृत्ति अथवा दृष्टिकोण किसी मनोवैज्ञानिक वस्तु के प्रति, अनुभवों के द्वारा संगठित, धनात्मक या ऋणात्मक प्रतिक्रिया करने की संवेगात्मक प्रवृत्ति है।'

शोध का उद्देश्य – वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति विद्यार्थियों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ–

1. वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्रों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

परिसीमांकन – वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय से सम्बद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में एम0एड्0 स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों को सम्मिलित किया जायेगा।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन में समस्या की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए वर्णनात्मक शोध की एक विधि सर्वेक्षणात्मक विधि को अपनाया गया है।

जनसंख्या (समष्टि)–प्रस्तुत अध्ययन में वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर से सम्बद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में एम0एड्0 स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों को जनसंख्या माना गया है।

न्यादर्श – शोधकर्ता ने सम्भाव्य प्रतिचयन के अन्तर्गत वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर से सम्बद्ध राजा हरपाल सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिंगरामऊ, जौनपुर, टी0डी0 कालेज, जौनपुर, राजा श्रीकृष्णदत्ता पी0जी0 कालेज, जौनपुर महाविद्यालयों में एम0एड्0 स्तर पर अध्ययनरत् 100 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप मे लिया है।

प्रयुक्त मापन उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्त्ता ने प्रमाणिक वर्तमान शिक्षक–प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति स्वनिर्मित दृष्टिकोण मापनी का प्रयोग किया है। दृष्टिकोण मापनी के सारे कथन शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम अर्थात एम0एड्0 पाठ्यक्रम के चारों सेमेस्टर से लिए गए है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियाँ – शोधकर्ता ने उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं को दृष्टि में रखते हुए मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि, क्रांतिक अनुपात (Critical Ratio), क्रान्तिक–अनुपात, स्वतंत्रता का अंश (Degree of Freedom) एवं T-Table का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या –

परिकल्पनाओं का परीक्षण –

H_1 - वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्रों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है।

H_{01} - वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्रों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्रों के दृष्टिकोण मध्यमानों के अन्तर का t–मान 0.835 है जो कि मुक्तांश 51 तथा सार्थकता स्तर 0.05 पर t– के तालिका मान 2.00 से कम है। अत: मध्यमानों के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना (H01) स्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना ($क_1$) अस्वीकृत की जाती है।

H_2 – वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है।

H_{02} – वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं की दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं के दृष्टिकोण मध्यमानों के अन्तर का t– मान 0.787 है जो कि मुक्तांश 45 तथा सार्थकता स्तर 0.05 पर t– के तालिका मान 2.02 से कम है। अत: मध्यमानों के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना (H_{02}) स्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना (H_2) अस्वीकृत की जाती है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

- 0.05 सार्थकता स्तर पर वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्रों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- 0.05 सार्थकता स्तर पर वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राओं के दृष्टिकोण में कोई सार्थक

अन्तर नहीं है।

शैक्षिक निहितार्थ – प्रस्तुत शोध में वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है, जिसका प्रमुख उद्देश्य प्रशिक्षणार्थियों में शिक्षण व्यवसाय में कितना रूचि रखते है और उनका दृष्टिकोण क्या है यह पता लगाना था।

विद्यार्थियों हेतु निहितार्थ –

1. शिक्षण जिनका कार्य आने वाली पीढ़ी रूपी पौधे को सिंचित करना है, जिनके कंधों पर देश के समस्त विकास की बागडोर है। उनके दृष्टिकोण एवं अभिवृत्ति का परिचय प्राप्त करना न केवल उनके लिए अनुसंधान करने के लिए अपितु यह शिक्षा प्रक्रिया के पूर्णरूपेण नियत संचालन के लिए नितान्त अपरिहार्य है। ज्ञान एवं शिक्षण अध्यापक एवं उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।
2. यदि शिक्षक प्रशिक्षण प्रशिक्षणार्थी अपने कार्य से संतुष्ट नहीं है, व्यवसाय चयन मात्र उसकी औपचारिकता है तथा वह अपने विद्यार्थियों, शैक्षिक प्रक्रिया आदि के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति नहीं हो सकती।
3. शिक्षकों के स्तर में सुधार लाने में भी प्रस्तुत अध्ययन उपयोगी है।
4. शिक्षक प्रशिक्षण के विद्यार्थियों को पाठ्यक्रम के प्रति सकारात्मक सोच अपनाना चाहिए जिससे आगामी भविष्य में शिक्षण कार्य करने में उन्हें कोई परेशानी न हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्ता, एस0पी0 (2013), अनुसंधान विधियाँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. गौड़, श्वेता (2009), इलाहाबाद जिले के स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थाओं में संरचनात्मक एवं अनुदेशनात्मक सुविधाओं का अध्ययन, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।
3. पाण्डेय, दीप्ति (2010), वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्ययनरत बी0एड0 विद्यार्थियों का संस्थागत प्रशासनिक पद्धति के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

तालिका – 1

क्र. सं.	समूह	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	मध्यमानों का अन्तर (M_1~M_2)	मानक त्रुटि (S_D)	t - मान	सार्थकता स्तर
1.	सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के छात्र	28	99.00	20.42	4.48	5.36	0.835	0.05 स्तर पर सार्थक
2.	स्ववित्तापोषित महाविद्यालयों के छात्र	25	94.52	17.87				

तालिका – 2

क्र. सं.	समूह	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	मध्यमानों का अन्तर (M_1~M_2)	मानक त्रुटि (S_D)	t - मान	सार्थकता स्तर
1.	सहायता प्राप्त महाविद्यालयों की छात्रा	12	98.25	20.40	5.78	7.34	0.787	0.05 स्तर पर सार्थक
2.	स्ववित्तापोषित महाविद्यालयों की छात्रा	35	104.03	23.39				

****

एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ. रिटा बिश्ट*

प्रस्तावना – वर्तमान शिक्षा शास्त्री पॅस्तालॉजी, फ्रोबेल, मॉन्टेसरी, हेण्डरसन तथा रेमाण्ट बालक के विकास में परिवार के स्थान को सर्वोच्च मानते है। फ्रोबेल के अनुसार माताएँ आदर्श अध्यापिकाएँ तथा घर द्वारा प्रदत्त अनौपचारिक शिक्षा सर्वाधिक प्रभावशाली व स्वाभाविक है। सर्व विदित है कि शिवाजी ने अपने पारिवारिक वातावरण में ही वीरता का पाठ पढ़कर जीवन भर साहस के साथ संघर्ष किया था। इस प्रकार गाँधीजी ने भी अपने माता पिता के आचरण से प्रभावित होकर सत्य अंहिसा और प्रेम के सिद्धांतो को अपनाया था।

आदर्श परिवारों के सदस्य बालक में जीवनपयोगी मूल्यों व आदर्शों का विकास करने के लिए सदैव व प्रत्यनशील रहते है, परिवारजनों के मूल्यों से सम्बन्धित इन मान्यताओं के प्रति बचपन में पडे संस्कार अमिट होते है। परिवार के सदस्यों के नैतिक व चारित्रिक गुणों का प्रत्यक्ष प्रभाव बालक के नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ता है और उसमें जाति व राष्ट्र के प्रति प्रेम के स्थायी भाव बनते है। जिससे बालकों में आज्ञापालन, कर्त्तव्यपालन, सत्यता, ईमानदारी, परोपकार, स्वतंत्रता, सहिष्णुता, बलिदान, अहिंसा जैसे उत्तम गुणों का विकास होता हैं, जो चारित्रिक व नैतिक दृढ़ता के लिए आवश्यक है। बालक विद्यालय के नियम जैसे समय से विद्यालय जाना, गुरूओं का आज्ञापालन, समय-समय पर आयोजित सांस्कृतिक तथा साहित्यिक कार्यक्रमों में भाग लेना, अध्ययन कार्यो में रूचि लेना, विद्यालय का काम समय पर पूरा करना आदि परिवार की प्रेरणा से ही सीखता है। इसके विपरीत परिवारों का दूषित वातावरण जैसे परिवारजनों की कथनी करनी में अंतर, उनके बीच असहयोग, घृणा एवं असंभावित व झगडालू प्रवृत्ति के माता पिता इत्यादि का बच्चों पर अस्वास्थ्यकर प्रभाव पड़ता है। परिणामस्वरूप बालक आपराधिक प्रवृत्तियों की ओर बढ़ता हैं, जिससे उसमें नैतिक मूल्यों का यथोचित विकास नहीं होता हैं,

समस्या का औचित्य – संसार में बच्चों का जनसंख्या वाला दूसरा बड़ा देश भारत है। देश की पूर्ण जनसंख्या में से 0 से 19 वर्ष के बालकों की 50 प्रतिशत सहभागिता हैं। आज के ये बालक कल के राष्ट्र निर्माता है। माननीय ऊर्जा का एक बड़ा शक्तिशाली स्त्रोत है एवं ये भारत के सामाजिक व आर्थिक भविष्य के भी निर्माता है। किन्तु दुर्भाग्यवश इन बालकों की बड़ी जनसंख्या का एक प्रमुख भाग अनाथ, असहाय व तिरस्कृत तथा नकारे गये बालकों का हैं एवं देश की बढ़ते हुए शहरीकरण व पाश्चात्यकरण से इन बालकों की संख्या बढ़ती जा रही हैं। यदि हम मानवता के इतने बडे भाग को नकारते हैं, तो देश के भविष्य के लिए अनेक समस्याए उत्पन्न हो जायेगी। अत: समाज के लोगों में इन बालकों के पूर्ण विकास के लिए अपने कर्त्ताव्यों को निभाने व उपलब्धि हेतु अभिप्रेरित करने में यह अध्ययन महत्वपूर्ण महत्वपूर्ण हैं क्योंकि आज का बालक ही कल के राष्ट्र का भविष्य है।

समस्या अभिकथन – प्रस्तुत अध्ययन द्वारा शोधकर्त्री यह जानना चाहती हैं कि एस.ओ.एस. बालग्राम संस्था द्वारा प्रदत्ता पारिवरिक वातावरण किस हद तक सामान्य परिवारों के समान बालकों के नैतिक मूल्यों के संबंधों के विकास में शिक्षा के प्राथमिक व अनौपचारिक अभिकरण की भूमिका निभा रहा है। एसओएस बालग्राम की पालन पोषण की पद्धति का इसमें परिवरिश पा रहे बालकों के जीवन के विभिनन आयामों (नैतिक मूल्यों) के विकास पर कैसा प्रभाव पड़ता हैं ? का अध्ययन करने हेतु शोधकर्त्री ने निम्नलिखित शोध विषय का चयन किया।

'' एसओएस बालग्राम के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ते वाले प्रभाव का अध्ययन।''

शोध का उद्देश्य :-

1. एसओएस बालग्राम के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ते वाले प्रभाव का अध्ययन।

शोध की परिकल्पनाएं-प्रस्तुत शोध की समस्या हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की गई हैं :

1. सम्प्रत्यात्मक
2. क्रियात्मक

सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना – एसओएस बालग्राम (संस्थागत) व सामान्य परिवार के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता हैं।

क्रियात्मक 1.1 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के बालकों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 1.2 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के बालकों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना – सामान्य परिवारों के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास परलिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव हैं।

क्रियात्मक 2.1 – सामान्य परिवारों के लड़के लड़कियों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 2.2 – सामान्य परिवारों के लड़के लड़कियों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना – संस्थागत की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास परलिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता हैं।

क्रियात्मक 3.1 – एसओएस बालग्राम (संस्थागत) के लड़के लड़कियों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

* डायरेक्टर, दीपशिखा कॉलेज ऑफ टेक्टिन एज्युकेशन, जयपुर (राज.) भारत

क्रियात्मक 3.2 – संस्थागत के लड़के लड़कियों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।

सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना :– संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

क्रियात्मक 4.1 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 4.2 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना – संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कियों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

क्रियात्मक 5.1 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कियों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 5.2 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कियों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

अनुसंधान की विधि – अनुसंधान समस्या की प्रकृति तथा प्रस्तावित उद्देश्य के स्वरूप को देखते हुए शोधकर्त्री द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। शोधकर्त्री के लिए सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन करना संभव नहीं था। इसलिए दिल्ली व जयपुर (उत्तारप्रदेश) के एसओएस व दो सामान्य राजकीय विद्यालय, जयपुर (राजस्थान) के बालकों को सद्देश्य न्यादर्श विधि द्वारा 269 लड़को व लडकियों को अध्ययन हेतु न्यादर्श में चुना हैं, जिनकी आयु 12 से 18 हैं।

प्रस्तुत शोध में लिए जाने वाले न्यादर्श का स्वरूप निम्न प्रकार निर्धारित किया गया हैं **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

न्यादर्श का सारणीयन निम्न प्रकार हैं –

क्र.	संस्था का नाम	लड़के	लड़कियों	कुल
1.	एस.ओ.एस. बालग्राम, जयपुर	15	40	55
2.	एस.ओ.एस. बालग्राम, दिल्ली (बयाना)	25	56	81
3.	पं. दीनदयाल उपाध्याय, रथखाना, जयपुर	70		70
4.	बालिका राजकीय विद्यालय, बनीपार्क, जयपुर	–	63	63
	कुल	110	159	269

प्रयुक्त उपकरण – शोधविषय तथा अध्ययन उद्देश्य के आधार पर इस अध्ययन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत उपकरणों का प्रयोग किया हैं –

नैतिक मूल्यों के मापन हेतु – लीना जे. पूरनचन्द वनस्थली विद्यापीठ द्वारा मूल्य मापनी।

प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रस्तुत अध्ययन से सम्बन्धित परीक्षणों का विधिवत् प्रशासन करके विश्लेषण किया गया हैं।

1. मध्यमान
2. टी अनुपात परीक्षण
3. ''एफ'' रेशा

अध्ययन की परिसीमाए :

1. वर्तमान अध्ययन हेतु भारत के उत्तार, पश्चिम, पूर्व, दक्षिण में से केवल उत्तर क्षेत्रीय (दिल्ली व जयपुर के) एस.ओ.एस. बालग्राम को ही चुना है।
2. केवल जयपुर के 2 राजकीय विद्यालयों के लडके व लड़कियों को ही न्यादर्श में सम्मिलित किया है।
3. एस.ओ.एस. बालग्राम में लड़कों की संख्या व उपस्थित कम होने के कारण न्यादर्श में अधिक लड़कियों को सम्मिलित किया गया।
4. न्यादर्श में 12 से 18 वर्ष के बालकों का ही चयन किया गया हैं।
5. अध्ययन हेतु केवल नैतिक मूल्यों को ही सम्मिलित किया गया हैं।
6. बालक का पालन पोषण करने वाली अनेक संस्थाओं में से केवल एस.ओ.एस. बालग्राम संस्था को ही अध्ययन हेतु चुना गया है।
7. एस.ओ.एस. बालग्राम के लड़के व लड़कियों का केवल सामान्य परिवारों में परिवरिश पाने वाले लड़के लड़कियों से ही तुलनात्मक अध्ययन किया है।

शोध के निष्कर्ष – शोधकर्त्री द्वारा अपने उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए बनाई गई है। परिकल्पनाओं के आधार पर निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए।

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 1 – एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवार के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता हैं।

परिवार की पालन पोषण पद्धति का उनके बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 1.1 व 1.2 का प्रयोग किया जो अस्वीकृत हुई हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवार के बालकों की पालन पोषण पद्धति उनके नैतिक मूल्यों के विकास को प्रभावित करती है। एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों में नैतिक मूल्यों का विकास अपेक्षाकृत कम हैं।

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 2 – सामान्य परिवारों के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता है।

सामान्य परिवारों का पालन पोषण का लिंगभेद के कारण उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 2.1 व 2.2 का प्रयोग किया हैं, जो अस्वीकृत हुई हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परिवारों के पालन पोषण पद्धति का बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण प्रभाव पड़ता है।

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 3 – संस्थागत बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता है।

संस्थागत परिवारों के बालकों की पालन पोषण पद्धति का लिंगभेद के कारण उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 3.1 व 3.2 का प्रयोग किया हैं, जो अस्वीकृत हुई हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि पालन पोषण पद्धति बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास को लिंगभेद के कारण प्रभावित करती है अर्थात् संस्थागत के लड़के व लड़कियों के नैतिक मूल्यों के विकास में अन्तर है। इसका संभावित कारण यह हैं कि लड़कियों, लड़कों की अपेक्षा अधिक आज्ञाकारी एवं कर्त्ताव्यपरायणता होती हैं और नियम पालन मे गंभीर होती है।

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 4 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक

प्रभाव पड़ता है।

संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कों की पालन पोषण पद्धति का उनके लड़कों के नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 4.1 व 4.2 का प्रयोग किया हैं, जो अस्वीकृत हुई हैं। जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि संस्थागत व सामान्य परिवारों की पालन पोषण पद्धति मूल्यों के विकास को प्रभावित करती है अर्थात् संस्थागत लड़कों में नैतिक मूल्यों का विकास अपेक्षात्मक कम हैं, अभिप्राय यह हैं कि संस्थागत के परिवारों में संस्थागत माँ की लड़कों में नैतिक मूल्यों के विकास के प्रति सजगता कम हैं। जिससे इन बालकों को मूल्य प्रधान अनुकरणीय पारिवारिक वातावरण उपलबध नहीं हो रहा है। सामान्य परिवारों के बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास के प्रति सजगता कम हैं। जिससे इन बालकों के मूल्य प्रधान अनुकरणीय पारिवारिक वातावरण उपलब्ध नहीं हो रहा है।

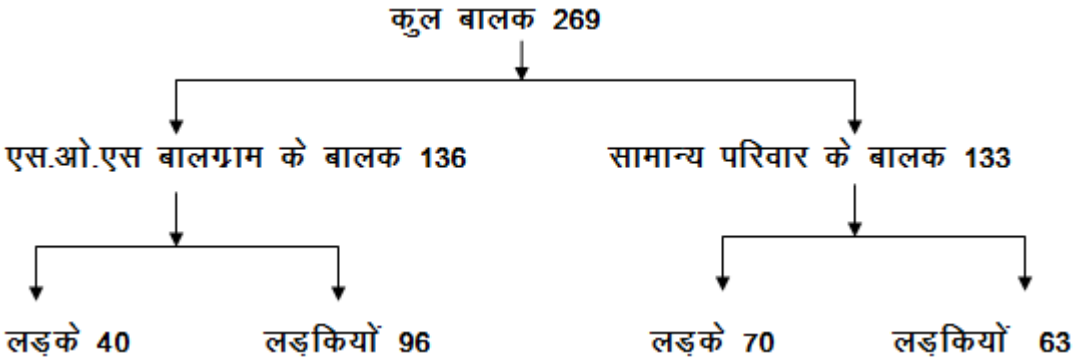
सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 5 – संस्थागत व सामान्य परिवारों की लड़कियों पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

संस्थागत व सामान्य परिवारों की लड़कियों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 5.1 व 5.2 का प्रयोग किया हैं, जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सामान्य परिवार व संस्थागत की पालन पोषण पद्धति मूल्यों के विकास को प्रभावित करती हैं, अर्थात् संस्थागत लड़कियों में नैतिक मूल्यों का विकास अपेक्षाकृत कम है। इसका अभिप्राय हैं कि संस्थागत के घरों के पारिवारिक वातावरण में नैतिक मूल्यों की प्रधानता अपेक्षाकृत कम है।

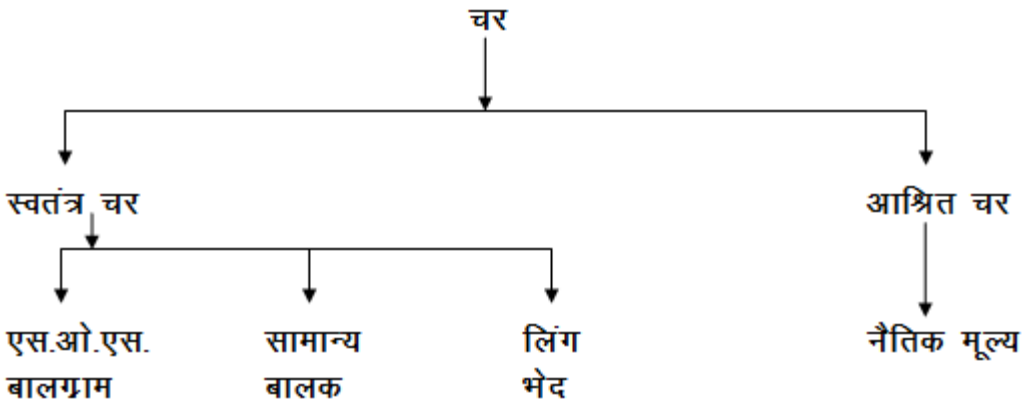
सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. आसुबेल डी.पी. (1868), ''द साइकोलॉजी ऑफ मीनिंगफुल लर्निंग'' न्यूयार्क, ग्रीन एण्ड स्टोटेन''
2. आसुबेल डी.पी. एवं फिट्जगॅराल्ड (1962), ''जनरल ऑफ एजुकेशन एण्ड साइकोलॉजी'' 18 (12)
3. आसुबेल डी.पी. एव युसुफ (1963), ''रिव्यू ऑफ एजूकेशनल रिसर्च', 24 पृ. ठ सं. 533-34
4. अग्रवाल, वाई पी., ''स्टैटिस्टिकल मेथड्स, कॉन्सेप्ट एप्लीकेशन एण्ड कम्प्यूटेशन, सैकिण्ड एडिशन'', स्अर्लिंग पब्लिशर्स प्रा. लि.

प्रस्तुत शोध में लिये जाने वाले न्यादर्श का स्वरूप निम्न प्रकार निर्धारित किया गया हैं **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**



चर प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित स्वतंत्र व आश्रित चर हैं



****

वनशाला शिविर कार्यक्रम का बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन (मन्दसौर जिले के संदर्भ में)

मनीष राठौर *

प्रस्तावना – प्रकृति प्रदत्त स्थितियों का सानिध्य व्यक्ति की आन्तरिक क्षमताओं का यथानुरूप प्रस्फुटित एवं विकसित करने में पूर्ण सहयोग प्रदान करता है। जीवन की वस्तुस्थितियों के साहचर्य के बिना व्यक्ति की सहज प्रवृत्तियों कभी भी सही दिशा में निर्देशित नहीं हो सकती अपितु मात्र कृत्रिमता से युक्त ही रहती है।

शिक्षा का उद्देश्य जीवन का सर्वांगीण विकास करना है, जिससे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र और परिस्थिति के लिए छात्र तैयार हो सके। अत: आवश्यकता इस बात कि है कि विद्यार्थियों के शैक्षिक एवं मानवीय पक्ष को उत्कृष्ट बनाने हेतु शिक्षा में ऐसे कार्यक्रमों को आयोजन किया जाए जो छात्रों को समाज एवं देश की वास्तविक स्थितियों से परिचित करावें ताकि विद्यार्थी उन स्थितियों में रहते हुए शिक्षा प्राप्त कर सफल नागरिक बन सके।

इसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु बी.एड. महाविद्यालयों में वनशाला शिविर का आयोजन किया जाता है। वनशाला शिविर के अन्तर्गत वनशाला स्थान का सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, शैक्षणिक, प्राकृतिक एवं औद्योगिक दृष्टि से अध्ययन किया जाता है। इस शिविर अवधि के दौरान सभी प्रशिक्षणार्थि सामुदायिक जीवन व्यतीत करते है तथा उनके सामाजिक गुणों को अर्जित करते है, जैसे –सहयोग, श्रम के प्रति निष्ठा, अनुशासन, प्रकृति प्रेम, बड़ों के प्रति सम्मान आदि। लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय द्वारा आयोजित वनशाला शिविर में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। योग, प्रार्थना, सामाजिक सर्वेक्षण, मौन वेला, सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा भ्रमण। श्रम निष्ठा, अनुशासन, सहयोग, नेतृत्व, सादगी, सौन्दर्यानुभूति, शिक्षकों के प्रति सम्मान व सामाजिकता के गुणों के विकास में पूर्ण अवसर इस शिविर के दौरान प्रशिक्षणार्थियों को प्राप्त होते है। अत: वनशाला शिविर का विद्यार्थियों के सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों के विकास पर क्या प्रभाव हुआ यह जानने के लिए इस विषय का चयन किया गया।

समस्या कथन – वनशाला शिविर कार्यक्रम का बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन।(मन्दसौर जिले के संदर्भ)

शोध उद्देश्य – वनशाला शिविर कार्यक्रम से बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों में विकसित होने वाले सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों का पता लगाना।

परिकल्पना – वनशाला शिविर से पूर्व एवं वनशाला शिविर के पश्चात् प्रशिक्षणार्थियों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों के विकास में कोई अन्तर नहीं होता है।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन के लिए 100 बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों का चयन किया गया। न्यादर्श चयन यादृच्छिक विधि के अन्तर्गत लॉटरी विधि द्वारा किया गया।

परिसीमन – उपर्युक्त शोध मन्दसौर जिले में स्थित शिक्षक प्रशिक्षक महाविद्यालय में अध्ययन सत्र 2016–17 के प्रशिक्षणार्थियों तक ही सिमित किया गया।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया।

उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन के लिए स्वनिर्मित उपकरण सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। कुल आठ सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों से संबधी 40 प्रश्नों का निर्माण किया गया।

सांख्यिकी – प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्रतिशत का प्रयोग किया गया।

प्रदत्तों का विश्लेषण – सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य प्रश्नावली परीक्षक के प्रदतों का विश्लेषण मूल्यवार किया गया। कुल आठ मूल्य थे। प्रत्येक मूल्य का वनशाला पूर्व व पश्चात का प्रतिशत मान निकालकर तुलना की गई जो निम्न सारणी द्वारा प्रस्तुत है –

क्रं.	सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य	वनशाला पूर्व :	वनशाला पश्चात:	सार्थकता स्तर
1	श्रमनिष्ठा	70 %	70 %	असार्थकता
2	अनुशासन	60 %	76 %	सार्थकता
3	सहयोग	75 %	84 %	सार्थकता
4	स्वच्छता	72 %	76 %	सार्थकता
5	बड़ों के प्रति सम्मान	80 %	80 %	असार्थकता
6	सामाजिकता	76 %	82 %	सार्थकता
7	सृजनात्मकता	73 %	79 %	सार्थकता
8	प्रतिभा प्रदर्शन	64 %	76 %	सार्थकता

प्रदत्तों की व्याख्या – श्रमनिष्ठा से सम्बन्धी मूल्य में वनशाला शिविर पूर्व व वनशाला पश्चात् का प्रतिशत समान पाया गया। अर्थात् प्रशिक्षणार्थियों में सामूहिक श्रम कार्य करने, में आनन्द महसूस करने शारीरिक श्रम द्वारा बौद्धिक विकास होना, अपना काम स्वयं करना, शारीरिक श्रम को सामाजिक दायित्व मानना आदि विचारों में वनशाला शिविर के पूर्व एवं पश्चात में कोई अन्तर नहीं पाया गया।

अनुशासन सम्बन्धी मूल्य में वनशाला शिविर पूर्व पश्चात् के प्रतिशत

* शोधार्थी (शिक्षा) कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर (छत्तीसगढ) भारत

में अन्तर पाया गया। प्रात: समय पर उठना, मौन वेला,परिषदवार एकत्रित रहना, सर्वे में नियमानुसार भाग लेना, समय अनुसार सभी गतिविधियों को करना, परिसर नियमों का पालन करना आदि अनुशासन सम्बन्धी मूल्यों का विकास वनशाला शिविर के दौरान प्रशिक्षणार्थियों में हुआ।

सहयोग सम्बन्धी मूल्य में वनशाला शिविर पूर्व पश्चात के प्रतिशत में अन्तर पाया गया। दूसरों के साथ काम करने में आनन्द का अनुभव, मिलजुलकर कार्य करने से कार्य आसान होना, सहयोग की भावना से व्यक्तित्व ऊँचा होना व स्वयं का विकास होना आदि सहयोग सम्बन्धी मूल्यों का विकास वनशाला शिविर के दौरान प्रशिक्षणार्थियों में हुआ।

स्वच्छता सम्बन्धी मूल्य में वनशाला शिविर पूर्व व पश्चात के प्रतिशत में अन्तर पाया गया। परिसर की स्वच्छता सुरक्षा रखना, कचरा सही जगह पर डालना, अपने सामान को व्यवस्थित रखना आदि स्वच्छता सम्बन्धी मूल्यों का विकास वनशाला शिविर के समय में प्रशिक्षणार्थियों में हुआ।

बड़ों के प्रति सम्मान सम्बन्धी मूल्य में वनशाला शिविर के पूर्व व पश्चात मे कोई सार्थक अन्तर पाया गया। शिक्षकों का आदर व श्रद्धा करना, उनके मार्गदर्शन में चलना, बड़ों के प्रति शिष्टाचार आदि मूल्य का प्रशिक्षणार्थियों में वनशाला शिविर के पूर्व व पश्चात समान पाए गए।

सामाजिकता सम्बन्धी मूल्यों में वनशाला शिविर के पूर्व व पश्चात के प्रतिशत मे सार्थक अन्तर पाया गया। समाज की समस्याओं के बारे में जानना, समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना समाज हित सम्बन्धी कार्य करने की भावना का विकास आदि सामाजिकता सम्बन्धी मूल्यों का विकास प्रशिक्षणार्थियों में वनशाला शिविर के दौरान हुआ।

सृजनात्मकता सम्बन्धी मूल्य में वनशाला शिविर के पूर्व व पश्चात में प्रतिशत में सार्थक अन्तर पाया गया। उपलब्ध संसाधनों से नवीन सृजन, विविध कार्यक्रमों में नवीनता आदि मूल्यों का विकास प्रशिक्षणार्थियों में वनशाला शिविर के दौरान हुआ।

प्रतिभा का प्रदर्शन सम्बन्धी मूल्यों में वनशाला शिविर के पूर्व व पश्चात के प्रतिशत में सार्थक अन्तर पाया गया का प्रदर्शन सम्बन्धी मूल्य में। रंगोली द्वारा प्रतिभा प्रदर्शन, सांस्कृतिक कार्यक्रम में भाग लेना, विविध कार्यक्रमों का नेतृत्व करना आदि मूल्यों विकास वनशाला शिविर के दौरान हुआ।

निष्कर्ष :

1. अनुशासन, सहयोग, स्वच्छता, सामाजिकता, सृजनात्मकता व प्रतिभा प्रदर्शन सम्बन्धी मूल्यों का वनशाला शिविर के बाद अधिक विकास हुआ है। वनशाला शिविर में इन मूल्यों के विकास के पूर्ण अवसर प्रशिक्षणार्थियों को प्राप्त हुए।
2. श्रमनिष्ठा व बड़ों के प्रति सम्मान सम्बन्धी मूल्यों के विकास पर वनशाला शिविर का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

उपसंहार – वनशाला शिविर बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों के जीवन का यादगार समय होता है, जिसमें वह अनेक गतिविधियों के माध्यम से जीवन के व्यवहारिक पक्षों का ज्ञान प्राप्त करता है तथा अनेक मूल्यों का विकास उसमें होता है। वह जीवन के यर्थाथ मूल्यों से परिचित होता है तथा उसका व्यक्तित्व स्व से ऊपर उठता है व दूसरों के प्रति सहयोग, प्रेम, सहकार व परोपकार की भावना को विकसित करता है। अत: वनशाला शिविर कार्यक्रम प्रशिक्षणार्थियों के जीवन में मूल्यों के विकास का सबसे सशक्त माध्यम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में प्रभावी संप्रेषण कौशल विकसित करने हेतु प्रशिक्षण सामग्री तकनीक के उपयोग से पड़ने वाले प्रभाव संबंधी अध्ययन

डॉ. अनिता भदौरिया *

शोध सारांश – यदि शिक्षकों का संप्रेषण छात्र–छात्राओं को अपनी ओर आकर्षित करने तथा उनकी कक्षा में रूचि बनाए रखने तथा उनके द्वारा संप्रेषित की जा रही जानकारी को ग्राह्य बनाने में सक्षम होगा तभी आवश्यक एवं अपेक्षित कौशलों व ज्ञान का विकास संभव हो सकेगा। इसलिए इस अध्ययन में यह प्रयास किया गया है कि शिक्षण प्रशिक्षणार्थियों को यदि प्रभावी संप्रेषण कौशलों का ज्ञान हो तथा वे उसका अभ्यास एवं प्रयोग अपने कक्षा शिक्षण में भी करेगें तो संभवत: उन्हें इसका लाभ हो सकेगा।

शब्दकुंजी – शिक्षक – प्रशिक्षणार्थी, संप्रेषण, प्रशिक्षण सामग्री, तकनीक।

प्रस्तावना – शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान में अध्ययनरत बी.एड. के शिक्षार्थियों के कक्षा शिक्षण कार्य का अवलोकन करने पर यह अनुभव किया गया कि बहुत से शिक्षकों में प्रभावी संप्रेषण कौशलों की पर्याप्त दक्षता नहीं है तथा कक्षा शिक्षण में वे इस बात पर कोई विशेष ध्यान भी नहीं देते है। विषयवस्तु के अनुसार आवश्यक शिक्षण पद्धति तो अपनाई जाती है किन्तु संप्रेषण के सामान्य नियमों का पालन नहीं किया जाता है। अत: इस क्षेत्र मे अनुसंधान की आवश्यकता है। यदि शिक्षण पद्धति के साथ–साथ प्रभावी संप्रेषण कौशलों का भी उपयोग किया जाए तो शिक्षण कार्य को अधिक परिणाम मूलक बनाया जा सकता है।

शिक्षा ही बच्चों के भविष्य का आधार है तथा शिक्षा का आधार, शिक्षक और उसकी शिक्षण पद्धति होती है। शिक्षक पद्धति और उसका व्यवहार व उसका व्यक्तित्व उसके विद्यार्थियों पर निश्चित रूप से अपना प्रभाव डालते है। संप्रेषण शिक्षण का आधार है। यदि शिक्षक व विद्यार्थियों के बीच प्रभावी संप्रेषण होगा तो शिक्षक के शिक्षण का प्रभावी होना स्वभाविक है। शिक्षक व छात्रों के बीच समांजस्य स्थापित करने, संवाद स्थापित करने तथा शिक्षण के फीडबैक तथा बच्चों की समस्याओं को समझने के लिए एक शिक्षक में प्रभावी संप्रेषण कौशल का होना आवश्यक है।

अनुसंधान के उद्देश्य :

1. शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के संप्रेषण में पाई जाने वाली सामान्य कमियों का आकलन करना।
2. आकलन के आधार पर उन कमियों को दूर करने हेतु आवश्यकतानुसार रणनीति तैयार कर दृष्य श्रव्य एवं प्रशिक्षण सामग्रियों के उपयोग सहित प्रभावी संप्रेषण के आवश्यक तत्वों की जानकारी देना।
3. इससे उनके संप्रेषण कौशल पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना – अनुसंधान की परिकल्पना यह है कि यदि शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को प्रभावी संप्रेषण कौशलों का पूर्ण ज्ञान देकर उनकें संप्रेषण को अधिक प्रभावी बनाने हेतु प्रशिक्षण दिया जाए तो वे न केवल अपने संप्रेषण की विशेषताओं एवं कमियों को जान सकेंगे अपितु उन कमियों को दूर करते हुए कक्षा शिक्षण के दौरान प्रभावी संप्रेषण हेतु सीखे गए कौशलों का उपयोग भी कर सकेंगे अंतत: इससे उनका शिक्षण कार्य प्रभावी होगा।

न्यादर्श – यह अनुसंधान कॅरियर महाविद्यालय, भोपाल में अध्ययनरत बी.एड. के 100 छात्र–छात्राओं व शिक्षकों पर किया गया। संप्रेषण कौशल एवं उनका विकास एक व्यापक विषय है। किन्तु सीमित अध्ययन की दृष्टि से शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के लिये आवश्यक संप्रेषण कौशलों में मुख्य रूप से इन कौशलों को सम्मिलित किया गया।

1. शुद्ध उच्चारण।
2. बोलते समय भाव अनुसार स्वर/ध्वनि का उतार चढ़ाव।
3. बोलने की शैली एवं आवश्यक हावभाव एवं अंग संचालन।
4. प्रभावी श्रवण कौशल।

अनुसंधान के क्रियान्वयन हेतु अपनाई गई रणनीति :

1. शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के सामान्य संप्रेषण एवं कक्षा शिक्षण के दौरान संप्रेषण कौशलों का अवलोकन।
2. अवलोकन के दौरान चिन्हित कमियों को दूर करने हेतु संप्रेषण कौशलों पर आधारित सत्रों का आयोजन तथा अभ्यास कार्य।
3. दृष्य श्रव्य सामग्री जैसे टेप रिकॉर्डर वीडियों क्लिपिंग्स अच्छे संप्रेषकों के उदाहरण प्रस्तुतिकरण स्वयं अपने संप्रेषण का अवलोकन वीडियों के माध्यम से कर उसकी समीक्षा करना तथा आवश्यक संशोधन/सुधार हेतु प्रयास करना आदि का उपयोग करने हुए प्रभावी संप्रेषण एवं उसकी बाधाओं को स्पष्ट किया गया।

विश्लेषण एवं व्याख्या – शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के प्रस्तुतीकरण पठन क्रिया एवं सामान्य संप्रेषण प्रक्रियाओं का अवलोकन करने पर यह प्रतीत हुआ कि उनमें प्रभावी संप्रेषण हेतु आवश्यक विभिन्न कौशलों की कमी है। यह कमी किसी में उच्चारण की अशुद्धि के रूप में तथा किसी में प्रस्तुतीकरण में आवाज के उतार चढ़ाव एवं हाव भाव में कमी के रूप में दिखाई दी। अनुसंधानकर्त्ता द्वारा इन दोषों को पहचान लिया जाना ही पर्याप्त नहीं था, जब तक स्वयं शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को इन कमियों की पहचान न हो तो तब तक आवश्यक सुधार संभव नहीं है। इसी अवधारणा के आधार पर प्रशिक्षण सत्रों के द्वारा स्वयं शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को विशेषज्ञों एवं साथी शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की सहायता से इन को पहचानने के अवसर प्रदान किए गए।

* केरियर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

इससे भी महत्वूर्ण यह है कि शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों ने स्वयं अपनी आवाज में अपने बोलने तथा पढ़ने के अंदाज़ को सुना तथा स्वयं उसमें आवश्यक संशोधनों की ज़रूरत को महसूस किया। उनकी इसी ज़रूरत को ध्यान में रखते हुए विशेष सत्र आयोजित किए गए जिसमें कम्प्यूटरीकृत दृष्य श्रव्य सामग्री के जैसे पॉवर पॉइंट प्रेजेंटेशन एवं वीडियो प्रेजेंटेशन आदि के माध्यम से तथा विशेषज्ञों के व्याख्यान के माध्यम से प्रभावी संप्रेषण एवं उसकी बाधाओं को स्पष्ट किया गया।

प्रशिक्षण के दौरान कृत्रिम कक्षा का निर्माण कर प्रभावी संप्रेषण हेतु अभ्यास भी करवाए गए। इसके साथ ही वास्तविक कक्षाओं में अभ्यास शिक्षण के दौरान उनके संप्रेषण में आए परिवर्तन को अवलोकन किया गया।

उपरोक्त समस्त प्रक्रिया के उपरांत मुख्य रूप से यह तथ्य सामने आए :

1. बहुत से शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में वर्णों एवं मात्राओं के उच्चारण संबंधी दोष हैं। कुछ शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को इन दोषों का ज्ञान था जबकि कुछ ने इस के बारे में अनभिज्ञता जाहिर की।
2. उनके इन दोषों पर आज तक किसी ने उन्हें टोका नहीं न ही सुधार हेतु आवश्यक सलाह एवं मार्गदर्शन दिया, इसलिए वे भी इसमें सुधार को महत्वपूर्ण नहीं मानते थे।
3. जब उन्हें इसका अहसास कराया गया तथा उन्हें ठीक करने हेतु आवश्यक तकनीकी मार्गदर्शन भी दिया गया जैसे प्रत्येक वर्ण के उच्चारण का स्थान एवं तरीका स्पष्ट किया गया तो उन्होंने सही उच्चरण का न केवल अभ्यास किया अपितु वे बोलते समय सतर्क भी रहने लगे।
4. इसी प्रकार कक्षा में संचालन हाव-भाव, अंग संचालन एवं प्रभावी श्रवण विधा एवं कौशलों का संतुलित उपयोग करने के संबंध में शिक्षकों प्रशिक्षणार्थियों ने कभी गंभीरता से विचार नहीं किया।
5. अनुसंधान से यह स्पष्ट हुआ कि आवश्यक उच्चारण दोषों की जानकारी होने पर शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों ने अपने उच्चारण को सुधारने हेतु आवश्यक प्रयास किए किन्तु प्रारंभ से इसी प्रकार उच्चारण करने के कारण प्रवाह में बोलने पर वे इन उच्चरण दोषों के सहित ही बोलते हैं यदि बारम्बार अभ्यास कराया जाए तथा ध्यान दिलाया जाए तो काफी हद तक इन दोषों को दूर किया जा सकता है।

परिकल्पना का सत्यापन :

शोध परिकल्पना – अनुसंधान की परिकल्पना यह थी कि यदि शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को प्रभावी संप्रेषण कौशलों का पूर्ण ज्ञान होगा तथा उन्हें उनके संप्रेषण को अधिक प्रभावी बनाने हेतु प्रशिक्षण दिया जाए तो वे न केवल अपने संप्रेषण की विशेषताओं एंव कमियों को जान सकेगें अपितु उन कमियों को दूर करते हुए कक्षा शिक्षण के दौरान प्रभावी संप्रेषण हेतु सीखें गए कौशलों का उपयोग भी कर सकेंगे।

सत्यापन – उक्त परिकल्पना को अनुसंधानकर्त्ता द्वारा अपने क्रियात्मक अनुसंधान द्वारा सत्यापित करने का प्रयास किया गया। जिसमें चयनित शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में विभिन्न संप्रेषण कौशलों के उपयोग की वर्तमान स्थिति (अभ्यास पूर्व की स्थिति) को ज्ञात किया गया तथा उन्हें आवश्यक संप्रेषण कौशलों का प्रशिक्षण प्रदान किया गया। जिसमें दृष्य एवं श्रव्य सामग्रियों का उपयोग भी किया गया। प्रशिक्षण उपरांत पुन: चयनित शिक्षक-प्रशिक्षणार्थियों में इन कौशलों के प्रदर्शन/उपयोग कक्षा शिक्षण में उनके प्रयोग किए जाने की स्थिति का अध्ययन किया गया। पूर्व एवं पश्चात् की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन कर परिकल्पना का सत्यापन किया गया।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

1. अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को संप्रेषण कौशलों का पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाए तथा उन्हें प्रभावी बनाने हेतु अभ्यास भी कराया जाए तो संप्रेषण कौशलों को प्रभावी बनाया जा सकता है, जिसमें कक्षा शिक्षण स्वयंमेव प्रभावी हो सकेगा।
2. संप्रेषण कौशलों के आकलन तथा अभ्यास के लिए दृष्य एवं श्रव्य सामग्री का उपयोग किया जाए तो शीघ्र एवं सकारात्मक परिणाम प्राप्त होते है।
3. शिक्षक प्रशिक्षणों में संप्रेषण कौशलों को अनिवार्य अंग बनाया जाना चाहिए। विशेषकर बी.एड. प्रशिक्षण कक्षाओं में इस पर विशेष ध्यान देना चाहिये।
4. प्रशिक्षण के दौरान दृष्य एवं श्रव्य सामग्री का उपयोग जो टेप रिकॉर्डर/ वीडियो क्लिपिंग/पॉवर पॉइंट प्रेजेंटेशन आदि का समुचित उपयोग किया जाना चाहि। इन सामग्रियों के उपयोग से स्वयं के संप्रेषण का आकलन करना तथा उसमें सुधार की प्रक्रिया को सरल व प्रभावी बनाया जा सकता है।
5. कक्षाओं की मॉनीटरिंग के दौरान भी शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के संप्रेषण कौशल का अवलोकन किया जाना चाहिए तथा आवश्यक तकनीकी मार्गदर्शन दिया जाए तो अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बक्शी एन.एस, शिक्षण-प्रशिक्षण में प्रभाव संप्रेषण 2007 शिक्षा तकनीकी, प्रेम प्रकाश, नई दिल्ली।
2. माथुर, एस.एस., शिक्षण कला, शिक्षक तकनीकी, 1995 विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. Landy frank J (1976), Psychology of work behaviour, Home Wood the Dorsey press.
4. शर्मा, आर.ए., अधिगम विकास का मनोवैज्ञानिक आधार, आर लाल बुक डिपो, मेरठ
5. Asthana, Bipin (2010), Research methodology, Agrawal Publication, Agra.
6. Hills, Philip Ed (1987), Communication skills; an internal review volume-1 croom helem.
7. Sign, Chitra, Educational Technology, Agarwal Publication, Agra.

****

Nano Particles: An Overview

Ashok Kumar Verma*

Abstract - Nanoparticles are nearly-spherical particles of diameter between 1 and 100 nanometers. They consist of thousands of atoms, but are still much too small to be directly visible with a light microscope (here I like to draw a line and put various sizes on it: 0.1 nm = atoms, 1–100 nm = nanoparticles, 200 nm = visible with light microscope). Nanoparticles have some interesting properties different from smaller complexes and bigger particles of the same composition, such as color, magnetism, catalytic activity.

The properties of nanoparticles usually highly depend on their size, but unlike for molecules and clusters, not all nanoparticles with the same or similar enough properties have exactly the same number of atoms, but just diameters within some range. The interaction mechanisms between NPs and living systems are not yet fully understood and the complexity increases when moving from in vitro to in vivo models. Even particles of the same material can show completely different behaviour due to, for example, slight differences in surface coating, charge, or size. Hazard identification on the in-vivo level, with regards to nanomaterials, is still at an early stage. Major entry routes (lung, gut, and possibly skin) as well as other targets (lung, liver, heart, and brain) have been identified.

The basic principles of the proposed mechanisms include 1. The formation of Reactive Oxygen Species that cause oxidative stress and cell death. With reducing size, nanoparticles have increasing surface area and thus increased chemical reactivity and dissolution into cells.2. Due to the comparable sizes of nanoparticles with that of human cells they are able to cross biological membranes and access cells, tissues and organs that larger-sized particles normally cannot.Also, due to various ethical issues, study of toxicity of nanoparticles towards human beings can only mainybe inferred by results from IVIVC (In-vitro-in-vivo correlation) studies or studies on animal models. Furthermore, there is presently no authority to specifically regulate nanotech-based products. Scientific research has indicated the potential for some nanomaterials to be toxic to humans or the environment.

The study designed on the basis of secondary data available on the various internet sites in the form of research papers and studies emphasizes the significance of nanoparticles and nanotechnology in the various fields.
Keywords- Nanoparticles, Nanomaterial, Toxicity, Cells, Reactive, Oxygen, Species.

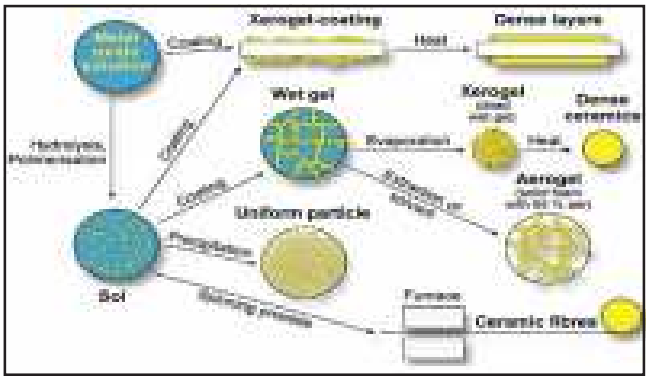
Introduction - The term 'nano' refers to the size which is 0.000000001 meters in length. That is extraordinarily small.When it comes to the ecosystem, nanoparticles, that are synthetic fibers, occur virtually everywhere. If you have ever had to replace an article of clothing because it has worn thin—it is normally because the synthetic fibers have gone through the laundry cycle numerous times. These are nano-sized and micro-sized particles that are pollutants. Occasionally, sewage control facilities can't completely control their effluent. The particles may become fish food end up in the ocean.

A common industrial technique is Laser Vaporizing Deposition; it has become a go-to technique for Nanotech. Buckminster Fullerene C60, which is considered a Nano-sized particle, was first produced by passing an electric current between two carbon rods bound or connected via a hacksaw blade in a helium atmosphere. "Soot" was deposited on the blade metal and eventually analyzed to be, in part, Buckminster Fullerene.

Nanoparticles exist in different forms. Nanoparticles are tiny materials having size ranges from 1 to 100 nm. They can be classified into different classes based on their properties, shapes or sizes. The different groups include fullerenes, metal Nanoparticles, ceramic Nanoparticles, and polymeric Nanoparticles. Nanoparticles possess unique physical and chemical properties due to their high surface area and nanoscale size. Their optical properties are reported to be dependent on the size, which imparts different colors due to absorption in the visible region. Their reactivity, toughness and other properties are also dependent on their unique size, shape and structure. Due to these characteristics, they are suitable candidates for various commercial and domestic applications, which include catalysis, imaging, medical applications, energy-based research, and environmental applications. Heavy metal NPs of lead, mercury and tin are reported to be so rigid and stable that their degradation is not easily achievable, which can lead to many environmental toxicities.

Formation Of Nanoparticles

* Deptt.of Physics, Govt. College, Dholpur (Raj.) INDIA



Properties Of Nanoparticles: They have the following unique properties:

1. Tiny Size that might be (depending on the kind of particle) due toquantum size effect
2. Varied Strains-Because of small volume and large surface, they can have different strains and crystalize in latice not found for the given material in bulk.
3. Balistic transport
4. Surface/volume ratio
5. Super effective- Most of physics and chemistry happens at interfaces. The smaller the particles, the larger part of the particle is the surface. For nanoparticles they basically are only surface. That makes them super effective for things like catalysis, reaction speeds and similar.

Classification Of Nanoparticles: Nanoparticles can fall into several different categories, with different methods of manufacture, properties and applications. Like any other material, nanoparticles are probably most easily categorized into metals, insulators and semiconductors.

Metal nanoparticles: Metal nanoparticles can be made from noble metals such as Au, Ag, Pt, Pd, etc. Au and Ag nanoparticles have plasmonic properties that make them useful in a variety of applications, such as biotech and solar energy conversion.

Semiconductor nanoparticles: Semiconductor nanoparticles are frequently made from compound semiconductors such as CdSe, CdTe and others. These NPs are commonly referred to as "quantum dots," and have a variety of applications in optoelectronics and as replacements for fluorescent dyes.

Insulating nanoparticles: Insulating nanoparticles can be made from polymers such as polystyrene and other materials like silica (SiO2). These particles, in sizes ~ 50 nm and up, are manufactured and sold commercially by companies like Bangs laboratory. Particles like these, particularly silica, form the basis for a number of super-hydrophobic surface coatings.

Evalutation Of Nanoparticles: Nanoparticles possess atleast one dimension in nano size range. (i.e, either its height, thickness, or breadth in nano size). They are usually suspended in a solvent, solvent based synthesis usually gives a control over the size distribution of the particles. Ball milling can also help us reduce the particle into nanoparticles.

When they are suspended in a solvent, we can conduct different spectroscopic techniques (passing light of different wavelengths and see what it absorbs, that determines what type of nanomaterial we have). It could be FT-IR, UV-Vis etc.

Coating of the solution on a glass slide and can carry raman spectroscopy, SEM, XRD or AFM. SEM will allow us to see the particle's morphology.XRD can be carried out on powder samples and that gives information about the particle's grain size, crystallite size, crystal structure etc.

Methods Of Production Of Nanoparticles: Nanoparticles can be produced through various methods, depending on the desired material and properties. Hereunder are some of them-

1. Chemical Precipitation: This method involves the controlled mixing of precursor solutions containing the desired elements or compounds. By adding a precipitating agent or changing the pH or temperature, nanoparticles are formed through nucleation and subsequent growth. The size and shape of the nanoparticles can be controlled by adjusting the reaction parameters.

2. Sol-Gel Method: In this technique, a precursor solution is prepared by dissolving metal alkoxides or salts in a suitable solvent. The solution undergoes hydrolysis and condensation reactions, forming a gel. The gel is then subjected to drying and calcination processes to obtain nanoparticles.

3. Vapor Condensation: This method involves the vaporization of a material followed by its rapid cooling to induce condensation and nucleation. The resulting nanoparticles are collected on a substrate or in a collection chamber. Techniques such as physical vapor deposition (PVD) and chemical vapor deposition (CVD) are commonly used for this purpose.

4. High-Energy Ball Milling: In this mechanical milling technique, solid powders are subjected to intense mechanical forces in a ball mill. The collision and friction between the balls and powders lead to the reduction of particle size down to the nanoscale. This method is suitable for producing a wide range of nanoparticle materials.

5. Electrochemical Deposition: Nanoparticles can be synthesized through electrodeposition, where an electric current is passed through an electrolyte solution containing metal ions. The metal ions are reduced at the electrode surface, resulting in the formation of nanoparticles.

6. Microemulsion Method: This method involves the use of a microemulsion system, which is a stable mixture of oil, water, surfactants, and co-surfactants. By introducing precursors into the microemulsion, nanoparticles are formed in the confined spaces of the microemulsion droplets.

Approaches Of Synthesizing Nanoparticles

Top Down Approach: Top down approach is a method in which we cut a bigger part into smaller parts i. e to a size of nano meter. All physical methods of synthesis are

considered as top down approach process. Particles synthesized in this method are more stable. Metals are used directly to synthesize metal nanoparticles.

Bottom Up Approach: Bottom up approach is a method where molecules or atoms which are of size Angstorm units i.e 10^-10 were made to agglomerate in order to form a nanoparticle of size nanometre. Chemical synthesis, green synthesis, biological synthesis are considered as bottom up approach. To maintain stability, stabilising agents or capping agents like high Molecular weight polymers should be added during synthesis. Salts of metals are reduced to metal nanoparticles.

Chief Objective Of The Study: The chief objective of the study is to study nanoparticles in detail and to produce their overview for the perusal of other associated scientists and scholars.

Hypothesis: Nanoparticles are too small to be seen with ordinary optical microscopes, and that require the use of electron microscopes or microscopes with laser.

Review Of Related Literature

i. 'Nanoparticles are materials with overall dimensions in the nanoscale, ie, under 100 nm. In recent years, these materials have emerged as important players in modern medicine, with clinical applications ranging from contrast agents in imaging to carriers for drug and gene delivery into tumors. Indeed, there are some instances where nanoparticles enable analyses and therapies that simply cannot be performed otherwise. However, nanoparticles also bring with them unique environmental and societal challenges, particularly in regard to toxicity' (Shashi K Murthy, 2007).

ii. 'Nanoscience is a branch of science that comprises the study of properties of matter at the nanoscale, and particularly focuses on the unique, size-dependent properties of solid-state materials' (Mulvaney P., 2015).

iii. 'Nanotechnology is the branch that comprises the synthesis, engineering, and utilization of materials whose size ranges from 1 to 100 nm, known as nanomaterials' (Hasan S., 2015).

iv. 'Long before the era of nanotechnology, people were unknowingly coming across various nanosized objects and using nano-level processes. In ancient Egypt, dyeing hair in black was common and was for a long time believed to be based on plant products such as henna. However, recent research on hair samples from ancient Egyptian burial sites showed that hair was dyed with paste from lime, lead oxide, and water' (Walter P, Welcomme E, Hallégot P, Zaluzec NJ, Deeb C, Castaing J, et al., 2006)

v. 'Today, due to their unique properties, nanomaterials are used in a wide range of applications, such as catalysis, water treatment, energy storage, medicine, agriculture, etc.'(Khot LR, Sankaran S, Maja JM, Ehsani R, Schuster EW, 2012)

vi. 'Nanoparticle chemistry is a relatively young branch of chemical research. Even 30 years ago, these words would have sounded puzzling to many scientists despite the fact that nanoparticles, primarily in the form of dust and smoke, have always existed in nature. Nanoparticles were utilized in construction materials, pigments, and stained glass well before their nature and properties were uncovered and understood' (Dmitri V. Talapin and Elena V. Shevchenko, 2016).

vii. 'Nanotechnology is enabling technology that deals with nano-meter sized objects. It is expected that nanotechnology will be developed at several levels: materials, devices and systems. The nanomaterials level is the most advanced at present, both in scientific knowledge and in commercial applications. A decade ago, nanoparticles were studied because of their size-dependent physical and chemical properties. Now they have entered a commercial exploration period. Living organisms are built of cells that are typically 10 ìm across. However, the cell parts are much smaller and are in the sub-micron size domain. Even smaller are the proteins with a typical size of just 5 nm, which is comparable with the dimensions of smallest manmade nanoparticles. This simple size comparison gives an idea of using nanoparticles as very small probes that would allow us to spy at the cellular machinery without introducing too much interference. Understanding of biological processes on the nanoscale level is a strong driving force behind development of nanotechnology' (OV Salata, 2004).

Method: For the purpose of preparing this research paper, under a well-planned research design and in order to meet out the objective, secondary data collected from the various research studies in the form of reports, research papers and books, were used. The spirit of science was maintained by adopting literally all the steps of scientific method and research.

Conclusion: Nanoparticles are tiny particles with at least one dimension between 1 and 100 nm (nanometers). They have unique physical, chemical, optical, and biological properties that differ from their bulk counterparts. Nanoparticles have many applications in various fields, such as medicine, electronics, catalysis, energy, and the environment. Different methods to produce nanoparticles can be classified into two main categories: top-down and bottom-up approaches.

a. Top-down methods involve using physical forces or tools to break down larger materials into smaller nanoparticles. Some examples of top-down approaches are:

1. Milling: This method uses a high-energy ball mill to reduce the size of solid materials by impact and friction. The milling process can be controlled by adjusting the speed, time, and type of balls and materials.

2. Lithography: This method uses a beam of electrons, ions, or photons to etch or deposit patterns on a thin material film. The designs can be transferred to the underlying substrate using a mask or a resist. The lithography process can create nanoparticles with precise shapes and sizes.

3. Repeated quenching: This method uses a rapid cooling and heating cycle to induce phase transformations in a

material. The quenching process can create nanoparticles with different crystal structures and compositions.

b. Bottom-up methods involve building nanoparticles from smaller atoms or molecules using chemical reactions or self-assembly processes. Some examples of bottom-up approaches are:

1. Sol-gel: This method uses a chemical sol (solution) that contains metal or metalloid precursors and stabilizing agents. The sol is then transformed into a gel (solid network) by inducing gelation through heat, pH change, or solvent evaporation. The gel is then dried and calcined to remove the organic components and form nanoparticles.

2. Precipitation: This method uses a supersaturated solution that contains metal salts and reducing agents. The answer is then subjected to a change in temperature, pH, or concentration to induce nucleation and growth of nanoparticles.

3. Hydrothermal/solvothermal: This method uses an autoclave (sealed vessel) that contains water or organic solvents under high pressure and temperature. The solvents act as reactants and solvents to dissolve metal precursors and form nanoparticles.

There are several cases where using nanoparticles to dope bulk materials increases functionality and in some of these cases they reduce the toxic processes of using these bulk materials towards human beings.For example, TiO2N photocatalysts possess anti-microbial properties (for use in water treatment) but are UV-light responsive and UV light is toxic towards human beings. Sandwiching Ag nanoparticles between the TiO2(N) photocatalyst substrates increases their anti-microbial activity towards certain species of bacteria and also makes the photocatalysts responsive to visible light instead which is safe for humans (Wong, Ming-Show, et al., 2015).

Nanoparticles that have been deemed "toxic" can have their toxicity reduced by methods that include (but are not limited to) the following examples:NanoscaleZnO which is used in consumer products like sunscreens has been designated as 'extremely toxic' in the environment. According to several studies, Zn2+ affect biological pathways leading to acute inflammation in rodent – both mouse and rat – lungs and interfere with the hatching of zebrafish embryos. The researchers doped ZnO nanoparticles with 1-10 wt % Fe using flame spray pyrolysis and compared their effects to undoped nanoparticles in rat lung, mouse lung and zebrafish – three animal models commonly used for environmental toxicity screening. The results indicate that Fe-doping produces improved hatching rates in zebrafish embryos and decreased pulmonary inflammation in rodents in line with doping levels (T. Xia et al., ACS Nano, 2011)).

As a result of the extensive number of applications of silvernanoparticles (AgNPs), their potential impacts, once releasedinto the environment, are of concern. It has been found that (El Badawy, Amro M., et al. 2010) is a direct correlation between the toxicity of AgNPs (to bacteria) and their surface charge. Surface-negative (for eg. in the paper cited Citrate-AgNPs) were shown to be the least toxic, whereas positively charged (for eg. in the paper cited BPEI-AgNPs are the most toxic NPs.An in-vitro study of the toxicity of metallic nanoparticles concluded that chemically stable metallic nanoparticles have no significant cellular toxicity, whereas nanoparticles that are able to be oxidized, reduced or dissolved are cytotoxic and even genotoxic for cellular organisms (Auffan, Mélanie, et al. 2009).

References:-

1. Wong, Ming-Show, et al. 'Antibacterial property of Ag nanoparticle-impregnated N-doped titania films under visible light' Scientific reports, 5 (2015)
2. T. Xia et al., ACS Nano (2011), doi: 10.1021/nn1028482
3. El Badawy, Amro M., et al. 'Surface charge-dependent toxicity of silver nanoparticles', Environmental science & technology 45(1), 283-287 (2010).
4. Auffan, Mélanie, et al. 'Chemical stability of metallic nanoparticles: a parameter controlling their potential cellular toxicity in vitro', Environmental Pollution 157(4) 1127-1133 (2009).
5. Shashi K Murthy, 'Nanoparticles in modern medicine: State of the art and future challenges', Int J Nanomedicine, 2(2): 129–141 (2017).
6. Mulvaney P. 'Nanosciencevs nanotechnology—defining the field', ACS Nano,(2015). https://doi.org/10.1021/acsnano.5b01418.
7. Hasan S. 'A review on nanoparticles: their synthesis and types', Res J Recent Sci. 2277:2502 (2015).
8. Walter P, Welcomme E, Hallégot P, Zaluzec NJ, Deeb C, Castaing J, et al. 'Early use of PbS nanotechnology for an ancient hair dyeing formula', Nano Lett. 6(10):2215–9 (2006).
9. Khot LR, Sankaran S, Maja JM, Ehsani R, Schuster EW, 'Applications of nanomaterials in agricultural production and crop protection: a review', Crop Prot. 35:64–70 (2012).
10. Dmitri V. Talapin and Elena V. Shevchenko, 'Introduction: Nanoparticle Chemistry',Chem. Rev. 116, 18, 10343–10345, (2016)
11. OV Salata, 'Applications of nanoparticles in biology and medicine', Journal of Nanobiotechnology volume 2, Article number: 3 (2004)

****

Performance Management System: A Tool for Human Resource Management

Dr. Monika Jain* **Juned Nagori****

Abstract - Human Resource remains neglected in the traditional scheme of management system, but it has gain its due share in Performance Management System, because of its infinite potential for managing and improving performance. It was realized that all other resources are equally available to all such competitors. HRM is the only resource that made is committed, can make the difference and help an organization to gain a competitive edge over others. This paper will make efforts to describe the theoretical aspects of effectiveness of PMS in an organization, review the common problems encountered and challenges while implementing PMS, and provide recommendations for implementing PMS effectively within an organization. The result shows that if implemented effectively performance management system acts as a strategic tool and a powerful foundation for the employees to achieve their aspirations and organizations to achieve their financial goals.

Keywords: System of Performance Management, Performance Appraisal, Employee Performance, Performance Measurement.

Introduction - Employee performance is critical to any company's success. But to enable that an employee performs to his/her potential, a company must ensure that it plays it part in providing employees with everything they need. Clear objectives and goals have to be established, the employee's tasks should be mapped to his/her skills, timely guidance and help in terms of learning and development resources must be provided, performance must be monitored regularly so underperformance issues can be identified and fixed.

Performance management system is the systematic approach to measure the performance of employees. It is a process through which the organization aligns their mission, goals and objectives with available resources (e.g. Manpower, material etc.), systems and set the priorities. The execution administration framework is a constant procedure of characterizing and conveying the activity parts and duties, execution desires, goals and set their needs between boss (administrator) and subordinates (workers). It incorporates association, office and representative shared objective and targets which are lined up with frameworks and assets. It is the channel of providing clarity about goals and also to improve the business processes through various methods and mechanism. The competency, skills and knowledge gaps are also identified through this process which can be improved by providing guidance, trainings, coaching and mentoring to employees or teams at different levels and designations.

"A performance appraisal is the evaluation or appraisal of relative worth to the company of man's services on his job" - Alford and Beatty

Performance Management is the process through which managers ensure those employee's activities outputs contributes to the organization's goal. This process requires knowing what activities are desired, observing whether they occur, and providing feedback, managers and employees meet expectations. In the course of providing feedback, managers and employees may identify performance and establish ways to resolve those problems. Performance Appraisal is an important part of performance management. In itself it is not Performance Management, but it is one of the ranges of tools that can be used to manage performance. Because it is most usually carried out by line Managers rather than HR Professionals, it is important that they understand their role in Performance Management and how performance appraisal contributes to the overall aims of Performance Management. But on the contrary with a systematic feedback system, the Manager can identify good and bad performers.

Performance management system in human resource management handles various important HR functions like goal setting, feedback, rewards, performance reviews, etc. Read on to learn about the importance, types, components, and examples of modern-day performance management systems.

Objectives of the Research:

1. To highlight the importance, role and characteristics of Performance Management System.

* **Associate Professor, SRIITM Collage, Gwalior (M.P.) INDIA**
** **Assistant Professor, SGSIM Collage, Ujjain (M.P.) INDIA**

2. To study the PMS as a Strategic tool of HRM.
3. To Study of Implementing Performance Management System.
4. To Study of Benefits of Performance Management.
5. To Study of Performance management process .
6. To study of Goal Setting for Performance Management Process.
7. To Study of Reasons of Performance Appraisal Failure in Organization.

Scope of the study:

1. To be instrumental in helping employees to better understand their strengths and weaknesses with respect to their role and functions in the organization.
2. To help in identifying the developmental needs of employees, given their role and function.
3. To increase mutuality between employees and their supervisors so that eve employee feels happy to work with their supervisor and thereby contributes the maximum to the organization.

Need of the study : managing employee's performance continuously is becoming critical to the policies and planning of the top management. Performance management has attracted the attention of all organizations as the information provided by PMS can be utilized for taking various important HR decisions related to Human Resource Planning, Recruitment and selection, Training and Development, compensation Management, career planning, talent management, performance based pay etc.

Importance of performance management in organizational success



Research Methodology: Secondary data were used for the present study,secondary data collected from various books, National & international Journals, published government reports, publications from various websites.

Literature Review:

Forslund (2007) a state of the art description of the activities in logistics performance management is provided, addressing the following questions in dyadic relationships: how often are expectations updated? Who is the customer's contact person? What is the contract situation? Which actor (customer or supplier) formulates performance targets, and who measures logistics performance? Some of these issues' relationships to customers' expected logistics performance were verified.

Lo & Chin (2009) The seven user satisfaction based core values, eight critical success factors and five phase knowledge management process are identified as the basis of the assessment criteria. These assessment criteria provide academics and practitioners with a new insight into the research landscape for knowledge management performance measurement.

Adobor (2004) focuses on management processes in shared managed joint ventures. It suggests that the evolution and effectiveness of the management team in joint ventures may be facilitated by certain key contextual and individual level factors. Looking at venture management as an inter organizational group of people composed of members representing parent organizations whose behavior is regulated by a common set of expectations can give clues to the special nature of joint venture management tasks. The individuals nominated to the team as well as some key performance facilitating contextual factors may affect team effectiveness.

Employee performance appraisal is an effective tool or vehicle for assessment of employee performance and implementation of strategic initiatives for the improvement of employee performance (Lawler and McDermott, 2003). However, a considerable literature stream also suggests that there exist dissatisfaction in employees regarding performance appraisal system (Mercer, 2002; Roberson and Stewart, 2006; Moullakis, 2005). For instance, Morgan (2006) noticed that performance appraisal in many organizations has not met expectations of employees. In the same vein, prior findings by Smither and London (2009) have elucidated that 80-90% managers reflect that performance appraisal has not been effective in improving employee and organization s performance.

Performance appraisal has been regarded as the most critical human resource function within organizations by which assessors or supervisors analyse and assess performance of their subordinates (Keepingand Levy, 2000). the outcomes of performance appraisal assists mangers to select specific pay rates, promotional decisions, development and training needs and motivational factors for employees (Zapata-Phelan et al., 2009). In this regard, performance appraisal system has been widely researched within organizational psychology to assess employee performance. However, despite of resources applied and attention made to this particular topic, prior researchers have found continuing dissatisfaction among employers and employees about outcomes of performance appraisal systems in terms of unfair, inaccurate and political outcomes (Rao, 2004; DeNisi and Pritchard, 2006). Therefore, it is important to study the factors affecting outcomes of performance appraisal system.

In this regard, distributive fairness represents the extent to which outcomes of appraisal are distributed fairly (Smither and London¸2009). In the appraisal context, the distributive

context relates with the ratings of performance appraisal gained by employees. On the other hand, procedural fairness aims at the extent to which procedures deployed by organization for appraisal are fair in deriving outcomes of appraisal (ZapataPhelan et al., 2009). Contrary to this, the concept of interactional fairness represents the extent to which employees receive treatment of peers and supervisors during the process of appraising performance (Roberson and Stewart¸ 2006). Prior studies about meta-analysis of performance appraisal and perceptions of justice suggest that it enhances performance and satisfaction of employees (Roberson and Stewart¸ 2006). On the contrary, appraisal satisfaction represents the contentment of employees with the results of appraisal system. Levy and Williams (2004) suggest that analyzing employee satisfaction is important as it determines reactions of employees towards appraisal. Contrary to this, motivation represents the degree to which employees are willing to make improvements in their performance (Roberson and Stewart, 2006). Some authors suggest that perceptions about fairness hold a critical importance within organizations because it avoids negative outcomes such as disruptive behaviors and employee turnover and also enhance positive outcomes of organizations such positive citizenship, commitment and satisfaction with the job (Selvarajan and Cloninger, 2009).

Thurston (2001) has addressed the specific aspects related with performance appraisal and also reveal that effectiveness and success of appraisal system depends on reactions and feedback of employees. This suggests that employee feedback is critical factor in assessing effectiveness of appraisal system. This feedback can be positive or negative regarding outcomes of appraisal system. Prior studies have revealed that positive feedback is more likely to be accepted whereas employees often hesitate to accept negative outcomes of appraisal system (Rao¸ 2004). On the other hand, Roberson and Stewart (2006) suggest that if negative feedback is delivered in an effective and persuasive manner, employees will take it seriously and will focus on eliminating the negative aspects in their performance.

Prior literature has suggested that performance appraisal is an effective system for attaining different objectives. In this regard, Selvarajan and Cloninger (2009) have revealed that effective performance appraisal system results in improving performance of employees and motivating them. In this regard, it can be identified who are the weak performers and who strong performers within organizations are. In the same line of thought, prior studies have identified five major outcomes of effective performance appraisal (Rao¸ 2004). These are: 1) using results of performance appraisal to improve employee performance, 2) enhancing motivation, 3) reducing employee turnover, 4) associating rewards and employee performance and 5) establishing equity among employees (Rao¸ 2004; Selvarajan and Cloninger, 2009).

Purpose of Implementing Performance Management System

Managing employee's performance is the key objective of establishing systematic Performance Management system in an organization. These process servers' six main purposes in the company:

1. Strategic: Performance managed system is a tool which should be align with overall organization goal followed through department goal and individual goals. In other words, the organizational strategic goals should be linked with each activity performed by every department or employee.

2. Administrative: Performance management system is also set the deciding factor of employee's promotion, demotion, salary increment, transfer and terminations. It enables to identify the performers, non-performers or under performer employees in an organization. It merits the competency and skill level of employees. Hence, it clearly defines the administrative role as well and supports the management decisions.

3. Communication: It is the effective communication channel to inform employees about their goals, job responsibilities, key deliverables and performance standards. Further, it is also a structure method to indicate the key areas of improvement required by the employee in order to improvise his performance. In other words, it provides the platform to learn and train on skills, and knowledge for better performance and results.

4. Developmental: It is the structure method of communicating the positive feedbacks, improvement areas, and development plans. The manager can use various methods like training, mentoring, coaching etc. and them their team members to perform better.

5. Organizational Maintenance: Performance management system is the yardstick of measuring employee, department and organization achievements and evaluating the performance gaps through various tools and techniques. Hence, it maintains the health of the organization and its performance standards.

6. Documentation: The performance management reviews, feedback and forms should be documented and maintained periodically by every organization. It would enable them to look forward, set new targets, design developmental needs, design training and learning programmes, and career progression of employee and for department. Hence, it helps in driving the organizational needs to desirable objectives.

Benefits of Performance Management **:** In today's global environment where the market is evolving at a very fast pace, it is important for an organization to understand the benefits of performance management. Therefore, managing employee's performance is the ultimate need of an organization. The employees are considered as an assert by the organization. The performance management system serves various benefits to the organization, which are as follows:

1. It supports to provide data to find the skills and knowledge gaps of employees in order to improvise them through trainings, coaching and mentoring systems.
2. It motivates employees to take new challenges and innovate through structure process.
3. It provides new opportunities to employees for their growth and development in their professional careers
4. It defuses the grievances and conflicts among team members through proper performance evaluation system.
5. It assesses the employee's performance fairly and accurately against the performance targets and standards.
6. Employees would enable to provide better results because of clarity on their performance targets.
7. Performance management system provides the platform to discuss, develop and design the individual and department goals thorough discussion among manager and their subordinates.
8. The under performer can be identified through performance reviews and can raise their skills levels objectively. It quantifies the learning needs through individual development plans or performance improvement plans as well.

Performance management process

Performance management process is a systematic process of managing and monitoring the employee's performance against their key performance parameters or goals. It is regarded as a process for driving the individual and organizational performance management. Preliminary, the process involved six steps which followed one after the. In short, it is termed as continuous process in organization.

- **Stage 1: Pre- Requisites:**It is necessitate defining the purpose Cleary for existing and new employees/ staff, departments in order to make integrate all teams to meet company's target. There are three primary stages where the company defines their long term and short term goals. The first stage is at the organization level, where the management describes the holistic view and defines overall objective of formulation of the company, what are their long term vision, what are the values on which they stands for, and what is the mission the company is chasing. The second stage perquisites at department level, where the management assign targets to each department to achieve overall organization objective. At this stage, the management strategizes the processes and allocates targets to each department. The last stage is individual level, where the department further gives targets to employees. The above three stages are the foundation of performance management system of any organization. Basis on these three levels, the management design, strategize and develop the performance management system. It describes job descriptions, job specification, and job design at each level and delegate targets to perform in order to achieve organization objective.
- **Stage 2: Performance Planning:**There are three important attributes of performance planning: i. Results, ii. Behaviors & iii. Development Plan

Results: the yardstick of performance management is used to measure employees and department performance. It provides the information about the performance gaps and achievements. Hence, it evaluates how well the individual employee has performance against his assign targets

Behavior: measuring the employees behaviors are one of the most challenging and difficult task basis on performance standards. The human behavior can only be measured through observation and close monitoring by his supervisors or human resources department.It is difficult to qualify the behavior against his performance standards. There is lot of subjectivity involved in this category. However, there are lot of phycomateric tools which supports to define and indicate individual behaviour and attitude, but research has proven that they are only indicators and not provide absolute answer and authenticate results. Hence, we can define the expected behavior in employee's performance standards during the performance planning and its measurement but cannot quantify it with data.

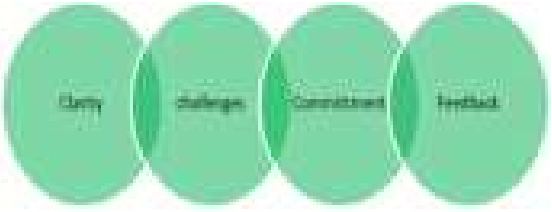
Development plan:development plan is the third stage of performance planning. At this stage, we develop the plans to improve employees knowledge, skill and attitude (K, S, A). It allows employee to take his professional standards to next level which the support of development tools and plans.

- **Stage 3: Performance Execution**: Performance execution is considered as most important stage because the whole exercise of creating performance management systems and building up standards would rely on it. The primary responsibility and ownership of performance execution is with employee, which is followed by department and then organization. Hence, it is considered as a chain or process, in which the performance of individual employees would result department performance. Therefore, the role and responsibility of supervisor or manager also increases which comprises with following focus areas: Provide resources, tools and equipment's to employees to make out better results Provide regular feedback to subordinate about their performances and improvement areas Motivate team members through different channels and tools Integrate individual development plans with department's goal Remain focus on development activities to enhance individual knowledge and skills.
- **Stage 4: Performance Assessment**: Performance assessment is the next stage followed by performance execution. In this phase, the employee and manager both are responsible to measure and assess the performance of employee against his targets. The process should comprise to the extent of individual targets, behaviors or attitude and special achievements during the performance appraisal cycle.
- **Stage 5: Performance Review:**The performance review stage is a platform where the subordinate and superior exchange performance feedbacks and review per-

formances against given targets or goals to individual. To make the performance review successful, the involvement and exchange of dialogue are equally essential between employee and his manager. Apart from performance review, they also discuss about the development plans, trainings to improve skills and knowledge, next year goals and targets and expectations of employee and manager both. Hence, this stage is considered the base of next year performance appraisal cycle as well.

- **Stage 6: Performance Renewal and Reconstructing:** The performance management process is an ongoing continuous process. Once the performance has been reviewed and end, then the cycle starts for the next performance appraisal. It should be again align with next year organization mission, goals and objective and integrated with departments goals In facts, it is a process which starts all over again which needs to be discuss, design, develop , executed and review again. This is necessitate because the external environment of company like market, customers , competitors , suppliers etc. also revolved and all subsequent changes has to prerequisites for performance planning and setting with strategic objectives of organization.

Goal Setting for Performance Management Process:
Goal setting is a powerful tool that can be used to motivate and challenge employees or organization. It is one of the important keys in performance management because it's an instrument to measure performance on predefined objectives / goals. Fully set goals are objectively determine have approximation idea whether or not the goals have been reached at time. Poorly set goals are not clear the result is frustration. Hence goal setting can be used in every type of work place and with every level of employee. Goals can be framed in several different types of ways that affect how well people learn and perform. When goals are challenging, it is important to help people to frame them as a challenge from which they may learn, rather than a threat in which failure is foreseeable. The goal framings are standing on four important Pillars



- **Clarity**: A clear goal is one that can be measured and leaves no room for misunderstanding. Goals should be very explicit regarding what behaviour is desired and will be rewarded. The clear goal reduces work order errors by 10-30% in general. It also create a system for ensuring that every team member is informed of changes in policy, changes in hours or other important informative i.e. it improves communication within team members.
- **Challenges**: A goal should be challenging but must be achievable. By positively rewarding the achievement of challenging goals, would encourage employees to achieve more and meeting new milestones. At the time of goal settings, it is most important to identify rewards and awards that are appropriate for the special achievement of challenging goals verses normal expectations.
- **Commitment**: In order for goals to be effective, they need to be agreed upon. The goal should be in line with the general established expectations as per role and l evel of an individual. The employee and employer of an organization must both are committed to using the resources needed to complete the goals and what should also agree on what the reward will be.
- **Feedback**: Goal setting will not be effective if there is not an opportunity for any feedback. Feedback is a chance to correct or clarify before the goal has been reached. Ideally, feedback is a type of progress reporting. That gives the managers the chances to clarify expectations and to adjust the level of difficulty to the achieving goals, if it seems it's too hard or too easy. For the employee of company, it provides a chance to make sure they are meeting their supervisor's expectation and to get reorganization for what they have achieved up to this point. When the goal is complete to achieve, the manager can also conduct a formal feedback and acknowledgement session so that employee can discuss his performance and improvement areas for future based performances.

Reasons of Performance Appraisal Failure in Organization: Performance management system is the most effective tool of any organization to measure the performance standards of employees. Performance appraisal process is the part of management system, which measures, evaluate the performance, productivity, profitability and economic employee. Therefore the organization objectives should be associated with employee's goals or Key performance areas through the structured approach of performance management systems. There are various methods and techniques of performance management system. In general, the organizations, adopts and follow the systems which are aligning with their internal process, systems and resources. Different organizations and industries follow different practices of performance appraisal system. But, in spite of many benefits, this process falls flat in many organizations. Through the research and case studies by various institutes organizations & firms, the followings are some of the key reasons for the failure of performance appraisal systems in company's'

- Manager's personal judgment or assessment based on preferences:Many times, performance managers provide their personal views, judgments and more opinion other than the performance appraisal parameters. They keep their biased view upfront of measure and analyzing employee performance against the assigned goals and objectives. They show less interest in the performance appraisals system and belief on their own method of performance judgments.
- **Unstructured methods of performance appraisal systems:** There are many organizations which do not set

the parameters of measuring performance levels of employees. Performance managers include "primary result areas" in performance appraisal system, but do not include "primary performance indicators" which result as the qualitative appraisal system instead of quantities appraisal. So this approach involves lots of manager's perception, views likes or dislikes and personal side favors. Such appraisal processes also lack of feedback system between employee and managers.

- **Lack of interest and ownership of manager:** Performance appraisal process is a long and time consuming process. This process involves lots of talk's discussion, feedback and designing techniques of managers. Most of the time managers do not show their much engagement and interest in designing and developing the performance standards and set goals for their team members objectively. In other words, instead of collaborative approach of human resources department, function/ department head and reporting manager, whereas it becomes coordinating approach for executing this activity in few organizations.
- **Lack of proper channel of communication:** In many organizations, managers avoid to give direct acknowledgement to employees on their performances. They resist and close the channel of exchanging feedbacks with their subordinates.
- **Lack of reward and recognition policy:** in many organizations, management avoids to give reward and recognizaiton to the employee performer in view to avoid any business or unrest among other team members.
- **Lack of leadership:** Implementation performance appraisal system in organization is a responsibility of organization management and its supervisor/managers respectively. In the lack of proper leadership, supervision and communication channels network system, organization loses its objectivity for employees. Performance appraisal is a continuous process which approaches from top level to bottom in an organization.
- **Lack of designing, monitoring and measuring the performance appraisal standards:** it is a continuous process which should be developed, designed and monitored by managers for the successful implementation. In the absence of such practices, it is difficult to collect information, measuring, analysis and use it for decision making process. As result employees felt like demotivated and losses their confidence in this system.

Conclusion: PMS is an important tool in measuring and managing the performance of individuals as well as the teams. An organization which is aiming at improving its performance cannot ignore the performance of individuals and the teams. A PMS should be designed keeping in mind all the hurdles that may come in its way during the implementation. A strong bond and cooperation by all the stakeholders will definitely contribute to the success of the PMS and thus contribute to the success of the organization.

References:-

1. Jankulovic, A., &Skoric, V. (2013). Performance management system implementation in a Southeast European transitional country. Journal for East European Management Studies, 18(2), 173–190.
2. Kapoor, S., &Meachem, A. (2012). Employee Engagement- A Bond between Employee and Organisation. Amity Global Business Review, 14–21.
3. Karuhanga, B. N. (2010). Challenges of Performance Management in Universities in Uganda. Service Management, (August), 24–27.
4. Kataria, A., Rastogi, R., &Garg, P. (2013). Organizational Effectiveness as a Function of Employee Engagement. South Asian Journal of Management, 20(4), 56–74.
5. Kleinegld, a, Van Tuijl, H., &Algera, J. a. (2004). Participation in the design of performance management systems: a quasi-experimental field study. Journal of Organizational Behavior, 25(April 2002), 831–851. doi:10.1002/job.266
6. Kruis, A. M., & Widener, S. K. (2014). Managerial influence in performance measurement system design: A recipe for failure? Behavioral Research in Accounting, 26(2), 1–34. doi:10.2308/bria-50755
7. McCunn, P. (1998). The balanced scorecard, the eleventh commandment. Management Accounting, 34–36.
8. Rees, W. D., & Porter, C. (2003). Appraisal pitfalls and the training implications – part 1. Industrial and Commercial Training, 35(7), 29–34. doi:10.1108/00197850410516094
9. https://www.hrhelpboard.com/performance-management/performance-management-process.htm
10. Selvarajan R., and Cloninger P.A. (2008), The Importance of Accurate Performance Appraisals for Creating Ethical Organizations, Journal of Applied Business Research, 3rd quarter, Vol. 24, No. 3, pp. 39–44.
11. Selvarajan T.T., and Cloninger, P.A. (2009), The Influence of Job Performance Outcomes on Ethical Assessments, Personnel Review, Vol. 38, No. 4, pp. 398–412.
12. Smither, J.W., and London, M. (2009), „Best Practices in Performance Management, in Performance Management: Putting Research into Action, eds. J.W. Smither and M. London, San Francisco, CA: Jossey-Bass
13. Thurston, P.W. Jr. (2001),Clarifying the structure of justice using fairness perceptions of Performance Appraisal practices, unpublished Ph.D. dissertation, Albany, NY.
14. Teratanavat, R., Raitano, R., &Kleiner, B. (2006). How to Reduce Employee Stress. Nonprofit World, Vol. 24(3), pp. 22 – 24.
15. Wood, R.E., and Marshall, V. (2008), Accuracy and Effectiveness in Appraisal Outcomes: The Influence of Self-Efficacy, Personal Factors and Organisational Variables, Human Resource Management Journal, Vol. 18, No. 3, pp. 295–313

16. Youngcourt, S.S., Leiva, P.I., and Jones, R.G. (2007), Perceived Purposes of Performance Appraisal: Correlates of Individualand Position-Focused Purposes on Attitudinal Outcomes, Human Resource Development Quarterly, Vol. 18, No. 3, pp. 315– 343.

17. Muhammad Zohaib Abbas, Effectiveness of performance appraisal on performance of employees, IOSR Journal of Business and Management, Volume 16, Issue 6. Ver. II (Jun. 2014), PP 173-178

****

पातालकोट के विशेष संदर्भ में भारिया जनजाति का अध्ययन

अनुराग सोनी*

प्रस्तावना – पातालकोट का नाम सामने आते ही सहज ही आभास होने लगता है, जैसे पाताल की बात की जा रही हो। पातालकोट के संबंध में कुछ ऐसा ही है यथा नाम तथा गुण: पातालकोट मध्यप्रदेश के छिंदवाडा जिले में स्थित एक पर्वतीय भू–भाग है। यह घने वनों से अच्छादित अनेक गॉवो का एक समूह है। यहाँ के निवासी प्रमुख रूप से आदिवासी समूह के हैं, यहाँ पर आज के समय में भी आदिम काल की सभ्यता व संस्कृति की झलक को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। पातालकोट समुद्र तल से बहुत कम उँचाई पर स्थित है, उँचे–उँचे पहाड़ एवं घने जंगल हैं, इन जंगलों के बीच में यह जनजाति समूह के रूप में घास–फूस की झोपडी बनाकर अपने परिवार से साथ रहते हैं। यह प्राकृतिक सम्पदा से सम्पन्न स्थान है। आदिवासियों की सम्पूर्ण आवश्यकता की पूर्ति इन्हीं वनों से होती है, जो वनो पर पूर्णत: निर्भर है। इनका जीवन व रहन–सहन बिल्कुल सीधा–सादा व प्रकृति के अत्याधिक समीप होता है। ये लोग अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति को अक्षुण्य् बनाये हुए हैं, एवं इनकी एक अलग पहचान है, जो आज भी कायम है। इनका भोजन मुख्यत: कंदमूल, फल व मांसाहार है, जो इन्हें वनों एवं जंगली जानवरों से प्राप्त होता है। उनकी अपनी बोली व भाषा होती है, तथा इनके देवी–देवता व पूजा पद्धति अलग तरह की होती है। यह रूढियों पर अत्याधिक विश्वास करते हैं। इनके बीच में विवादों का निपटारा पंचायत करती है, इनकी अपनी कला होती है, जिसे आज भी देखा जा सकता है। अनेक आदिवासी समुदाय वास्तुकला व मूर्तिकला में भी पारंगत हैं, जिनका विकास कर इनके माध्यम से इनका आर्थिक उत्थान किया जा सकता है।

पातालकोट घने जंगलों व निचली सतह में होने के कारण सूरज की रोशनी यहाँ देर से पहुँचती है तथा शाम को सूरज पहाडी में छुप जाता है। यहाँ बरसात के दिनों में हफ्तों अंधकार सा रहता है, और सन्नाटा छाया रहता है। एक ओर घने जंगली तालवृक्ष मस्ती में लहराते हुए दिखते हैं, तो दूसरी ओर गगनचुंबी बॉस आकाश से बाते करते हुए प्रतीत होते हैं। यहाँ जरा–सी हलचल होने पर खामोशी टूट जाती है। अनेक वन्य हिंसक जानवर यहाँ पर हैं, वनराज शेर को भी झाडियों के बीच छलांग लगाते देखा जा सकता है।

पातालकोट घाटी का 'कटोरानुमा आकृति' स्थल ही भारिया आदिवासियों की आवास स्थली हैं। भौगोलिक दुर्गमता में असाध्य जीवन–यापन कर रहे सभ्यता से कोसो दूर 'भारिया' मध्यप्रदेश की एक प्रमुख आदिम जनजाति हैं। मध्यप्रदेश की आदिम जनजाति भारिया द्रविड समूह की जनजति के सदस्य हैं। पातालकोट घाटी प्रकृति की नैसर्गिक संरचना वाला विस्तृत घाटियों का 1200 से 1500 फुट गहरा मनोरम भू–भाग हैं जो सतपुडा पर्वत की परपतदार उंची किलानुमा श्रृंखलाओं से आवृत्ता हैं। इस संपूर्ण क्षेत्र में नीला कुहरा छाया रहता हैं जो यहॉ की प्राकृतिक छटा निखारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। यह संपूर्ण घाटी एक तरु ग्रेनाईट की सख्त दीवार से घिरी हुयी है। ये जिले की पेंच व कान्हाएन नदियों का उद्गम स्थिल भी है। रेनवान और सीतारेवा यहॉ की पडोसी नदियां हैं, वहीं पालातकोट घाटी के दक्षिणी भाग में यहाँ की मुख्य नदी दूधी का उद्गम स्थल हैं।

पातालकोट के प्रमुख गांवो का परिचय – पातालकोट में बसे है 12 गाँव इन गांवों में कडी धूप में भी शाम जैसा नजारा दिखता है मध्यप्रदेश के छिन्दवाडा जिले के तामिया तहसील में पातालकोट बसा है पातालकोट को पाषाडलोक माना जाता है यहाँ ऐसे 12 गांव है जो धरातल से 3000 फुट नीचे जाकर बसे है तीन गाँव तो ऐसे है जहां कडी धूप के बाद भी शाम जैसा नजरा दिखता है अनोखी बात यह है कि हिन्दी पौराणिक कथाओ के अनुसार पतालकोट राक्षसो और नागो का घर है किंतु यहा इंसान रहते है और जीते है इन 12 गांवो में गोड एवं भारिया जनजति के लोग रहते है। 2000 से ज्यादा भारिया जनजाति के लोग रहते है यहां का हर गांव 3 से 4 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है पातालकोट कई सदियो से गोड़ एवं भारिया जनजाति द्वारा बसा हुआ है यहा रहने वाले लोग बाहरी दुनिया से आज भी कटे हुये है।

पातालकोट घाटी के परिक्षेत्र में आने वाले 12 ग्रामों को 3 ग्राम पंचायतो में शामिल किया गया हैं। दो पंचायतें क्रमश: हर्राकछार एवं घटलिंगा को पातालकोट घाटी परिक्षेत्र के ग्रामों से मिलाकर ही बनाया गया हैं किंतु एक पंचायत कनेटिया इस परिक्षेत्र के बाहर स्थित है। इस पंचायत में पातालकोट के चार ग्रामों को समाहित किया गया है।

पातालकोट क्षेत्र के ग्रामों में पंचायत व्यवस्था

पंचायत कठोतिया	ग्राम	चिमटीपुर, कारेआम रातेड सूखामाण्ड, हारमउ, धोधरी गुज्जा डोगरी।
पंचायत हर्राकछार	ग्राम	धुरनी मालनी डोमनी, खमरापुरा, सेहरापंचगोल, जड़माडल, हर्राकछार, झिरन
पंचायत छटालिंगा	ग्राम	गुढीछतरी, घटालिंगा, पलनी गैलडुब्बा धानासालढ़ाना कौडिया।

स्त्रोत: कार्यालय, विकासखण्ड व शिक्षा अधिकारी, तामिया जिला, छिंदवाडा से प्राप्त जानकारी।

प्रस्तुत तालिका के अनुसार पातालकोट क्षेत्र के ग्रामों में पंचायत व्यवस्था का विभाजन दिखाया गया है। पंचायत घटलिंगा में जो कि पक्की सड़क से जुडा हुआ हैं– 4 गांवों गुढ़ीछतरी, घटालिंगा, पलनी गैलडुब्बा, धानासालढाना कौडिया को सम्मिलित किया हैं। इन ग्रामों में 8 गँवों को विरान घोषित किया गया हैं। इन गांवो में पंचायत चुनाव सामान्यत: पंचायतीय चुनाव जैसे ही होते हैं।

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

पातालकोट घाटी के गाँवों का पहुंच मार्ग आज भी अत्यन्त दुर्गम हैं। इसीलिए पातालकोट घाटी संचार संसाधनों पहुंच मार्ग से वंचित हैं। जिसे निम्नांकित तालिका से समझना आसान हो जाता है।

विकासखण्ड/तहसील में निवास करने वाली भारिया जनजाति की तहसील मुख्यालय से दूरी

क्रं	गांव का नाम	दूरी
1.	तामिया, पिपरिया से घटालिंगा,	12 कि0मी0
	घटालिंगा से गुढ़ीछतरी	2 कि0मी0
2.	तामिया से गैलडुब्बा,	7 कि0मी0
	गैलडुब्बा से कौडिया,	3 कि0मी0
	गैलडुब्बा से हारमउ,	4 कि0मी0
	हारमउ से सूखामाण्ड ,	4 कि0मी0
	गैलडुब्बा से घुरनी मालनी, डोमनी (पैदल मार्ग)	12 कि0मी0
3.	तामिया से छिंदी रोड, रातेड के ऊपर तक	22 कि0मी0
	ग्राम रातेड तक (पैदल मार्ग)	2 कि0मी0
	कठौतिया से चिमटीपुर (पैदल मार्ग)	2.50 कि0मी0
	चिमटीपुर से घोधरी गुज्जा डॉगरी (पैदल मार्ग)	5 कि0मी0
4.	तामिया से छिंदी रोड ग्राम डोंगरी से हर्राकछार,	9 कि0मी0
	हर्राकछार से जडमादल (पैदल मार्ग),	6 कि0मी0
	हर्राकछार से झिरन (पैदल मार्ग)	8 कि0मी0
5.	तामिया से छिंदी हर्रई मार्ग से लोटिया	16 कि0मी0
	अतरिया से सेहरा,	
	सेहरा से खमरापूरा (पैदल मार्ग),	2 कि0मी0
	सेहरा से पचगोल (पैदल मार्ग),	5 कि0मी0
	सेहरा से झिरन (पैदल मार्ग)	2 कि0मी0

स्त्रोत:-कार्यालय, सहायक परियोजना प्रशासक, एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना, तामिया से प्राप्त जानकारी।

उपरोक्ता तालिका से स्पष्ट हैं कि सभी गाँव तहसील मुख्यालय से बहुत दूरी में बसे है। बिजौरी गाँव जो हर्रई मार्ग का गाँव हैं, वहाँ पर पोस्ट ऑफिस, डाक बंगला, चर्च (19वी सदी द्वारा निर्मित) उपलब्ध हैं। बिजौरी-हर्रई मार्ग पर ही पातालकोट घाटी बसी हुई है। बिजौरी से 11 कि.मी. की दूरी पर छिन्दवाड़ा गांव है जहां पर वन विभाग का कार्यालय स्थित हैं। तामिया में छिन्दवाड़ा गांव 'भारिया' जनजाति का प्रमुख बाजार स्थल हैं। जीप गाड़ी की सहायता से बीजाढाना गाँव के समीप घाटी के उच्चतम शिखर तक आया जा सकता हैं। यहाँ से देखने पर पातालकोट का विंहगम दृश्य बड़ा ही मनोहारी लगता हैं। यहाँ से पातालकोट के विभिन्न गाँवो के लिए पहुँच मार्ग पहाडों की कच्ची पगडंडी के रूप में निर्मित हैं।

भारिया का शाब्दिक अर्थ है- भार ढोने वाला। भारिया गोंड जनजाति की एक शाखा है जो द्रविड़ियन परिवार की जनजाति में शामिल है।

भौगोलिक क्षेत्र - म.प्र. में भारिया जनजाति मुख्यत: जबलपुर, छिंदवाड़ा, बिलासपुर जिलों में पाई जाती है। इन दोनों अंचलों में भारियाओं की संख्या लगभग दो लाख के ऊपर है। छिन्दवाड़ा जिले के पातालकोट क्षेत्र के भारियाओं को अत्यंत पिछड़ी जनजाति घोषित किया गया है। पातालकोट भारियाओं का निवास लगभग तीन-चार सौ साल से माना जाता है।

शारीरिक विशेषताएँ - आँखें छोटी, नाक चौड़ी, होंठ पतले एवं दाँत बारीक होते हैं।

निवास - भारियाओं का कद मध्यम रंग काला, भारिया लोग घने जंगलों में एकांत और ऊँचे स्थलों में रहना पसंद करते हैं। इनके गाँव को ढाना कहते हैं, जिसमें से दो से लेकर पच्चीस घर होते हैं। भारियाओं के घर घास-फूस, लकड़ी एवं बाँस के बने होते हैं।

वस्त्र - भारिया पुरुष धोती, कुर्ता और बंडी पहनते हैं एवं सिर पर पगिया बाँधते हैं। स्त्रियाँ साड़ियाँ ऊपर व नीचे लपेटती हैं। स्त्रियाँ सुन्दरता के लिए आभूषणों एवं गोदना का प्रयोग करती हैं।

संस्कृति - भारिया एक ऐसी आदिम जनजाति है जिनके पास अपनी पूरी संस्कृति कम ही बची है। यहाँ तक कि वे अपनी मूल बोली भरनोटी को भी भूल गए हैं। अब जो भारियाओं के पास बचा है, उसे मिश्रित संस्कृति के भाग के रूप में देखा जा सकता है। भारिया जनजाति कला सम्पन्न जनजाति है। भारियाओं की बोली भरनोटी है। गीत, कथा एवं पहेलियों का इनमें अत्यधिक प्रचलन है। भड़म, सैतम, करमा, सैला आदि इनके प्रमुख नृत्य हैं।

भोजन - भारिया शाकाहारी और माँसाहारी दोनों होते हैं। इनका मुख्य भोजन पेय है। महुआ और आम की गुठली से बनी रोटी तथा कंदमूल व सब्जियाँ भी इनके भोजन में शामिल हैं।

सामाजिक व्यवस्था - भारिया समाज पितृसत्तात्मक एवं रूढ़िवादी समाज है। इनके समाज में भूमका, पड़िहार एवं कोटवार का महत्तवपूर्ण स्थान होता है। सगोत्र विवाह वर्जित है, ममेरे-फुफेरे भाई बहनों के विवाह को शुभ माना जाता है। मृतकों को दफनाने की प्रथा है। इनमें मृत्यु भोज प्रथा है तथा मृतक स्तंभ भी बनाने की प्रथा है। धार्मिक जीवन के अंतर्गत इनके प्रमुख देवता बूढ़ा देव, दूल्हा देव, नाग देव आदि हैं। ये लोग हिन्दू देवी-देवताओं की भी पूजा करते हैं। भूमका इनका शमन या ओझा होता है।

भारिया की उपजाति : 1. भूमिया, 2. भुइहार, 3. पैडो।

भारियों में प्रचलित विवाह-पद्धति - भारिया में अनेक प्रकार की विवाह पद्धतियाँ प्रचलित हैं, जिनमें मँगनी विवाह, लमसेना विवाह, राजी-बाजी विवाह, विधवा विवाह आदि प्रमुख रूप से होते हैं। राजी बाजी विवाह इनमें होने वाली विशेष विवाह पद्धति है।

भारिया के प्रमुख पर्व-त्यौहार - भारिया जनजाति लगभग सभी हिन्दू पर्व त्यौहार को मनाती है। टोटम से जुड़ी पूजा के रूप में इनकी बिरदी पूजा, नवाखानी आदि प्रमुख पूजा है, जिसमें ये सम्पूर्ण भारिया संस्कृति का प्रदर्शन उत्सव व नृत्य व गायन करती है। हिन्दू त्यौहार, होली, दीवाली पर भारिया जनजाति द्वारा मनाए जाने वाले उत्सव देखने पर हिन्दू व जनजातीय संस्कृति का मिला-जुला रूप देखने को मिलता है।

भारिया के प्रमुख नृत्य - भारिया जनजाति अपने उत्सव को बड़े धूमधाम से मनाती है। इनमें अनेक नृत्यों का प्रचलन है, जिसे भारिया जनजाति स्त्री-पुरुष, बच्चों सहित मनाती है।

निष्कर्ष - वस्तुत: हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि पातालकोट में निवासरत् भारिया जनजाति की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन तो हो रहा है किंतु बहुत धीमी गति से। विगत पांच वर्षो सन् 2019 से 2023 तक के अध्ययन में हम यह पाते हैं कि भारिया जनजाति समाज की मुख्यधारा में अन्य समाज के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने का प्रयास कर रही है। आवश्यकता है इनकी सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में भी बदलाव या परिवर्तन लाने की। इसके लिए इनकी शिक्षा की स्थिति में सुधार लाना एवं इन्हे सभी दृष्टिकोणों से जागरूक करने की। इस कार्य में इस जनजाति के

पढ़े लिखे युवकों, सामाजिक संगठनों, शासन स्तर एवं आम नागरिकों को आगे आना होगा तभी भारिया जनजाति की सामाजिक स्थिति में तेजी से बदलाव होगा। वे भी राष्ट्र के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वाजपेयी, सरला, आधुनिकीकरण और सामाजिक परिवर्तन (छिन्दवाडा जिले की भारिया जनजाति का अध्ययन)।
2. दीक्षित, ध्रुवकुमार, पातालकोट घाटी, भौगोलिक एवं जनसंख्या विवेचन।
3. तिवारी, डॉ. शिवकुमार, मध्यप्रदेश की जनजातियॉ।
4. शोधार्थी के निजी सर्वे द्वारा अध्ययन।

****

Job Satisfaction Among Teachers

Dr. Syed Saleem Aquil* Sabiha Aquil**

Abstract - Education is essential for sustainable development. Primary education enables participation and independence, while secondary education supports economic growth. The rapid changes resulting from globalization require students to acquire higher knowledge and skills. Secondary education prepares children for higher education and the workforce, giving them the necessary qualifications and skills. It is a vital part of economic development and contributes to social capital by increasing civic engagement.The link between job satisfaction and life satisfaction is bidirectional. However, recent research suggests that controlling for certain factors weakens this association. This was observed in a study on teachers' job satisfaction.

About Chhattisgarh: Chhattisgarh, located in central India, achieved a literacy rate of 71.04% in the 2011 census, with female literacy at 60.59%. Additionally, the service sector has emerged as a significant contributor to the state's NSDP with 49.61%, followed by industry at 31.74% and agriculture at 18.65%. It is the seventh largest state in the country, with a total area of 135,195 square kilometres. The capital city is Raipur, and the state consists of 27 districts classified into three regions: northern, central plains, and southern. Chhattisgarh is predominantly rural, with about 20% of its population, about 5.1 million people as of 2011, living in urban areas.

Introduction: Job satisfaction is an essential aspect of a person's overall well-being. It involves their emotional response and attitude toward their work and can significantly affect their productivity and sense of accomplishment. It is linked to job evaluation and effectively responds to one's professional role. For example, a job with flexible work hours and a supportive management style may increase job satisfaction. In contrast, a job with a rigid schedule and a micromanaging boss may lead to dissatisfaction. While job satisfaction is essential to individual well-being and productivity, a direct relationship between job satisfaction and job performance lacks empirical solid support. Job design, such as assigned tasks and responsibilities, management style, and organizational culture, including workplace values and norms, affect job satisfaction. It is widely recognized that job satisfaction contributes to a person's sense of accomplishment and overall well-being, significantly affecting productivity. Achieving job satisfaction is essential for overall well-being and productivity. It includes emotional responses to work and is influenced by job evaluation and various work environment factors. Job satisfaction contributes significantly to a person's sense of accomplishment and well-being, impacting productivity.

Review

The Hawthorne studies led by Elton Mayo uncovered the Hawthorne effect, which suggested that increased productivity was due to workers' awareness that they were being watched. Scientific management, proposed by Frederick Winslow Taylor, initially boosted productivity, but also caused dissatisfaction among workers. Maslow's hierarchy of needs theory laid the foundation for theories of job satisfaction, which outlined the exploration of individuals' various needs.

The Various Models of Job Satisfaction

Affect Theory : Edwin A. Locke's Range of Affect Theory (1976) highlights how job satisfaction is influenced by the variance between desired and actual job conditions and the significance of specific job aspects. The theory emphasises how individual values and perceptions impact satisfaction levels, mainly when certain job facets are excessive.

Dispositional Theory: The Dispositional Theory suggests that individuals have innate dispositions that influence their level of job satisfaction. This theory gained significance because evidence shows that job satisfaction remains relatively stable over time and across different jobs and careers. The Core Self-evaluations Model, introduced by Judge, Locke, and Durham, identifies four core self-evaluations—self-esteem, general self-efficacy, locus of control, and neuroticism—that shape an individual's job satisfaction. According to the model, higher self-esteem and general self-efficacy, an internal locus of control, and lower levels of neuroticism lead to greater job satisfaction.

Opponent Process Theory: Opponent process theory suggests that emotional events trigger two processes: the primary process elicits emotions consistent with the event, while the opponent process induces contrary emotions. This theory provides insights into mood regulation and suggests

* **Asst. Professor, Kalyan P.G. College, Bhilai (C.G.) INDIA**
** **Research Scholar, Pt. Ravi Shankar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA**

that attempts to improve mood may face challenges.

Equity Theory: Equity Theory examines how individuals perceive fairness in social relationships based on the balance between input and output and the effort expended by others. It suggests that individuals may experience distress when they perceive inequity in comparison to others within the same or different social groups.

Discrepancy Theory: The self-discrepancy theory elucidates the underlying source of anxiety and sadness. It posits that individuals who perceive themselves as not meeting their responsibilities experience anxiety and regret for their perceived underperformance, leading to a sense of sadness due to unmet hopes and aspirations. The theory suggests that individuals gradually internalize their obligations and responsibilities for specific roles, wherein failure to fulfil them results in self-imposed punishment. Over time, these obligations merge into an abstract set of principles known as the self-guided. Failing to meet these obligations elicits agitation and anxiety. Conversely, achieving these obligations may yield rewards such as praise, approval, or love, forming an ideal self-guide. Failing to obtain these rewards may lead to feelings of sadness, disappointment, or even depression.

Factor Theory (Hygiene- Motivation theory) : Frederick Herzberg's Two-factor theory, the Motivator-Hygiene Theory, explains that different factors influence satisfaction and dissatisfaction at work. Motivation is driven by aspects of the job that lead to satisfaction, such as achievement and recognition. On the other hand, dissatisfaction is tied to hygiene factors like pay, company policies, and working conditions.

Job Characteristics Model: Hackman & Oldham's Job Characteristics Model examines how specific job traits affect job satisfaction. The model identifies five core job characteristics and three psychological states influencing work outcomes. Studies support the model's validity.

Factors Influencing Job Satisfaction: Employee job satisfaction depends on various factors, including financial compensation, work-life balance, job security, and growth opportunities. Management plays a crucial role in boosting satisfaction by creating a positive work environment, maintaining high morale, and providing necessary resources for task completion.

Environmental Factors

Communication overload and communication under load: Managing communication demands within modern organizations is crucial. Communication load, defined as the rate and complexity of communication inputs an individual must process, can lead to overload or under-load, affecting job satisfaction. Overload occurs with excessive or complex messages, impacting job satisfaction based on the individual's work style and motivation. Under-load happens when messages fall below the individual's processing capacity.

Superior subordinate Communicate: Communication between supervisors and subordinates greatly influences job satisfaction. Supervisors who convey immediacy and open communication are more likely to foster high job satisfaction among subordinates.

Individual Factors

Emotions: Mood and emotions are essential for job satisfaction. Moods are longer lasting but weaker, while emotions are intense and short-lived. Research suggests that both moods and emotions are related to overall job satisfaction. Positive and negative emotions significantly affect job satisfaction. The frequency of experiencing net positive emotion better predicts job satisfaction than the intensity of positive emotion.

Genetics : Genetics influence various individual differences, including job satisfaction. One study used sets of monozygotic twins raised apart to investigate genetic influence on job satisfaction.

Personality : High negative affectivity is associated with lower job satisfaction, while high positive affectivity is linked to greater satisfaction. These personality differences can influence how individuals perceive aspects of their job, such as pay and working conditions, impacting their overall satisfaction.

Working Conditions: Companies should provide spacious work areas, adequate lighting, comfortable workstations, and upgraded technology to optimise work conditions and improve efficiency and job satisfaction.

Conclusion : The teaching profession values job security and work environment as the most important attributes, with salary being considered the least important. Satisfaction with the pay scale is attributed to the 6-pay commission. In a country like India, stress significantly impacts job satisfaction. Faculty in private institutions tend to be more satisfied than government institutions due to the availability of more promotional facilities and benefits.

Efforts from both management and workers are essential to ensure long-term job satisfaction. Salary structures should be aligned with job responsibilities, and pay raises should be linked to performance rather than seniority. Job satisfaction is influenced by the experiences and conditions within a job, and when the positives outweigh the negatives, a certain level of job satisfaction is achieved.

References:-

1. AGARWAL, R. and FERRATT, T.W. (2001), "Crafting and HR strategy to meet the need for IT workers", Communications of the ACM, 44 (7): 58-64.
2. AGHO, A.O., MUELLER, C.W. and PRICE, J.L. (1993), "Determinants of Employee Job Satisfaction: An Emprical Test of a Causal Model", Human Relations, 46: 1007-1027.
3. CHEN, L.H. (2008), "Job satisfaction among information system (IS) personel", Computers in Human Behavior, 24: 105-118.
4. GLISSON, C.V. and DURICK, M. (1988), "Predictors of job satisfaction and organizational commitment in human service organizations", Administrative Quarterly,

33 (1): 61-68.
5. Adeyemo, D.A. (1997). Relative influence of gender and working experience on job satisfaction of primary school teachers. *The Primary School Educators, 1, 1*, 86-89.
6. Armentor, J. & Forsyth, C.J. (1995). Determinants of job satisfaction among social workers.
7. Armstrong, M. (1999). *Human resources management practice*. London: Kogan Page.
8. Ahluwalia, D., & Singh, P. (2015). Organisational climate, work motivation and hierarchical level as predictors of job satisfaction and organisational commitment among railway employees. Indian Journal of Health and Wellbeing, 6(9), 831-835.)

****

Social Transformation Through Media: A Sociological Study & Interpretation

Dr. Rishi Kumar Sharma*

Abstract - In the twenty-first century, in addition to several other factors of social change and transformation, media is also an integral part of our life because we are unquestionably guided and governed by media in several ways. Some of the popularly known means of media that have brought about a revolutionary change in the Indian society include-television, computer, internet, mobile and android phones that develop a close familiarity among the people across the world about the global culture; that bring them closer to the cultures of the world, and that move their minds to join the ongoing global socio-cultural processes in order to make their life better and more blissful.

Media and all its agencies have enslaved us in a way that we always find ourselves surrounded by media for our communicative needs and desires.Human rightsawareness, public welfare schemes and programs awareness, closeness to mainstream, closeness to the socio-cultural processes, such as, modernization, sanskritization, women empowerment etc. are the positive sides that media and all its agencies are revealing.

However, the negative sides of media that include the propagation of the excessive individualism, indifference to cultural modes and traditions, blinding-modernity, loss of faith in kinship system, family system, marriage system etc.can not be ignored and set aside while assessing the role of media in the social transformation of the Indian society.

It will not be an exaggeration to comment that modern social transformation of the Indian society is the gift of media which forces the people to change the existing social system and to replace it by some new better social system. The findings of the study approve certain positive and negative social changes that are being brought about by media in the modern Indian society.

Keywords: Transformation, Agencies, Media, Television, Advertisement, Popularity, Internet.

Introduction - Change occurs when the existing system fails to satisfy the needs and demands of the people. Change is inevitable and occurs in all the spheres of life and world imaginable on the part of man. As everything in the world is changeable, society too is changeable that reveals changes from time to time caused and brought about by nature or by the policies and schemes meant for the welfare of the public.

Social change has reached every corner of the world, and even the most primitive societies and communities now reveal change. Of the various factors of social change, the economic factor, technological factor, cultural factor and ideological factor are the major ones that play a dominant role in bringing about social change.

The role of media in social change cannot be ignored. Media has proved itself one of the most effective agencies that force and motivate the people to link up with social change and to raise voice against the evils in the existing social system. Media has reached both the rural and the urban societies and the primitive and the modern societies.

It is true that media is easily accessible to the people of the urban society, but it cannot be denied that it is also accessible to the members of the primitive and the rural societies where the people are found incredibly influenced by media and the contents served by media. Media affects the people both positively and negatively. Positively speaking, it motivates the people to be aware of the ongoing social trends in the world and to avail themselves of education and employment. Negatively speaking, it detaches them from the long-prevailing and long-established socio-cultural norms and traditions and forces them to enjoy individuality.

Obviously, media is responsible for the loss of people's faith in traditions, social institutions like family, marriage and kinship, religion etc. It is under the influence of media that nuclear families are increasing, aged-people are forced to live in old-age homes, pre-marital and post-marital as well as live-in-relations are being approved, and trend of inter-caste and inter-religion marriage is increasing. Media plays a significant role in influencing social change in various ways. Here are some of the ways in which media can impact social change:

Raising Awareness: Media platforms have the power to bring attention to social issues that may otherwise go

* Lecturer (Sociology) Government Girls College, Karauli (Raj.) INDIA

unnoticed. Through news coverage, documentaries, and social media campaigns, the media can shine a spotlight on important issues, leading to increased awareness among the public.

Shaping Public Opinion: Media outlets have the ability to shape public opinion by framing issues in particular ways. The way in which stories are presented, the language used, and the perspectives highlighted can all influence how the audience perceives a particular issue.

Promoting Dialogue and Discussion: Media platforms provide a space for dialogue and discussion on important social issues. Through news programs, talk shows, and social media platforms, people can engage in conversations about topics such as racism, inequality, and environmental issues.

Mobilizing Action: Media can mobilize individuals to take action on social issues. Whether through calls to action in news stories, social media campaigns, or documentaries that inspire change, the media can encourage people to get involved in causes they care about.

Challenging the Status Quo: Media can challenge existing social norms and beliefs by presenting alternative perspectives and highlighting marginalized voices. Through storytelling and representation, the media can push boundaries and promote more inclusive and diverse narratives.

Advocacy and Activism: Media outlets can serve as platforms for advocacy and activism, providing a voice for marginalized communities and promoting social justice causes. Activists often use media channels to raise awareness, organize protests, and push for policy change.

Educating and Informing: Media can educate the public about complex social issues, providing background information, context, and analysis that can help people better understand the root causes of problems and potential solutions.

Holding Power to Account: The media plays a crucial role in holding those in power accountable for their actions. Investigative journalism, in particular, can uncover corruption, abuse of power, and other injustices, leading to increased transparency and accountability.

Overall, media has the power to shape public discourse, influence attitudes and behaviors, and drive social change by raising awareness, promoting dialogue, mobilizing action, challenging norms, advocating for justice, educating the public, and holding power to account.Media gives you some right information too. Gives you sources through Ads. Politically, economically, socially, geographically feeds information constantly. Wastes your time through too much details about accidents, thefts,silly politics from all corners. Media has its broad canvas on which small mind often shines. It can distort history for the promotion of tough research some times even intentionally. Starting from stalwarts to petty minds there will be people employed in media. Own media, buy media partly and some equally well run after media.Media has uniqueness. Some to many, many to many, one to many ,many to some, many to one combinations get info right or wrong.Person to person (postal media), person to many (public address system ,person to many (effective editorial) ….like sources are there in media.Technology gave telephone, microphone-loud speaker(unbeatable even with sticks in India and in Indian Assemblies and Parliament),Public address system, Radio, T V. Mobiles where mass SMS,App based, don't fear thunder type Apps assuring uninterrupted communication except when many decide to burn every thing working like erstwhile Kashmir very frequently which reduced of late. Media jam is common in hostile places and war zones. On the whole media is a compulsory vitamin for life.

Literature Review

'In the past three decades, the digitization of most communicational content, the construction of an encompassing global space of communicative exchange called 'the internet' ; and the embedding in daily life of the resulting possibilities for everyday action have, together, begun to transform social relations and so the very nature of modern institutions. While a first wave of social theory (Anthony Giddens, Arjun Appadurai) drew key insights from an earlier stage in the globalization of media, those insights predated the establishment of high-speed, high-bandwidth, many-directional digital communications as a banal fact in the everyday lives of billions. This recent intensification of communications ('recent' in the sense of 'in the last two decades') has come at a price : the embedding of most actions in a new 'communication system' (Mansell 2012) across which the generation of economic value becomes fundamentally reliant on the gathering, processing, evaluating and selling of data : that is, the data constituted by those acts of communication themselves. The result is an emerging regime of total surveillance developed primarily for corporate benefit, but also available for use by political power, as revealed in Edward Snowden's revelations about the NSA and GCHQ. Markets and states, indeed all social forms from institution building to informal interaction, are becoming increasingly dependent on a communicative infrastructure whose operations are incompatible with the value of freedom that once seemed fundamental to the project of modernity.'[1]

'In 21st century, the elites of the Indian society have been benefitted by media and enjoying the taste of development, whereas the disadvantaged classes are still remaining deprived, exploited and far from accessing the various opportunities such as information, education, health care, and information communication technologies. The failures of the communication systems of the Government in different parts of the country are caused poverty, illiteracy, malnutrition, and under development. Today, the major challenge is coming before the policy makers that how to mobilize the poor people towards development. The first challenge came before them that had been easy accessibility of media in all parts of the country. The dream

comes true when the media has been reached at the houses of poor people. Hereafter, the new problems have been arisen at the villages that poorer sections of the rural society are less aware in regard to accessing the welfare policies of the Government that have been especially made of them. Therefore, the aims of media are awakening the consciousness of the poor people and broadcasting developmental messages in every part of the country. The messages should be composed in such a way that it must be simple, meaningful and carrying their indigenous culture. Further, the contents of media message must be produced in such a way so that the village people can identify themselves and ensuring their active participation in the process rural development.'[2]

'The media are agents of social change that can bring about positive attitudinal change in the audience; they set agenda for the people to follow in any society. The mass media are crucial to opinion formulation and eventual outcomes of events. The media are champions of human rights. They act as the eyes, ears and voices of the public, drawing attention to abuses of power and human rights, often at considerable personal risk. Through their work, they can encourage governments and civil society organisations to effect changes that will improve the quality of people's lives.'[3]

'The people who attend to television news or newspapers are more likely to participate in electoral politics than those who do not. Television exposure in general, does not appear to be related to political participation or social capital. Instead, watching television news and reading the newspapers are more likely to be associated with political participation than watching television in general. Reading the newspaper is highly associated with level of education while watching television news appears to transcend educational distinctions. Newspapers may perpetuate the interpretations and practices of elites, while television news may be an appropriate vehicle to encourage political participation among diverse groups'[4].

'Media will have to consider seriously its contribution to the basic problems of the society and will have to become an instrument for nation building. It is not only when that the relevance of media to the society will be proved. Until then it will continue to remain confined to specific sections entertaining them, fantasising their life styles and keeping them less informed.'[5]

'(i) Media effects may be begin as muchas malign, (ii) the influence of media is collective rather than operating through any one medium or text, (iii) the media collectively operate within a range of other cultural and social factors which also condition possible influence, (iv) the influence of media is conditioned by a range of personal and social factors for the individual audience member, including their social upbringing and their immediate personal circumstances., (v) influence is conditioned by the context of reception,(vi) influence is more likely if the media text speaks of attitudes and values already held by the audience.'[6]

'Mass media plays crucial role in forming and reflecting public opinion and becoming a powerful tool for bringing about social changes Media connects the world to individuals and reproduces the self image of society. Because of its immense ability to provide access to information, the mass media can play an outstanding role in promoting reproductive health and social changes affecting gender, reproduction and sexuality. In the developing world mass media communication provides a link to the global village and can play a culturally interactive role.'[7]

'The level of literacy access to higher education, favourable male female ratio, low birth rate and a number of social security measures give an inflated image of empowerment of women. Despite these remarkable achievements, the actual status of women has not had any notice able improvement. Empowerment of women has not taken place in the ways in which it should have been achieved. Most of women in Kerala seem to have the material resources to be in in a position to influence the political discourse and the development process in the state. The mainstream media have usually portrayed women in Kerala as living a good life and in glowing terms. But the real lives of women are far from the projected image. Along with social, political and religious barriers that impede women's empowerment, the media have also joined the band wagon and subjected itself to the forces of the market.'[8]

Objectives:

1. To explore the various fields and communities that reveal social change.
2. To peep into the causes and factors of social change.
3. To discuss the role of media in social change in rural India.
4. To discuss the role of media in urban social change.
5. To make focus on the positive effects of the social change brought about by media.
6. To make focus on the negative effects of the social change brought about media.
7. To evaluate the role of media in bringing about social change.

Hypothesis:

1. Society is changeable.
2. Social change is a universal phenomenon.
3. Social change is both planned and unplanned.
4. Social change is both positive and negative.
5. Several factors are responsible for social change.
6. Media plays a vital role in bringing about social change.

Adopted Methodology : The selection of the title and theme after due consideration and brooding which was followed by the prescribed process of social research paved the path for the study and facilitated it to produce its conclusions systematically. Since objectivity is the most required feature of scientific research, it was maintained throughout, and the author remained unbiased while

collecting and analyzing the data. Adherence and observing of the prescribed process of social research that included the steps of research helped the scholar go through and review some selected research studies available in the form of research papers and books, and then to conclude the selected subject for the study.

Findings, Conclusion & Ethical Considerations :

Nothing in the world is without change, and the same is true of societies of the world at large that keep changing with the passage of time. The ideologies, customs, traditions, modes of living and modes of behavior in accordance with the situation etc. are changeable. Indeed, nothing is for ever, and everything changes in the world.

Change in society is caused naturally and in a planned way. Nature causes change in order to bring about balance in all the forces that run a society. On the contrary, planned change is brought about in order to make the life of the people in societies better and in order to bring the people closer to the mainstream and to link them with it so that they can enjoy their life in the best possible manner.There are several factors that are responsible for social change. Karl Marx finds the economic factor responsible for the social change; Sorokin considers the cultural factor responsible, while Weblen believes the technological factor responsible for the social change in the world.

In the modern context, media is a very effective means of bringing about social change in the world. All the societies whether primitive and tribal or modern and advanced are in the grip of media which has become an inseparable part of their life. Media not only affects the mentality of the people, but it also leads them to change by enabling them to be familiar with the global socio-cultural trends and processes.

Media have both positive and negative impacts on society.Through media, we learn alot of things like our culture, our values, new trends and alot more. It influences our mind by the use of hegemony. It gives us a clear message about society. On the other hand, media is giving negative impressions on our youth about serious issues. Adult content is being shown on media which is badly affecting our child. When media tries to create awareness about some serious issues through movies etc, people get wrong idea from it. People tries to copy the lives of their favorite characters and gets badly affected. Some people are so addicted to media that they have no time to do other tasks. Everyone is busy on mobile phones or on internet and have no time to talk to each other. Media is changing our culture and our norms.

References:-

1. Nick Couldry, 'Media in Modernity: A Nice Derangement of Institutions', Dans Revue internationale de philosophie 2017/3 (n° 281), p ages 259 à 279.
2. Debasis Mondal, 'Role of Media in Society- An Analytical Review', International Journal of Research, Volume 2, Issue 2, Feb. 2015
3. Asemah, E.S.'Mass Media in the Contemporary Society', University Press, Jos.2011
4. Choudhary R.,'Role of Media in Society', Centrum Press, New Delhi, pp: 53-57, 2010.
5. Nagori Monika, Mass Media and Society, Agrotech Publishing Academy, Udaipur, pp: 130-133, 2010.
6. Graeme Burton, Media and Society: Critical Perspectives, Tata Mcgraw Hill Education, New Delhi, pp: 99-100, 2010.
7. Goel Suresh, Mass Media and Social Change, M.D Publications Pvt Ltd, New Delhi, pp: 39-40, 2009.
8. Prasad Kiran, 'Women and Media: Challenging Feminist Discourse,' The Women Press, Delhi, pp: 63-78, 2005.

****

Tribal Communities in India

Dr. Anjali Jaipal*

Abstract - India is a diverse nation with a rich cultural heritage. Among its many communities, tribal groups, known as "Adivasis," hold a unique place. These indigenous populations have a distinct cultural identity and have contributed significantly to India's cultural mosaic. Despite their rich heritage, tribal communities face numerous socio-economic challenges. Tribal communities, referred to as Adivasis, meaning "original inhabitants," have been residing in India for centuries. These communities are spread across various parts of the country, with significant populations in states like Odisha, Madhya Pradesh, Chhattisgarh, Jharkhand, and the northeastern states. Historically, they have lived in close harmony with nature, developing unique cultures and lifestyles. This paper aims to provide a comprehensive overview of the tribal communities in India, their cultural practices, socio-economic status, and the challenges they face, along with the measures taken for their upliftment.

Keywords: Tribal communities, Adivasis, Indigenous populations, Cultural heritage, Socio-economic challenges, Government policies, Development programs.

Demographics: The demographics of tribal communities in India reflect a diverse and intricate tapestry of cultures, languages, and traditions. According to the Census of India 2011, the Scheduled Tribes (STs) constitute approximately 8.6% of the total population, translating to around 104 million individuals. These communities are distributed unevenly across the country, with significant concentrations in states such as Odisha, Madhya Pradesh, Chhattisgarh, Jharkhand, Maharashtra, and the northeastern states, including Arunachal Pradesh, Nagaland, and Mizoram. Each state hosts a variety of tribes, each with distinct cultural identities. For instance, Odisha alone is home to 62 different tribes, including the Kondhs, Santals, and Bondas. In the northeastern states, tribes such as the Nagas, Mizos, and Khasis have their own unique languages and customs. Tribal populations in India also exhibit a wide range of socio-economic conditions, from relatively well-off tribes in the northeastern states to more impoverished groups in central India. Despite constitutional safeguards and affirmative action policies, many tribal communities continue to face challenges such as land dispossession, inadequate access to education and healthcare, and socio-economic marginalization. The diverse demographic landscape of India's tribal communities underscores the need for tailored and culturally sensitive development policies to address their unique challenges and preserve their rich heritage.

Cultural Practices

Social Structure: Tribal communities in India typically have a communal lifestyle, with a strong emphasis on kinship and clan affiliations. The social structure is often egalitarian, with community decisions being made collectively. Traditional tribal leadership is often hereditary, but the role of the leader (often called a "chief" or "headman") is more consultative than authoritative.

Festivals and Rituals: Tribal festivals are deeply rooted in nature worship and agricultural cycles. For instance, the Santhals, one of the largest tribal groups, celebrate Sohrai, a festival marking the harvest season, with elaborate rituals and animal sacrifices. Similarly, the Gonds of central India celebrate Keslapur Jathra, which includes rituals to appease their deities for a good harvest.

Art and Craft: Tribal art and craft are integral to their cultural expression. Warli painting from Maharashtra, Dokra metalwork from West Bengal, and Pattachitra from Odisha are examples of tribal artistry that have gained international acclaim. These art forms are not merely decorative but are imbued with cultural narratives and religious significance.

Language and Oral Traditions: Tribal communities in India have their own distinct languages and dialects, often passed down through generations via oral traditions. These languages are not just means of communication but are also repositories of indigenous knowledge, folklore, and heritage. For example, the Gondi language spoken by the Gond tribe is rich in oral literature, including songs, stories, and rituals that reflect their history and cosmology.

Traditional Knowledge and Practices: Tribal communities possess a wealth of traditional knowledge, particularly regarding agriculture, medicine, and environmental conservation. The Bhil tribe, for instance, practices a form of sustainable agriculture known as shifting cultivation or 'jhum', which involves rotating crops and allowing land to regenerate. Additionally, many tribes have extensive knowledge of medicinal plants and herbs, which they use to treat various ailments.

* Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA

Religious Beliefs and Practices: Tribal religions are predominantly animistic, with a strong emphasis on the worship of nature and ancestral spirits. The Santhal tribe, for example, worships Marang Buru (Great Mountain) and Jaher Era (Lady of the Grove), among other deities. Rituals and ceremonies are conducted to honor these deities and ensure their protection and blessings for the community.

Socio-Economic Status

Education: Education levels among tribal communities are significantly lower compared to the national average. According to the Ministry of Tribal Affairs, the literacy rate among STs was 59% in 2011, compared to the national average of 73%. High dropout rates, inadequate infrastructure, and a lack of culturally relevant curriculum are some of the challenges hindering educational attainment.

Health: Tribal communities often face severe health disparities. Issues such as malnutrition, high infant mortality rates, and limited access to healthcare facilities are prevalent. The National Family Health Survey-4 (2015-16) reported that 45% of ST children under five were stunted, reflecting chronic malnutrition.

Economic Conditions: The primary occupation of tribal communities is agriculture, often practiced on marginal lands with low productivity. Many also engage in forest-based livelihoods, collecting minor forest produce such as tendu leaves, honey, and bamboo. However, their economic conditions remain precarious, with high levels of poverty and unemployment. The lack of access to markets and modern agricultural practices exacerbates their economic vulnerabilities.

Housing and Living Conditions: Tribal communities often live in remote and inaccessible areas, which impact their housing and living conditions. Many tribal families reside in rudimentary dwellings made from locally available materials such as bamboo, mud, and thatch. These houses are typically small and lack basic amenities such as clean drinking water, sanitation facilities, and electricity. The lack of infrastructure development in tribal regions further exacerbates these challenges, leading to poor living conditions and heightened vulnerability to health issues. Efforts to improve housing and living conditions through government schemes like the Pradhan Mantri Awas Yojana have had limited reach, necessitating more targeted interventions.

Employment and Income: Employment opportunities for tribal communities are often limited and primarily centered around agriculture, forest-based activities, and unskilled labor. Due to the reliance on traditional agricultural practices and low productivity, many tribal families struggle to earn a stable income. Additionally, seasonal migration to urban areas for work is common, where they often end up in low-paying, informal sector jobs without job security or social benefits. The lack of access to skill development and vocational training programs further hampers their ability to secure better-paying jobs. Initiatives aimed at promoting micro-enterprises, self-help groups, and skill development are crucial for improving their economic prospects.

Access to Financial Services: Tribal communities frequently face significant barriers in accessing formal financial services, including banking, credit, and insurance. This exclusion stems from factors such as geographic isolation, lack of financial literacy, and the absence of banking infrastructure in remote tribal areas. Consequently, many tribals rely on informal and often exploitative moneylenders for their financial needs. However, more comprehensive measures are required to ensure that tribal populations can fully participate in the formal financial system, thereby enhancing their economic security and opportunities for growth.

Challenges Faced by Tribal Communities

Land Alienation: One of the most pressing issues faced by tribal communities is land alienation. Despite protective legislations like the Forest Rights Act (2006), many tribes continue to lose their land to development projects, mining, and deforestation. This not only disrupts their livelihoods but also erodes their cultural and social fabric.

Displacement and Migration: Development projects such as dams, mines, and industrial complexes have led to the displacement of millions of tribal people. The displacement often results in the loss of traditional livelihoods and cultural disintegration. Many displaced tribals migrate to urban areas, where they face exploitation and discrimination.

Social Exclusion: Tribal communities often face social exclusion and discrimination, both in rural and urban settings. This exclusion is manifested in limited access to education, healthcare, and employment opportunities. The intersection of caste and tribal identities further compounds their marginalization.

Environmental Degradation: Environmental degradation poses a significant threat to tribal communities in India. Many tribes depend on forests and natural resources for their livelihoods, practicing sustainable agriculture and gathering forest produce. However, deforestation, mining activities, and industrial projects have led to the depletion of these vital resources, disrupting traditional ways of life and causing ecological imbalances that further exacerbate their socio-economic vulnerabilities.

Cultural Erosion: Cultural erosion is another critical challenge faced by tribal communities. Rapid modernization and assimilation pressures have led to the gradual loss of indigenous languages, rituals, and traditional knowledge systems. This cultural disintegration is often accelerated by formal education systems that do not incorporate indigenous knowledge and by media influences that promote mainstream cultural norms, undermining the unique identities of these communities.

Political Marginalization: Political marginalization significantly impacts tribal communities, who often have limited representation in local, state, and national governance structures. Despite provisions for political reservations, many tribal areas still experience inadequate

political attention and development initiatives. This lack of representation and advocacy results in insufficient allocation of resources and inadequate implementation of policies designed to protect and promote tribal welfare, perpetuating cycles of disadvantage.

Government Policies and Initiatives

Constitutional Provisions: The Constitution of India provides several safeguards for the protection and upliftment of tribal communities. Articles 15, 16, and 46 prohibit discrimination and promote social justice. The Fifth and Sixth Schedules provide special administrative provisions for areas with significant tribal populations, ensuring their autonomy and self-governance.

Tribal Sub-Plan (TSP): The Tribal Sub-Plan (TSP) is a strategic policy initiative aimed at the socio-economic development of STs. Under this plan, funds are earmarked from the national budget for the development of tribal areas. The TSP focuses on improving education, healthcare, and infrastructure in tribal regions.

Integrated Tribal Development Projects (ITDP): ITDPs are designed to address the specific needs of tribal areas through an integrated approach. These projects focus on improving agricultural productivity, providing vocational training, and enhancing access to healthcare and education. ITDPs aim to create sustainable development models that can be replicated across tribal regions.

Forest Rights Act (2006): The Forest Rights Act (2006) was enacted to recognize and vest the forest rights and occupation in forest land to forest-dwelling STs and other traditional forest dwellers. The Act empowers tribal communities by granting them legal rights over the land and resources they have traditionally accessed and used.

Eklavya Model Residential Schools (EMRS): The Eklavya Model Residential Schools (EMRS) initiative focuses on providing quality education to tribal children in remote areas. Established under the Ministry of Tribal Affairs, these schools offer free residential education from Class VI to XII, with a curriculum tailored to the needs of tribal students. The schools aim to bridge the educational gap, improve literacy rates, and promote all-round development, including cultural and extracurricular activities, ensuring that tribal children have access to the same educational opportunities as their non-tribal peers.

Case Studies

The Dongria Kondh of Odisha: The Dongria Kondh, a tribal community in Odisha, has gained international attention for their successful resistance against a mining project by a multinational corporation. The project threatened their sacred Niyamgiri Hills, which are central to their cultural and religious beliefs. Through a sustained legal and activist campaign, the Dongria Kondh were able to secure their land rights, showcasing the power of community mobilization and legal advocacy.

The Baigas of Madhya Pradesh: The Baiga tribe in Madhya Pradesh is known for their traditional agricultural practices and deep knowledge of herbal medicine. However, they face significant challenges due to displacement and loss of land. The implementation of the Forest Rights Act has provided some relief, enabling the Baigas to reclaim their ancestral lands and continue their traditional practices.

The Bhils of Rajasthan: The Bhils, one of the largest tribal communities in India, predominantly reside in the states of Rajasthan, Gujarat, Madhya Pradesh, and Maharashtra. In Rajasthan, they face significant socio-economic challenges, including poverty, illiteracy, and land alienation. Despite these challenges, the Bhils have managed to preserve their rich cultural heritage through traditional festivals, music, and dance. Initiatives such as the Swavlamban Scheme by the Rajasthan government aim to improve their livelihood opportunities through skill development and financial assistance, fostering self-reliance and economic stability.

The Khasi Tribe of Meghalaya: The Khasi tribe, primarily inhabiting the northeastern state of Meghalaya, is known for its matrilineal society, where lineage and inheritance are traced through women. The Khasi community has a rich tradition of oral literature, music, and dance. Despite their relatively better socio-economic status compared to other tribes, the Khasis face challenges related to modern education and employment opportunities. Government schemes, such as the Special Central Assistance to Tribal Sub-Plan, focus on improving infrastructure, education, and healthcare facilities in Khasi-dominated areas, aiming to bridge the gap between tradition and modernity while preserving their unique cultural identity.

Recommendations for Policy and Practice

Enhancing Educational Opportunities: Improving educational infrastructure in tribal areas is crucial. This includes building more schools, providing trained teachers, and developing culturally relevant curricula. Scholarship programs and vocational training can also play a vital role in enhancing educational attainment among tribal youth.

Improving Healthcare Access: Strengthening healthcare infrastructure in tribal regions is essential. Mobile health clinics, telemedicine, and training of local health workers can help bridge the healthcare gap. Additionally, integrating traditional tribal medicine with modern healthcare practices can provide holistic health solutions.

Promoting Sustainable Livelihoods: Developing sustainable livelihood options for tribal communities is crucial for their economic upliftment. This includes promoting agroforestry, ecotourism, and small-scale industries. Providing access to credit and markets can also enhance their economic resilience.

Strengthening Legal Protections: Ensuring the effective implementation of protective legislations like the Forest Rights Act and preventing land alienation are critical. Legal aid and awareness programs can empower tribal communities to assert their rights and seek justice.

Conclusion: In conclusion, tribal communities in India represent a vibrant tapestry of cultural diversity and resilience, yet they grapple with multifaceted challenges

that threaten their socio-economic well-being and cultural heritage. Despite constitutional protections and targeted government initiatives, issues such as land alienation, displacement, and inadequate access to education and healthcare persist. The demographic diversity of India's tribal populations underscores the need for nuanced and culturally sensitive policies that respect their traditional knowledge systems and promote sustainable development. Government efforts such as the Tribal Sub-Plan and Forest Rights Act have made strides in recognizing and safeguarding tribal rights, but implementation gaps remain a concern. Initiatives like integrated tribal development projects and legal advocacy have shown promise in empowering communities to assert their rights and resist exploitation. However, more comprehensive measures are needed to address systemic inequalities and ensure inclusive growth for tribal populations. Moving forward, enhancing educational opportunities, improving healthcare access, and promoting sustainable livelihoods are imperative. Strengthening legal protections against land alienation and promoting cultural preservation are equally vital. Collaboration between government agencies, civil society organizations, and tribal communities themselves is crucial for effective policy implementation and sustainable development. By prioritizing equity, cultural sensitivity, and community empowerment, India can harness the strengths of its tribal communities as custodians of diverse cultural heritage and contributors to national development, ensuring a more inclusive and equitable future for all its citizens.

References:-

1. Census of India 2011. (2011). Office of the Registrar General & Census Commissioner, India. Retrieved from https://censusindia.gov.in/
2. Ministry of Tribal Affairs. (2011). Statistical Profile of Scheduled Tribes in India 2013. Retrieved from https://tribal.nic.in/ST/StatisticalProfileofSTs2013.pdf
3. National Family Health Survey-4 (2015-16). (2016). Ministry of Health and Family Welfare, Government of India. Retrieved from http://rchiips.org/nfhs/NFHS-4Reports/India.pdf
4. Forest Rights Act. (2006). Ministry of Tribal Affairs, Government of India. Retrieved from https://tribal.nic.in/FRA/data/FRARulesBook.pdf
5. Shah, A. (2010). In the Shadows of the State: Indigenous Politics, Environmentalism, and Insurgency in Jharkhand, India. Duke University Press.
6. Baviskar, A. (2004). In the Belly of the River: Tribal Conflicts over Development in the Narmada Valley. Oxford University Press.
7. Xaxa, V. (1999). Tribes as Indigenous People of India. Economic and Political Weekly, 34(51), 3589-3595. Retrieved from https://www.epw.in/journal/1999/51/review-articles/tribes-indigenous-people-india.html
8. Padel, F. (2016). Sacrificing People: Invasions of a Tribal Landscape. Orient Blackswan.

****

विमुद्रीकरण : कारण, आवश्यकता और प्रभाव

डॉ. उर्मिला चौकसे *

प्रस्तावना – विमुद्रीकरण (Demonetization) नोटबंदी से तात्पर्य – एक आर्थिक गतिविधि; जिसमें सरकार पुरानी मुद्रा को समाप्त कर नई मुद्रा चालू करती है। कानूनी तौर पर पुरानी मुद्रा बंद कर नई मुद्रा लाने की घोषणा को विमुद्रीकरण कहते हैं।[1] वास्तव में 'डीमोनेटाइजेशन' या विमुद्रीकरण 'इकोनॉमी' में उपलब्ध 'करेंसी' या मुद्रा की 'लीगल टेंडर' की वैधता समाप्त कर देने को कहा जाता है। जब कभी नियामक संस्था को ऐसा लगता है कि– जाली नोटों, मनी लैंडिंग व अवैध रूप से बड़े स्तर पर मुद्रा के लेनदेन से राष्ट्रीय अर्थतंत्र को क्षति पहुँच रही हो तो सरकार एक नोटिस जारी कर पुराने नोटों को नए नोटों में बदल देती है। इसमें सरकार केन्द्रीय बैंक (हमारे देश के संदर्भ में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया), आर्थिक सलाहकार की भी योजना पर सहमति ली जाती है।

भारत में भ्रष्टाचार प्रमुख समस्या है, जो चर्चा और आंदोलनों का प्रमुख विषय रहा है। आजादी के एक दषक बाद से ही भारत भ्रष्टाचार के दलदल में धँसा नजर आने लगा और उस समय संसद में इस बात पर बहस भी होती थी। दि. 21 दिसम्बर 1993 को भारत में भ्रष्टाचार के खात्मे पर संसद में हुई बहस में डॉ. राममनोहर लोहिया ने जो भाषण दिया था; वह आज भी प्रासंगिक है। उस वक्त डॉ. लोहिया ने कहा था–सिंहासन और व्यापार के बीच संबंध भारत में जितना दूषित, भ्रष्ट और बेईमान हो गया है उतना दुनिया के इतिहास में कहीं नहीं हुआ है।[2] हमारे देश में प्राचीन काल से ही काले धन की समस्या प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से अर्थव्यवस्था को दीमक की तरह कतरती रही है। भ्रष्टाचार के संबंध में हाल ही के वर्षों में जागरूकता बहुत बड़ी है, जिसके कारण भ्रष्टाचार विरोधी अधिनियम–1988, सिटीजन चार्टर, सूचना का अधिकार अधिनियम–2005, कमीशन ऑफ इंक्वायरी एक्ट आदि बनाने के लिए सरकार बाध्य हुई है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के दो चेहरे हैं– एक विकसित भारत और दूसरा पिछड़ा भारत। विकसित भारत की बहुत छोटी सी आबादी जहाँ काले धन की मात्रा से परिपूर्ण रूप से संपन्न है वहीं पिछड़े भारत की बड़ी आबादी उसके जीवन में दो जून रोटी के लिए कड़ा परिश्रम करती है। सरकार की मंशानुसार मुख्यत: अघोषित धन पर नियंत्रण रखने के प्रयोजन से जनवरी 1946 में 1000, 10,000 के नोटों का विमुद्रीकरण किया गया था। वर्ष 1954 में 1000, 5000 और 10,000 के नोट जारी किये गये। भारत के चौथे प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के कार्यकाल में जनवरी 1978 को 1000, 5000, 10,000 के नोटों का विमुद्रीकरण किया गया। दि. 8 नवंबर 2016 को रात्रि 12:00 बजे से भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने फिर 500 और 1000 के नोटबंदी की घोषणा की। सरकार का मानना है कि नोटबंदी से आधारभूत ढांचे को विकसित करने में भारी मदद मिल सकती है। भारत सरकार ने कई प्रयोजनों को ध्यान में रखते हुए यह बड़ा कदम उठाया। के. एम. सी. के एक अधिकारी ने कहा कि विमुद्रीकरण टैक्स माफ करने वाली उस योजना से भी कहीं ज्यादा प्रभावी साबित होगी जिसमें बकाया टैक्स पर ब्याज ना देने की राहत दी गई थी।[3]

विमुद्रीकरण क्यों ? जब भ्रष्टाचार बढ़ जाए, लोगों में जमाखोरी, रिश्वतखोरी बढ़ जाए, तब पुरानी मुद्रा को सेवानिवृत्त कर नई मुद्रा चलन में लाकर काला धन, भ्रष्टाचार, नकली नोट, आतंकवादी और नक्सलवादी गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए विमुद्रीकरण अपनाना अनिवार्य हो जाता है। परिणाम स्वरूप बैंकों के पास नगद जमा पूंजीआ जाती है। इस तरह यह देश की अर्थव्यवस्था में एक प्राण वायु फूंकने का काम करती है। अचानक बड़े नोटों का विमुद्रीकरण करने का तात्पर्य – 'आतंकवाद व नक्सलवाद की कमर तोड़ना है।' नकली नोटों से बचने का सबसे अच्छा रास्ता बड़े नोटों का विमुद्रीकरण है। नकली नोट के गोरखधंधे में केवल भारत के ही भूले–भटके आपराधिक प्रवृत्ति के लोग ही लिप्त नहीं हैं, बल्कि अन्य देशों के कुछ असामाजिक तत्त्व भी इस नकली नोट के कारोबार में शामिल हैं। सरकारी आकलन के अनुसार भारत में जाली करेंसी नोटों में बड़ा भाग रुपए 500 एवं 1000 के नोटों का ही है। जो पिछले कुछ वर्षों से तेजी से बढ़ रहा है, इसको रोकने के लिए बड़े नोटों का विमुद्रीकरण अत्यंत आवष्यक था। इस फैसले से देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में एक से दो फीसदी की बढ़ोत्तरी के रूप में इकोनॉमी को फायदा होगा। 'इकोनॉमी' का बड़ा हिस्सा 'टैक्स' के दायरे में लाना आसान हो सकता है। नोटबंदी को लेकर भाजपा के राष्ट्रीय सचिव श्रीकांत शर्मा का दावा है कि नोटबंदी सिर्फ पार्टी का ही नहीं; जनता का आंदोलन बन गया है। दिक्कतों के बावजूद लोग मान रहे हैं कि यह मुहिम गांव गरीब के लिए ही है।[4] दिनांक 8 नवम्बर 2016 को पुरानी नोटबंदी की घोषणा के बाद ही लोगों के मन में सवाल आ गया कि अब क्या होगा? क्या काला धन कम होगा ? क्या फायदा होगा देश की अर्थव्यवस्था पर ? इस 'डीमोनेटाइजेशन' का असर क्या होगा ? क्या जिस सुखद भविष्य का सपना उसने देखा है वह सच होगा ? नोटबंदी के पहले आर.बी.आई. के अनुसार 31 मार्च 2016 तक भारत में 16.42 लाख करोड़ रुपए मूल्य के नोट बाजार में थे; जिसमें से 14.18 लाख रुपए 500 और 1000 के नोट के रूप में थे। आर.बी.आई. की रिपोर्ट के अनुसार देश में तब तक मौजूद कुल 9026 करोड़ रुपए के नोटों में से 24% नोट (2203) करोड़ ही प्रचलन में थे। बाकी नोट 'काउंटिंग' में नहीं थे, कहीं छिपे हुए थे; या रखे हुए थे जो देश की तरक्की के लिए ठीक नहीं था।[5] नोटबंदी का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि– कालेधन को बाहर करते हुए और भ्रष्टाचार से लड़ते हुए विमुद्रीकरण से आर्थिक गतिविधियों में कुछ समय के लिए मंदी आ सकती है, तथापि

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सेवासदन महाविद्यालय, बुरहानपुर (म.प्र.) भारत

लेन-देन के आर्थिक रूप से अधिक से अधिक नगदी रहित होने से अर्थव्यवस्था की पारदर्षिता बढ़ेगी।[6]

भारतीय रिजर्व बैंक की भूमिका-भारत की अपनी राष्ट्रीय मुद्रा का बाजार नियामक और जारीकर्ता भारतीय रिजर्व बैंक है। भारतीय रुपए का प्रतीक देवनागरी लिपि से लिया जिसमें ऊपर दोहरी आड़ी रेखा है, वहीं रुपए का चिन्ह (₹) जिस भारत सरकार द्धारा 15 जुलाई 2010 को लागू किया गया, यह रोमन के कैपिटल (R) के सदृश है।[7] इसे दोनों अक्षरों का मिश्रण माना जाता है। नोटबंदी के पीछे 'भारतीय रिजर्व बैंक' का उद्देश्य आम जनता को अच्छी गुणवत्ता के नोट प्रदान करना तथा गंदे,कटे-फटे नोटों को नष्ट कर देना है। भारत में कागजी मुद्रा अधिनियम सन् 1861 के साथ भारत सरकार को नोट जारी करने का एकाधिकार दिया गया था। भारत में सरकारी कागजी मुद्रा शुरु करने का श्रेय पहले वित्त सदस्य 'जेम्स विल्सन' को जाता है। इनकी असामयिक मौत होने के कारण भारत में सरकारी कागजी मुद्रा जारी करने का काम 'सैम्यूल लाइंग' ने सँभाला। ब्रिटिश इंडिया के पहले नोटों के सैट पर रानी विक्टोरिया की तस्वीर थी। इसमें 10, 20, 50, 100, 1000 के नोट जारी किए गए। बाद में सन् 1935 में 'रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया' की स्थापना के बाद ब्रिटिश सरकार ने रुपए जारी करने का अधिकार 'रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया'को दे दिया। रिजर्व बैंक के द्धारा सन् 1938 में पहली बार नोट जारी किया गया। सन 1947 में आजादी के बाद भारत का पहला एक रुपया का नोट जारी किया गया, इस नोट पर सारनाथ का अशोक स्तंभ अंकित था। बाद में 'गेटवे ऑफ इंडिया', बृहदेश्वर मंदिर का चित्र बनाया गया। सन 1953 में महात्मा गांधी के फोटो वाले नोट छपने लगे। आज भारत बैंकिंग सेक्टर में बहुत प्रगति कर चुका है।वर्तमान में बैंकों की स्थिति देखी जाए तो भारत में प्रति 10 लाख पर 108 बैंक शाखाएं, तथा 149 ATM और 889 पीओएस मशीनें हैं। सरकार द्धारा बैंकिंग सुविधाएं और अधिक बढ़ाने की मुहिम जारी है।

विमुद्रीकरण का प्रभाव - भारतीय अर्थव्यवस्था पर विमुद्रीकरण के प्रभाव को देखें; उससे पहले माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का यह विचार जान लेना जरूरी है कि -'बीमारी को ठीक करने के लिए कड़वी दवा का सेवन करना पड़ता है; जब देश में, समाज में असमानता का वातावरण तैयार हो जाता है तो वह देश के विकास में अत्यंत घातक होता है।' इस संबंध में गांधी जी ने कहा था कि-'आर्थिक समानता का सच्चा अर्थ है जगत् की सब मनुष्यों के पास इतनी संपत्ति होना चाहिए कि वह अपनी कुदरती आवष्यकताएं पूरी कर सकें।'[8] जब किसी भी देश में लंबे समय से बड़े नोटों का संचयन लगातार चलता है तो अवैध व काला धन अत्यधिक मात्रा में जमा हो जाता है; इससे समाज में आर्थिक असमानता व्याप्त हो जाती है जिसका प्रभाव अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक सिद्ध होता है। इसे ही खत्म करने के लिए भारत सरकार के द्धारा विमुद्रीकरण को अपनाना पड़ा। सरकार के द्धारा ऐसे निर्णय लेने के कई कारण हो सकते हैं- जैसे कि नई मुद्रा बाजार में लाना, कालेधन को समाप्त करना, आतंकवाद को रोकना, अपराध तस्करी में बड़े स्तर पर नगद लेन-देन होता है; उसे रोकना, नकली नोटों को रोकना, टैक्स चोरी को रोकना, आर्थिक असमानता को खत्म करना, नगद लेनदेन को हतोत्साहित कर कैशलेस पद्धति को बढ़ावा देना आदि कारण हो सकते हैं।

आर्थिक सर्वेक्षण में वित्तवर्ष 2016-17 के लिए 6.5% जीडीपी वृद्धि दर का अनुमान व्यक्त किया गया जिसे नोटों के विमुद्रीकरण का प्रभाव माना जा सकता है। सर्वे में यह भी कहा गया है कि - ब्याज दरों में कमी आने, भ्रष्टाचार को समाप्त करने और असंगठित क्षेत्र की गतिविधियों में तेजी लाने से लंबी अवधि में विमुद्रीकरण का लाभ दिखाई देगा। इस प्रकार विमुद्रीकरण का देश की जीडीपी पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। सर्वे में वित्तवर्ष 2017-18 के लिए 6.75% से 7.5% तककी विकास दर का अनुमान व्यक्त किया गया है। वर्तमान वित्त वर्ष के लिए 6.5 जीडीपी वृद्धि दर के अनुमानित 7.1 के आंकड़े से कम है।[9] भारतीय रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर व बुद्धिजीवियों का मानना है कि नोटबंदी से सकल घरेलू उत्पाद का .5% (65 हजार करोड) टैक्स के रूप में अर्जित किया जा सकता है। गृहस्थों के घरों में रखी रकम जब बैंकों में जमा हो जाएगी तो जाहिर है कि इससे आने वाले दिनों में आर.बी.आई. के पास कैश पर्याप्त मात्रा में आ जाएगा। इससे आर.बी.आई. भविष्य में रेपो रेट में अंतर करके देश में व्याप्त महंगाई को काबू कर सकने में समक्ष होगी। अर्थव्यवस्था का अधिकाधिक डिजिटलीकरण और वित्तीय बचतों में वृद्धि होगी। इससे सकल घरेलू उत्पाद में बढ़ोत्तरी और कर राजस्व में वृद्धि होने की संभावना है।

विमुद्रीकरण के पॉजिटिव प्रभाव :

1. बैंकिंग सेक्टर; क्रेडिट कार्ड और इलेक्ट्रानिक्स लेनदेन के विस्तार को गति मिल सकती है।
2. संपत्ति और सराफा बाजारों में व्यापक नकदीकरण पर प्रतिबंध, अनाप-शनाप खर्चों पर प्रतिबंध लगेगा। आतंकवाद एवं नक्सलवाद से देश को दीर्घकालीन लाभ मिलेगा।
3. बैंक लोन पर ब्याज दर कम होगी जिससे अर्थव्यवस्था में ज्यादा निवेष होगा।
4. रियल एस्टेट में सबसे ज्यादा काला धन लगा हुआ है। नोटबंदी से इस सेक्टर पर काफी असर पड़ सकता है।
5. नोटबंदी से सकल घरेलू उत्पाद बढ़ेगा परिणाम स्वरूप आधारभूत ढांचा विकसित होगा।
6. अर्थव्यवस्था में पारदर्शिता बढ़ेगी जिससे निवेशकों का भारतीय अर्थव्यवस्था में भरोसा बढ़ेगा।
7. चुनाव में धन का प्रभाव कम होगा।
8. नोटबंदी के बाद बैंक दर घटेगी जिसका फायदा जनता को मिलेगा।
9. नकली नोटों की समस्या से मुक्ति मिलेगी।
10. आतंकवाद एवं नक्सलवाद के वित्तीय स्रोतों पर चोट, नकली नोट के बाजार पर अंकुश लगेगा।
11. कैशलेस प्रवृत्ति एवं कार्यप्रणाली को प्रोत्साहन मिलेगा।

नोटबंदी के फैसले दीर्घकाल में अर्थव्यवस्था पर काफी सकारात्मक प्रभाव डालेंगे। नीति आयोग के उपाध्यक्ष अरविन्द पानगरिमा के अनुसार- 'सरकार को नोटबंदी के फैसले का दीर्घकाल में अर्थव्यवस्था पर काफी सकारात्मक प्रभाव होगा; क्योंकि इससे लोग अधिक से अधिक डिजिटल लेन-देन की ओर बढ़ेंगे।'[10]

विमुद्रीकरण के निगेटिव प्रभाव-विश्व बैंक के पूर्व चीफ इकोनॉमिस्ट कौशिक बासु का कहना है कि- 'भारत में गुड्स एंड सर्विस टैक्स (जीएसटी) अर्थव्यवस्था के लिए ठीक है। लेकिन विमुद्रीकरण ठीक नहीं है। भारत की अर्थव्यवस्था काफी जटिल है और मुख्यत: भारत में बिजनेस कैशलेस मुद्रा में होता है जिसके फायदे के मुकाबले नुकसान उठाना पड़ेगा।[11] इसके प्रतिकूल प्रभाव को ठीक ढंग से नियंत्रित नहीं किया गया तो यह कदम अल्पकालिक आर्थिक मंदी का कारण बन सकता है। वैष्विक निकाय ने 18 जनवरी 2017 को प्रसारित अपनी विश्व आर्थिक स्थिति और संभावनाएँ-

2017 रिपोर्ट में विमुद्रीकरण के प्रभाव को सम्मिलित नहीं किया।[12]

1. नोटबंदी के कारण शेयर बाजार में घटे रिटर्न 8 नवंबर के बाद दुनिया भर के बाजारों के मुकाबले घरेलू बाजार में बड़ी गिरावट देखने को मिली।
2. नोटबंदी से बैंकों के पास अत्यधिक जमा होने के बावजूद भी एफ.डी पर ब्याज दर घटती हुई नजर आ रही है।
3. ब्याज दर कम होने के परिणाम स्वरूप बचत भी कम होगी।
4. संपत्ति की कीमतों में गिरावट देखने को मिली।
5. छोटे व्यापारी जैसे दूध वाला, सब्जी वाला, किराने वाला, अखबार वाला, पुस्तक वाला, मिठाई वाला आदि व्यापारियों को नुकसान हुआ।
6. जहाँ कैश पेमेंट पर व्यापार होता था, वहाँ नगद मुद्रा ना होने के कारण व्यापारियों को नुकसान सहना पड़ा।[13]

विमुद्रीकरण के विपरीत प्रभाव को कम करने के लिए सुझाव –सर्वे में विमुद्रीकरण के प्रभाव को कम करने के लिए चार उपाय सुझाए गए :

1. बजार में नई करेंसी के प्रचलन में तेजी लानी होगी, जिससे आर्थिक कारोबार में वृद्धि होगी और जमाखोरी पर रोक लगेगी।
2. डिजिटलीकरण की प्रक्रिया को और गति देने की आवश्यकता है। यह बदलाव धीरे–धीरे समावेशी और प्रोत्साहनों पर आधारित होगा; साथ ही डिजिटलीकरण की लागत और लाभ के बीच सामंजस्य बिठाया जाना चाहिए।
3. भूमि और अचल संपत्तियों (रियल एस्टेट) के व्यवसाय को जी.एस.टी. की परिधि में लाया जाना चाहिए।
4. करों की दरों में कटौती और स्टांप शुल्क में कमी लाने की आवष्यकता है। कर प्रणाली में सुधार लाकर आय घोषणा को प्रोत्साहित किया जा सकेगा; साथ ही कर प्रशासन से जुड़ी समस्याओं में कमी आएगी।[14]

माना जा रहा है कि विमुद्रीकरण की इस प्रक्रिया से एक राष्ट्र के तौर पर भारत के मजबूत होने की कहानी 1 जनवरी से काफी हद तक नजर आने लगी है। सरकार का पूरा जोर ज्यादा से ज्यादा लोगों को बैंकिंग के दायरे से जोड़ना है। जनधन योजना और हर तरह की सब्सिडी सीधे खाते में देने के पीछे भी यही मूल विचार है, उसे आधार से जोड़कर ज्यादातर रकम को नगदी हस्तांतरण से बाहर निकालने की कोशिश है।

नोटबंदी से 3 बड़े फायदे साफ नजर आ रहे हैं प्रथम–काला धन बाहर आएगा या पूरी तरह से अर्थव्यवस्था से बाहर हो जाएगा जिससे अर्थव्यवस्था मजबूत होगी। दूसरा–काला धन जमा होने पर तत्काल प्रभाव से रोक लगेगी। लेकिन इससे प्रभावी होने से बचाने के लिए सरकार को अपने फैसलों को लागू करने में तेजी लानी होगी। तीसरी बात बैंकों में बड़ी रकम जमा होगी। कर चोरी करके कमाई गई रकम को कर के रूप में चुकाना पड़ेगा जिससे सरकारी खातों में रकम बढेगी; जो अर्थव्यवस्था के विकास में सहायक होगी। जितनी ज्यादा राशि जमा होगी उतना ज्यादा हमारा 'Monetary Base expand' होगा। बैंकों मेंमनी सप्लाई बढ़ेगी। स्पष्ट (Loanable) राशि बढ़ेगी। अगर हम इसे ISLM Model के money market concept से ही समझना चाहें तो यह कह सकते हैं कि मनी सप्लाई बढ़ने से ब्याज दर घटेगी, इससे इन्वेस्टमेंट बढ़ेगा; परिणामस्वरूप आधारभूत संरचनाओं का विकास होगा। आधुनिक अर्थव्यवस्था के मानकों पर एक देश के आगे बढ़ने की सबसे जरूरी शर्तों में यही है कि देश के लोग बेहतर कमा सकें। यहाँ तक कि विमुद्रीकरण से देश का एक बड़ा वर्ग जिसका हित भी प्रभावित हुआ हो लेकिन जो देशभक्त है वह भी सरकार के इस फैसले से आनंदित एवं उत्साहित नजर आएगा।[15] इससे क्या और लाभ होंगे; यह भविष्य की योजनाओं पर निर्भर करेगा। श्री **नरेन्द्र मोदी ने ठीक ही कहा है कि –** 'विमुद्रीकरण राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को प्रकाशित कर देगा।' हमें भी इस प्रकार की प्रतीक्षा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय मुद्रा का विमुद्रीकरण : एक बार फिर (हिन्दी) प्रवक्ता उजच अभिगमन, दिनांक 19.11.2016
2. https//him.wekipedia.org
3. इंडिया टुडे, 21 दिसम्बर, 2016, पृ. 21
4. इंडिया टुडे, 14 दिसम्बर, 2016, पृ. 24
5. demonetization.in>hindi
6. प्रतियोगिता दर्पण/मार्च/2017/पृ. 13
7. https//www.google.com.in
8. प्रतियोगिता दर्पण/अप्रेल/2017/पृ. 172
9. कम्पीटीशन सक्सेस रिव्यू, मार्च 2017 पृ. 15, 16
10. legendnews.m.>Exclusive
11. कम्पीटीशन सक्सेस रिव्यू, मार्च 2017, पृ. 166
12. https//www.google.com.in
13. www.nationalistonline.com
14. कम्पीटीशन सक्सेस रिव्यू, मार्च 2017, पृ. 2015–16
15. www.nationalistonline.com

****

बालकों के मनोविकास में संज्ञानात्मक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

डॉ. आराधना सक्सेना*

प्रस्तावना – संज्ञान से तात्पर्य सूचना संसाधन, स्मृति और प्रत्यक्षण की मानसिक क्रियाओं से होता है जिनके आधार पर मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है और अपनी समस्याओं का समाधान करता है तथा भावी योजनाओं का निर्माण करता है।

विगत वर्षों में हमने संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं में पुनरूत्थान अनुभव किया है क्योंकि संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों ने जटिल मानसिक क्रियाओं के अध्ययन में अधिक रूचि प्रदर्शित की है। उन्होंने विचारों प्रतिमाओं प्रतीकों ज्ञान एवं तर्क शक्ति आदि प्रकार के इन जटिल मानसिक प्रक्रियाओं के प्रति अपनी जिज्ञासाओं को प्रकट किया है। इन्होंने अपने को निरीक्षण योग्य मानसिक घटनाओं तक ही सीमित नहीं रखा है, वरन् मस्तिष्क में घटित होने वाले मानसिक प्रक्रमों के प्रति अपनी उत्सुकता प्रदर्शित की है।

संज्ञानात्मक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व – बच्चों के बौद्धिक विकास की गति, प्रक्रिया एवं स्वाभाविक प्रवृति का कारण एवं वैज्ञानिक अध्ययन शैक्षिक परिस्थितियाँ, पर्यावरण एवं साधनों की व्यवस्था को उपयोगी बनाने में शिक्षकों एवं शैक्षिक उत्तरदायित्व को वहन करने वाले अन्य लोगों के लिये अत्यन्त उपयोगी प्रभावित हुआ है। आयु वृद्धि के साथ-साथ बालकों की बौद्धिक क्षमता का भी विकास होता जाता है। भिन्न-भिन्न बालकों की विकास की गति भी भिन्न-भिन्न होती है, इसलिये 'कक्षाओं का वर्गीकरण' न केवल आयु के आधार पर, बल्कि प्रत्येक बालक की बौद्धिक क्षमता के आधार पर होना चाहिये। एक ही आयु के कुछ बालकों के लिये जो कार्य सरल एवं रूचिकर प्रतीत हो सकता है। वहीं उसी आयु के कुछ बालकों के लिये कठिन एवं असाध्य। शिक्षकों एवं शिक्षा अधिकारियों को इस तथ्य की अपेक्षा नहीं करनी चाहिये।

छ: वर्ष से लेकर किशोरावस्था के कुछ महत्वपूर्ण वर्षों तक बालक प्राथमिक से लेकर माध्यमिक विद्यालयों तक फैले होते हैं। इन विद्यालयों के पाठ्यक्रमों का निर्माण करते समय विभिन्न आयु के बालकों को संज्ञानात्मक क्षमता की जानकारी रखना आवश्यक हो जाता है। पाठ्यचर्चा का निर्माण करते समय हर अवस्था के बालक की रूचि, अभिरूचि, स्मृति और कल्पना शक्ति, चिन्तन एवं तर्क शक्ति भाषा ज्ञान और प्रत्ययों के निर्माण की क्षमता आदि का अध्ययन कर लेना चाहिये।

प्राथमिक कक्षाओं में बालकों की पाठ्यचर्चा सामान्य हो सकती है, पर उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में पाठ्यचर्या को अनेकरूपता प्रदान करनी होगी। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को बहुउद्देश्यीय विद्यालयों का रूप देना इस सम्बन्ध में अधिक उपयोगी होगा।

माण्टेसरी एवं किण्टरगार्डन विद्यालयों का पर्यावरण इसलिये घरेलू, एवं पारिवारिक जीवन के अनुरूप बनाया जाता है। प्रारंभिक कक्षाओं में बालकों को केवल उन्हीं वस्तुओं के सम्पर्क में लाना चाहिये, जो इनके दैनिक जीवन से सम्बन्धित होती है। विद्यालय को हर तरह से साधन सम्पन्न बनाना चाहिये। इन कक्षाओं के 'पाठ्यक्रम को सैद्धान्तिक नहीं अपितु व्यवहारिक एवं क्रियात्मक बनाना चाहिये।'

संज्ञानात्मक क्षमता एवं उसके विकास की गति एवं स्वरूप का अध्ययन शिक्षण कार्य को भी प्रभावित करता है। प्रत्येक बालक के लिये अध्यापक एक ही शिक्षण प्रणाली का प्रयोग नहीं कर सकता। एक ही अवस्था के कुछ बालकों की सोचने-समझने एवं चिन्तन करने की शक्ति मन्द होती है और कुछ की तीव्र होती है। शिक्षण कार्य इन वैयक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए ही किया जाना चाहिये। संज्ञानात्मक क्षमता का विकास एवं सदुपयोग ही हमारी शिक्षा का लक्ष्य है। बौद्धिक क्षमता का विकास एवं सदुपयोग बिना समझे विषयों को रटने एवं अध्यापक के संकेत पर अंधानुकरण करने से कदापि सम्भव नहीं है। आयु वुद्धि के साथ-साथ विद्यालय के परिवेश में परिवर्तित होते रहना चाहिये।

बाल्यावस्था में मानसिक विकास – छ: वर्ष बाद से 12 वर्ष की आयु तक बालक की बाल्यावस्था कहीं जाती है। इस अवस्था में बालक के मानसिक विकास के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं :-

1. **स्थायित्व –** बाल्यावस्था का सबसे विशेष मानसिक लक्षण स्थायित्व है। दूसरे शब्दों में, इस दशा को मिथ्या परिपक्वता की दशा कहा गया है क्योंकि इसमें बालक के प्रौढ़ होने का भ्रम होता है। बाल्यावस्था में बालक अपने पर्यावरण से भली भाँति परिचित हो जाता है। और शैशवावस्था के समान चकित नहीं दिखाई पड़ता।
2. **जिज्ञासा –** बाल्यावस्था में बालक की जिज्ञासा शैशवावस्था से भी बढ़ जाती है। अब वह केवल प्रश्न के लिये प्रश्न न करके अपने चारों ओर की चीजों, पशुओं और मनुष्य के विषय में वास्तविक जानकारी प्राप्त करना चाहता है। अत: वह 'क्यों' 'कहाँ' और 'कैसे' के प्रश्न पूछता

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

रहता है। इस आय में बालक की जिज्ञासा को उकसा कर उसको बहुत कुछ सिखाया जा सकता है।

3. **अनुकरण –** शैशवावस्था के समान बाल्यावस्था में भी बालक में दूसरों का अनुकरण करने की तीव्र प्रवृत्ति होती है। दूसरों को तरह-तरह की चीजें बनाते हुए या ठीक करते हुए देखकर वह भी उनकी तरह करना चाहता है। कभी-कभी तो वह दूसरों से छिपकर उनके अनुकरण में लगा रहता है। जिससे कोई उसकी हँसी न उड़ाये।
4. **विधायकता –** बालक में विधायकता की मूल प्रवृत्ति देखी जा सकती है। वह नये-नये मित्र बनाना और मिट्टी तथा रेत के घर आदि बनाना पसंद करता है। इस आयु में उसे लकड़ी के ब्लाकों के खेल दिये जा सकते हैं।
5. **संचय की प्रवृत्ति –** इस आयु में बालक में स्वत्व और अधिकार की भावना दिखलायी पड़ती है। वह तरह-तरह की चीजों का संग्रह करना चाहता है। अत: इस आयु में उसे टिकट, सिक्के, खिलौने तथा रूपये-पैसे, आदि एकत्रित करना सिखाकर उसमें अच्छी आदतें डाली जा सकती है।
6. **समूह प्रवृत्ति की परिपक्वता –** शैशवावस्था में शिशु में जो समूह प्रवृत्ति दिखायी पड़ती हैं। वह बाल्यावस्था में पहुँचकर परिपक्व हो जाती है। अब वह अधिकतर अन्य बालकों के साथ रहना पसंद करता है। उसे अकेले अच्छा नहीं लगता। घर में नये लोगों के आने पर उसे अप्रसन्नता होती है। वह मेले या खेल तमाशे का शौकीन होता है, वह मोहल्ले के बालकों के गिरोह का सदस्य बन जाता है और उनके साथ घूमता और खेलता फिरता है।
7. **खेल –** जब शैशवावस्था में बालक के खेल अधिकतर कल्पनात्मक होते हैं, बाल्यावस्था में बालक वास्तविक जगत के खेलों में अधिक रूचि लेता है। उसमें जो कल्पना होती है। वह भी वस्तु जगत से निकट का सम्बन्ध रखती है। वह कुछ न कुछ उपयोगी कार्य करना चाहता है। अत: खेल-खेल में उसे बहुत सी बातें सिखायी जा सकती हैं।
8. **बहिर्मुखी प्रवृत्ति –** इस आयु में बालक बहिर्मुखी दिखायी पड़ता है। वह अब इतना अधिक अपने आप में रूचि नहीं लेता जितना कि अपने चारों ओर की चीजों में रूचि लेता है। इस आयु में वह काल्पनिक से अधिक यथार्थ वस्तुओं की ओर आकर्षित होता है। उसकी रूचियाँ व्यवहारिक होती हैं और वह वस्तु-जगत में वास्तव में कुछ कार्य करना चाहता है।
9. **नैतिक अनुज्ञाएँ –** समूह के सदस्य के रूप में बालक कुछ नैतिक अनुज्ञाओं का पालन करता है। कभी-कभी तो वह अपने समूह के नेता के कहने पर अपने माता-पिता और शिक्षक से भी झूठ बोलता है और उन्हें धोखा भी देता है। इस आयु में बालक को अच्छे और बुरे की पहचान करायी जा सकती है और उनके नैतिक चरित्र का निर्माण किया जा सकता है।
10. **सुप्त काम-प्रवृत्ति-डॉ.जोन्स –** के अनुसार, इस आयु में बालक में आत्म-प्रेम, ऑडीपस या इलेक्ट्रा मानसिकि ग्रन्थि आदि कुछ भी नहीं देखी जा सकती क्योंकि बाल्यावस्था में उसकी काम-प्रवृत्ति सुप्त रहती है।
11. **प्रशंसा और निन्दा का प्रभाव –** इस आयु में बालक प्रसन्न और निन्दा से दु:खी होता हैं, इसलिये सामान्य रूप से वह ऐसे काम करना चाहता है, जिनसे उसकी प्रशंसा हो। वह दूसरी बात है कि वह अपने गिरोह के सदस्यों की प्रशंसा प्रात करने के लिये ऐसे काम कर बैठे जिनसे उसे घर वालों अथवा शिक्षकों की निन्दा प्राप्त हो।
12. **कठोर अनुशासन के प्रति विद्रोह –** इस आयु में बालक घर अथवा स्कूल में कठोर नियन्त्रण से घृणा करता है और उसके प्रति विद्रोह की भावना रखता है। कठोर अनुशासन होने पर बाह्य रूप से अनुशासित दिखायी देने पर भी उसमें अन्दर ही अन्दर विद्रोह की ज्वाला सुलगती रहती है, जिससे कभी-कभी तो वह स्कूल से ही क्या घर से भी भाग जाता है।
13. **समस्याओं का हल करना –** इस आयु में बालक तरह-तरह की पहेलियों को सुलझाने और समस्याओं को हल करने में रूचि लेता है। इसलिये क्रमश: उसमें अमूर्त विचार की शक्ति भी विकसित होने लगती है।
14. **रूचि और चिन्तन के क्षेत्र का विस्तार –** बाल्यावस्था में बालक की रूचि और चिन्तन का क्षेत्र काफी विस्तृत हो जाता है। उसे देश-विदेश के पशुओं, वस्तुओं, इमारतों और मनुष्यों के विषय में चित्र देखना और पढ़ना अच्छा लगता है। कान में कोई भी रहस्य की बात पड़ जाने पर वह उसको पूरी तरह जाने बिना रह नहीं सकता।

कक्षा में संज्ञानात्मक विकास के उद्देश्य – संज्ञानात्मक विकास से तात्पर्य है, बालकों में किसी संवेदी सूचनाओं को ग्रहण करके उन पर चिन्तन करने तथा क्रमिक रूप से उन्हें इस योग्य बना देता है कि वे इनका प्रयोग विभिन्न परिस्थितियों में समस्याओं के समाधान में कर सकें। उन्होंने अपने अध्ययनों के आधार पर संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

इस सिद्धान्त के अनुसार बालकों में संवेदी सूचनाओं से प्राप्त वास्तविकता के स्वरूप के बारे में चिन्तन करने तथा खोज करने की शक्ति न तो उनके परिपक्वता स्तर पर निर्भर करती है और न ही उनके अनुभवों पर बल्कि इन दोनों की अन्तर्क्रिया के द्वारा निर्धारित होती है।

शिक्षा के क्षेत्र में इस सिद्धान्त का उल्लेखनीय योगदान है। इस सिद्धान्त के अनुसार सीखने में बालक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। बालकों के पाठ्यक्रम की रचना उनकी आवश्यकता, प्रेरणा एवं रूचि को ध्यान में रखकर करनी चाहिये।

संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त का शिक्षा में प्रयोग :

1. किसी भी आयु के बच्चों के लिये पाठ्यक्रम का निर्माण उनके संज्ञानात्मक विकास एवं प्रत्यय निर्माण के आधार पर करना चाहिये।
2. यह सिद्धान्त इस बात पर बल देता है कि बच्चों को स्वक्रिया द्वारा सीखने के अवसर देने चाहिये।
3. शिक्षकों को अनुकरण एवं खेल विधि से पढ़ाना सिखाना चाहिये।
4. यह सिद्धान्त यह स्पष्ट करता है कि 11 वर्ष की अवस्था पूरी करते-करते बच्चों में समस्या-समाधान की क्षमता का विकास होने लगता है। अत: 11 वर्ष से बड़े बच्चों को पढ़ाने-सिखाने के लिये समस्या

समाधान विधि का प्रयोग करना चाहिये।

5. सीखने में प्रगति न करने वाले छात्रों को दण्ड नहीं देना चाहिये।
6. चालक और अभिप्रेरणा अधिगम एवं विकास के लिये आवश्यक है। अत: शिक्षकों को शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इनका उचित प्रयोग करना चाहिये।
7. बुद्धि परीक्षणों के निर्माण में व्यावहारिक रूप में प्रयोग से सम्बन्धित क्रियाओं का उपयोग करना चाहिये।
8. ज्ञान से शिक्षक एवं अभिभावक बालकों की तर्क शक्ति एवं विचारण शक्ति की प्रकृति को उनकी अलग-अलग अवस्थाओं में समझ एवं पहचान सकते हैं।
9. बालकों को पढ़ाने-सिखाने के लिये ऐसे अनुभव एवं अधिगम सामग्री प्रस्तुत करनी चाहियें, जिन्हें वे आत्मसात कर सकें और आगे के अध्ययन के लिये चुनौती के रूप में सामने आए।
10. सीखना बालक स्वयं और उसके पर्यावरण से अन्त क्रिया के फलस्वरूप होता है। अत: शिक्षक को एवं अभिभावकों को बालकों के लिये उचित एवं प्रेरणादायक पर्यावरण का निर्माण करना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Best, J.W., (1983) Research in education New York, prentice hall of India.
2. Buch, M.B., (1991): Educational survey New Delhi. NCERT publication 4th edition.
3. अग्रवाल जे.सी. (2007):इसेशनल ऑफ एज्यूकेशनल साइकोलॉजी, नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि.।
4. अग्रवाल, जे.सी., (2006): बेसिक आइडियास इन एज्यूकेशन साइकोलॉजी, नई दिल्ली, क्षिप्रा पब्लिकेशन।
5. अस्थाना विपिन एवं श्वेता (2007)मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर।
6. चित्तौड़ा, डॉ.शशि एवं जरसावत, हरिशचन्द्र (2007) बालविकास एवं शिक्षा मनोविज्ञान, जयपुर; कल्पना पब्लिकेशन।
7. बीना,डॉ. आनन्द डॉ.वशा आनन्द डॉ.बानी (2002):संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, दिल्ली; मोतीलाल बनारसीदास।
8. माथुर, एस.एस., (1980) शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा:विनोद पुस्तक मंदिर, रायजादा।
9. सिंह,अरूण कुमार (2006) :संज्ञानात्मक मनोविज्ञान नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।
10. त्रिपाठी, लाल.बी., (2012/13) :आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, आगरा; एच.पी.भार्गव बुक हाऊस, द्वितीय संस्करण।

****

जैव विविधता - आधुनिक समाज की आवश्यकता

डॉ. लक्ष्मी गुप्ता *

कीवर्ड - जैव वैविध्य, पारितन्त्र, हॉट्स्पॉट, मानवोद्भव।

परिचय- जैव-विविधता (जैविक-विविधता) जीवों के बीच पायी जाने वाली विभिन्नता है जोकि प्रजातियों में, प्रजातियों के बीच और उनकी पारितंत्रों की विविधता को भी समाहित करती है। जैव-विविधता शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम वाल्टर जी. रासन ने 1985 में किया था। जैव-विविधता तीन प्रकार की हैं। (I) आनुवंशिक विविधता, (II) प्रजातीय विविधताय तथा (III) पारितंत्र विविधता। प्रजातियों में पायी जाने वाली आनुवंशिक विभिन्नता को आनुवंशिक विविधता के नाम से जाना जाता है। यह आनुवंशिक विविधता जीवों के विभिन्न आवासों में विभिन्न प्रकार के अनुकूलन का परिणाम होती है। प्रजातियों में पायी जाने वाली विभिन्नता को प्रजातीय विविधता के नाम से जाना जाता है। किसी भी विशेष समुदाय अथवा पारितंत्र (इकोसिस्टम) के उचित कार्य के लिये प्रजातीय विविधता का होना अनिवार्य होता है। पारितंत्र विविधता पृथ्वी पर पायी जाने वाली पारितंत्रों में उस विभिन्नता को कहते हैं जिसमें प्रजातियों का निवास होता है। पारितंत्र विविधता विविध जैव-भौगोलिक क्षेत्रों जैसे- झील, मरुस्थल, ज्वारनमुख आदि में प्रतिबिम्बित होती है।

जैव-विविधता का महत्त्व- जैव-विविधता का मानव जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। जैव-विविधता के बिना पृथ्वी पर मानव जीवन असंभव है। जैव-विविधता के विभिन्न लाभ निम्नलिखित हैं-

1. जैव-विविधता भोजन, कपड़ा, लकड़ी, ईंधन तथा चारा की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। विभिन्न प्रकार की फसलें जैसे गेहूँ (ट्रिटिकम एस्टिवम), धान (ओराइजा सेटाइवा), जौ (हारडियम वलगेयर), मक्का (जिया मेज), ज्वार (सोरघम वलगेयर), बाजरा (पेनिसिटम टाईफाइडिस), रागी (इल्यूसिन कोरकेना), अरहर (कैजनस कैजान), चना (साइसर एरियन्टिनम), मसूर (लेन्स कुलिनेरिस) आदि से हमारी भोजन की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है जबकि कपास (गासिपियम हरसुटम) जैसी फसल हमारे कपड़े की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। सागवान (टेक्टोना ग्रान्डिस), साल (शोरिया रोबस्टा), शीशम (डेलवर्जिया सिसू) आदि जैसे वृक्षों की प्रजातियाँ निर्माण कार्यों हेतु लकड़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं।

2. जैव-विविधता कृषि पैदावार बढ़ाने के साथ-साथ रोगरोधी तथा कीटरोधी फसलों की किस्मों के विकास में सहायक होती हैं। हरित क्रांति के लिये उत्तारदायी गेहूँ की बौनी किस्मों का विकास जापान में पाये जाने वाली नारीन-10 नामक गेहूँ की प्रजाति की मदद से किया गया था। इसी प्रकार धान की बौनी किस्मों का विकास ताइवान में पाये जाने वाली डी-जिओ-ऊ-जेन नामक धान की प्रजाति से किया गया था। सन 1970 के प्रारम्भिक वर्षों में विषाणु के संक्रमण से होने वाली धान की ग्रासी स्टन्ट नामक बीमारी के कारण एशिया महाद्वीप में 1,60,000 हेक्टेयर से भी ज्यादा फसल को नुकसान पहुँचाया था। धान की जातियों में इस बीमारी के प्रति प्रतिरोधी क्षमता विकसित करने हेतु मध्य भारत में पायी जाने वाली जंगली धान की प्रजाति ओराइजा निभरा का उपयोग किया गया था। आई आर 36 नामक विश्व प्रसिद्ध धान की जाति के भी विकास में ओराइजा निभरा का उपयोग किया गया है।

3. वानस्पतिक जैव-विविधता औषधीय आवश्यकताओं की पूर्ति भी करती है। एक अनुमान के अनुसार आज लगभग 30 प्रतिशत उपलब्ध औषधियों को उष्णकटिबंधीय वनस्पतियों से प्राप्त किया जाता है।

4. जैव-विविधता पर्यावरण प्रदूषण के निस्तारण में सहायक होती है। प्रदूषकों का विघटन तथा उनका अवशोषण कुछ पौधों की विशेषता होती है। सदाबहार (कैथरेन्थस रोसियस) नामक पौधे में ट्राइनाइट्रोटालुइन जैसे घातक विस्फोटक को विघटित करने की क्षमता होती है।

5. जैव-विविधता में संपन्न वन पारितंत्र कार्बन डाइऑक्साइड के प्रमुख अवशोषक होते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड हरित गृह गैस है जो वैश्विक तपन के लिये उत्तारदायी है। उष्णकटिबंधीय वनविनाश के कारण आज वैश्विक तापमान में निरंतर वृद्धि हो रही है जिसके कारण भविष्य में वैश्विक जलवायु के अव्यवस्थित होने का खतरा दिनोंदिन बढ़ रहा है।

6. जैव-विविधत मृदा निर्माण के साथ-साथ उसके संरक्षण में भी सहायक होती है। जैव-विविधता मृदा संरचना को सुधारती है, जल-धारण क्षमता एवं पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाती है। जैव-विविधता जल संरक्षण में भी सहायक होती है क्योंकि यह जलीय चक्र को गतिमान रखती है। वानस्पतिक जैव-विविधता, भूमि में जल रिसाव को बढ़ावा देती है जिससे भूमिगत जलस्तर बना रहता है।

जैव-विविधता का क्षरण - पृथ्वी पर जैविक संसाधनों के क्षय को जैव विविधता क्षरण के नाम से जाना जाता है। पृथ्वी का जैविक धन जैव-विविधता लगभग 400 करोड़ वर्षों के विकास का परिणाम है। इस जैविक धन के निरंतर क्षय ने मनुष्य के अस्तित्व के लिये गम्भीर खतरा पैदा कर दिया है। दुनिया के विकासशील देशों में जैव-विविधता क्षरण चिन्ता का विषय है। एशिया, मध्य अमेरिका, दक्षिण अमेरिका तथा अफ्रीका के देश जैव-विविधता संपन्न हैं जहाँ तमाम प्रकार के पौधों तथा जन्तुओं की प्रजातियाँ पायी जाती हैं। विडम्बना यह है कि अशिक्षा, गरीबी, वैज्ञानिक विकास का अभाव, जनसंख्या विस्फोट आदि ऐसे कारण हैं जो इन देशों में जैव-विविधता क्षरण के लिये जिम्मेदार हैं। दुनिया में कुल कितनी प्रजातियाँ हैं यह ज्ञात से परे है लेकिन एक अनुमान के अनुसार इनकी संख्या 30 लाख

*व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय महाविद्यालय, धौलपुर (राज.) भारत

से 10 करोड़ के बीच है। दुनिया में 14,35,662 प्रजातियों की पहचान की गयी है। हालाँकि बहुत सी प्रजातियों की पहचान अभी भी होना बाकी है। पहचानी गई मुख्य प्रजातियों में 7,51,000 प्रजातियाँ कीटों की, 2,48,000 पौधों की, 2,81,000 जन्तुओं की, 68,000 कवकों की 26,000 शैवालों की, 4,800 जीवाणुओं की तथा 1,000 विषाणुओं की हैं। पारितंत्रों के क्षय के कारण लगभग 27,000 प्रजातियाँ प्रतिवर्ष विलुप्त हो रही हैं। इनमें से ज्यादातर उष्णकटिबंधीय छोटे जीव हैं। अगर जैव-विविधता क्षरण की वर्तमान दर कायम रही तो विश्व की एक-चौथाई प्रजातियों का अस्तित्व सन 2050 तक समाप्त हो जायेगा।

जैव-विविधता क्षरण के कारण – जैव-विविधता क्षरण के विभिन्न कारण हैं जिनमें आवास विनाश, आवास विखण्डन, पर्यावरण प्रदूषण, विदेशी मूल के पौधों का आक्रमण, अति-शोषण, वन्य-जीवों का शिकार, वनविनाश, अति-चराई, बीमारी, चिड़ियाघर तथा शोध हेतु प्रजातियों का उपयोग नाशीजीवों तथा परभक्षियों का नियंत्रण, प्रतियोगी अथवा परभक्षी प्रजातियों का प्रवेश प्रमुख है-

1. आवास विनाश- मानव जनसंख्या वृद्धि एवं मानव गतिविधियाँ आवास विनाश का प्रमुख कारण हैं। आवास की क्षति वर्तमान में अकशेरुकी जीवों के विलुप्ति का एक प्रमुख कारण है। बहुत से देशों में विशेषकर द्वीपों पर जब मानव जनसंख्या घनत्व में वृद्धि होती है तो अधिकतर प्राकृतिक आवास नष्ट हो जाते हैं। दुनिया के 61 में से 41 प्राचीन विश्व उष्णकटिबंधीय देशों में 50 प्रतिशत से ज्यादा वन्य-जीवों के आवास नष्ट हो चुके हैं। ज्यादातर स्थितियों में आवास विनाश के प्रमुख कारक औद्योगिक तथा वाणिज्यिक गतिविधियाँ हैं जिनका संबंध वैश्विक अर्थव्यवस्था जैसे- खनन, पशु पालन, कृषि, वानिकी, बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं की स्थापना आदि से है। वर्षा वन, उष्णकटिबंधीय शुष्क वन, नमभूमियाँ, ज्वारीय वन तथा घास के मैदान जोखिमग्रस्त आवास हैं।

2. आवास विखण्डन – आवास विखण्डन वह प्रक्रिया है जिसमें एक विशाल क्षेत्र का आवास क्षेत्रफल कम हो जाता है और प्राय: दो या अधिक टुकड़ों में बंट जाता है। जब आवास नष्ट हो जाता है तो टुकड़े बहुधा एक दूसरे से अलग-अलग क्षरित अवस्था में प्रकट होते हैं। आवास विखण्डन प्रजातियों के विस्तार तथा स्थापना को सीमित कर देता है, जिससे जैव विविधता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

3. पर्यावरण प्रदूषण – बढ़ता पर्यावरण प्रदूषण जैव-विविधता क्षरण का एक प्रमुख कारण बनता जा रहा है। नाशिजीवनाशक (पेस्टीसाइड), औद्योगिक रसायन तथा अपशिष्ट आदि पर्यावरण प्रदूषण के लिये मुख्यत: उत्तारदायी हैं। नाशिजीवनाशक प्रदूषण के परिणामस्वरूप मृदा के सूक्ष्मजीवी वनस्पतियों तथा जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है। इसके अतिरिक्त जल वर्षा के बहाव से जब नाशिजीवनाशक जलस्रोतों में पहुँचते हैं तो वहाँ भी सूक्ष्मजीवी वनस्पतियों तथा जंतुओं को मार देते हैं। परिणामस्वरूप जैव-विविधता का क्षय होता है। नाशिजीवनाशक डी.डी.टी. (डाईक्लोरो डाईफिनाइल ट्राईक्लोरोइथेन) पक्षियों की गिरती आबादी का एक प्रमुख कारण हैं।

4. विदेशी मूल की वनस्पतियों का आक्रमण – विदेशी मूल की वनस्पतियों के आक्रमण के परिणामस्वरूप जैव विविधता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है इसलिये इन्हें जैविक प्रदूषक की संज्ञा दी जाती है। सफल विदेशी मूल की वनस्पति की प्रजाति देसी प्रजातियों को विस्थापित कर उन्हें विलुप्ति के स्तर तक पहुँचा देती हैं। इसके अतिरिक्त वह आवास पर विपरीत प्रभाव डालकर देसी प्रजाति के अस्तित्व के लिये खतरा पैदा कर देती है। भारत में बहुत से विदेशी मूल की वनस्पतियाँ जैसे गाजर घास (पार्थिनियम हिट्रोफोरस), कुर्री (लैंटाना कमरा), काबुली कीकर (प्रोसोपिस जूलिफ्लोरा) आदि जैव-विविधता क्षरण के प्रमुख कारण साबित हो रहे हैं।

5. अतिशोषण – बढ़ती मनव जनसंख्या के कारण जैविक संसाधनों का दोहन भी बढ़ा है। संसाधनों का उपयोग तब ज्यादा बढ़ जाता है जब पूर्व में उपयोग नहीं हुई अथवा स्थानीय उपयोग वाली प्रजाति के लिये वाणिज्यिक बाजार विकसित हो जाता है। अतिशोषण दुनिया के लगभग एक-तिहाई लुप्तप्राय कशेरुकी जीवों के लिये प्रमुख खतरा हैं। बढ़ती ग्रामीण बेरोजगारी, उन्नत शोषण विधियों का विकास तथा अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण ने बहुत सी प्रजातियों को विलुप्ति के शीर्ष पर पहुँचा दिया है। अगर प्रजाति पूरी तरह से समाप्त नहीं होती है तो भी उसकी जनसंख्या उस स्तर तक घट जाती है जहाँ से वह अपना पुनरुत्थान करने में अक्षम होती है।

6. शिकार – जन्तुओं का शिकार आमतौर से दांत, सींग, खाल, कस्तूरी आदि लिये किया जाता है। अंधाधुंध शिकार के कारण जानवरों की बहुत सी प्रजातियाँ लुप्तप्राय जन्तुओं की श्रेणी में पहुँच चुकी है। असम राज्य में एक सींग वाले गैण्डे की जनसंख्या में अभूतपूर्व गिरावट दर्ज की गयी है क्योंकि इसका शिकार इसकी सींग के लिये किया जाता है जिसका उपयोग कामोत्तोजक दवाओं के निर्माण में होता है। इसी प्रकार पूर्वोत्तार राज्यों विशेषकर मणिपुर में चीरू नामक जानवर का शिकार उसकी खाल के लिये किया जाता है जिससे शाहतूस शाल का निर्माण होता है। बाघ, तेन्दुआ, चिंकारा, अजगर, कृष्ण मृग तथा मगरमच्छ का शिकार भी खाल के लिये किया जाता है। हाथियों का शिकार दाँत के लिये किया जाता है जबकि बारहसिंगा का शिकार सींग के लिये किया जाता है। कस्तूरी मृग का शिकार कस्तूरी के लिये किया जाता है।

7. वन विनाश – विकास कार्यों तथा कृषि के विस्तार के कारण उष्णकटिबंधीय देशों में जंगलों को बड़े पैमाने पर नष्ट किया गया है जिसके परिणामस्वरूप उष्णकटिबंधीय वनों में जैव-विविधता का क्षरण हुआ है। उष्णकटिबंधीय देशों में आदिवासियों द्वारा की जाने वाली झूम कृषि (स्थानान्तरी कृषि) भी जैव-विविधता क्षरण का एक प्रमुख कारण रही है। भारत के आदिवासी बहुत पूर्वोत्तार राज्यों में झूम कृषि के कारण वनों के क्षेत्रफल में अभूतपूर्व गिरावट दर्ज की गयी है।

8. अति-चराई – शुष्क तथा अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में चराई जैव-विविधता क्षरण का एक प्रमुख कारण है। भेड़ों, बकरियों तथा अन्य शाकभक्षी पशुओं द्वारा चराई के कारण पौधों की प्रजातियों को नुकसान पहुँचता है। अति-चराई के कारण पौधों का प्रकाश-संश्लेषण वाला भाग नष्ट हो जाता है जिससे पौधों की मृत्यु हो जाती है। बहुत सी कमजोर प्रजातियाँ शाकभक्षी पशुओं द्वारा कुचल दी जाती हैं। भारी चराई, प्रजाति को समुदाय से नष्ट कर देती है।

9. बीमारी – मानव गतिविधियाँ वन्य-जीवों की प्रजातियों में बीमारियों को बढ़ावा देती हैं। जब कोई जानवर एक प्राकृतिक संरक्षित क्षेत्र तक सीमित होता है तब उसमें बीमारी के प्रकोप की संभावना ज्यादा होती है। दबाव में जानवर बीमारी के प्रति काफी संवेदनशील होते हैं। ठीक इसी प्रकार मनुष्य की कैद में वन्य-जीव बीमारियों के प्रति अत्यन्त ही संवेदनशील होते हैं।

10. चिड़ियाघर तथा शोध हेतु प्रजातियों का उपयोग- चिकित्सा शोध, वैज्ञानिक शोध तथा चिड़ियाघर के लिये कुछ विशिष्ट जानवरों को प्राकृतिक वास से पकड़ना प्रजाति के लिये खतरनाक साबित होता है क्योंकि इससे इनकी जनसंख्या में गिरावट होने की संभावना रहती है जिससे ये जानवर

विलुप्ति के कगार पर पहुँच सकते हैं। चिकित्सा शोध महत्त्वपूर्ण क्रिया है लेकिन यह संकटग्रस्त जंगली प्राइमट्स जैसे गुरिल्ला, चिम्पांजी तथा ओरांगुटान के लिये खतरनाक है।

11. नाशीजीवों तथा परभक्षियों का नियन्त्रण – फसलों तथा पशुओं का नाशीजीवों तथा परभक्षियों से सुरक्षा ने भी बहुत से प्रजातियों को विलुप्ति के कगार पर पहुँचा दिया है। विष के प्रयोग से एक विशेष प्रजाति को नष्ट करने के प्रयास में कभी-कभी उस प्रजाति के परभक्षी भी विष के शिकार हो जाते हैं जिससे पारितंत्र में खाद्य शृंखला अव्यवस्थित हो जाती है और नियंत्रित प्रजाति नाशीजीव (पेस्ट) का रूप धारण कर जैव-विविधता को क्षति पहुँचाती है।

12. प्रतियोगी अथवा परभक्षी प्रजातियों का प्रवेश – प्रवेश कराई गयी प्रजाति दूसरी प्रजातियों को उनके शिकार, भोजन के लिये प्रतियोगिता, आवास को नष्टकर अथवा पारिस्थितिक संतुलन को अव्यवस्थित कर उन्हें प्रभावित कर सकती है। उदाहरणस्वरूप हवाई द्वीप में वर्ष 1883 में गन्ने की फसल को बर्बाद कर रहे चूहों के नियंत्रण हेतु नेवलों को जानबूझकर प्रवेश कराया गया था जिसके फलस्वरूप बहुत से अन्य स्थानीय प्रजातियाँ भी प्रभावित हुई थी।

जैव-विविधता का संरक्षण – जैव विविधता संरक्षण का आशय जैविक संसाधनों के प्रबंधन से है जिससे उनके व्यापक उपयोग के साथ-साथ उनकी गुणवत्ता भी बनी रहे। चूँकि जैव-विविधता मानव सभ्यता के विकास की स्तम्भ है इसलिये इसका संरक्षण अति आवश्यक है। जैव-विविधता हमारे भोजन, कपड़ा, औषधीय, ईंधन आदि की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। जैव-विविधता पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने में सहायक होती है। इसके अतिरिक्त यह प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा आदि से राहत प्रदान करती है। वास्तव में जैव-विविधता प्रकृति की स्वभाविक संपत्ति है और इसका क्षय एक प्रकार से प्रकृति का क्षय है। अत: प्रकृति को नष्ट होने से बचाने के लिये जैव-विविधता को संरक्षण प्रदान करना समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

विश्व संरक्षण रणनीति ने जैव-विविधता संरक्षण के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं-

1. उन प्रजातियों के संरक्षण का प्रयास होना चाहिए जो कि संकटग्रस्त हैं।
2. विलुप्ति पर रोक के लिये उचित योजना तथा प्रबंधन की आवश्यकता।
3. खाद्य फसलों, चारा पौधों, मवेशियों, जानवरों तथा उनके जंगली रिश्तेदारों को संरक्षित किया जाना चाहिए।
4. प्रत्येक देश की वन्य प्रजातियों के आवास को चिंहित कर उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित करना चाहिए।
5. उन आवासों को सुरक्षा प्रदान करना चाहिए जहाँ प्रजातियाँ भोजन, प्रजनन तथा बच्चों का पालन-पोषण करती हैं।
6. जंगली पौधों तथा जन्तुओं के अन्तरराष्ट्रीय व्यापार पर नियंत्रण होना चाहिए।

वनस्पतियों एवं जन्तुओं की प्रजातियों तथा उनके आवास को बचाने के लिये समयबद्ध कार्यक्रम को लागू करने की आवश्यकता है जिससे जैव-विविधता संरक्षण को बढ़ावा मिल सके। अत: संरक्षण की कार्ययोजना आवश्यक रूप से निम्नलिखित दिशा में होनी चाहिए:

1. द्वीपों सहित देश के विभिन्न क्षेत्रों में पाये जाने वाले जैविक संसाधनों को सूचीबद्ध करना।
2. संरक्षित क्षेत्र के जाल जैसे राष्ट्रीय पार्क, जैवमण्डल रिजर्व, अभ्यारण्य, जीन कोष आदि के माध्यम से जैव-विविधता का संरक्षण।
3. क्षरित आवास का प्राकृतिक अवस्था में पुनरुत्थान।
4. प्रजाति को किसी दूसरी जगह उगाकर उसे मानव दबाव से बचाना।
5. संरक्षित क्षेत्र बनने से विस्थापित आदिवासियों का पुनर्वास।
6. जैव-प्रौद्योगिकी तथा ऊतक संवर्धन की आधुनिक तकनीकों से लुप्तप्राय प्रजातियों का गुणन।
7. देसी आनुवंशिक विविधता संरक्षण हेतु घरेलू पौधों तथा जन्तुओं की प्रजातियों की सुरक्षा।
8. जोखिमग्रस्त प्रजातियों का पुनरुत्थान।
9. बिना विस्तृत जाँच के विदेशी मूल के पौधों के प्रवेश पर रोक।
10. एक ही प्रकार की प्रजाति का विस्तृत क्षेत्र पर रोपण को हतोत्साहन।
11. उचित कानून के जरिये प्रजातियों के अतिशोषण पर लगाम।
12. प्रजाति व्यापार संविदा के अंतर्गत अतिशोषण पर नियन्त्रण।
13. आनुवंशिक संसाधनों के संपोषित उपयोग तथा उचित कानून के द्वारा सुरक्षा।
14. संरक्षण में सहायक पारंपरिक ज्ञान तथा कौशल को प्रोत्साहन।

निष्कर्ष – मानव सभ्यता के विकास की धुरी जैव-विविधता मुख्यत: आवास विनाश, आवास विखण्डन, पर्यावरण प्रदूषण, विदेशी मूल के वनस्पतियों के आक्रमण, अतिशोषण, वन्य-जीवों का शिकार, वनविनाश, अति-चराई, बीमारी आदि के कारण खतरे में है। अत: पारिस्थितिक संतुलन, मनुष्य की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति एवं प्राकृतिक आपदाओं (बाढ़, सूखा, भू-स्खलन आदि) से मुक्ति के लिये जैव-विविधता का संरक्षण आज समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विल्सन, ई.ओ. एवं पिटर्स, एफ.एम. (1988) बायोडाइवर्सिटी (संपादित), नेशनल एकेडमी प्रेस, वाशिंगटन डी.सी.।
2. हेवुड, वी.एच. एवं वाटसन, आर.टी. (1995) ग्लोबल बायोडाइवर्सिटी असेस्मेन्ट (संपादित), यूनाइटेड नेशन इन्वायरन्मेण्ट प्रोग्राम, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रीज, यू.के.।
3. भरुचा, ई. (2005) टेक्स्टबुक ऑफ एनवायरनमेन्टल स्टडीज, यूनिवर्सिटी प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, इण्डिया।
4. शर्मा, पी.डी. (2004) इकोलॉजी एण्ड एनवायरन्मेन्ट, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, इण्डिया।
5. सिंह, ए. (2007) वोरहेविया डिफ्यूजा: एन ओवर-ऐक्सप्लॉयटेड प्लाण्ट ऑफ मेडिसिनल इमपॉरटेन्स इन रूरल एरियाज ऑफ ईस्टर्न उत्तार प्रदेश, करेण्ट साइन्स, खण्ड-93, अक-4. पृ. 446
6. मेस, जी.एम. तथा स्टुअर्ट, एस. (1994), ड्राफ्ट आई यू सी एन रेड लिस्ट कटेगरीज, वरजन 2.2 स्पीसीज 21/22: मु.पृ. 13-14
7. आई यू सी एन (1994 डी) आई यू सी एन रेड लिस्ट कटेगरीज, आई यू सी एन, इंग्लैण्ड।

****

Postmodern Perspective in the Novels of Amitav Ghosh

Dr. Sitaram*

Abstract - This paper is an attempt to apply the post-modern theory in Amitav Ghosh's novels. Post modernism is a socio-cultural and artistic concept, as well as a shift in view point that has expressed itself in a wide range of disciplines, including the human sciences, art, architectural style, literary works, fashion, communications, and innovative technologies. It is widely acknowledged that the postmodern shift in perception began in the late 1950s and is probable still ongoing. PostColonial authors also perform to recapture the past, as their own pasts were frequently removed or dismissed under imperialism, as well as to understand their own culture and personal identities and to chart their own future prospects with their own terms rather than the terms imposed on them by colonialist ideological framework. Amitav Ghosh is regarded a postmodernist. He has been greatly influenced by India's post-independence political and cultural milieu. As a social anthropologist with the opportunity to visit foreign lands, he comments on the current state of the world in his novels. His works reflect the element of post modernism.
Keywords: Postmodernism, Cultural milieu, Architecture, National boundaries, Anthropologist.

Introduction - Postmodernism is an extensive movement that developed in the mid to late 20th century across philosophy, the arts, architecture, and criticism marking a departure from modernism. It is a general and wide term which is applied to literature, art, philosophy, architecture, fiction and cultural and literary criticism, etc. It is largely a reaction to the assumed certainty of scientific or objective efforts to explain reality. As per postmodernists, national boundaries are barriers to human communication. Amitav Ghosh is one among the postmodernists. He is immensely influenced by the political and cultural milieu of post independent India. Being a social anthropologist and having the opportunity of visiting alien lands, he comments on the present scenario the world is passing through in his novels. Cultural fragmentation, colonial and neo-colonial power structures, cultural degeneration, the materialistic offshoots of modern civilization, dying of human relationships,blending of facts and fantasy, search for love and security, diasporas, etc… are the major preoccupations in the writings of Amitav Ghosh. The elemental traits of post-modernism are obviously present in the novels of Amitav Ghosh. As per postmodernists, national boundaries are a hindrance to human communication. They believe that Nationalism causes wars. So, post-modernists speak in favour of globalization. Amitav Ghosh's novels centre around multiracial and multiethnic issues; as a wandering cosmopolitan he roves around and weaves them with his narrative beauty. In The Shadow lines, Amitav Ghosh makes the East and West meet on a pedestal of friendship, especially through the characters like Tridib, May, Nice Prince etc., He stresses more on the globalization rather than nationalization. In The Glass Palace, the story of half-bred Rajkumar revolves around Burma, Myanmar and India. He travels round many places freely and gains profit. Unexpectedly, his happiness ends when his son is killed by Japanese bomb blast. The reason for this calamity is fighting for national boundaries.

Amitav Ghosh has been credited for successfully mastering the genre known as 'magical realism' which was largely developed in India by Salman Rushdie and in South America by Gabriel Garcia Marquez. Ghosh is seen as "belonging to this international school of writing which successfully deals with the post-colonial ethos of the modern world without sacrificing the ancient histories of separate lands." Like Salman Rushdie, Amitav Ghosh perfectly blends fact and fiction with magical realism. He reconceptualizes society and history. He is so scientific in the collection of material, semiotical in the organization of material, so creative in the formation of fictionalized history. Amitav Ghosh weaves his magical realistic plot with postmodern themes. Self-reflexity and confessionality characterize fictional works of Amitav Ghosh. Displacement has been a central process in his fictional writings; departure and arrivals have a permanent symbolic relevance in his narrative structure. Post modernism gives voice to insecurities, disorientation and fragmentation. Most of his novels deal with insecurities in the existence of humanity, which is one of the postmodern traits.The narrative style of Amitav Ghosh is typically postmodern. In The Shadow Lines, the narrative is simple. It flows smoothly, back and

*Lecturer (English) Swami Vivekanand Govt. College, Khetri, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

forth between times, places and characters. His prose in The Shadow Lines is so evocative and realistic written effortlessly as well as enigmatically with a blend of fiction and non-fiction. Throughout The Glass Palace, Ghosh uses one end to signal the beginning of another so that at one level, nothing changes but yet everything does. There is a strong suggestion of Buddhist metaphysics in his technique. Life, death, success and failure come in cycles and Ghosh uses the conceit of a pair of binoculars early in The Glass Palace to sensitize the reading in this perspective. Being a postmodernist, he makes use of very simple language to give clarity to the readers. Many Indians writing in English experiment with the language to suit their story. The Glass palace is not only a novel but also romance, narrative fiction, adventure fiction, and historical fiction. He combines all the elements of a novel to create fragmentation. Ghosh uses the romantic genre to chart the characters who reflect on the history of colonialism in Burma and the formation of the present Myanmar nation. It is also a narrative fiction that employs a complex spiral narrative structure to texture many characters' identities and experiences in the world where we live in. It can be read in historical point of view, since it is portraiture of history and document of nation. Ghosh invents the third person narrator who relates a story in a spiral fashion that fictionalizes and makes real historical subject and event. The Calcutta Chromosome (1995) is "not only a medical thriller but also a Victorian ghost story, a scientific quest, a unique mixture of a 'whodunit thriller', and a poltergeist tale".

Postmodernism is a blooming and ongoing area. Even if it has its own features, it is very difficult to concretize these solid elements. This paper is an attempt to unravel the postmodern perspectives in the fiction of Amitav Ghosh.Indian writing in English has stamped its greatness by mixing up tradition and modernity in the production of art.Earlier novels projected India's heritage, tradition, cultural past and moral values. But a remarkable change can be noticed in the novels published after the First World War, which is called, modernism. The novels written in the late 20th century, especially after the Second World War, are considered postmodern novels. Salman Rushdie, Vikaram Seth, Shashi Tharoor, Upamanyu Chatterjee and Amitav Ghosh are the makers of new pattern in writing novels with post-modern thoughts and emotions. Postmodern authors also have been inspired by many factors of actions and concepts derived from postmodern philosophy. According to postmodern doctrine, consciousness and factual information are always related to particular situations. Endeavor to recover any clear definition towards toward any theory, doctrine or event is both worthless and unimaginable. The major characteristics of postmodernism are undeniably seen in Amitav Ghosh's novels. Postmodernists believe that national borders are major obstacles to human interactions. As a result, postmodernists promote for globalization. Amitav Ghosh is the only modern Indian novelist who captures the essence of the Indian literary scene. He has a lot of responsibilities in the world of literature. He performs excellently as an anthropologist, philosopher, author, social commentator, travel writer and educator. His novels are focused on multi - racial and multi-cultural issues which he roves around and weaves with his narrative suitability as a peripatetic multinational. In his novel The Shadow Lines, Ghosh brings East and West together on a pedestal of relationship, primarily through the characters Tridib, Ghosh's imaginative realistic plot is also infused with postmodern themes. His fictional works are marked by consciousness and revelation. In his fictional writings, migration is the main fundamental with departures and arrivals having a permanent symbolic significance in his narrative techniques. Insecurities, disorientation and alienation are given expression in postmodernism. The majority of his novels deals with human insecurities which is a postmodern characteristic. Post-modernism, which opposes western concepts, beliefs, society and norms, dismisses Western ideals and traditions as a minor part of the human experience. In the novel The Hungry Tide, Ghosh employs the invasion of the West into the East to express the discourse on environmental and cultural issues.

There are numerous sub-topics and plots as a result of the time travel. The narration technique of Amitav Ghosh is typically postmodern. The narrative voice in the novel The Shadow Lines is sensible and easy to understand. It moves fluidly back and forth between times, areas and plot points. His writing style in The Shadow Lines is eloquent and reliable, written faultlessly and also skillfully with a mixture of imagination and non-fiction. Throughout The Glass Palace, Ghosh seems to be using one end to signify the beginning of another, so that nothing changes on one level but everything does on another. His technique has a strong resemblance to Buddhist metaphysics existence, bereavement, achievement and disappointment all follow a cycle and early in The Glass Palace, Ghosh introduced the theory of a laser pointer to avoid exposing the viewer to this perspective. And as rationalist, he employs very clear language and provides confirmation to the readers. According to Amitav Ghosh's discourse in the process of creating art achieves the status of Migrant portrayal. Language contains the steps to develop relatives that has shattered and distributed in the manure ambiguity. Amitav Ghosh reveals this in the novel The Shadow lines: "You see, in our family we don't know whether we're coming or going – it's all my grandmother's fault. But of course, the fault was n't hers at all: it lay in the language. Every language assumes a centrality, a fixed and settled point to go away from and come back to, and what my grandmother was looking for was a word for a journey which was not a coming or a going at all; a journey that was a search for precisely that fixed point which permits the proper use of verbs of movement." Ghosh wants to believe in this language and he aims to create it in his work. Postmodernists refuse to accept complex formal aesthetic appeal in favour of a new

of postmodern genres. Ghosh's picturesque depiction and decorative usage of the tongue, language has no meaning. Feminists' problem is defended by postmodernists. Uma, employed by Amitav Ghosh, is a prime example of this. Uma deviates from the stereotype of female characters. She is a political commentator who travels the country dispelling nationalist emotions. One of the postmodern characteristics is genre distortion which can be seen in Amitav Ghosh's literature. He maims himself by combining multiple styles.

Conclusion : To summarize, postmodernism is a rapidly expanding and enduring field that lacks a concrete definition. Even if each big and strong has its own distinct characteristics. It is extremely difficult to present these solid elements as a concrete whole. Post colonialism, postmodern traits are certainly apparent in Amitav Ghosh's novels The Glass Palace, River of Smoke, and Sea of Poppies. The novels are centered on multicultural and multilingual issues which he depicts as a strolling progressive and weaves into the descriptive beauty. As a result, this research paper will continue to be an attempt to enforce postmodern theory with Amitav Ghosh's novels.

References:-

1. Ghosh, Amitav. The Shadow Lines. Delhi: Ravi Dayal Publishesr,1988
2. Amitav Ghosh: A Critical Companion. Delhi: Permanent Black, 2003.
3. Chenniappan, R., & Suresh, R. S. Postmodern Traits in The Novels of Amitav Ghosh in The Criterion: An International Journal in English. Volume II, Issue II, June 2011.
4. Berry, Peter. Beginning Theory. New York: Manchester University Press,2002.
5. Ghosh, Amitav. The Circle of Reason. London: Hamish Hamilton Ltd., 1986. —,
6. The Shadow Lines,.Delhi: Ravi Dayal Publisher, 1988. —,
7. In an Antique Land. Delhi: Ravi Dayal Publisher, 1992. —.

****

A Critical Study Of Sylvia Plath's 'The Bell Jar'

Dr. Tripti Singh*

Abstract - Sylvia Plath's 1964 novel, **The Bell Jar**, first released in 1963, addresses the issue of female exploitation that is fundamental to the institution of marriage. It seems like women are being protected by this organization. Male members claim that the organization was established to defend women. The goal is to get them into the workforce and out of the house. More specifically, it was meant to reassure males and keep women in their households. The idea is to provide men with a tidy, well-maintained, calm, and pleasant home to come home to after a long day at work. According to this viewpoint, males are assigned dominant jobs, and women are submissive ones. ***The Bell Jar*** is a highly autobiographical novel that unveils Plath's seemingly perfect life, underlain by grave personal discontinuities, some of which doubtless had their origin in the death of her father Otto Plath. The novel's protagonist, Esther Greenwood, shares many similarities with Plath, including her inability to adapt to New York City, her attempt to commit suicide by taking an excess dose of sleeping pills, and her period of recovery involving electroshock and psychotherapy. This paper will critical analysis of **The Bell Jar** from a feminist standpoint, highlighting the dual perceptions that women have of themselves in public: as mad or as feminine. This paper also argues that, despite some research linking her insanity to her rejection of femininity, her rejection of femininity is an intentional decision that leads to artistic freedom.

Introduction - Sylvia Plath was born in 1932 and grew up on the Massachusetts coast. Her father died when she was eight. A stellar student, Plath won scholarships to attend Smith and Cambridge University, where she met and married the poet Ted Hughes. They had a rocky marriage and two children. Plath won great acclaim for her first book of poetry, The Colossus, in 1959, and published the pseudonymous The Bell Jar in 1963 to make money. Plath had suffered from mental illness throughout her life and she fell into deep depression as her marriage dissolved, eventually committing suicide in 1963. Several books of her poetry published after her death display Plath's genius and won her a posthumous Pulitzer Prize. Plath's works are still widely read today.

In the summer of 1953, Esther Greenwood, a brilliant college student, wins a month to work as a guest editor with eleven other girls at a New York magazine. Esther lives with the other girls at the Amazon, a women's hotel, and attends a steady stream of events and parties hosted by the magazine. Though Esther knows she should be enjoying herself, she feels only numb and detached from the old ambitious self that her boss, editor Jay Cee, tries to motivate. Esther vacillates between wanting to be wholesome, like her friend Betsy, and wanting to break all rules, like her friend Doreen. She worries about the rigid expectations of virginity, maternity, and wifeliness that society (and her mother) holds for young women and feels paralyzed by her contradictory desires for her future. She goes on a string of bad dates, the best of which feels anticlimactic when Constantin, an interpreter, makes no romantic advances and the worst of which ends with the misogynistic Marco trying to rape her.

Throughout her time in New York, Esther flashes back to her troubled relationship with Buddy Willard, a handsome know-it-all medical student who Esther once admired and is now disgusted by, having realized Buddy is a hypocrite for projecting a virginal public image even after he's had a sexual affair. Buddy is currently suffering from TB, but Esther plans to break up with him as soon as he gets better. On her last visit to the sanatorium, she rejected Buddy's marriage proposal and broke her leg skiing.

Esther Greenwood begins her reminiscence of the summer of 1953 when she won a contest to live in New York for a month as the guest editor of a fashion magazine. Though Esther knows she should feel accomplished and grateful for the opportunity to work in New York, she instead feels numb and detached from her own life. She is obsessed with the electrocution of the Rosenbergs (a married couple executed for being Soviet spies). She feels all her college achievements have "fizzled to nothing" in New York and that she is "very still and very empty, the way the eye of a tornado must feel. Esther introduces herself as a person in flux, no longer able to enjoy the fruits of her old ambitions (like her college achievements) or to value what society expects her to value (like the opportunity to spend a summer working in New York). The metaphor of the tornado is at once an image of stable purity (a still, empty center) and an image of filth and chaos (the swirling dust and matter the tornado swirls around that center)."[1]

The Bell JAR: The Bell Jar by Sylvia Plath tells the story

* **Assistant Professor (English) Sheat P.G. College, Gahani, Varanasi (U.P.) INDIA**

of a gifted young woman's mental breakdown beginning during a summer internship as a junior editor at a magazine in New York City in the early 1950s. It was first published in January 1963 under the pseudonym Victoria Lucas and later published under her real name. This highly autobiographical novel unveils Plath's seemingly perfect life, underlain by grave personal discontinuities, some of which doubtless had their origin in the death of her father Otto Plath. The novel's protagonist, Esther Greenwood, shares many similarities with Plath, including her inability to adapt to New York City, her attempt to commit suicide by taking an excess dose of sleeping pills, and her period of recovery involving electroshock and psychotherapy. The real Plath committed suicide in 1963, leaving behind this scathingly sad, honest, and perfectly written book, which remains one of the best-told tales of a woman's descent into insanity. The first sentence of The Bell Jar alerts the reader to the conflicts that will be dealt with in the novel – "It was a queer, sultry summer, the summer they electrocuted the Rosenbergs, and I didn't know what I was doing in New York"[1]. Like Holden Caulfield in Catcher in the Rye, the young college girl Esther is experiencing an adolescent crisis. The Bell Jar examines the question of socially acceptable identity. It examines Esther's "quest to forge her own identity, to be herself rather than what others expect her to be". Esther is expected to become a self-sufficient woman and self-sacrificing wife-mother, without any option to attain independence. Esther feels she is a prisoner to domestic duties and fears the loss of her inner self.

The novel tells the story of Esther's coming of age, but it does not follow the usual trajectory of adolescent development into adulthood. Instead of undergoing a progressive education in the ways of the world, culminating in an entrance into adulthood, Esther regresses into madness. Experiences intended to be life-changing in a positive sense: Esther's first time in New York City, her first marriage proposal, her success in college, her love flicks – upsets her and disorients her. Instead of finding a new meaning in life, Esther urges to die. Esther observes a gap between what societies say she should experience and what she does experience. This gap intensifies her madness. Society expects women of Esther's age and station to act cheerful, flexible, and confident and Esther feels she must repress her natural gloom, cynicism, and dark humor. She feels she cannot discuss or think about the dark spots in life that plague her: personal failure, suffering, and death. She knows that the world of fashion she inhabits in New York City should make her feel glamorous and happy, but she finds it filled with poison, drunkenness, and violence. Her relationships with men are supposed to be romantic and meaningful, but they are marked by misunderstanding, distrust, and brutality. Esther almost continuously feels that her actions are wrong, or that she is the only one to view the world as she does, and eventually, she begins to feel a sense of unreality. This sense grows till it becomes unbearable and attempted suicide and madness follow.

The bell jar is an inverted glass jar, generally used to display an object of scientific curiosity, containing a certain kind of inert gas or vacuum. For Esther, the bell jar symbolizes madness. When gripped by insanity, she feels that she is inside an airless glass jar that distorts her perspective on the world and prevents her from connecting with people around her. At the end of the novel, the bell jar has been lifted, but she can sense that it still hovers over her, waiting to drop at any moment. The bell jar could mean the society's stifling constraints and befuddling mixed messages that trap Esther. The metaphorical denotation of the physical and mental suffocation caused by the bell jar is a direct representation of Esther's mental suffocation by the unavoidable settling of depression upon her psyche. The psychoanalytic principles, propounded by Freud and developed by many of his followers can be used to analyse the issues that the novel problematizes. The basic tenets of psychoanalysis expound that a person's development is determined by often forgotten events in early childhood rather than inherited traits alone. Human attitudes, mannerisms, experiences, and thoughts are largely influenced by irrational drives that are rooted in the unconscious.

This aspect may explain Esther's complex relationship with her father and other men she came across. Esther seems to have an ambivalent attitude towards her father, one of both hatred and submission. The lack of a father figure during the time of her psychosexual development may have caused her abnormal response to relationships, sexuality, etc. Freud calls the "force by which the sexual instinct is represented in the mind"[2] the Libido. This term should be understood broadly, and not as being restricted only to sexual relations, that is, Libido refers to various kinds of sexual pleasures and gratifications. According to Freud, all individuals pass through four stages in their development: the oral, the anal, the phallic, and the genital. During infancy and childhood, an individual's sexual life is rich but dissociated and unfocused. Focus occurs at puberty. Esther in *The Bell Jar* displays the Oedipus Complex. The Oedipus complex is at the core of neurosis for Freud. According to psychoanalytic theory, every individual passes through a stage in which he/she desires the parent of the opposite sex- of course, on an unconscious level. In little boys, this is aided by unconscious fear of castration – castration anxiety- and in little girls, it is aided by jealousy of men and what is termed penis envy.[3]

Critical Analysis of the Novel : "*The Bell Jar*" is about the way this country was in the 1950s and about the way it is to lose one's grip on sanity and recover it again. It is easy to say (and it is said too often) that insanity is the only sane reaction to the America of the past two decades. And it is also said that the only thing to do about madness is relax and enjoy it. But neither of these "clever" responses to her situation occur to Esther Greenwood, who is the narrator and central character in this novel.

To Esther, madness is the descent of a stifling bell jar

over her head. In this state, she says, "Wherever I sat … I would be sitting under the same glass bell jar, stewing in my sour air."[4] This is not to say that Esther believes the world outside the asylum is full of people living an authentic existence. She asks, "What was there about us, in Belsize, so different from the girls playing bridge and gossiping and studying in the college to which I would return? Those girls, too, sat under bell jars of a sort."[5]The world in which the events of this novel take place is a world bounded by the Cold War on one side and the sexual war on the other. We follow Esther Greenwood's personal life from her summer job in New York with "**Ladies' Day"** magazine, back through her days at New England's largest school for women, and forward through her attempted suicide, her bad treatment at one asylum and her good treatment at another, to her final re-entry into the world like a used tire: "patched, retreaded and approved for the road."[6] But this personal life is delicately related to larger events — especially the execution of the Rosenbergs, whose impending death by electrocution is introduced in the stunning first paragraph of the book. Ironically, that same electrical power that destroys the Rosenbergs, restores Esther to life. It is shock therapy that finally lifts the bell jar and enables Esther to breathe freely once again. Passing through death she is reborn. This novel is not political or historical in any narrow sense, but in looking at the madness of the world and the world of madness it forces us to consider the great question posed by all truly realistic fiction: What is reality and how can it be confronted?

Sylvia Plath's technique of defamiliarization ranges from tiny verbal witticisms that bite, to deeply troubling images. When she calls the hotel for women that Esther inhabits in New York the "Amazon," she is not merely enjoying the closeness of the sound of that word to "Barbizon," she is forcing us to rethink the entire concept of a hotel for women: "mostly girls of my age with wealthy parents who wanted to be sure that their daughters would be living where men couldn't get at them and deceive them." [7]And she is announcing a major theme in her work, the hostility between men and women.

At its essence, The Bell Jar is an exploration of the divide between mind and body. This exploration unfolds most visibly in the development of Esther's mental illness, which she experiences as an estrangement of her mind from her body. As her illness amplifies, Esther loses control over her body, becoming unable to sleep, read, eat, or write in her handwriting. She frequently catches her body making sounds or engaging in actions that…Esther remains preoccupied with questions of purity and impurity throughout the novel, framing them in different terms at different points in her development. She thinks about purity of body as well as purity of mind. Indeed, Esther often speaks of purity as a kind of spiritual transcendence that can be accessed through the transcendence of the body. At the novel's start, she admires the clearness of vodka and imagines that drinking it into her body will purify…

Esther remains preoccupied with questions of purity and impurity throughout the novel, framing them in different terms at different points in her development. She thinks about purity of body as well as purity of mind. Indeed, Esther often speaks of purity as a kind of spiritual transcendence that can be accessed through the transcendence of the body. At the novel's start, she admires the clearness of vodka and imagines that drinking it into her body will purify…***The Bell Jar*** offers an in-depth meditation on womanhood and presents a complex, frequently disturbing portrait of what it meant to be female in 1950s America. Esther reflects often on the differences between men and women as well as on the different social roles they are expected to perform. Most of her reflections circulate about sex and career. Esther's interactions with other female characters in the novel further complicate these reflections by presenting different stances.

The bell jar symbolizes mental illness and gives the novel its title. It is Esther's metaphor for describing what she feels like while suffering her nervous breakdown: no matter what she is doing. The Bell Jar is set in 1950s America, a time when American society was predominantly shaped by conservative values and patriarchic structures. It was a society that placed particular restraints on women as it expected them to embody traditional ideals of purity and chastity and to aspire to the life of a suburban mother and homemaker rather than pursuing their careers. Many women, like Esther Greenwood, felt crushed by the expectations that 1950s American society placed on them. Their resentment of these pressures was one of the motivating forces that inspired the feminist movements of the 1960s and 1970s. Though The Bell Jar is a classic American coming-of-age novel, Plath's most highly regarded works are her books of poetry, including The Colossus, Ariel, and Collected Poems. These poems share some of the themes of The Bell Jar as they explore issues of mortality, sanity, and womanhood, but they are ultimately much wider-ranging than the novel and present a complex, intricate vision of many sorts of life experiences. Mirrors symbolize identity and Esther's reflection in and relation to mirrors throughout the novel follows the loss of her healthy self to mental illness. Esther's inability to recognize herself in the elevator reflection at psychological.

Conclusion: Esther Greenwood's account of her year in the Bell Jar is as clear and readable as it is witty and disturbing. Why, then, has this extraordinary work not appeared in the United States until eight years after its appearance in England? Sylvia Plath's mother has insisted that her daughter thought of the book as a "potboiler" and did not want it published in the United States. Mrs. Plath herself felt that the book presented ungrateful caricatures of people who had tried to help her daughter. These sentiments are understandable. But a book published in England cannot be kept away from the United States. Already, the student underground has been smuggling copies from abroad into the country. The literature will be

out. And "***The Bell Jar"*** is not a potboiler, nor a series of ungrateful caricatures; it is literature. It is finding its audience and will hold it. In The Bell Jar, Esther describes the relationship between mind and body as one in which each imprisons the other. The mind traps the body literally; it gets Esther locked in a psychiatric hospital. But at the same time, the body traps the mind. It has "little tricks" to prevent her from killing herself. She calls the body "a cage" that prevents the mind from extinguishing itself. "If only there was something wrong with my body",[8] she tells her nurses. She views the problems of her mind as different from the problems of her body.

References:-

1. www.spark notes.com
2. https://www.litcharts.com
3. Ibid
4. Ibid
5. Ibid
6. Ibid
7. Ibid
8. Chandran, Navya. ***A Psychonalytical study of Sylvia Plath's The Bell Jar,*** Iss, International,2016, Page n. 411-414
9. Baig, Mahrukh. ***Sylvia Plath's The Bell Jar as A Psychological Space***, Quest Journal, 2014.
10. Plath, Sylvia. "The Bell Jar", Harper and Row. 1963.

****

बिलासपुर जिले में राष्ट्रीय चेतना का विकास राजनीतिक कारण

डॉ. रीता बाजपेयी*

प्रस्तावना –देश भर में आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज आदि संस्थाएं जागृति फैला रही थी, बिलासपुर में आर्य समाज के पहले से ही राष्ट्रीय जागृति और उसके प्रसार हेतु बुद्धि प्रकाश सभा, रीडिंग क्लब, चाटापारा क्लब, बंगाल नागपुर रेल्वे इंस्टीट्यूट अस्तित्व में आकर कार्यरत हो चुके थे।

दिसंबर 1891 के अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में सरकार की नीतियों की आलोचनाएं की गई। इन्हीं में किसानों पर लगाये गये नहर कर का भी विरोध किया गया और तत्कालीन सेंट्रल प्राविंसेस (मध्य प्रदेश) के चीफ कमिश्नर के बिलासपुर प्रवास के समय नहर कर के विरोध में बीस हजार मालगुजारों एवं किसान एकत्रित होकर मांग की कि कर की दर निश्चित एवं स्थायी चाहिए एवं किसानों को न्यूनतम ब्याज पर ऋण की सुविधाा भी दी जानी चाहिए।

1906 के अखिल भारतीय कांग्रेस के सूरत अधिवेशन में बिलासपुर का प्रतिनिधित्व ई. राघवेन्द्र राव ने किया। इससे पहले इस अंचल के युवक ताराचन्द ने छात्रों एवं मजदूरों को एकत्रित कर राजनीतिक स्थिति की शिक्षा देना प्रारंभ कर दिया था।

बिलासपुर के ठाकुर छेदीलाल बैरिस्टरी पास करके 1913 में बिलासपुर आये। उन्होंने जनता में राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने हेतु रामलीला को माध्यम बनाया, किन्तु उनकी देश प्रेम की उत्कृष्ट भावना को इतने से ही संतोष नहीं हुआ अत: वे कांग्रेस की ओर झुके और राष्ट्रीय आंदोलन की कांग्रेस की नीतियों में सहयोग देने लगे ।

नगर के ही एक और देशभक्त ई. राघवेन्द्र राव इन दिनों लंदन में ही क्रांतिकारियों से संपर्क में आने से उनमें देश भक्ति की भावनाएं जोर मारने लगी। इनके विचारों को लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के विचारों से बल मिला। देश की भावनाओं से ओतप्रोत इन्होने 1906 के कलकत्ता कांग्रेस में भाग लिया। 1914 में ई. राघवेन्द्र राव भी वैरिस्टरीपास करके स्वदेश लौटे और उन्होंने बिलासपुर को अपनी कर्मभूमि बना लिया। उनका हृदय देश प्रेम की उत्कृष्ट भावनाओं से अभिभूत था। अत: वकालत में उनका मन नहीं लगा, धन, सम्पत्ति की उन्हें कोई कमी नहीं थी इसलिये वे भी सक्रिय राजनीति में आ गये।

प्रथम विश्वयुद्ध में कांग्रेस ने स्वशासन की शर्त पर सरकार का साथ दिया। 1915 में कांग्रेस की पद त्याग नीति के अंतर्गत पदत्याग एवं 'मध्य प्रांत और बरार' प्रांतीय परिषद् बनाना तय हुआ। इस परिषद् की जो संघर्ष समिति बनाई गई उनमें छत्तीसगढ़ के राव साहेब दानी, डी. एन. चौधरी, पं. रविशंकर शुक्ल, वामन बलीराम लाखे, घनश्याम सिंह गुप्ता, नलिनीकांत चौधरी, नगेन्द्रनाथ डे, मुंशी अकबर खान, ठाकुर मनमोहन सिंह तथा इनमें बिलासपुर से त्रयम्बक राव देहनकर और कुंजबिहारी अग्निहोत्री शामिल किये गये।

बिलासपुर जिले में राष्ट्रीय आंदोलन के प्रमुख प्रेरणा स्तंभ ई. राघवेन्द्र राय, कुंजबिहारी अग्निहोत्री और बैरिस्टर ठाकुर छेदीलाल सिंह थे। ई. राघवेन्द्र राव ने नवम्बर 1915 में नागपुर में नरम एवं गरम दल के संयुक्त अधिवेशन में मध्यस्थ के रूप में कार्य किया, राव साहब ने अंग्रेजी हुकूमत की कभी परवाह नहीं की उन पर तिलक के विचारों का गहरा प्रभाव था।

इन दिनों बिलासपुर नगर पालिका के अध्यक्ष थे खान बहादुर जफर अली। नगर में उनका काफी दबदबा था, किन्तु राघवेन्द्र राव ने उनका खुलकर बहिष्कार किया। अंतत: इन दिनों के संघर्ष के कारण मामला आई.सी. एस. अधिकारी नोल्स की अदालत में चला जिस दिन मामले की सुनवाई थी जफर अली के डायस पर बैठे थे राव साहब ने इस बात पर आपत्ति उठाते हुये कहा कि वे गवाह की हैसियत से आगे हैं। अत: उन्हें गवाह के कटघरे में आने को कहा।

1915 के पूर्व तक बिलासपुर नगर पालिका में अंग्रेज व्यक्ति ही उम्मीदवार होता था। किसी ने भी इस बात पर ध्यान दिया कि ऐसी संस्थाओं का संचालन स्थानीय नागरिक भी कर सकते हैं अत: 1915 में जब चुनाव का समय आया तब नगर पालिका अध्यक्ष के पद पर हेडक्वार्टर मजिस्ट्रेट गाडगिल के विरोध में ई. राघवेन्द्र राव खड़े हुए । राव साहब की विजय हुई, राव साहब की जिला प्रशासन एवं सरकार के विरूद्ध यह पहली शानदार विजय थी। शासन ने समझा कि यह चुनाव केवल शहर का था अत: उनका प्रभाव इस प्रकार पर नहीं पड़ा। राव साहब ने शासन के इस भ्रम को भी मिटा दिया। घटना इस प्रकार हुई कि अभी तक जिला परिषद् के अध्यक्ष राय बहादुर होते थे एवं सर्वेसर्वा रहते थे। तहसीलदारों के दबाव के कारण उन दिनों मालगुजार शासन समर्थित उम्मीदवार का कौंसिल सदस्य चुन देते थे और वे जिला परिषद् के सदस्य हो जाते थे किन्तु राव साहब ने इस चुनाव में भी भाग लेकर सरकारी अफसरों के हांथों में फंसे सदस्यों को अपने पक्ष में कर सरकारी उम्मीद्वार को हरा दिया। यह सरकारी तंत्र के विरूद्ध राव साहब की सफलता का एक और बड़ा प्रयास था ।

राव साहब ने एक विशाल योजना बनाई थी कि प्रांत की सभी जिला कांग्रेस कमेटियों को स्थानीय संस्थाओं पर अधिकार करने का आदेश दिया जाये और इस प्रस्ताव को उन्होंने बैतूल की प्रांतीय सभा में पास भी करवा

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

लिया, किन्तु उन दिनों की राजनैतिक उथल–पुथल के कारण उनकी प्रांतीय स्तर की यह योजना कार्यरूप में परिणित नहीं हो सकी। किन्तु उन्होंने बिलासपुर जिले में इसे व्यवहारिक रूप देना जारी रखा।

राव साहब ने नगर पालिका एवं डिस्ट्रिक्ट कीसिल में रहते हुए देशभक्ति की भावनाओं से परिपूर्ण कुछ महत्वपूर्ण कार्य किये जो इस प्रकार हैं:–

1. दोनों संस्थाओं के कर्मचारियों हेतु खादी यूनीफार्म अनिवार्य कर दिया।
2. तिलक पुण्यतिथि एवं गांधी जयंती की छुट्टियां प्रारंभ की।
3. म्यूनिसिपल स्कूलों एवं डिस्ट्रिक्ट कौसिल शालाओं में इलाहाबाद सेवा समिति की सहायता से ब्वाय स्काउट संस्था शुरू की गई।
4. स्थानीय संस्थाओं की इमारतों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराये गये।
5. शालाओं में प्रार्थना में वंदेमातरम् राष्ट्रीय गान प्रारंभ किया गया।
6. डिस्ट्रिक्ट कौसिल की शालाओं में सरकारी कर्मचारियों को दौरे के समय सरायों के समान उपयोग बंद किया गया।

इन्हीं कार्यों के अंतर्गत डॉ. राव ने डिस्ट्रिक्ट कौंसिल के अध्यक्ष की हैसियत से अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर को यह आदेश दिया कि वह अपने अधीन राजस्व अधिकारियों को गांवों की शालाओं में ठहरने से मना करे, क्योंकि ये शालायें सराय नहीं हैं। एक अंग्रेज अधिकारी को एक भारतीय का आदेश पूरे भारत में अपने ढंग का पहला था।

स्वाभाविक है कि अंग्रेजों को ऐसा आदेश कहां सहन होता, वे तो शासक थे। अत: राव साहब और शासन में झगड़ा प्रारंभ हो गया। अंत में राव साहब ने सरकार को यह चेतावनी दी कि यदि कोई सरकारी कर्मचारी स्कूल में ठहरेगा तो उस पर मुकदमा चलाया जायेगा। तब कहीं जाकर सरकार झुकी। इस प्रकार डॉ. राव ने जिला प्रशासन और उनके माध्यम से प्रांतीय सरकार से कई बार संघर्ष किया और विजयी रहे। परिणाम यह हुआ कि जनता के वे प्रिय भाजन बनते गये। इस प्रकार म्यूनिसिपल एवं जिला परिषद् द्वारा उन्होनें जो उपलब्धियां प्राप्त की उनमें उनकी देशभक्ति एवं राष्ट्रीयता स्पष्ट नजर आती है। उन्होंने शासन से लड़ाई लड़कर जनता को उनके अधिकार दिलाये।

जब देश भर में होमरूल लीग की शाखाएं स्थापित की गई तब बिलासपुर में भी इसकी शाखा की स्थापना की गई। यहां जागृति का कार्य किया कुंज बिहारी अग्निहोत्री, नागेन्द्र नाथ डे, मुंशी अकबर खां, ठाकुर मनमोहन सिंह, त्र्यम्बक रा देहनकर, मुन्नीलाल स्वामी, गजाधर साव, गोविंद प्रसाद तिवारी, अंबिका प्रसाद वर्मा ।

इसके बाद 'दुनंदन प्रसाद वर्मा ने बाल समाज पुस्तकालय एवं ठाकुर छेदीलाल ने सेवा समिति बनाकर यहां के युवकों में राष्ट्रीय जागृति फैलाने का कार्य किया।

छत्तीसगढ़ में कांग्रेस के नरम दल वालों का बहुमत नहीं था फिर भी मांटफोर्ड सुधार योजना यहां लागू की गई। सरकार ने पूरे देश में आंदोलन को कुचलने हेतु पुलिस द्वारा अत्याचारों की अति कर दी थी।

इस समय बिलासपुर में पुलिस अधीक्षक मि. स्काट थे। यहां इनका आंतक व्याप्त था अत: ई. राघवेन्द्रराव ने उनके स्थानांतरण की मांग करते हुए आंदोलन प्रारंभ कर दिया। सी.पी. वीकली न्यूज जो छिंदवाड़ा से निकलता था, उसने बाइस अप्रेल 1920 के अंक में एक समाचार प्रकाशित किया, जिसका शीर्षक था 'बिलासपुर जिले में मिस्टर स्काट के आधीन पुलिस प्रशासन' इस लेख में ई. राघवेन्द्र राव ने बिलासपुर नगर पालिका के अधयक्ष एवं जिला सचिव की हैसियत से पुलिस के दमनात्मक रवैये का उल्लेख किया है जो इस प्रकार है –

'यह बड़े दु:ख की बात है कि सर फ्रेंक स्लाई ने प्रशासन के तहत कौंसिल के निर्वाचित सदस्यों द्वारा पारित प्रस्तावों को अनुमोदित नहीं किया। यहां निश्चित रूप से बहुत अधिक अत्याचार किये जा रहे हैं, उच्च जाति के एवं गणमान्य नागरिकों पर भी ये अत्याचार हो रहे हैं। अत: बिलासपुर की जनता अंग्रेजी हुकूमत एवं उसकी नौकरशाही तथाा उसके जुल्म और अत्याचार की कटु आलोचना करती है। (1)

जिस समय महात्मा गांधी ने भारतीय राजनीति में प्रवेश लिया उस समय लोगों ने अपने स्वार्थ की प्राप्ति के लिये राजनीति को स्वार्थ सिद्धि का अस्त्र बना लिया। गांधी ने सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह सिद्धांत को लागू कर भारतीय राजनीति में चेतना का मंत्र फूंका। उन्होंने स्वीकार किया है कि 'जब से मैंने यह जाना कि सार्वजनिक जीवन क्या है, तब मेरे प्रत्येक शब्द और कार्य के मूल में धार्मिक चेतना नितांत धार्मिक हेतु है। ' (2) गांधी ने सर्वप्रथम धार्मिक राजनीति की नींव डाली। अपनी बात मनवाने के लिए सत्याग्रह को विशेष महत्व दिया। सत्याग्रह से उनका तात्पर्य था 'अहिंसा द्वारा सत्य का आग्रह।' भारतीयों पर अंग्रेजों का शासन अन्यायपूर्ण और क्रूर था। इस बुरे शासन को हटाने के लिये गांधी जी ने असहयोग आंदोलन आरंभ किया। असहयोग का एक रूप सविनय अवज्ञा था। गांधी जी की विचारधारा के अनुसार सविनय अवज्ञा से तात्पर्य है– 'सरकार के कानूनों को भंग करना, जो नैतिक नहीं है। सविनय अवज्ञा इस बात का प्रतीक है कि प्रतिरोधकारी सविनय अर्थात् अहिंसक रूप से कानून की अवज्ञा करता है।' (3) गांधी जी देश को स्वतंत्र कराना चाहते थे। यही उद्देश्य लेकर उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम लड़ा। गांधी जी ने राजनीतिक संघर्षों के दरम्यान सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के द्वारा नैतिक बल का प्रयोग किया। इन सिद्धांतों का न केवल भारतीयों पर ही गहरा प्रभाव पड़ा, अपितु अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भी इनको अपनाया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा, रामगोपाल : छत्तीसगढ़ के रायपुर जिले में स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन (1857–1947)।
2. बिस्सा, कृष्ण कुमार : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिक चेतना, दिल्ली : दिनमान प्रकाशन, 1984, पृष्ठ 140
3. गांधी, एम. के. : माडर्न इंडियन सोसिएल एण्ड पोलिटिकल थाट।
4. सुमन, रामनाथ : गांधीवाद की रूपरेखा।
5. वर्मा, श्रीधर एवं गर्ग, सरोज : आधुनिक भारतीय सामाजिक और राजनैतिक चिन्तन।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) April to June 2017, Vol. I, Issue XVIII

अकबरयुगीन ललित कलाओं में सांस्कृतिक समन्वय

प्रताप कुमार पाण्डेय*

शोध सारांश – मुगलकाल ललित कलाओं के विकास के लिये स्वर्णिम युग रहा है। परन्तु इस विषय में दो तथ्य विशेष रूप से उल्लेखीनय हैं। प्रथम, ललित कलाओं के लिये मुगल काल सहसा नवीनता का युग नहीं था। अपितु ललित कलाओं की उन स्वस्थ प्रक्रियाओं का विस्तार, विकास और चरम परिणति था जिसका प्रारंभ दिल्ली के सुल्तानों के युग में हुआ था। द्वितीय, सन् 1526 के पश्चात् जब मुगल युग प्रारंभ हुआ तब ललित कलाओं का स्वरूप हिन्दु–मुस्लिम कला शैलियों, परम्पराओं और तत्वों का आनंदजनक सुखद समन्वय और सम्मिश्रण प्रारंभ हुआ। अकबर ने इसी समन्वित स्वरूप को राजकीय प्रश्रय देकर उसका विकास किया। अकबर के शासनकाल में भवन–निर्माण कला, चित्रकला, सुन्दर हस्त लेखन कला आदि प्रमुख कलाओं का अभूतपूर्व उत्कर्ष हुआ।

शब्द कुंजी –रज्मनामा, व्यक्ति–चित्र, हम्जनामा, राष्ट्रीय भारतीय संगीत, नश्तालीक, जरी–कलम, पच्चीकारी, पियरे दुरिन्रा, पश्मीना, सुलेख, राग, राज्याश्रय, सांस्कृतिक समन्वय।

प्रस्तावना –बाबर और हुमायूं कलाप्रिय शासक थे किन्तु वे अपने राज्य के निर्माण और उसके अस्तित्व की रक्षा के लिये निरंतर संघर्षों में जुटे रहे। उनके पास कलाओं के बहुमुखी विकास के लिये न तो पर्याप्त अवसर था और न ही यथेष्ट धन। अकबर सच्चे अर्थों में एक समन्वयवादी शासक था। राजनीति, धर्म, समाज तथा संस्कृति के क्षेत्र में समन्वय की स्थापना उसकी उत्कृष्ट कल्पना थी। उसके शासन काल के समस्त कलात्मक विकास में हिन्दु–मुचितम शैलियों के समन्वय की अनूठी भावना का दर्शन होता है। पर्सी ब्राउन के अनुसार फालीन कला शैलियों में समन्वय तत्कालीन गुरु तथा परिस्थितियों की उपज थी।**(1)**

अकबर कला और प्रकृति का अनुरागी था। अकबर महान् सुसंस्कृत शासक था। वह स्वयं प्रकृति का और कला का विशेष प्रेमी था। उसका यही अनुराग तथा बहुमुखी व्यक्तित्व कला के स्वरूप और विकास में प्रतिबिम्बित हुआ।

अकबर युग में विविध कलाओं का विकास

चित्रकला – चित्रकला में अकबर की शिक्षा और उसकी व्यक्तिगत अभिरुचि ने चित्रकला के विकास में नवजीवन प्रदान किया। कुरान में इसका निषेध होने पर भी अकबर चित्रकता से प्रेम करता था। वह स्वयं कहा था कि अधिकांश लोग चित्रकला से पुणा करते हैं, किन्तु मैं ऐसे लोगों को पसंद नहीं करता हूँ क्योंकि मेरे अनुसार एक वित्रकार के पास ईश्वर को पहचानने की शक्ति है। चित्रकला में अकबर की इस विशेष रुचि का श्रेय मीर सैयद अली बौर समाना अब्दुस्समद को है। अकबर चित्रकला के माध्यम से मृत को सजीव और सजीव को अमर बनाना चाहता था।

चित्रकला के विकास हेतु अकबर के प्रयत्न – अकबर ने चित्रकला का एक पृथक विभाग नियुक्त किया तथा अब्दुस्समद को इसका अध्यक्ष नियुक्त किया। आगे चल कर इसी से चित्रकारी स्कूल की स्थापना हुई, जिसको हम 'राष्ट्रीय भारतीय चित्रकला स्कूल कह सकते हैं।' अकबर के दरबार के विदेशी मुसलमान चित्रकारों में अब्दुत्समद, सैयद अली, फर्रुख बेग, खुसरो कुली, जमरोद आदि तथा हिन्दू चित्रकारों में दसवंत, बसावन, ताराचंद, जनब्लाय, सांवलदास, केशवलाल आदि प्रमुख हैं। चित्रकला को प्रोत्साहन देने के लिये अकबर ने वित्रकारों को बिना किसी जाति भेद या पक्षपात के समान रूप से संरक्षण प्रदान किया। उसने इनके चित्रों की साप्ताहिक प्रदर्शनी की व्यक्त्या की अकबर कालीन विवकता को निम्न चार भागों में बांटा जा सकता है।

चित्रपट – हम्जानामा अकबर के समय की प्रारंभिक कृति हैं जिसके चित्र इस श्रेणी में आते हैं। इनमें ईरानी और भारतीय प्रभाव का अद्भुत सम्मिश्रण है। से सूती कपड़े पर निर्मित हैं।

ग्रंथचित्र – महाभारत (रज्मनामा), पंचतंत्र (अयार दानिश) तथा कुछ अन्य ग्रंथों के अनुवाद को चित्रित किया गया। अन्य ग्रंथों में तारीखे खानदानी तिमूरिया, तुजुके बाबरी (अनुदित) अकबरनामा, तारीखे रसीदी आदि ग्रंथ चित्रित किये गये। डॉ. रामनाथ ने लिखा है अकबर के पुस्तकालय में लगभग तीस हजार पुस्तकें थी, जिनमें सैकड़ों ग्रंथ चित्रित थे। इससे उस महान सम्राट ने चित्रकला को कितना अधिक प्रोत्साहन दिया, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

व्यक्ति चित्र – अकबर ने व्यक्ति चित्रों को भी प्रोत्साहन दिया। डॉ। रामनाथ ने लिखा है– 'सम्राट ने स्वयं अपना व्यक्ति चित्र बनवाया और आदेश दिया कि राज्य के बड़े अधिकारी भी अपने चित्र बनवाये व्यक्ति चित्रों की एक बड़ी एलबम तैयार की गई।'

भित्ती चित्र – अकबर कालीन भित्ति चित्र अपनी सुन्दर पृष्ठभूमि, अनूठे आकार–प्रकार तथा तुलिका से विभिन्न रंगों द्वारा आकर्षक चित्रण के लिये प्रसिद्ध है। फतेहपुर सीकरी में हाथी पोल तथा मासुमत बुर्ज की दीवारों का चित्रण बड़ा ही रोमांचकारी है। अबुल फजल के अनुसार चित्रकारों ने कुशल चित्रण के द्वारा निर्जीव वस्तुओं को भी सजीव प्रदर्शित करने का सफल अभिनय किया है।

अकबर कालीन चित्रकला की विशेषतायें:

1. चित्रों में सजीवता का आभास है।
2. चमकदार रंगों का प्रयोग किया गया है।

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) डी.एल.एस. स्नात. महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

3. फारसी शैली के पेड़-पौधों और फूल-पत्तियों को पृष्ठभूमि में दर्शाया गया है।
4. हिन्दू प्रतीकों का मुक्त रूप से चित्रण किया गया है।
5. प्रत्येक दृष्टिकोण से हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक समन्वय का भरसक प्रयत्न किया गया।

आलोचना – अधिकांश चित्र अकबर के चित्र-संग्रह (एलबम) के लिए बनाये गये थे। चित्रकारों के प्रमुख विषय मुगल सम्राट, सामन्त, राजदरबार तथा राजकीय शादी घटनाओं का चित्रण करना था। इससे लोकजीवन और विविध प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण न हो सका। चित्रकला मौलिक स्वाभाविकता से वंचित रह गयी।

संगीत कला – अकबर के उदार राजयाश्रय और उसके संगीत प्रेम के कारण उसके शासनकाल में संगीत की खूब उन्नति हुई वह स्वयं एक अच्छा गायक था तथा नक्कारा बजाने में कुशल था। अनेक हिन्दु रागों को उसने लाल कलावंत से सीखा था।

अबुल फजल ने लिखा- `His majesty pays much attention to music and is patron of all who practice this enchanting art'. **(2)**

अकबर के दरबार में 36 श्रेष्ठ संगीतज्ञ थे जिनमें देशी-विदेशी, हिन्दू, मुसलमान सभी वर्गों के गायक सम्मिलित थे। इन्हें सात वर्गों में बांट वह प्रति सप्ताह एक वर्ग का संगीत सुनता था। इन संगीतकारों में तानसेन (मकरंद पाण्डे), बाज बहादुर, बैजू बावरा, बाबा रामदास, सूरदास, गोपाल, मदनलाल, दिवाकर तथा राजा शूरसेन अति प्रख्यात थे। संगीत सम्राट तानसेन ने अकबर के संरक्षण और प्रोत्साहन तथा अपने गुरू हरिदास के आर्शीवाद से अनेक विस्मयकारी नवीन रागों का निर्माण किया था उसकी शक्ति के प्रति यह भी विश्वास किया जाता है कि वह अपने संगीत से दीपक जलाने, पतझड़ में बसंत लाने तथा ग्रीष्म में मूसलाधार बारिश कराने में सक्षम था। यहां तक कहा जाता है कि वह यमुना नदी का बहना भी बंद कर देता था। उसकी प्रशंसा में अबुल फजल ने लिखा है- `A singer like him had not been in India for the last one thousand years'.

अकबर के शासन काल की यह विशेषता थी कि मुसलमान भी संगीत प्रेमी हो गये थे और उनमें से कुछ तो हिन्दू संगीतज्ञों से भी श्रेष्ठ थे। यद्यपि कुरान में संगीत का निषेध है। उसके समय में हिन्दुओं तथा मुसलमानों का संगीत मिलकर एक बन गया।

अन्य विविध कलायें

सुलेख कला – अकबर स्वयं सुन्दर हस्तलेखन कला में अभिरूचि रखता था। इस कला का भारतवर्ष, फारस और चीन में बहुत आदर होता थे। इस कला के निष्णातों की पूर्व में भी अत्यधिक आवश्यकता पड़ती थी क्योंकि ये ही हसतलिखित ग्रंथों, महलों में कुरान की आयतों तथा शाही परचम आदि की प्रतिलिपि करते थे। अकबर के दरबार में आठ प्रकार की लेखन कला प्रचलित थी जिनमें से आठवीं **नश्तालीक** अकबर को विशेष पसंद थी। इसमें पूर्णतया टेड़ी पंक्तियां लिखी जाती थी। अकबर के दरबार में सबसे निपुण सुलेखक हुसैन कश्मीरी था। इसे बादशाह ने **जरी-कलम** की उपाधि से विभूषित किया था।

बागवानी कला – यह एक प्राचीन कला है जो भारतवर्ष में पूर्व से ही विद्यमान थी परन्तु इसे एक विशिष्ट योजनानुसार लगाने और सजाने का श्रेय मुगलों को है। वर्तमान युग में शोध से यह प्रमाणित हुआ है कि ताजा मिट्टी की सौंधी खुशबू मन में शांति का संचार करती है। बागवानी करते समय इसकी सहज ही प्राप्ति हो जाती है। **(3)**

अकबर ने महलों में कई बाग लगवाये किन्तु उसके नाम से संबंधित सबसे बड़ा बाग उसके मकबरे सिकन्दरा में है। उसने फल वाले बाग भी लगवाये। अबुल फजल ने लिखा है इराक तथा तूरान के बहुत से बागवान आकर देश में बस गये हैं तथा वृक्षों को लगाना उन्नतावस्था में है।

मूर्तिकला – इस्लाम में मूर्ति बनाना वर्जित है क्योंकि ऐसा करके व्यक्ति ईश्वर के नकली और अप्रामाणिक रूप का निर्माण करता है। अत: सल्तनतकाल में इस कला की घोर उपेक्षा व दारूण क्षति हुई, किन्तु अकबर के सहिष्णु शासन में इसे विकसित होने का अवसर प्राप्त हुआ। आगरा के प्रवेश द्वारा पर जयमल और फत्ता की हाची पर सवार अत्यंत सुन्दर मूर्तियों का निर्माण अकबर ने करवाया था। फतेहपुर सीकरी में हाथीपोल में लाल पत्थर की विशाल हाथियों की दो प्रतिमायें थीं। **(4)**

इसके अतिरिक्त इस कला की पूरक कला हाथी दांत की खुदाई की कता भी आगरा, सीकरी व जयपुर आदि स्थानों पर अत्यधिक प्रगतिशील थी आज भी आगरे में हाबी दांत की खुदाई में लीन कारीगर देखने को मिल जाते हैं।

वस्त्र कला – भारत में वस्त्र निर्माण कला का स्वरूप अत्यंत प्राचीन है। अकबर के काल में कुशल कारीगर कपड़ों पर रेशम, सोने चांदी के बार और जरी से कढ़ाई का कार्य करते थे। इस युग की शाल व दुशाले अत्यंत प्रसिद्ध थे जिनका अधिकांश उत्पादन आगरा, फतेहपुर सीकरी, कश्मीर, पंजाब व दिल्ली में होता था।

पच्चीकारी कला – डॉ. श्रीवास्तव ने लिखा है मुगल इमारतें, रंगीन व चमकीली खपरैलों से कांच की पच्चीकारी से, बहुत बारीक जड़ाई से, गचकारी (स्टक्कों) से तथा भित्ति चिर्षों से सजामी जाती थी। अकबर के शासन काल में आगरा के किले में जहांगीरी महल तथा फतेहपुर सीकरी में जोधाबाई के महल, शेश सलीम चिश्ती के मकबरे, मरियम के महल आदि में चमकदार खपरैलों का प्रयोग किया गया है। इन सभी इमारतों में कांच की रत्नों जैसे जगमगाती अनूठी पच्चीकारी का प्रयोग किया है। **(5)**

उक्त कलाओं के अतिरिक्त नृत्य कला, नाटक कला, बर्तन निर्माण कला, आभूषण निर्माण कला तथा झत्तर निर्माण कला आदि सभी में अकबर के श्रेष्ठ उदारतापूर्ण हिन्दु-मुस्लिम समन्वय की नीति का प्रचुर प्रयोग हुआ है। देश के विभिन्न संग्रहालयों में उपलब्ध इन सभी के प्रमाण बरबस ही अकबर को आशु सम्मान का अधिकारी बना देते हैं।

निष्कर्षत: स्पष्ट है कि अकबरयुगीन ललित कलाओं में हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक समन्वय की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। अकबरयुगीन संगीत और बागवानी आदि ललित कलाओं ने पूरे विश्व में ख्याति पाई थी। तत्कालीन सांस्कृतिक समन्वय से हिन्दू और मुस्लिम कलाकारों व कामगारों को आर्थिक लाभ की भी प्राप्ति हुई व इससे समाज को अनूठे उदाहरणों का लाभ मिला। मुगल युग वस्तुत: ललित कलाओं के स्वर्णिम युग को प्रतिबिम्बित करता है जिसमें अकबर का शासनकाल उत्कृष्ट रहा इसी ने आगामी शाहजहां के भव्य युग की पृष्ठभूमि रखी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लुणिया, बी. एन., **'मुगलकालीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास'** भाग-I पृष्ठ 676, 1994
2. अबुल फजल, **'आइन-ए-अकबरी'** भाग-I पृष्ठ 114, 1956
3. **सरिता,** मासिक पत्रिका सितम्बर प्रथम वर्ष-1997
4. श्रीवास्तव, आशीर्वादी लाल, **'मुगलकालीन भारत'** पृष्ठ 251, 1997
5. खुराना, डॉ. के.एल., **'मध्यकालीन भारतीय संस्कृति'** पृष्ठ 205, 1994

An Ecofriendly Approach to Biopesticides

Dr. Kiran Yadav*

Abstract - Biopesticides, derived from natural sources such as microorganisms, plants, and minerals, offer an ecofriendly alternative to synthetic chemical pesticides. They play a vital role in sustainable agriculture by reducing chemical residues in the environment and promoting biodiversity. This paper explores the types of biopesticides, their mechanisms of action, and their advantages over traditional pesticides. It also discusses the challenges and prospects of biopesticides in modern agriculture, emphasizing their role in achieving sustainable crop protection.
Keywords: Biopesticides, Sustainable Agriculture, Ecofriendly, Pest Management, Biodiversity Conservation.

Introduction - Agriculture is the backbone of human civilization, yet its sustainability is threatened by overreliance on synthetic pesticides. These chemicals, while effective, have led to adverse environmental and health impacts, including soil degradation, water pollution, and harm to non-target organisms. Biopesticides present a promising solution by leveraging natural mechanisms to control pests while preserving ecological balance. This paper examines the potential of biopesticides as a sustainable alternative to chemical pesticides.

Types Of Biopesticides

Microbial Biopesticides: Derived from bacteria, fungi, viruses, or protozoans, microbial biopesticides target specific pests. For example, *Bacillus thuringiensis* (Bt) produces proteins toxic to certain insects but harmless to humans and other animals.

Botanical Biopesticides: Plant-derived compounds, such as neem oil and pyrethrins, act as natural insecticides, fungicides, or repellents. Neem-based products disrupt insect growth and reproduction, making them highly effective.

Biochemical Biopesticides: These include naturally occurring substances, such as insect pheromones, that disrupt pest mating behaviours, reducing population growth without killing the pests directly.

RNA-Based Biopesticides: Emerging technologies, like RNA interference (RNAi), enable the design of biopesticides that silence critical genes in pests, offering highly specific and efficient pest control methods.

Mechanisms Of Action

Target-Specific Action: Biopesticides often target specific pests, reducing the risk of harming beneficial insects and other non-target organisms. For instance, Bt toxins are highly selective for certain insect larvae.

Biological Control: Biopesticides leverage natural predators or pathogens to suppress pest populations. For example, parasitic fungi like Beauveria *bassiana* infect and kill insects without affecting crops or humans.

Resistance Management: Unlike chemical pesticides, biopesticides often have complex modes of action, making it harder for pests to develop resistance. The use of multiple modes of action enhances long-term effectiveness.

Advantages Of Biopesticides

Environmental Safety: Biopesticides decompose rapidly, reducing the risk of environmental contamination and bioaccumulation. They are safe for soil, water, and non-target species.

Health Benefits: The use of biopesticides minimizes chemical residues on crops, lowering risks to human health and supporting organic farming practices.

Biodiversity Conservation: By targeting specific pests, biopesticides help maintain the population of pollinators and other beneficial organisms, fostering a balanced ecosystem.

Compatibility with Organic Farming: Biopesticides align with organic farming practices, offering a natural and sustainable alternative to synthetic chemicals.

Challenges In Biopesticide Use

Limited Shelf Life: Biopesticides often have shorter shelf lives compared to synthetic pesticides, requiring careful storage and handling.

Variable Efficacy: Environmental factors such as temperature, humidity, and UV exposure can affect the performance of biopesticides.

Cost and Accessibility: The production and commercialization of biopesticides can be expensive, limiting their availability to small-scale farmers.

Public Awareness and Adoption: Farmers often lack awareness about biopesticides, leading to low adoption rates despite their benefits. Education and training programs are essential.

Future Prospects

Research and Development: Advancements in biotechnology and microbiology hold the potential to enhance the efficacy and stability of biopesticides. Genetic

* **Associate Professor (Zoology) Maharana Pratap Govt P.G. College, Hardoi (U.P.) INDIA**

engineering can produce microbial strains with improved pest-control capabilities.

Integrated Pest Management (IPM): Incorporating biopesticides into IPM strategies can optimize pest control while minimizing chemical inputs, ensuring sustainable agriculture.

Policy Support: Government incentives and subsidies for biopesticide production and use can promote their adoption, particularly in developing countries.

Technological Innovations: Developments in nanotechnology and formulation science can improve the stability, delivery, and effectiveness of biopesticides, making them more competitive with synthetic options.

Conclusion: Biopesticides represent a transformative shift in agricultural pest management, offering a sustainable and ecofriendly alternative to chemical pesticides. While challenges remain, continued research, technological advancements, and supportive policies can unlock their full potential. Embracing biopesticides is crucial for achieving long-term agricultural sustainability and ecological conservation. Greater investment in education and infrastructure will accelerate their adoption and pave the way for a greener future.

References:-

1. Copping, L. G., & Menn, J. J. (2000). Biopesticides: A review of their action, applications, and efficacy. *Pest Management Science*, 56(8), 651-676.
2. Glare, T. R., & O'Callaghan, M. (2000). Bacillus thuringiensis: Biology, ecology, and safety. *Biological Control*, 56(4), 623-631.
3. Isman, M. B. (2006). Botanical insecticides, deterrents, and repellents in modern agriculture and an increasingly regulated world. *Annual Review of Entomology*, 51, 45-66.
4. National Research Council. (1996). Ecologically Based Pest Management: New Solutions for a New Century. National Academy Press.
5. Thakore, Y. (2006). The biopesticide market for global agricultural use. *Industrial Biotechnology*, 2(3), 194-208.

****

आचार्य चाणक्य की राजधर्म संबंधी नीतियां

डॉ. विद्या आचार्य *

प्रस्तावना – किसी देश का संविधान एवं समय–समय पर उसके अन्तर्गत बनाये जाने वाले वैधानिक नियमोपनियम उस देश का राजधर्म कहलाते हैं। इनकी अनुपालना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होता है। संविधान देश की सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और परम्पराओं के अनुसार होता है एवं नियमोपनियम परिस्थितियों के अनुसार बदलते रहते हैं। राजधर्म के मूलभूत सिद्धान्त या तत्व देश के संविधान में परिभाषित होते हैं एवं समस्त वैधानिक नियमोपनियम इसी तराजू पर तोले जाते हैं संविधान का निर्माण विद्धान व्यक्तियों के द्धारा सर्वसम्मति से किया जाता है।

आचार्य चाणक्य ने राजधर्म के लिए अर्थशास्त्र की संरचना की है इसमें राजा के कर्त्तव्य अकर्त्तव्य आदि पर सम्यकरूप से प्रकाश डाला है। चाणक्य नीति में भी राजा के लिए अनेक नीतियां निर्धारित की गयी हैं जैसे राजा का बल उसकी सेना होती है । अर्थात सैन्यबल ही राजा की उन्नति में सर्वाधिक सहायक होता है। राजा को सदैव प्रजा के हित में संलग्न रहना चाहिए, क्योंकि प्रजा के हित में ही राजा का कल्याण अन्तर्निहित होता है। प्रजा रक्षार्थ भ्रमण करने वाला राजा ही सम्मानित होता है य।

राजा के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण संदेश देते हुए आचार्य चाणक्य कहते हैं कि 'राजा को अतिसरल स्वभाव वाला नहीं होना चाहिए क्योंकि जंगल में भी सीधे वृक्ष काट दिये जाते हैं एवं वक्र आकार वाले खड़े रहते हैं। इसी के साथ उनका यह भी विचार है कि राजा को समयानुसार क्रोध एवं अनुग्रह वाला होना चाहिए क्योंकि जो न दण्ड दे सकता है और न ही किसी प्रकार की दया प्रकट कर सकता है। वह राजा प्रभावहीन हो जाता है ।' इनके अनुसार राजा को शक्तिहीन होने पर भी शक्तिशाली होने का प्रदर्शन करना चाहिए। जिससे कि शत्रु उससे भयभीत रहे एवं आक्रमण करने का साहस ही नहीं कर सके। इस तथ्य को आचार्य चाणक्य ने सर्प के दृष्टान्त द्धारा इस प्रकार बतलाया है कि विषहीन सर्प को भी बड़े फन वाला होना चाहिए जिससे कि कोई उसे पकड़ने अथवा मारने का साहस न करे ।

आचार्य चाणक्य मनुष्य की बुद्धि को ही उसका सबसे बड़ा सहायक मानते हैं । अत: राजा को बुद्धिमान होना चाहिए। राजा को तेजस्वी होना चाहिए क्योंकि जिसका तेज चमकता रहता है उसकी स्थूलता से कोई प्रयोजन नहीं होता है जैसे हाथी लंबे चौड़े शरीर वाला होता है किंतु उसे अंकुश से वश में किया जाता है। अंकुश का परिमाण हाथी की अपेक्षा बहुत कम होता है । राजा को समय एवं परिस्थिति के अनुसार शत्रु से व्यवहार करना चाहिए । आचार्य चाणक्य राजनीति के अन्तर्गत एक चतुर कूटनीतिज्ञ के रूप में प्रसिद्ध हैं। यहां उन्होंने ऐसी कूटनीति पूर्ण बात कही है जो शासक के लिए अति उपयोगी है। उनका विचार है जो शत्रु का प्रतिकार साम, दाम, दण्ड एवं भेद किसी भी उपाय से किया जा सकता है। यदि शक्ति से निवारण करने की योग्यता नहीं है तो उसे मित्रता करके मधुरव्यवहार का प्रदर्शन करते हुए शक्तिहीन कर देना चाहिए।

राजनीतिक दृष्टि से आचार्य चाणक्य का पर्याप्त संगठन है उनकी कूटनीति की यह विशेषता है कि उसके गुप्तचर अपने आप में एक दूसरे को नहीं पहचानते हैं कि वे एक ही **उद्देश्य** की पूर्ति के लिए कार्य करने वाले चाणक्य के व्यक्ति हैं। वह अपने अनुयायियों में प्रेरणा फूंकने में समर्थ हैं जो उनकी कठोरता, जागरूकता और लक्ष्य से प्रभावित हैं। उनके जितने भी सहायक हैं उनको देखकर ऐसा लगता है कि इनकी कोई अभिलाषा या उच्चाकांक्षा नहीं है। इनके सहायकों में स्वार्थसिद्धि भी नहीं है चाणक्य की महत्वाकांक्षा ही उनकी महत्वाकांक्षा है। चाणक्य की कार्यसिद्धि ही उनकी कार्यसिद्धि है आचार्य चाणक्य के अन्दर वह शक्ति है कि वह अस्त और उदय युगपत कर सकें इसलिए उनके विषय में कहा गया है –

'धाम्नांतिशाययति धाम सहस्त्रधाम्नं:'

राजा को सदैव धर्माचरण करते हुए उत्तम कर्म करने चाहिए। यदि राजा अधर्माचारण करने वाला हो तो उसका राज्य स्वयं ही लय को प्राप्त हो जाता है राजा के धर्मात्मा होने पर प्रजा भी धर्म में प्रवृत्त होती है, क्योंकि जैसा राजा होता है प्रजा भी वैसी ही हो जाती है ।

आचार्य चाणक्य का विचार है कि शासक को मंत्रणा के समय में ईर्ष्या–द्वेष नहीं करना चाहिए, क्योंकि जब किसी विषय पर मंत्रणा की जाती है तब कई प्रकार के विचार प्रकट किये जाते हैं। शासक को समस्त बातें शान्ति और निष्पक्ष भाव से सुननी चाहिए। जो हितकारी बात हो उस पर ध्यान देना चाहिए हितकारी बात कभी–कभी अप्रिय भी होती है। इसलिए यदि कोई ऐसी हितकारी बात कहे तो उसका बुरा नहीं मानना चाहिए।

राजा धर्म तथा अर्थ की क्षति किये बिना काम का सेवन करे। सर्वथा सुख–रहित जीवन यापन न करे ।

आचार्य चाणक्य का विचार है कि राजा को निर्बल मित्र का आश्रय लेकर बलवान शत्रु को चुनौती नहीं देनी चाहिए क्योंकि कोई व्यक्ति यह सोचकर हाथी को छेड़ता है कि वह हाथी को छोड़कर अरंडी के वृक्ष का आश्रय ले लेगा तो यह उसकी मूर्खता ही होगी: क्योंकि अरंडी का वृक्ष कमजोर होता है हाथी उसको एक क्षण में ही तोड़ सकता है । इसी भाव को उन्होंने इस प्रकार भी व्यक्त किया है कि 'शीशम का विशाल वृक्ष भी हाथी को बांधने का स्तम्भ नहीं हो सकता है ।'

आचार्य चाणक्य ने राजा को अति महत्वपूर्ण सन्देश देते हुए कहा है कि राजा को सदैव जिस कार्य के लिए जो वस्तु उपयुक्त हो उसी का प्रयोग

*सह–आचार्य (संस्कृत) सेठ मथुरादास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा (राजसमंद) (राज.) भारत

करना चाहिए बलवान शत्रु का नाश करने के लिए शक्तिशाली अस्त्र-शस्त्र होने चाहिए रू क्योंकि कनेर से मूसल नहीं बनाया जा सकता है।

इन्होंने राजदूत के लिए भी नियमों का प्रतिपादन किया है। राजदूत का कर्तव्य है कि वह दूसरे देश के राजा के सम्मुख प्राणन्तक परिस्थिति के उपस्थित हो जाने पर भी अपने स्वामी का संदेश विकलरूप में कहे।

आचार्य चाणक्य ने अपराधियों के लिए कठोर दण्डव्यवस्था का प्रतिपादन किया है। चाणक्य की राजनीति की सबसे बड़ी विशेषता क्षणिक जीवसिद्धि है, जिसको राक्षस अपना घनिष्ठ मित्र समझता है वह वस्तुत: चाणक्य का गुप्तचर होता है राक्षस अपना सर्वाधिक विश्वसनीय व्यक्ति मानकर अमोह अस्त्र विषकन्या का प्रयोग करवाता है। इस प्रकार आर्य चाणक्य एक महान राजनीतिक विचारक भी थे। क्रियात्मक रूप से उनकी राजनीतिक सफलता का रहस्य उसी उस नीति का सही रूप से पालन करना था जिसके विषय में उनकी अपनी मान्यता सर्वसिद्ध हुई है।

सुकृत्य विष्णुगुप्तस्य मित्राप्ति गार्गवस्य च।
बृहस्पतेरविश्वासो नीतिसन्धिस्त्रिधा मत: ॥

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'राज्ञां सैन्यं बलं'॥ 2/13
2. 'भ्रमन्सम्पूज्यते राजा' 6/4
3. नाऽत्यन्त सरलैर्भाव्य गत्वा पश्य वनस्थलीम्।
छिद्यन्ते सरलास्तत्र कुब्जास्तिष्ठन्ति पादपा: ॥ 7/12
यस्मिन् कष्टे भय नास्ति तुष्टे नैव धनाऽगम।
निग्रहो ऽनुग्रहो नास्ति रुष्ट: किं करिष्यति ॥ 9/2 चा.नी.
4. निर्विषेणाऽपि सर्पेण कर्त्तव्या महती फणा।
विषमस्तु न चाप्यस्तु घटाटोपो भयकर ॥ 9/10 चा.नी.
5. बुद्धिर्यस्य बलं तस्य निर्बुद्धेस्तु कुतो बलम्।
वने सिंहो मदोन्मत्त: शशकेन निपातिता: ॥ उ 10/16
6. हस्ती स्थूलितनु: स चाङ्कुशवश: किं हस्तीमात्रोऽङ्कुशो
तेजोऽस्य विराजत बलवान् स्थूलेषु क: प्रत्यय: ॥ 11/3
7. अनुलोमेनाबालिन प्रतिलोमेन दुर्जनम्।
आत्मतुल्यं शत्रु विनयेन बलेन वा ॥ 7/10
8. यस्य चात्रियमिच्छेत् तस्य ब्रूयात् सदा प्रियम्।
व्याधोमृगवधं कर्तु गीतं गायति सुस्वरम् ॥ 14/10 चा.नी.
9. मुद्राराक्षसम विशाखदत्ता, । 1997 पृ. 27
10. मुद्राराक्षसम् 3/17
11. राज्यमधर्मत: प्रलयं याति: ॥
राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठ: पापे पापा: समेसमा:।
12 राजानमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा: 13/7
'मन्त्रकाले न मत्सर: कर्त्तव्य:' 31 सू. प्र.
13. धर्मार्था विरोधेन कामं सेवेत। न नि: सुख:स्यात्।
(कौ. अर्थ, प्रक. 3 अध्याय-6)
14. एरंडमवलम्ब्य कुंनजरं न कोपयेत्यय ॥ 449 सू.प्र.
15. 'अतिप्रवृद्धाशाल्मली वारणस्तम्भोन भवति' 450सू.प्र.
16. ' अश्रितदीर्घादपि कर्णिकारों न मुसली' ॥ 451 सू.प्र.
17. शासनं च यथोक्तं ब्रूयात प्राणाबाधेऽपि दृष्टि।
(अर्थ प्रक0-11 अध्याय-15)
18. मुद्राराक्षसम् पृ0-30

****

नई भूमिकाओं में महिलाएँ एवं उभरती हुई चुनौतियाँ

डॉ. रेखा पंचोली*

प्रस्तावना – भारतीय समाज के इतिहास में महिलाओं की स्थिति व स्थान में परिवर्तन होता रहा है। वैदिक काल में नारी की स्थिति बहुत अच्छी थी। उन्हें पुरुषों के समान शिक्षा, राजनीति, धर्म, सम्पत्ति आदि में अधिकार प्राप्त थे। उत्तर वैदिक काल से स्त्रियों की स्थिति एवं अधिकार में पतन होना प्रारंभ हुआ और आगे चलकर उनकी स्थिति अत्यन्त ही निर्बल होती चली गई। 18वीं शताब्दीं एक बार पुन: महिलाओं के लिए सुखद स्थिति के शुरुआत का संदेश लेकर आई। अनेक समाज सुधारकों के नेतृत्व में महिलाओं के लिए प्रचलित कुप्रथाओं, रुढ़ियों व अंधविश्वासों के विरुद्ध प्रखर विरोध प्रारंभ हुआ और अंतत: इनके उन्मूलन हेतु तत्कालिन ब्रिटिश शासन ने अनेक कानून पारित किए। इस प्रकार धीरे–धीरे महिलाओं की स्थिति में बदलाव आने लगा। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् तो इनकी स्थिति में तेजी से परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। आज कोई भी ऐसा क्षेत्र एवं ऐसा कोई कार्य नहीं है, जहाँ इनकी सशक्त दस्तक नहीं हो। शिक्षा, चिकित्सा, राजनीति, पुलिस, सेना, यातायात, संचार, अभियांत्रिकी, कानून, परिवहन, रेलवे, एयर होस्टेज, पायलट, कैप्टन, प्रशासनिक अधिकारी। इस प्रकार इन सभी क्षेत्रों में महिलाओं की उपस्थिति इस बात का परिचायक है कि महिलाओं के लिए अब कोई भी कार्य क्षेत्र ऐसा नहीं है, जो उनके लिए दुष्कर हो।

भारत में वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या 121.05 करोड़ है। इनमें से 62.31 करोड़ पुरुष तथा 58.74 करोड़ स्त्रियाँ हैं। सन् 2011 में स्त्री और पुरुष अनुपात 943 था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय भारत में साक्षरता की दर 18.33 प्रतिशत थी। जिसमें महिला साक्षरता मात्र 8.86 प्रतिशत थी। वहीं 2011 में बढ़कर 74.04 हो गया, जिसमें महिलाओं का साक्षरता प्रतिशत 65.46 प्रतिशत हैं।

उपभोक्तावादी सांस्कृतिक दौर में एक ओर यदि महिला की स्थिति मजबूत हुई है, तो दूसरी और अनेक चुनौतियाँ भी उभरकर सामने आई हैं। वैदिक युग जो महिलाओं के लिए स्वर्णिम काल कहा जाता है। निश्चित तौर पर सभी अर्थो में वह स्वर्णिम युग था। सभी क्षेत्रों में महिलाओं को वो ही अधिकार एवं सम्मान प्राप्त था, जो पुरुषों को प्राप्त था। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सभी क्षेत्रों में कार्य करते हुए उसके समक्ष उसकी अस्मिता एवं स्थिति संतुलन से संबंधी गंभीर चुनौतियाँ नहीं थी। वर्तमान समय में महिलाएँ शिक्षा, संपत्ति एवं अर्थ प्राप्त कर अपनी प्रस्थिति मजबूत बना रही है किन्तु इसी प्रस्थिति परिवर्तन के फलस्वरुप कई गंभीर सामाजिक, पारिवारिक एवं उसकी अस्मिता से जुड़ी समस्याएँ भी उभर रही हैं। जो नीति–निर्माताओं, कानूनविद्रों, समाजशास्त्रियों एवं प्रशासकों के लिए चिन्ता का विषय है।

अंग्रेजों के आगमन के पूर्व भारत गाँव एवं कृषि प्रधान समाज था। 95 प्रतिशत भारतीयों की आजीविका का प्रमुख साधन कृषि एवं पशुपालन था। शेष 5 प्रतिशत भारतीय शिल्पकारी, दस्तकारी, छोटे–छोटे कुटिर उद्योगों एवं जाति आधारित व्यवसायों में संलग्न थे। अंग्रेजों ने भारत में उद्योगों की स्थापना की। बड़े–बड़े कल कारखानों में कार्य करने के लिए बड़ी संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता होती थी। यह जरुरत गाँवों में निवास करने वाले संयुक्त परिवारों के एक या दो सदस्य जाकर पूरी करने लगे। संयुक्त परिवारों से सदस्यों की पृथकता की यह प्रथम शुरुआत थी। संयुक्त परिवार लम्बे समय तक भारतीय सामाजिक संरचना की एक प्रमुख पहचान रहे हैं। कृषि एवं पशुपालन कार्य एक या दो व्यक्तियों के द्वारा नहीं किया जा सकता इसी जरुरत के कारण संयुक्त परिवारों का जन्म हुआ। धीरे–धीरे गाँव से शहर जाकर उद्योगों में कार्य करने वाले ये ग्रामीण कुछ समय पश्चात् गाँव से अपनी पत्नी व बच्चों को भी अपने साथ शहर ले आए। औद्योगिकरण व नगरीकरण का यह पहला दुष्प्रभाव भारतीय सामाजिक संरचना पर पड़ा जहाँ संयुक्त परिवार कमजोर होने लगे।

समय बीतते–बीतते एकल परिवारों की संख्या बढ़ने लगी। एकल परिवार में पत्नी की प्रस्थिति हर मामले में संयुक्त परिवार की तुलना में कहीं बेहतर होती है। उसे पहली बार समानता, स्वतन्त्रता व सम्मान का अनुभव होने लगा। आजादी के बाद विकास ने और रफ्तार पकड़ी व स्त्रियों के लिए भी आगे बढ़ने के समान अवसर उपलब्ध होने लगे। आज की भारतीय नारी 100 वर्ष पहले की महिला की स्थिति की तुलना में कहीं बेहतर स्थिति में है। शिक्षा प्राप्त कर आज वह लगभग हर क्षेत्र में कार्य कर रही है। 100 वर्ष पहले की स्त्री की तुलना यदि आज की नारी से करें तो वह हर मायने में उससे भिन्न दिखाई देगी। आज की महिला अपनी पुरानी परिधि से बाहर आकर विभिन्न भूमिकाओं में कार्य करते हुए देखी जा सकती है।

इसमें कोई दो मत नहीं है कि आज की स्त्री के समक्ष आगे बढ़ने के तमाम अवसर व द्वार खुले हुए हैं। आज की महिला को जो स्वतंत्रता, आर्थिक मजबूती, प्रतिष्ठा, निर्णय लेने एवं पसंद की स्वतंत्रता प्राप्त है वह 50 वर्ष पूर्व के समाज की महिला को नहीं थी। इन सबका एक चिंतनीय पहलु यह भी है कि महिला की इस नई भूमिका ने कई प्रकार की गंभीर पारिवारिक, सामाजिक व उनकी अस्मिता से लेकर समस्याओं व चुनौतियों को उत्पन्न किया है। जिनका भी उचित समाधान खोजे जाने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी है।

इनमें से कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियों के विषय में निम्नानुसार बिंदुवार प्रकाश ड़ाला गया है –

* * सह आचार्य (चित्रकला) सेठ मथुरा दास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत

1. **संयुक्त परिवारों का पतन** – उद्योगीकरण, नगरीकरण, व्यक्ति–वादिता, संकीर्ण मनोवृत्ति के साथ ही संयुक्त परिवारों की महिलाओं के लिए दमघोटू प्रकृति ने भारत की सदियों पुरानी संयुक्त परिवार नामक संस्था को तोड़ने में अहम भूमिका अदा की। संयुक्त परिवार बच्चों के लिए लालन–पालन, व्यक्तित्व विकास, शिक्षा, संस्कार, नैतिक मूल्य प्रदान करने व सामाजिकता का पाठ सिखाने की आदर्श पाठशाला हुआ करते थे। समूह के बीच रहते हुए अनुकुलन व समायोजन सिखते थे। संयुक्त परिवारों के पतन के साथ ही यह पक्ष व उसकी भूमिका समाप्त हो गई है। इससे नई समस्याएँ व चुनौतियाँ उभरी है।

2. **वृद्धाश्रमों व शरणगृहों की वृद्धि** – वृद्ध व बुजुर्ग व्यक्तियों के लिए संयुक्त परिवार सबसे बेहतरीन आसरा होते थे। संयुक्त परिवारों में रहते हुए उनकी देखभाल व पोते–पोतियों के बीच उनका ठीक प्रकार से समय भी व्यतीत होता था एवं बच्चे भी उनके जीवन भर के व्यावहारिक अनुभवों से सीख व शिक्षा प्राप्त करते थे। महिलाओं की नई भूमिका से आज वृद्ध सबसे अधिक उपेक्षित व दयनीय अवस्था में है तथा बच्चे जीवन जीने के सबसे महत्वपूर्ण अनुभवों व सीख से वंचित हो गए हैं।

3. **बच्चों की उचित परवरिश का संकट** – महिलाओं द्वारा घर से बाहर निकलकर विभिन्न कार्य क्षेत्रों में प्रवेश करते हुए नई भूमिका में आने से सबसे ज्यादा गंभीर समस्या व चुनौती परिवार के बच्चों व वृद्धों की उचित परवरिश व देखभाल की हुई है। यह स्थिति संयुक्त परिवारों की तुलना में एकल परिवारों में और भी विकट रुप से प्रकट हुई है। माँ बच्चों के लिए दुनिया की सबसे पहली शिक्षक व उनको गढ़ने वाली सबसे महत्वपूर्ण शिल्पी होती है। किन्तु घर से बाहर नई भूमिका में होने की वजह से वह अपने परिवार को समय देने की स्थिति में नहीं है। इसका सबसे बुरा प्रभाव बच्चों पर पड़ रहा है। उन्हें संस्कार देने वाला, सामाजिक नियत्रंण, संयम, आचरण व जीवन की शिक्षा देने वाला परिवार में अब कोई नहीं है। पिता तो आर्थिक उपार्जन की भूमिका की वजह से पहले ही बाहर था। महिलाओं द्वारा भी यह कार्य करने लग जाने की वजह से बच्चों के प्रति यह जिम्मेदारी निभाने वाला अब एकल परिवार में कोई नहीं है। समाज में बढ़ते हुए अपराधों के लिए आज सबसे बड़ा कारण भी यही है कि आज की युवा पीढ़ी के बच्चे काफी स्मार्ट, तेज तर्रार व होशियार होने के बाद भी संस्कार विहिन हैं, मूल्यविहिन हैं, दिशाहीन हैं, आचरण व व्यवहार कौशल में शून्य हैं। ईमानदारी, आज्ञापालन, सहनशीलता, दया, प्रेम, भातृत्व भाव एवं दूसरों को आदर व सम्मान प्रदान करने संबंधी गुणों से रिक्त हैं और यही कारण है कि संस्कार व नैतिक गुणों से विहिन यह युवा पीढ़ी किसी भी प्रकार के अपराध व दुराचरण करने से परहेज नहीं करती है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि महिलाओं के प्रति बढ़ रहे अपराधों के लिए स्वयं महिलाएँ ही जिम्मेदार हैं क्योंकि उन्होंने अपनी मूल भूमिका व बच्चों व परिवार के प्रति अपने पहले कर्त्तव्य को पद, पैसा, प्रतिष्ठा पाने में व पुरुष के बराबर समानता करने के छद्म अंहकार के कारण छोड़ दिया है। एक माँ जैसा बच्चे का निर्माण व परवरिश कर सकती है वह पालना घर, नन व दाईयाँ नहीं कर सकती। स्त्री परिवार की धुरी होती है। स्त्री के ईद–गिर्द ही बच्चे, वृद्ध व पति की भूमिकाएँ पूर्ण होती हैं व इनका अस्तित्व बना रहता है। आवश्यकता है, परिवार के सबसे महत्वपूर्ण सदस्य के बाहर आ जाने की वजह से परिवार में जो रिक्तता व असंतुलन पैदा हुआ है उसे पूरा कर, नए समाधान व उपाय खोजकर इस संक्रमण काल से उचित तरीके से बाहर आया जा सकें।

4. **विवाह विच्छेद की संख्या में तेजी से वृद्धि** – एकल परिवारों के अस्तित्व में आने के बाद विवाह विच्छेद की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। पत्नी के घर से बाहर निकलकर विभिन्न व्यवसायों में संलग्न होने से घर का संतुलन बुरी तरह प्रभावित हुआ है। परिवार के लिए पति व पत्नी के पास आज समय नहीं है। महिलाओं की महत्वकांक्षा व व्यक्तिवादिता में इतनी वृद्धि हुई है कि अब एकल परिवार में भी वह अनुकुलन व समायोजन नहीं कर पा रही है।

5. **चेन स्नेचिंग** – महिलाओं का कार्य के लिए बाहर जाने के कारण उनके साथ चेन स्नेचिंग के रुप में एक नए प्रकार के अपराध ने जन्म लिया है। धन के लूटने के साथ उसके जीवन के लिए भी यह कभी–कभी संकट पैदा कर रहा है।

6. **यौन दुराचरण** – कार्य स्थल व कार्य के लिए घर से बाहर निकलने पर उसके साथ यौन दुराचरण की घटनाओं में अत्यधिक वृद्धि दर्ज हुई है।

7. **बलात्कार की घटनाओं में वृद्धि** – लड़कियों के शिक्षा प्राप्त करने हेतु घर से बाहर जाने के दौरान व महिलाओं के लिए कार्य हेतु बाहर निकलने पर उनके साथ बलात्कार का अत्यन्त अमानवीय कुकृत्य एक गंभीर समस्या के रुप में प्रकट हुआ है। घर से बाहर निकलने के बाद महिलाएँ व लड़कियाँ आज अपनी अस्मिता के प्रति सुरक्षित नहीं है।

8. **युवा पीढ़ी में संस्कारों व मूल्यों का अभाव** – माँ द्वारा पूरा दिन कार्यक्षेत्र पर बिताने के कारण उससे मिलने वाले अपनत्व, उचित लालन–पालन, शिक्षा व संस्कार से आज के बच्चे पूरी तरह वंचित हो गए हैं। माँ का प्रथम शिक्षक होने वाली अवधारणा अब समाप्त होती जा रही है। यदि कहा जाए कि आज महिलाओं का नई भूमिका में आना व पुरानी भूमिका को भूल जाना ही समस्त प्रकार के अपराध व समस्याओं के लिए जिम्मेदार है तो यह अतिरेक नहीं होगा।

9. **पारिवारिक सांमजस्य व व्यवस्था संतुलन का संकट** – पुरुष के साथ ही महिला का भी अब पद, प्रतिष्ठा, स्टेट्स सिंबल, स्वतंत्रता, अर्थोपार्जन के लिए घर से बाहर निकल जाने के कारण सबसे बुरी तरह कोई प्रभावित हुआ है, तो वह परिवार है। परिवार नामक संस्था जो सुकुन, सहारा, सहानुभूति व संवेदना प्रदान करने वाली होती थी वह आज विरान व सुनसान हो गई है। कार्य के लिए पति व पत्नी दोनों का बाहर निकल जाने के कारण पारिवारिक सामंजस्य व व्यवस्था संतुलन का सबसे विकट संकट पैदा हो गया है।

10. **धन व समय का अपव्यय** – पुरुष के लिए यह कहा जाता था कि एक पुरुष के अर्थोपार्जन से परिवार के 5 सदस्य आसानी से पलते थे व उनकी आवश्यकता की पूर्ति होती थी किंतु आज पति के साथ महिलाओ के अर्थोपार्जन करने के पश्चात् भी परिवार में चार लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति भी सहज नहीं हो पा रही है। शायद इसका एक बड़ा कारण महिलाओं के द्वारा अपनी आय का एक बड़ा हिस्सा महँगे व आवश्यकता से अधिक परिधानों का क्रय करना, ब्यूटी पार्लर, फैशन, आधुनिक गाड़ियाँ, विलासिता पूर्ण जीवन, सुविधा एवं ऐष्वर्यभोगी महँगे साधन, महँगे एंड्राइड फोन का उपभोग करना है।

11. **लीव इन रिलेशनशिप से परिवार नामक संस्था के विलुप्त होने का संकट** – महिलाओं के नई भूमिका में आने की वजह से अब परिवार नामक संस्था के अस्तित्व पर एक बहुत बड़ा संकट उत्पन्न हो गया है। लड़के व लड़की दोनों के द्वारा 8–8 घंटें या 12–12 घंटें ऑफिस या घर से बाहर

कार्य करने की वजह से अब घर की जवाबदारी कोई नहीं उठाना चाहता है। इसी कारण विवाह के बंधन में भी वे बंधना नहीं चाहते हैं, बच्चों को जन्म देना, उनकी परवरिश, देखरेख की जवाबदेही भी अब लेना नहीं चाहते हैं इसी कारण वे विवाह नहीं करते हुए लिव इन रिलेशनशिप में रह रहे हैं। यह स्थिति धीरे–धीरे परिवार नामक संस्था को ही विलुप्त कर देगी जो समाज व देश के लिए एक भयावह स्थिति निर्मित करेगी।

12. एसिड अटैक – महिलाओं के घर से बाहर निकलकर सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करने के पश्चात् उनके ऊपर एसिड अटैक की एक अत्यन्त विभत्स समस्या व चुनौती हमारे समक्ष उभरी है। समाज के विकृत मानसिकता वाले दानवों के द्वारा महिलाओं के साथ किए जाने वाले इस कुकृत्य ने प्रशासकों, पुलिस व न्यायाधीशों के लिए इस चुनौती से पार पाने हेतु गंभीर नीति व क्रियान्वयन हेतु सोचने को विवश कर दिया है।

समाधान – सदियों तक महिला ने घर में रहकर परिवार को संजाने, संवारने व बिखरने से रोके रखा था। घर में उसका किरदार सबसे महत्व का होता था। घर में उसके द्वारा दी जाने वाली सेवाओं का आकलन इसी बात से किया जा सकता है कि बच्चें, वृद्ध एवं पति की समय पर सभी आवश्यकताओं को वह बहुत ही कुशलतापूर्वक व गुणवत्तायुक्त तरीके से पूरी करती थी। उसके समर्पण, सेवा, त्याग, ममता व अपनत्व से ही सभी के व्यक्तित्व का उचित विकास होता था एवं देखभाल होती थी। किंतु पुरुष के अंहकार ने कभी उसकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण सेवा को सम्मान नहीं प्रदान किया। उसके व्यक्तित्व को पुरुष प्रधान समाज पूरी तरह से निगल गया। पर्दे के पीछे सारी जिम्मेदारियों का वहन करने वाली नारी को मानवोचित सम्मान व गरिमा भी प्राप्त नहीं हो पाई। समाज का संतुलित विकास हो एवं स्त्री को भी उसका अधिकार, सम्मान व स्वतंत्रता प्राप्त हो सके इस हेतु कुछ उपाय एवं समाधान यहाँ पर प्रस्तुत किए जा रहे है –

1. महिला को भी उसकी योग्यतानुसार बाहर कार्य करने के अवसर प्राप्त हों किंतु शासन को यह प्रावधान करना चाहिए कि उसके कार्य की समयावधि 4 घंटे से अधिक ना हो एवं उनकी पदस्थापना उनके गृह निवास या उनके निकटतम स्थान पर हो।
2. बच्चे छोटे होने की स्थिति में उनकी उचित परवरिश हेतु महिला को कम से कम 5 वर्ष का अवैतनिक अवकाश बिना उसकी वरिष्ठता व सेवा ब्रेक किए मिलना चाहिए। जिससे वह उचित तरीके से संतान को संस्कारवान बना सके।
3. महिलाओं के साथ अश्लील अपराध, बलात्कार व चेन स्नेचिंग करने वालो के लिए अरब देशों मे प्रचलित मध्यकालीन कानून व दण्ड व्यवस्था का प्रावधान किया जाए।
4. महिलाएँ घर से बाहर निकलने पर अपने चेहरे व शरीर को पूरी तरह आवरणयुक्त कर बाहर निकलेगी तो संभवत वे एसिड अटैक, अश्लील दुराचरण व यौन अपराधों से अपने आप को सुरक्षित रख पाएँगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Kapadia, K.M. 1958. "Marriage & Family in India". London: Oxford university Press.
2. Baghel, D.S. 1990. "Demography". Delhi: Vivek Prakashan.
3. Ahauja, Ram. 1982. "Indian Social System". Jaipur: Rawat Publications.
4. Shrivastav, A.P. 2004. "Social Change & Problems in India". Jaipur: Divya Prakashan.
5. सिंह, रश्मि 2012 ' स्त्री शक्ति – महिला सशक्तिकरण', योजना, नई दिल्ली।
6. मिश्र, अनिल कुमार 2010 ' महिला सशक्तिकरण– दिशा और दिशाए', (एड.) डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव, नई सहस्त्राब्दी का महिला सशक्तिकरण, अवधारण चिन्तन एवं सरोकार, भाग 3, दिल्ली: ओमेगा पब्लिकेशन्स।
7. भारतीय, ओमप्रकाश 2010 'वृद्ध महिलाओं की सामाजिक समस्याएँ', वाराणसी: कला प्रकाशन।
8. अग्रवाल, उमेशचंद्र ' बढ़ते बुजुर्ग, घटती सुरक्षा', वर्ष 55, अंक 12, अक्टुबर 2009

****

शारीरिक शिक्षा के स्तर के प्रति शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की अभिवृति

थान सिंह चौधरी*

शोध सारांश – शारीरिक शिक्षा छात्रों के समग्र विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिसमें शारीरिक फिटनेस, मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक कौशल का विकास शामिल है। इसके बावजूद, इसकी मान्यता के बावजूद विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा का स्तर अक्सर शैक्षणिक विषयों की तुलना में कम महत्व का बना रहता है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य शारीरिक शिक्षा के स्तर के प्रति शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की अभिवृति का अन्वेषण करना है। यह अध्ययन गुणात्मक अनुसंधान रूपरेखा पर आधारित है, जिसमें 10 शारीरिक शिक्षा शिक्षकों के साथ संरचित साक्षात्कार विधि का उपयोग किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष दर्शाते हैं कि शिक्षक सामान्यत: शारीरिक शिक्षा के महत्व के प्रति सकारात्मक अभिवृति रखते हैं, किंतु वे इसके निम्न स्तर, अपर्याप्त आधारभूत संरचना, प्रशासनिक सहयोग की कमी तथा सामाजिक उपेक्षा के प्रति चिंता व्यक्त करते हैं। यह अध्ययन शारीरिक शिक्षा के स्तर को उन्नत करने के लिए नीतिगत सुधार, जागरूकता और संस्थागत सहयोग की आवश्यकता पर बल देता है।

प्रस्तावना – शिक्षा एक समग्र प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक एवं सामाजिक आयामों का विकास करना है। शारीरिक शिक्षा, शिक्षा का एक अभिन्न अंग होने के नाते, विद्यार्थियों के समग्र विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती है। यह न केवल शारीरिक फिटनेस को बढ़ावा देती है, बल्कि अनुशासन, टीमवर्क, नेतृत्व तथा भावनात्मक स्थिरता का भी विकास करती है। शोधों ने निरंतर यह स्पष्ट किया है कि शारीरिक शिक्षा शारीरिक विकास के साथ–साथ शैक्षणिक सफलता में भी योगदान देती है।

इसके महत्व के बावजूद, विद्यालयी पाठ्यक्रम में शारीरिक शिक्षा को अक्सर एक द्वितीयक विषय के रूप में देखा जाता है। गणित, विज्ञान एवं भाषा जैसे शैक्षणिक विषयों को अधिक महत्व दिया जाता है, जबकि शारीरिक शिक्षा की उपेक्षा की जाती है। यह असमानता विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों की धारणा और उनके प्रभावी क्रियान्वयन को प्रभावित करती है।

शिक्षक शारीरिक शिक्षा की गुणवत्ता और प्रभावशीलता को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनकी अभिवृति शिक्षण प्रक्रियाओं, विद्यार्थियों की प्रेरणा तथा विषय की समग्र धारणा को प्रभावित करता है। अभिवृति, जिसे किसी वस्तु या परिस्थिति के प्रति सकारात्मक या नकारात्मक प्रतिक्रिया की प्रवृत्ति के रूप में परिभाषित किया जाता है, व्यावसायिक व्यवहार और कार्य निष्पादन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है।

अत: शारीरिक शिक्षा के स्तर के प्रति शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की अभिवृति को समझना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। प्रस्तुत अध्ययन इन दृष्टिकोणों का अन्वेषण करने तथा शारीरिक शिक्षा के प्रसार में शिक्षकों द्वारा सामना की जाने वाली चुनौतियों की पहचान करने का प्रयास करता है।

साहित्य समीक्षा

अभिवृति (Attitude) की अवधारणा का अध्ययन शैक्षिक मनोविज्ञान में व्यापक रूप से किया गया है। IAjzen एवं Fishbein (1980) के अनुसार, अभिवृति व्यक्ति के व्यवहार एवं निर्णय लेने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। शारीरिक शिक्षा के संदर्भ में, शिक्षकों की अभिवृति शिक्षण एवं अधिगम की प्रभावशीलता निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि शिक्षकों की अभिवृति कक्षा–शिक्षण प्रक्रियाओं तथा विद्यार्थियों के शैक्षणिक परिणामों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए, शोध यह दर्शाते हैं कि शिक्षकों की मान्यताएँ एवं अभिवृति शिक्षण प्रक्रियाओं के केंद्र में होते हैं तथा वे विद्यार्थियों के अधिगम अनुभवों को प्रभावित करते हैं। जब शिक्षक शारीरिक शिक्षा के प्रति सकारात्मक अभिवृति रखते हैं, तो वे विद्यार्थियों को अधिक सक्रिय रूप से शामिल करते हैं तथा एक सकारात्मक अधिगम वातावरण का निर्माण करते हैं।

Silverman एवं Subramaniam (1999) ने शारीरिक शिक्षा में अभिवृति के महत्व को रेखांकित करते हुए बताया कि शिक्षकों एवं विद्यार्थियों दोनों के अभिवृति सहभागिता तथा अधिगम परिणामों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार, Hodge एवं Jansma (2000) ने पाया कि शारीरिक शिक्षा शिक्षकों का अपने पेशे एवं विद्यार्थियों के प्रति अभिवृति उनकी शिक्षण प्रभावशीलता एवं पेशेवर प्रतिबद्धता को प्रभावित करता है।

अनुसंधानों से यह भी स्पष्ट होता है कि शैक्षिक प्रणाली में शारीरिक शिक्षा को अक्सर अपेक्षित महत्व नहीं दिया जाता है। Luke एवं Sinclair (1991) के अनुसार, शारीरिक शिक्षा का स्तर संस्थागत प्राथमिकताओं, पाठ्यक्रम संरचना तथा सामाजिक धारणाओं से प्रभावित होता है। शिक्षकों को प्राय: सुविधाओं की कमी, समय के अपर्याप्त आवंटन तथा सीमित मान्यता जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

समग्र रूप से, साहित्य यह संकेत करता है कि यद्यपि शारीरिक शिक्षा विद्यार्थियों के विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है, फिर भी इसका स्तर निम्न बना हुआ है तथा शिक्षकों की अभिवृति विभिन्न संस्थागत एवं सामाजिक कारकों से प्रभावित होता है।

* शारीरिक शिक्षक, माणिक्य लाल वर्मा टेक्सटाइल एंड इंजीनियरिंग कॉलेज, भीलवाडा (राज.) भारत

शोध अध्ययन के निम्नांकित उद्देश्य है :

1. शारीरिक शिक्षा के स्तर के प्रति शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की अभिवृति का अध्ययन करना।
2. शिक्षकों की अभिवृति को प्रभावित करने वाले कारकों की पहचान करना।
3. शारीरिक शिक्षा शिक्षकों द्वारा सामना की जाने वाली चुनौतियों का अन्वेषण करना।
4. शारीरिक शिक्षा के स्तर में सुधार हेतु उपाय सुझाना।

कार्यप्रणाली

अनुसंधान रूपरेखा – प्रस्तुत अध्ययन में शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की अभिवृति का गहन अध्ययन करने के लिए गुणात्मक अनुसंधान रूपरेखा को अपनाया गया है।

नमूना – इस अध्ययन में 10 शारीरिक शिक्षा शिक्षकों को उद्देश्यपूर्ण नमूना चयन विधि के माध्यम से चुना गया। ये शिक्षक विभिन्न विद्यालयों से संबंधित हैं तथा उनके शिक्षण अनुभव के वर्ष भिन्न-भिन्न हैं।

उपकरण – प्रतिभागियों से आंकड़े एकत्रित करने के लिए एक संरचित साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण किया गया। साक्षात्कार में निम्नलिखित विषयों से संबंधित प्रश्न शामिल थे:

1. शारीरिक शिक्षा के महत्व के प्रति धारणा
2. विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा का स्तर
3. संस्थागत सहयोग एवं उपलब्ध सुविधाएँ
4. शिक्षण के दौरान आने वाली चुनौतियाँ
5. सुधार के लिए सुझाव

प्रक्रिया – प्रत्येक शिक्षक के साथ व्यक्तिगत रूप से साक्षात्कार किया गया। उनके उत्तारों को अभिलेखित किया गया तथा सामान्य विषयों एवं प्रतिरूपों की पहचान हेतु गुणात्मक विश्लेषण किया गया।

विश्लेषण से निम्नांकित परिणाम प्राप्त हुए – संरचित साक्षात्कारों के विश्लेषण से शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की अभिवृति से संबंधित कई महत्वपूर्ण विषय उभरकर सामने आए। इन विषयों से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षकों की सोच बहुआयामी है, जिसमें सकारात्मकता के साथ-साथ कई व्यावहारिक चुनौतियाँ भी सम्मिलित हैं।

1. शारीरिक शिक्षा के महत्व के प्रति सकारात्मक अभिवृति – अधिकांश शिक्षकों ने शारीरिक शिक्षा के महत्व के प्रति दृढ़ विश्वास व्यक्त किया। उन्होंने यह स्पष्ट रूप से बताया कि शारीरिक शिक्षा विद्यार्थियों के शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक संतुलन तथा समग्र व्यक्तित्व विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। शिक्षकों का मानना है कि नियमित शारीरिक गतिविधियाँ छात्रों को स्वस्थ, सक्रिय और अनुशासित बनाती हैं। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों ने यह भी स्वीकार किया कि शारीरिक शिक्षा छात्रों में आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता, सहयोग की भावना तथा सामाजिक समायोजन जैसी महत्वपूर्ण जीवन-कौशलों का विकास करती है। उनका यह भी मानना था कि खेल और शारीरिक गतिविधियाँ छात्रों में सकारात्मक प्रतिस्पर्धा की भावना विकसित करती हैं, जो उनके भविष्य के लिए उपयोगी होती है। शिक्षकों ने यह भी उल्लेख किया कि शारीरिक गतिविधियाँ तनाव को कम करने, ध्यान एवं एकाग्रता बढ़ाने तथा शैक्षणिक प्रदर्शन को बेहतर बनाने में सहायक होती हैं। विशेष रूप से आज के प्रतिस्पर्धात्मक एवं तनावपूर्ण शैक्षणिक वातावरण में, शारीरिक शिक्षा छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य को संतुलित बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह निष्कर्ष पूर्ववर्ती शोधों के अनुरूप है, जिनमें यह दर्शाया गया है कि शारीरिक शिक्षा छात्रों के शारीरिक एवं संज्ञानात्मक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

2. शारीरिक शिक्षा के निम्न स्तर की धारणा – हालाँकि शिक्षक शारीरिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हैं, फिर भी उन्होंने यह अनुभव किया कि विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा का स्तर अपेक्षाकृत निम्न है। इसे अक्सर एक गैर-आवश्यक या सहायक विषय के रूप में देखा जाता है और इसे शैक्षणिक विषयों की तुलना में कम प्राथमिकता दी जाती है। शिक्षकों ने बताया कि कई बार शारीरिक शिक्षा की कक्षाओं का उपयोग अन्य शैक्षणिक विषयों को पढ़ाने के लिए कर लिया जाता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि विद्यालय प्रशासन इसे प्राथमिकता नहीं देता। इस प्रकार की स्थिति शारीरिक शिक्षा के प्रति उपेक्षापूर्ण अभिवृति को दर्शाती है। इस निम्न स्तर की धारणा का प्रभाव न केवल शिक्षकों के मनोबल पर पड़ता है, बल्कि छात्रों की रुचि और भागीदारी पर भी नकारात्मक प्रभाव डालता है। जब किसी विषय को संस्थागत स्तर पर महत्व नहीं दिया जाता, तो छात्र भी उसे गंभीरता से नहीं लेते। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों ने यह भी बताया कि परीक्षाओं में शारीरिक शिक्षा का कम या न के बराबर महत्व होने के कारण छात्र और अभिभावक दोनों ही इसे कम प्राथमिकता देते हैं। यह प्रवृत्ति शारीरिक शिक्षा की स्थिति को और अधिक कमजोर बनाती है।

3. आधारभूत संरचना एवं सुविधाओं की कमी – शिक्षकों द्वारा व्यक्त की गई प्रमुख समस्याओं में से एक पर्याप्त आधारभूत संरचना एवं सुविधाओं का अभाव था। अनेक विद्यालयों में उचित खेल मैदान, खेल सामग्री, उपकरण तथा इनडोर सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं, जिससे शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन संभव नहीं हो पाता। शिक्षकों ने यह भी बताया कि सीमित संसाधनों के कारण वे विभिन्न प्रकार की खेल गतिविधियों का आयोजन नहीं कर पाते, जिससे छात्रों की रुचि और सहभागिता प्रभावित होती है। संसाधनों की कमी के कारण शिक्षण प्रक्रिया एकरूप हो जाती है, जिससे छात्रों में उत्साह की कमी देखने को मिलती है। इसके अतिरिक्त, कुछ शिक्षकों ने यह भी उल्लेख किया कि विद्यालयों में उपलब्ध सुविधाएँ अक्सर पुरानी या अनुपयोगी होती हैं, जिनका नियमित रखरखाव नहीं किया जाता। इससे न केवल शिक्षण प्रभावित होता है, बल्कि छात्रों की सुरक्षा भी जोखिम में पड़ सकती है। शिक्षकों का यह भी मानना था कि यदि विद्यालयों में आधुनिक खेल सुविधाएँ, प्रशिक्षित स्टाफ तथा पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराए जाएँ, तो शारीरिक शिक्षा की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार किया जा सकता है।

4. प्रशासनिक सहयोग का अभाव – शिक्षकों ने विद्यालय प्रशासन से अपेक्षित सहयोग की कमी को एक महत्वपूर्ण समस्या के रूप में व्यक्त किया। उनका मानना था कि शारीरिक शिक्षा को विद्यालय के निर्णय-निर्माण प्रक्रियाओं में पर्याप्त स्थान नहीं दिया जाता, जिसके कारण इस विषय को उचित मान्यता नहीं मिल पाती। कई शिक्षकों ने यह अनुभव किया कि शारीरिक शिक्षा से संबंधित नीतियाँ, कार्यक्रम और योजनाएँ बनाते समय उनकी राय को महत्व नहीं दिया जाता। प्रशासनिक उपेक्षा के परिणामस्वरूप शारीरिक शिक्षा के लिए पर्याप्त बजट का अभाव बना रहता है। इससे खेल सामग्री, उपकरणों तथा अन्य आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता प्रभावित होती है। इसके साथ ही, समय-सारणी में शारीरिक शिक्षा को सीमित समय आवंटित किया जाता है, जिससे शिक्षण कार्य प्रभावी ढंग से नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों ने यह भी बताया कि उनके लिए प्रशिक्षण, कार्यशालाओं एवं व्यावसायिक विकास के अवसर बहुत कम उपलब्ध होते

हैं। इससे उनके ज्ञान एवं कौशल का अद्यतन नहीं हो पाता, जो आधुनिक शारीरिक शिक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने में बाधा उत्पन्न करता है। इस प्रकार, प्रशासनिक स्तर पर सहयोग की कमी शारीरिक शिक्षा के विकास में एक प्रमुख अवरोध के रूप में सामने आती है, जो न केवल शिक्षकों के कार्य को प्रभावित करती है, बल्कि छात्रों के समग्र विकास को भी सीमित करती है।

5. सामाजिक अभिवृति एवं धारणाएँ – शिक्षकों की अभिवृति को प्रभावित करने वाला एक अन्य महत्वपूर्ण कारक सामाजिक धारणा है। सामान्यत: अभिभावक और समाज शारीरिक शिक्षा को अपेक्षाकृत कम महत्व देते हैं तथा शैक्षणिक उपलब्धियों को अधिक प्राथमिकता प्रदान करते हैं। इस कारण शारीरिक शिक्षा को केवल एक सहायक या मनोरंजक गतिविधि के रूप में देखा जाता है, न कि एक आवश्यक शैक्षणिक घटक के रूप में। शिक्षकों ने यह व्यक्त किया कि इस प्रकार की सामाजिक सोच का सीधा प्रभाव विद्यार्थियों की भागीदारी और रुचि पर पड़ता है। जब अभिभावक स्वयं शारीरिक शिक्षा को महत्व नहीं देते, तो छात्र भी खेल–कूद और शारीरिक गतिविधियों में कम रुचि लेते हैं। इसके अतिरिक्त, कुछ शिक्षकों ने यह भी बताया कि परीक्षा–केन्द्रित शिक्षा प्रणाली ने इस समस्या को और बढ़ा दिया है, जहाँ केवल अंक और परिणामों को ही सफलता का मापदंड माना जाता है। इस कारण शारीरिक शिक्षा जैसी गतिविधियाँ, जो समग्र विकास के लिए आवश्यक हैं, पीछे छूट जाती हैं। समाज में जागरूकता की कमी के कारण शारीरिक शिक्षा के दीर्घकालिक लाभों को समझा नहीं जाता, जिससे इसकी उपेक्षा होती है। अत: सामाजिक स्तर पर अभिवृति में परिवर्तन लाना अत्यंत आवश्यक है।

6. व्यावसायिक चुनौतियाँ – शारीरिक शिक्षा शिक्षकों ने अपने पेशे से संबंधित कई चुनौतियों की पहचान की, जो उनके कार्य निष्पादन एवं संतुष्टि को प्रभावित करती हैं। प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैंरू

1. अत्यधिक कार्यभार
2. मान्यता का अभाव
3. सीमित पदोन्नति के अवसर
4. अपर्याप्त प्रशिक्षण एवं विकास कार्यक्रम

शिक्षकों ने बताया कि उन्हें अक्सर अतिरिक्त कार्यों में भी संलग्न किया जाता है, जिससे उनके मुख्य शिक्षण कार्य पर प्रभाव पड़ता है। इसके साथ ही, उनके कार्य को अन्य विषयों की तुलना में कम महत्व दिया जाता है, जिससे उन्हें अपेक्षित सम्मान और पहचान नहीं मिल पाती। सीमित कैरियर उन्नति के अवसर भी एक प्रमुख समस्या है, जिससे शिक्षकों में निराशा उत्पन्न होती है। कई शिक्षकों ने यह महसूस किया कि उनके पेशे में प्रगति के अवसर सीमित हैं, जिससे उनकी प्रेरणा में कमी आती है। इसके अतिरिक्त, प्रशिक्षण एवं कौशल विकास के पर्याप्त अवसरों का अभाव भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है। आधुनिक शिक्षण विधियों और नई तकनीकों के अभाव में शिक्षक अपने शिक्षण को अधिक प्रभावी नहीं बना पाते। ये सभी चुनौतियाँ मिलकर शिक्षकों में असंतोष एवं निराशा उत्पन्न करती हैं, जो उनके कार्य प्रदर्शन एवं पेशेवर संतुष्टि को प्रभावित करती हैं।

7. नीतिगत एवं पाठ्यक्रमीय सुधार की आवश्यकता – शिक्षकों ने शारीरिक शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए नीतिगत स्तर पर व्यापक बदलावों की आवश्यकता पर बल दिया। उनका सुझाव था कि शारीरिक शिक्षा को विद्यालयी पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य एवं मूल्यांकन आधारित विषय के रूप में शामिल किया जाना चाहिए, जिससे इसे अन्य विषयों के समान महत्व मिल सके। शिक्षकों का यह भी मानना था कि शारीरिक शिक्षा को केवल खेल–कूद तक सीमित न रखकर इसे स्वास्थ्य शिक्षा, योग, फिटनेस और जीवन–कौशल से जोड़कर एक समग्र रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, उन्होंने यह सुझाव दिया कि शारीरिक शिक्षा को मुख्य पाठ्यक्रम के साथ एकीकृत किया जाए, ताकि यह शिक्षा प्रणाली का अभिन्न हिस्सा बन सके। समय–सारणी में इसे पर्याप्त समय दिया जाए तथा इसके लिए आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था की जाए। नीतिगत सुधारों के साथ–साथ, शिक्षकों के प्रशिक्षण, संसाधनों की उपलब्धता और प्रशासनिक सहयोग को भी सुदृढ़ किया जाना चाहिए। यदि इन पहलुओं पर समुचित ध्यान दिया जाए, तो शारीरिक शिक्षा के स्तर में उल्लेखनीय सुधार संभव है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि शारीरिक शिक्षा शिक्षक अपने विषय के प्रति सामान्यत: सकारात्मक अभिवृति रखते हैं तथा वे विद्यार्थियों के समग्र विकास में इसके महत्व को भली–भाँति समझते हैं। उनके अनुसार शारीरिक शिक्षा न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करती है, बल्कि मानसिक संतुलन, भावनात्मक स्थिरता एवं सामाजिक कौशलों के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। हालाँकि, इसके बावजूद शिक्षकों ने यह अनुभव किया कि विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा का स्तर अपेक्षाकृत निम्न बना हुआ है। इस निम्न स्थिति के पीछे प्रमुख कारण संस्थागत उपेक्षा, अपर्याप्त आधारभूत संरचना, तथा समाज में इसके प्रति कम महत्व दिया जाना है। इन कारकों के कारण शारीरिक शिक्षा को वह स्थान नहीं मिल पाता, जिसका वह वास्तविक रूप से हकदार है। सुविधाओं की कमी, प्रशासनिक सहयोग का अभाव तथा सामाजिक स्तर पर शारीरिक शिक्षा का अवमूल्यन इसके प्रभावी क्रियान्वयन में प्रमुख बाधाएँ हैं। ये समस्याएँ न केवल शिक्षकों की अभिवृति और मनोबल को प्रभावित करती हैं, बल्कि विद्यार्थियों की भागीदारी, रुचि एवं प्रेरणा पर भी नकारात्मक प्रभाव डालती हैं। जब किसी विषय को संस्थागत एवं सामाजिक स्तर पर महत्व नहीं दिया जाता, तो उसका प्रभाव शिक्षण–प्रक्रिया और अधिगम परिणामों पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अत: शारीरिक शिक्षा के स्तर को उन्नत करने के लिए इन चुनौतियों का समाधान अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए नीतिगत सुधार, बेहतर आधारभूत संरचना, पर्याप्त संसाधनों की उपलब्धता तथा सभी हितधारकों (शिक्षक, अभिभावक, प्रशासन एवं समाज) के बीच जागरूकता बढ़ाना आवश्यक है। यदि शारीरिक शिक्षा को शिक्षा का अभिन्न एवं अनिवार्य अंग मानते हुए समान महत्व दिया जाए, तो यह विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के साथ–साथ समाज के समग्र कल्याण में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

सुझाव :

1. शारीरिक शिक्षा को अनिवार्य विषय बनाया जाए – विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा को अन्य शैक्षणिक विषयों के समान अनिवार्य किया जाना चाहिए तथा इसे मूल्यांकन प्रणाली में शामिल किया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों और अभिभावकों के बीच इसकी महत्ता बढ़े।

2. उचित आधारभूत संरचना एवं सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ – प्रत्येक विद्यालय में पर्याप्त खेल मैदान, खेल सामग्री, उपकरण एवं सुरक्षित वातावरण सुनिश्चित किया जाना चाहिए, ताकि शारीरिक शिक्षा का प्रभावी क्रियान्वयन संभव हो सके।

3. शिक्षकों को प्रशिक्षण एवं व्यावसायिक विकास के अवसर प्रदान किए जाएँ – शारीरिक शिक्षा शिक्षकों के लिए नियमित प्रशिक्षण,

कार्यशालाएँ एवं उन्नयन कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए, जिससे वे नवीन शिक्षण विधियों एवं तकनीकों से परिचित हो सकें और अपनी कार्यक्षमता में सुधार कर सकें।

4. जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ – अभिभावकों, विद्यार्थियों एवं समाज के अन्य वर्गों के बीच शारीरिक शिक्षा के महत्व को समझाने के लिए जागरूकता अभियान एवं कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए, ताकि इसके प्रति सकारात्मक अभिवृति विकसित हो सके।

5. पाठ्यक्रम में समान महत्व दिया जाए – शारीरिक शिक्षा को विद्यालयी पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाते हुए इसे अन्य विषयों के समान महत्व दिया जाना चाहिए। साथ ही, इसे स्वास्थ्य शिक्षा, योग एवं जीवन–कौशलों के साथ एकीकृत किया जाना चाहिए, ताकि विद्यार्थियों का समग्र विकास सुनिश्चित हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1. Ajzen, I., & Fishbein, M. (1980). *Understanding attitudes and predicting social behavior*. Prentice Hall.
2. Hodge, S. R., & Jansma, P. (2000). Physical education majors' attitudes toward teaching students with disabilities. *Adapted Physical Activity Quarterly, 23*(3), 211–224.
3. Luke, M. D., & Sinclair, G. D. (1991). Gender differences in adolescents' attitudes toward school physical education. *Journal of Teaching in Physical Education, 11*(1), 31–46.
4. Silverman, S., & Subramaniam, P. R. (1999). Student attitude toward physical education and physical activity: A review of measurement issues and outcomes. *Journal of Teaching in Physical Education, 19*(1), 97–125.
5. Subramaniam, P. R., & Silverman, S. (2000). Validation of scores from an instrument assessing student attitude toward physical education. *Measurement in Physical Education and Exercise Science, 4*(1), 29–43.
6. Pethkar, V., Naik, S., & Sonawane, S. (2012). Relationship between students' and teachers' attitude towards physical activity and physical fitness. *Journal of Physical Education and Sport, 12*(3), 385–390.
7. Starc, G., & Strel, J. (2012). Influence of the quality implementation of a physical education curriculum on physical development and physical fitness of children. *BMC Public Health, 12*, 61.

****

गांधीवादी विचारधारा और 'रंगभूमि' की मूल संवेदना अंतर्संबंध, अंतर्विरोध और रचनात्मक स्वायत्तता

डॉ. मुकेश कुमार*

शोध सारांश – 'रंगभूमि' हिंदी उपन्यास की ऐसी महत्वपूर्ण कृति है, जिसमें औपनिवेशिक भारत के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अंतर्विरोधों का व्यापक चित्र उपस्थित होता है। उपन्यास का केंद्रीय पात्र सूरदास सत्य, अहिंसा, त्याग, करुणा और अन्याय के प्रतिरोध जैसी प्रवृत्तियों के कारण गांधीवादी विचारधारा से निकट दिखाई देता है। किंतु केवल इन समानताओं के आधार पर सूरदास को गांधीवाद का प्रत्यक्ष प्रतिनिधि मान लेना 'रंगभूमि' की जटिल रचना–दृष्टि को सीमित कर देना होगा। उपन्यास में गांधीवादी नैतिकता के साथ–साथ औद्योगीकरण, पूँजीवाद, औपनिवेशिक सत्ता, ग्राम्य जीवन, मानवीय दुर्बलता और सामाजिक विषमता के प्रश्न भी समान रूप से उपस्थित हैं।

प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य 'रंगभूमि' की मूल संवेदना को गांधीवादी विचारधारा के संदर्भ में समझना है। इसमें यह देखने का प्रयास किया गया है कि गांधीवादी जीवन–दृष्टि प्रेमचंद की रचना को किस सीमा तक प्रभावित करती है और कहाँ से प्रेमचंद की स्वतंत्र रचनात्मक दृष्टि उस विचारधारा का अतिक्रमण करने लगती है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि 'रंगभूमि' न तो गांधीवाद का सरल आख्यान है और न उसका प्रतिपक्षय वह गांधीवादी नैतिक मूल्यों, सामाजिक यथार्थ और लेखक की स्वतंत्र रचना–दृष्टि के बीच सक्रिय संवाद का उपन्यास है।

शब्द कुंजी – प्रेमचंद, रंगभूमि, सूरदास, गांधीवाद, सत्याग्रह, अहिंसा, औद्योगीकरण, पूँजीवाद, यथार्थवाद, रचना–दृष्टि।

प्रस्तावना – साहित्य अपने समय से निर्मित होता है, किंतु वह अपने समय का मात्र दस्तावेज नहीं होता। रचनाकार अपने युग की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों को आत्मसात करता है और उन्हें अपनी विशिष्ट संवेदना तथा रचनात्मक दृष्टि से पुनर्सृजित करता है। इसलिए किसी साहित्यिक कृति को केवल उस विचारधारा के आधार पर समझना, जिससे वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित दिखाई देती है, उसके बहुआयामी स्वरूप को सीमित कर सकता है।

प्रेमचंद का 'रंगभूमि' इसी दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है। उपन्यास का लेखन 1922 से 1924 के बीच हुआ और इसका प्रकाशन 1925 में हुआ। यह वह समय था जब भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन व्यापक जनभागीदारी का रूप ग्रहण कर चुका था और असहयोग आंदोलन के स्थगन के बाद राष्ट्रीय राजनीति नए मोड़ से गुजर रही थी।

ऐसे ऐतिहासिक वातावरण में प्रेमचंद का 'रंगभूमि' लिखना अपने आप में महत्वपूर्ण है। उपन्यास में औपनिवेशिक सत्ता, स्थानीय प्रभु–वर्ग, पूँजीवादी औद्योगिक विस्तार और ग्रामीण जीवन के बीच उत्पन्न तनाव को जिस व्यापकता से प्रस्तुत किया गया है, वह इसे केवल राजनीतिक उपन्यास न रहकर सामाजिक यथार्थ का महत्त्वपूर्ण आख्यान बना देता है।यहीं से प्रश्न उठता है क्या 'रंगभूमि' मूलत: गांधीवादी उपन्यास है? क्या सूरदास गांधीवादी विचारधारा का प्रतीक है? अथवा सूरदास के माध्यम से प्रेमचंद गांधीवादी मूल्यों को ग्रहण करते हुए भी अपने स्वतंत्र जीवनानुभव और यथार्थ–बोध के आधार पर उनसे आगे निकल जाते हैं?

इन प्रश्नों के उत्तर के लिए 'रंगभूमि' को किसी एक विचारधारात्मक खाँचे में बंद करने के बजाय उसकी समग्र रचना–संरचना को देखना आवश्यक है.1920–22 का असहयोग आंदोलन भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में व्यापक जनभागीदारी का महत्वपूर्ण चरण था। फरवरी 1922 में चौरी–चौरा की हिंसक घटना के बाद गांधीजी ने असहयोग आंदोलन वापस ले लिया। गांधीजी की राजनीतिक रणनीति में अहिंसा केवल साधन नहीं, बल्कि संघर्ष की नैतिक आधारभूमि भी थी। 'रंगभूमि' की रचना इसी ऐतिहासिक वातावरण के आसपास हुई। इसलिए उपन्यास में सत्य, अहिंसा, आत्मबल, अन्याय के प्रतिरोध और नैतिक संघर्ष जैसी प्रवृत्तियों का दिखाई देना स्वाभाविक है। लेकिन साहित्यिक प्रभाव को राजनीतिक नकल के रूप में देखना उचित नहीं होगा।प्रेमचंद के यहाँ गांधीवादी विचारधारा किसी राजनीतिक घोषणापत्र के रूप में नहीं आती। वह जीवन–स्थितियों, पात्रों और संघर्षों के माध्यम से व्यक्त होती है। यही कारण है कि सूरदास को केवल गांधीवाद का प्रतीक मानने से उसका व्यक्तित्व अधूरा रह जाता है।

'रंगभूमि' का सूरदास शारीरिक रूप से दृष्टिहीन है, आर्थिक रूप से विपन्न है और सामाजिक शक्ति–संरचनाओं की दृष्टि से अत्यंत कमजोर व्यक्ति है। इसके बावजूद वह अपनी भूमि और अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करता है।उसके संघर्ष की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह हिंसा को प्रतिरोध का साधन नहीं बनाता। जब उसके विरोध में हिंसक प्रतिक्रिया की स्थिति उत्पन्न होती है, तब वह हिंसा को रोकने का प्रयास करता है। उसके लिए अन्याय का प्रतिरोध आवश्यक है, लेकिन प्रतिरोध का अर्थ हिंसा नहीं है।यहीं सूरदास के व्यक्तित्व में गांधीवादी नैतिकता का स्पष्ट साम्य दिखाई देता है।

गांधीजी के चिंतन में सत्य और अहिंसा व्यक्ति के नैतिक आत्मबल से जुड़े हुए हैं। इसी प्रकार सूरदास का संघर्ष बाहरी शक्ति से अधिक उसके आंतरिक विश्वास का संघर्ष है। वह जानता है कि उसके पास धन, सत्ता या हथियार नहीं हैंय फिर भी वह अन्याय के सामने झुकना स्वीकार नहीं करता।

'वैष्णव जन तो तेने कहिए' की करुणा, परदु:खकातरता और अहंकारहीनता जैसी विशेषताओं से सूरदास के चरित्र में साम्य दिखाई देता

* सहायक आचार्य (हिंदी) विजय सिंह पथिक राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कैराना, शामली (उ.प्र.) भारत

है। यह भजन गांधीजी के आश्रम–जीवन और सार्वजनिक जीवन में अत्यंत लोकप्रिय था तथा इसकी केंद्रीय भावना दूसरे के दु:ख को समझने और उसके प्रति संवेदनशील होने पर आधारित है।इस दृष्टि से सूरदास में गांधीवादी नैतिक आदर्श की प्रतिध्वनि अवश्य है।लेकिन सूरदास केवल गांधीवादी आदर्श नहीं है। वह एक मनुष्य भी है।

यहीं प्रेमचंद की रचना–दृष्टि महत्वपूर्ण हो जाती है। यदि सूरदास केवल आदर्श पुरुष होता, तो उसका चरित्र एक विचारधारात्मक प्रतीक बनकर रह जाता। प्रेमचंद उसे मानवीय कमजोरियों, इच्छाओं, भावनात्मक द्वंद्वों और व्यक्तिगत आकांक्षाओं से भी जोड़ते हैं।सुभागी को आश्रय देने के प्रसंग में सूरदास की करुणा के साथ उसके भीतर की मानवीय आकांक्षा भी दिखाई देती है। इसी तरह अपनी झोपड़ी और निजी वस्तुओं के प्रति उसका मोह यह बताता है कि अहिंसा और त्याग का आदर्श उसे मनुष्य होने से मुक्त नहीं करता।यही वह बिंदु है जहाँ प्रेमचंद गांधीवादी आदर्श को यथार्थ के धरातल पर उतार देते हैं।उनका सूरदास महात्मा नहीं हैय वह संघर्ष करता हुआ सामान्य मनुष्य है। उसके भीतर करुणा भी है, क्रोध भीय त्याग भी है, मोह भीय नैतिक दृढ़ता भी है और मानवीय दुर्बलता भी।इसलिए सूरदास को गांधीवाद का 'प्रत्यक्ष प्रतीक' कहने की बजाय उसे गांधीवादी नैतिक संवेदना और मानवीय यथार्थ के अंतर्संबंध का पात्र कहना अधिक उपयुक्त होगा।

'रंगभूमि' की समस्या केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की समस्या नहीं है। इसके केंद्र में भूमि, श्रम, पूँजी, उद्योग, ग्राम–जीवन और मनुष्य के अस्तित्व का प्रश्न भी है।सूरदास की भूमि पर औद्योगिक परियोजना स्थापित करने की कोशिश केवल एक व्यक्ति की जमीन छीनने की घटना नहीं रह जातीय वह ग्रामीण जीवन और औद्योगिक पूँजी के बीच संघर्ष का प्रतीक बन जाती है।यहाँ प्रेमचंद का प्रश्न गांधीवाद से व्यापक हो जाता है।

गांधीजी आधुनिक औद्योगिक सभ्यता और अनियंत्रित मशीनवाद के आलोचक थे। हालांकि उनके विचारों में समय के साथ परिवर्तन और सूक्ष्मता भी दिखाई देती है। 1909 के 'हिंद स्वराज' में उन्होंने आधुनिक मशीन–प्रधान सभ्यता की तीखी आलोचना की थी, जबकि बाद के लेखन में उन्होंने यह स्पष्ट किया कि प्रश्न मशीन का मात्र विरोध नहीं, बल्कि यह है कि मशीन किसके हित में और किस उद्देश्य से प्रयुक्त होती है। इस संदर्भ में 'रंगभूमि' का औद्योगीकरण–विमर्श गांधीवादी चिंतन से संवाद करता हुआ दिखाई देता है, लेकिन प्रेमचंद का दृष्टिकोण केवल गांधीजी के विचारों की पुनरावृत्ति नहीं है।

उपन्यास में औद्योगिक विकास से पैदा होने वाली सामाजिक विषमता, विस्थापन और मानवीय संकट का चित्रण हैय साथ ही यह भी दिखाई देता है कि आधुनिक परिवर्तन को केवल नैतिक आदर्श के आधार पर पूरी तरह रोका नहीं जा सकता।

'रंगभूमि' का एक बड़ा प्रश्न यह है कि विकास किसके लिए है?यदि किसी उद्योग की स्थापना के लिए किसी गरीब व्यक्ति की जमीन छीन ली जाती है, उसके जीवन–संसार को उजाड़ दिया जाता है और उसके अस्तित्व को आर्थिक शक्ति के सामने नगण्य मान लिया जाता है, तो प्रेमचंद के लिए यह विकास मानवीय कसौटी पर प्रश्नांकित हो जाता है।यहाँ प्रेमचंद का नैतिक आग्रह सामने आता है।लेकिन प्रेमचंद औद्योगिक परिवर्तन की चर्चा को केवल 'पुराना अच्छाकृनया बुरा' के सरल सूत्र में नहीं बाँधते। उनका उपन्यास परिवर्तन के भीतर छिपी जटिलताओं को सामने लाता है। इसलिए 'रंगभूमि' को केवल औद्योगीकरण–विरोधी कृति कहना भी उसके व्यापक अर्थ–संसार को सीमित करना होगा।वास्तव में प्रेमचंद की चिंता मशीन से अधिक मनुष्य पर मशीन और पूँजी के प्रभुत्व की है।यही बिंदु गांधीवादी चिंतन से उसका गहरा संवाद स्थापित करता है।

सूरदास का संघर्ष 'रंगभूमि' की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में है। वह अन्याय के विरुद्ध है, लेकिन हिंसा का समर्थक नहीं।उसकी दृष्टि में किसी अन्याय का उत्तर दूसरे अन्याय से नहीं दिया जा सकता। वह प्रतिरोध को आत्मबल के रूप में ग्रहण करता है।यहाँ गांधीवादी सत्याग्रह की मूल अवधारणा से उसकी निकटता स्पष्ट होती है। गांधीवादी सत्याग्रह में प्रतिद्वंद्वी के विनाश की अपेक्षा उसके अंत:करण को संबोधित करने की कोशिश की जाती है। सूरदास का संघर्ष भी इसी नैतिक आग्रह को अभिव्यक्त करता है।लेकिन प्रेमचंद इस आदर्श को किसी आसान सफलता में परिणत नहीं करते।

सूरदास अंतत: हिंसक सत्ता–संरचना के सामने शारीरिक रूप से पराजित होता है। उसका संघर्ष बाहरी अर्थ में सफल नहीं होता, लेकिन नैतिक अर्थ में उसका व्यक्तित्व सत्ता की वैधता पर प्रश्नचिह्न लगा देता है।यहीं 'रंगभूमि' की त्रासदी और उसकी शक्ति दोनों निहित हैं।

'रंगभूमि' को लेकर आलोचना में अलग–अलग दृष्टियाँ रही हैं। कुछ आलोचक सूरदास को गांधीवादी आदर्श का प्रतिनिधि मानते हैं, तो कुछ उसके चरित्र और उपन्यास की परिणति में गांधीवादी पद्धति की सीमाओं को रेखांकित करते हैं।इन दोनों दृष्टियों में आंशिक सत्य है।सूरदास में गांधीवादी मूल्यों की स्पष्ट उपस्थिति है, लेकिन उसका अंत यह भी बताता है कि नैतिक आदर्श सामाजिक–राजनीतिक संरचनाओं की कठोरता के सामने किस प्रकार संकट में पड़ सकता है।इसे गांधीवाद की 'पराजय' कहना भी एकांगी होगा और गांधीवाद की 'पूर्ण विजय' कहना भी।अधिक उपयुक्त यह होगा कि प्रेमचंद गांधीवादी नैतिकता को यथार्थ की कठोर भूमि पर रखकर उसकी शक्ति और उसकी सीमाओं दोनों को परखते हैं।यही साहित्य की स्वतंत्रता है।

किसी भी बड़े रचनाकार को केवल किसी एक विचारधारा के प्रतिनिधि के रूप में देखना उसके रचनात्मक व्यक्तित्व को सीमित कर सकता है। प्रेमचंद पर गांधी का प्रभाव थाकृयह बात उनके साहित्य और सार्वजनिक जीवन के अनेक संदर्भों से समझी जा सकती है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि प्रेमचंद की प्रत्येक रचना गांधीवादी विचारधारा का साहित्यिक रूपांतरण है।

इसी प्रकार प्रेमचंद के साहित्य में समाजवादी, यथार्थवादी, मानवतावादी और राष्ट्रीय चेतना के अनेक स्तरों की पहचान की गई है। एक जीवंत रचनाकार अपने समय के अनेक वैचारिक स्रोतों से संवाद करता है और अंतत: उन्हें अपनी रचनात्मक दृष्टि में रूपांतरित करता है।इस दृष्टि से 'रंगभूमि' को किसी एक 'वाद' के भीतर सीमित करना उसकी रचनात्मक ऊर्जा को कम करना होगा।रचनाकार विचारों से प्रभावित होता है, पर महान रचना केवल विचार की पुनरावृत्ति नहीं होती। वह विचार को जीवन की जटिलता में परखती है।

'रंगभूमि' की मूल संवेदना को यदि एक वाक्य में व्यक्त करना हो तो कहा जा सकता है कि यह मनुष्य और उसकी जीवन–भूमि की रक्षा का उपन्यास है।भूमि यहाँ केवल जमीन नहीं है। वह मनुष्य की स्मृति, श्रम, अस्मिता, सामाजिक संबंध और जीवन–परंपरा का आधार है।सूरदास की लड़ाई इसी व्यापक अर्थ में भूमि की लड़ाई है। उसके सामने केवल जॉन सेवक या कोई औद्योगिक परियोजना नहीं हैय उसके सामने वह पूरी व्यवस्था

है जिसमें आर्थिक शक्ति मनुष्य के जीवन पर अपना अधिकार स्थापित करना चाहती है।इसलिए 'रंगभूमि' का संघर्ष गांधीवाद से जुड़ता भी है और उससे आगे भी जाता है।

गांधीवादी दृष्टि उसे सत्य, अहिंसा, आत्मबल और नैतिक प्रतिरोध प्रदान करती हैय प्रेमचंद की यथार्थवादी दृष्टि उसमें वर्गीय, आर्थिक, सामाजिक और मानवीय अंतर्विरोध जोड़ देती है।फलत: 'रंगभूमि' एक बहुस्तरीय रचना बन जाती है।

'रंगभूमि' को गांधीवादी विचारधारा के संदर्भ में पढ़ते हुए सबसे पहले यह स्वीकार करना होगा कि गांधीवादी नैतिकता और जीवन-दृष्टि का प्रभाव उपन्यास के वातावरण तथा सूरदास के चरित्र पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। सत्य, अहिंसा, करुणा, अन्याय का प्रतिरोध, आत्मबल और नैतिक दृढ़ता जैसे मूल्य सूरदास को गांधीवादी संवेदना के निकट ले जाते हैं।लेकिन प्रेमचंद यहाँ गांधीवाद के सरल अनुयायी बनकर नहीं रह जाते। उनका रचनाकार-मन सामाजिक यथार्थ की जटिलताओं को भी उतनी ही तीव्रता से पहचानता है। सूरदास के भीतर आदर्श और मनुष्य दोनों उपस्थित हैं। उपन्यास में औद्योगीकरण और पूँजी के प्रश्न भी केवल गांधीवादी विरोध के रूप में नहीं, बल्कि व्यापक सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के संदर्भ में आते हैं।इसलिए 'रंगभूमि' को न तो केवल गांधीवादी उपन्यास कहना उचित होगा और न गांधीवाद का व्यंग्य। यह गांधीवादी नैतिकता, सामाजिक यथार्थ और प्रेमचंद की स्वतंत्र रचनात्मक दृष्टि के बीच संवाद, तनाव और अंतर्संबंध का उपन्यास है।

प्रेमचंद के यहाँ गांधी किसी विचारधारा के स्थिर प्रतीक भर नहीं हैं गांधीवादी मूल्य जीवन के भीतर प्रवेश करके नए अर्थ ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार सूरदास गांधी का प्रतिरूप नहीं, बल्कि अपने समय की पीड़ा, प्रतिरोध, करुणा और मानवीय जिजीविषा से निर्मित एक स्वतंत्र साहित्यिक व्यक्तित्व है।यही 'रंगभूमि' की शक्ति है कि वह अपने पाठक को किसी एक निष्कर्ष में बाँधने के बजाय विचार करने के लिए विवश करती है। साहित्य की सार्थकता भी इसी स्वतंत्रता में हैकृजहाँ विचार रचना में प्रवेश करता है, लेकिन रचना विचार का बंदी नहीं बनती।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रेमचंद, रंगभूमि, गंगा पुस्तक माला कार्यालय, लखनऊ, 1925. 'रंगभूमि' के प्रथम प्रकाशन का वर्ष 1925 माना जाता है।
2. चतुर्वेदी, रामस्वरूप, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. Gandhi: Hind Swaraj and Other Writings, Cambridge University Press, 2009 गांधी के मशीन और औद्योगीकरण संबंधी विचारों के विकास पर उपयोगी संदर्भ।
4. रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यास रू एक अंतर-यात्रा।
5. धर्मेंद्र गुप्त (सं.), समकालीन जीवन संदर्भ और प्रेमचंद।
6. अंबादत्त पांडेय, आधुनिकता और आलोचना।
7. इंद्रमोहन कुमार सिन्हा, प्रेमचंदयुगीन भारतीय समाज।
8. जैनेंद्र कुमार, प्रेमचंद और साहित्य की रचनात्मक स्वतंत्रता से संबंधित आलोचनात्मक विचार।

****